प्रकाशक
सत्यदेव वर्मा, बी० ए० एम-एल० बी०
मयूर प्रकाशन प्रा० लि०, झांसी

पच्चीसवाँ संस्करण १९८३
मूल्य ८ रुपया मात्र विद्यार्थी संस्करण

मुद्रक :
स्वाधीन प्रेस, जवाहर चौक, झांसी

परिचय

१९४९ के अन्त मे ग्वालियर की एक सम्मानित पाठिका ने मुझसे मृगनयनी और मानसिंह तोमर के ऐतिहासिक रूमानी कथानक पर उपन्यास लिखने का अनुरोध किया। उन दिनो 'टूटे कॉटे' उपन्यास समाप्ति पर आ रहा था। उसको समाप्त करके कुछ लिखने की वाञ्छा मन मे थी ही, मैंने उस कथानक की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन अवसर पाते ही आरम्भ कर दिया। जिन स्थानो का सम्बन्ध उपन्यास की मुख्य कथा से है, उनका भ्रमण भी किया।

मानसिंह तोमर १४८६ से १५१६ ई० तक ग्वालियर का राजा रहा। फरिस्ता के इतिहास लेखक ने मानसिंह को वीर और योग्य शासक बतलाया है। अङ्गरेज इतिहास लेखको ने मानसिंह के राज्यकाल को तोमर-शासन का स्वर्णयुग (**Golden Age of Tomer Rule**) कहा है। पन्द्रहवी शताब्दी के अन्त और सोलहवी के प्रारम्भ को राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से भारतीय इतिहास का कराल कठोर और काला युग कहे तो अतिशयोक्ति न होगी। उत्तर मे सिकन्दर लोदी और उसके सहयोगियो के परस्पर युद्ध तथा दोनो द्वारा घोर जनपीडन राजस्थान मे राणा कुम्भा का अपने बेटे के ही हाथ से विष द्वारा वध और उसके उपरान्त वहां की अराजकता, गुजरात मे महमूद बघर्रा के अगणित विजन और रक्तपात, मालवा मे ग्यासुद्दीन खिलजी और उसके उत्तराधिकारी नसीरुद्दीन की अत्याचार-प्रियता और अय्याशी, दक्षिण मे बहमनी सल्तनत और बिजयनगर, राज्य के युद्ध और बहमनी सल्तनत का पॉच सल्तनतो मे बिखर जाना, जौनपुर, बिहार और बङ्गाल मे पठान सरदारो की निरन्तर नोच-खसोट; और इन सबके लगभग बीच मे ग्वालियर। ग्वालियर पर सिकन्दर लोदी के पिता बहलोल ने आक्रमण किये, फिर सिकन्दर ने ग्वालियर का कचूमर निकालने मे कसर नही लगाई। सिकन्दर ग्वालियर पर पाच बार

प्रकाशक
सत्यदेव वर्मा, बी० ए० एल-एल० बी०
मयूर प्रकाशन प्रा० लि०, झांसी

पच्चीसवाँ संस्करण १९८३
मूल्य ८ रुपया मात्र विद्यार्थी संस्करण

मुद्रक :
स्वाधीन प्रेस, जवाहर-चौक, झांसी

परिचय

१९४९ के अन्त मे ग्वालियर की एक सम्मानित पाठिका ने मुझसे मृगनयनी और मानसिह तोमर के ऐतिहासिक रूमानी कथानक पर उपन्यास लिखने का अनुरोध किया। उन दिनो 'टूटे कॉटे' उपन्यास समाप्ति पर आ रहा था। उसको समाप्त करके कुछ लिखने की वाञ्छा मन मे थी ही, मैंने उस कथानक की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन अवसर पाते ही आरम्भ कर दिया। जिन स्थानो का सम्बन्ध उपन्यास की मुख्य कथा से है, उनका भ्रमण भी किया।

मानसिह तोमर १४८६ से १५१६ ई० तक ग्वालियर का राजा रहा। फरिस्ता के इतिहास लेखक ने मानसिह को वीर और योग्य शासक बतलाया है। अङ्गरेज इतिहास लेखकों ने मानसिह के राज्यकाल को तोमर-शासन का स्वर्णयुग (Golden Age of Tomer Rule) कहा है। पन्द्रहवी शताब्दी के अन्त और सोलहवी के प्रारम्भ को राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से भारतीय इतिहास का कराल कठोर और काला युग कहे तो अतिशयोक्ति न होगी। उत्तर मे सिकन्दर लोदी और उसके सहयोगियो के परस्पर युद्ध तथा दोनो द्वारा घोर जनपीड़न राजस्थान मे राणा कुम्भा का अपने बेटे के ही हाथ से विष द्वारा वध और उसके उपरान्त वहा की अराजकता, गुजरात मे महमूद बघर्रा के अगणित विजन और रक्तपात, मालवा मे ग्यासुद्दीन खिलजी और उसके उत्तराधिकारी नसीरुद्दीन की अत्याचार-प्रियता और अय्याशी, दक्षिण मे बहमनी सल्तनत और विजयनगर, राज्य के युद्ध और बहमनी सल्तनत का पॉच सल्तनतो मे बिखर जाना, जौनपुर, बिहार और बङ्गाल मे पठान सरदारो की निरन्तर नोच-खसोट, और इन सबके लगभग बीच मे ग्वालियर। ग्वालियर पर सिकन्दर लोदी के पिता बहलोल ने आक्रमण किये, फिर सिकन्दर ने ग्वालियर का कचूमर निकालने मे कसर नही लगाई। सिकन्दर ग्वालियर पर पाच बार चढ़ा

के साथ आया। पाँचो बार उसको मानसिंह के सामने से लौट जाना पड़ा। उसके दरबारी इतिहास लेखको अखबार नवीसो ने लिखा है कि मानसिंह ने प्रत्येक बार सोना-चाँदी देने का वादा-सोना चाँदी नही देकर टाला। आश्चर्य है सिकन्दर सरीखा कठोर योधा मान भी लेता था। अन्त मे सिकन्दर को १५०४ में आगरे का निर्माण इसी मानसिंह तोमर को पराजित करने के लिये करना पड़ा, इसके पहले आगरा एक नगण्य-सा स्थान था। तो भी सिकन्दर सफल न हो पाया। ग्वालियर पर घेरा डालकर नरवर पर चढाई कर दी। नरवर ग्वालियर राज्य मे था। उस पर दावा राजसिंह कछवाहा का था। राजसिंह ने सिकन्दर का साथ दिया। तो भी नरवर वाले ११ महीने तक लगातार युद्ध मे छाती अड़ाये रहे। जब खाने को घास और पेड़ो की छाल तक अलभ्य हो गई, तब उन लोगो ने आत्म-समर्पण किया। फिर सिकन्दर ने मन की जलन को नरवर स्थित मन्दिरो और मूर्तियो पर निकाली-वह छै महीने इसी उद्देश्य से नरवर मे रहा।

ऐसे युग मे, इतने सङ्कटो मे भी, मानसिंह हुआ। और उसने तथा उसकी रानी मृगनयनी ने जो कुछ किया उसका प्रत्यक्ष प्रमाण आज भी हमारे सामने है। ग्वालियर किले के भीतर मानमन्दिर और गूजरी महल हिन्दू वास्तु-कला के अत्यन्त सुन्दर और मोहक प्रतीक है तथा ध्रुवपद और धमार की गायकी और ग्वालियर का विद्यापीठ जिसके शिष्य तानसेन थे, आज भी भारत भर मे प्रसिद्ध है। जिसको मुगल वास्तु और स्थापत्य कला कहते है वह क्या मानसिंह के ग्वालियर शिल्पियो की देन नही है? महाकवि टैगौर ने ताजमहल को 'काल के गाल का आँसू' कहा है। यदि मै (जिसको कविता पर अणुमात्र का भी दावा नही है) मानमन्दिर और गूजरी महल को "काल के ओठो की 'मुस्कान' कहूँ तो महाकवि टैगौर उस वाक्य का एक प्रकार से समर्थन ही करूँगा।

जब १५२७ में बाबर ने मान-मन्दिर और गूजरी महल को देखा तब उनको बने २० वर्ष हो चुके थे। तो सन् १५०७ में ये बन चुके थे। गूजरी रानी मृगनयनी के साथ मानसिंह का विवाह १४९२ के लगभग हुआ होगा। मानमन्दिर और गूजरी महल के सृजन की कल्पना को मृगनयनी से प्रेरणा मिली होगी। बैजनाथ नायक (बैजू बावरा) मानसिंह मृगनयनी के गायक थे। गूजरी टोडी, मङ्गल गूजरी इत्यादि राग इसी मृगनयनी के नाम पर बने हैं। जिन सम्मानित पाठकों ने मृगनयनी के कथानक पर उपन्यास लिखने का अनुरोध किया था उन्होंने ठीक लिखा कि मृगनयनी शौर्य और कला दोनों के लिये विख्यात थी।

मृगनयनी गूजर कुल की थी। राई गाँव की दरिद्र किसान कन्या शारीरिक बल और परम सौन्दर्य के लिये ब्याह के पहले ही प्रसिद्ध हो गई थी। परम्परा में तो उसके विषय में यहाँ तक कहा गया है कि राजा मानसिंह राई गाँव के जङ्गल में शिकार खेलने गये तो देखा कि मृगनयनी (उपन्यास के आरम्भ की निन्नी) ने जङ्गली भैंसे को सींग पकड़कर मोड़ दिया। एक साहब ने परम विश्वास के साथ मुझको बतलाया कि राजा मानसिंह अपने महल में बैठे हुये थे, नीचे देखा जङ्गली भैंसे के सींग पकड़कर मृगनयनी मरोड़ रही है और उसको मोड़ रही है!! ग्वालियर किले के भीतर जङ्गली भैंसा पहुँच गया और राई गाँव से, जो ग्वालियर से पश्चिम-दक्षिण में ११ मील है, मृगनयनी जङ्गली भैंसे को मोड़ने-मरोड़ने के लिये आ गई!!!

मैंने पहली परम्परा को ही मान्यता दी है। ग्वालियर गैजीटियर में उसी का उल्लेख है।

फिर मैंने गूजरों में घूम-फिर कर बातें कीं। उन्होंने भी उसी का समर्थन किया।

पहाड़ों में होकर साक नदी राई गाँव के नीचे से निकलती है। साक नदी पर तिगरा का बँध, बँध गया है और राई गाँव डूब गए

है। राई के ऊपर ऊँची पहाड़ी पर स्थित उसके भाई की गढ़ी भी अब खण्डहल हो गई है। परन्तु उसके भाई अटल और लाखी के त्यागो के खण्डहल नही हो सकते।

गुजरात का महमूद बघर्रा नित्य जितना कलेवा और भोजन करता था यह फारसी की तारीख 'मीराने सिकन्दरी' में दर्ज है। इलियट और डासन ने इसका अनुवाद किया है। मालवा-सुल्तान नसीरुद्दीन की पन्द्रह हजार बेगमें थी। राज्य इसने पाया था वासनाओं की तृप्ति के लिये अपने बाप को जहर देकर। जब लगभग १०० वर्ष पीछे मुगल बादशाह जहाँगीर मालवा की राजधानी मांडू गया और उसने नसीरुद्दीन के करिश्मों का हाल सुना तब उसको इतना क्रोध आया कि नसीरुद्दीन की कबर उखडवा डाली और उसकी हड्डियों को जलवा दिया। नापाक था, नापाक था वह !! जहागीर ने कहा था। उसकी कबर को जहाँगीर न भी उखड़वाता तो भी आज वह बेपता, बेनिशान खण्डहल होती मान-सिह और मृगनयनी की, लाखी और अटल की स्मृति का खण्डहल तो कभी होगा ही नहीं।

उपन्यास मे आये हुये सभी चरित्र—थोड़ो को छोडकर ऐतिहासिक हैं। विजयजङ्गम लिकायत था। ग्वालियर के किले के भीतर जैसे तैल-मन्दिर (उसका नाम तेली का मन्दिर गलत है) बना उसी प्रकार कर्नाटक से विजय ग्वालियर में प्रादुर्भूत हुआ। लिंकायत सम्प्रदाय का बासवपुराण दक्षिण मे बारहवी शताब्दी मे लिखा गया था—इस सम्प्रदाय मे वर्णभेद का तिरस्कार किया गया है। श्रमगायक-को जो महत्व और गौरव बासन ने दिया है उसको देखकर दङ्ग रह जाना पड़ता है। संसार के किसी भी देश मे उस समय श्रम और श्रमिकों को गौरव नही दिया गया था। इसका श्रेय लिंकायत सम्प्रदाय के अधिष्ठाता को ही है। साथ ही अहिंसा और सदाचार और मादक वस्तु-निरोध पर जो जोर दिया गया है उससे जान पडता है जैसे अधिष्ठाता का जन्म बीसवीं

शताब्दी मे हुआ हो। अधिष्ठाता ब्राह्मण थे और उनकी वहिन एक क्षत्रिय नरेश को ब्याही गई थी—वह भी वारहवी शताब्दी मे।

विजयजङ्गम लिङ्गायत मानसिंह तोमर का मित्र था। मानसिंह ने इससे भी कुछ पाया तो कोई आश्चर्य नही। विजयजङ्गम मेरे मित्र श्रीयुत श्रीनारायण चतुर्वेदी सरस्वती सम्पादक के पूर्वज थे।

जातपाँत ने भारत में रक्षात्मक कार्य भी किया और आज भी शायद कुछ कर रही हो, परन्तु इसका विनाशात्मक काम भी कुछ कम नही हुआ है। अप्रैल सन् १९५० मे छपी एक घटना है। टेहरी (अल्मोडा के एक गाँव) मे एक लुहार ने १२ वर्ष हुये दूसरी जाति की लड़की के साथ विवाह कर लिया। वारह वर्ष तक यह लुहार जातपाँत से बाहर रहा। कही अब, अप्रैल मे गाँव की नई पञ्चायत ने उसको बहाल किया फिर पन्द्रहवी-सोलहवी शताब्दी मे लाखी और अटल के सिर पर क्या क्या न बीती होगी, उसकी कल्पना ही की जा सकती है।

लाखी और अटल की कथा के साथ नटो का सम्बन्ध है। नटो और नरवर के प्रसङ्ग मे एक दोहा प्रचलित करते है :—

नरवर चढे न वेडनी, बूँदी छपे न छीट,
गुदनौटा भोजन नही, एरच पके न ईंट।

किम्वदन्ती है कि किसी ने एक नटिनी (वेड़नी) को नरवर किले से वाहर रस्से पर टँगे टँगे जाकर जो किले के बाहर एक पेड़ से वँधा हुआ था चिट्ठी ले जाने के लिये कहा और वचन दिया कि यदि चिट्ठी बाहर पहुँचा दो तो नरवर का आधा राज्य दे दिया जायगा। नटिनी रस्से के सहारे किले से बाहर हो गई। जब उसी सहारे वापिस आ रही थी, तब वचन देने वाले ने रस्से को काट दिया और नटिनी नीचे खड्ड मे गिरकर चकनाचूर हो गई।

मैने इस किम्वदन्ती का दूसरे प्रकार से उपयोग किया है।

मृगनयनी ने अपने ब्याह से पहले राजा मानसिंह से वचन लिये थे, उनमें से एक यह भी था कि राजा राई गांव से ग्वालियर किले तक साक नदी की नहर ले जायेंगे। राजा ने यह नहर बनवाई। उसके चिन्ह अब भी वर्तमान है।

एक किम्वदन्ती है कि मानसिंह के दो सौ रानियां थी। ग्वालियर किले के गाईड ने मुझको दूसरी किम्वदन्ती का पता दिया कि 'राजा मानसिंह के एट (आठ) रानियाँ थी। मैंने गाईड के शब्द को ज्यों का त्यों उद्धत कर दिया है। एट उन्हीं का है। न लिखता तो कहते मेरा अपमान किया, अङ्गरेजी का एक शब्द ही बोला था उसको भी छोड़ दिया!

मैंने गाईड की कही हुई बात को ही उपन्यास में मान्यता दी है।

गाईड और गूजरों ने बतलाया कि मृगनयनी के दो पुत्र हुये थे—एक का नाम राजे, दूसरे का बाले। मानसिंह के बड़ी रानी से एक पुत्र विक्रमादित्य था जो मानसिंह के पीछे राजा हुआ। गाईड और गूजरों ने बतलाया कि राजे और बाले ईर्षावश मारे जाने वाले थे कि उन्होंने आत्मवध कर लिया। मुझको यह परम्परा मान्य नहीं है। गूजरों की एक दूसरी परम्परा है कि मृगनयनी ने अपने पुत्रों को राज्य न दिलवाकर विक्रमादित्य को राज्य दिलवाया। मुझको यही मान्य है।

उस बीहड़, भयंकर युगों में मानसिंह को तुर्क पठान आक्रमणकारियों से निरन्तर लड़ना पड़ा, परन्तु उसके मन में मुसलमानों के प्रति कोई द्वेष नहीं रहा, उसने सिकन्दर के भाई जलालउद्दीन के साथ आये हुये अनेक मुसलमानों को ग्वालियर में शरण और रक्षा प्रदान की और ललित कलाओं के लिये मानसिंह और मृगनयनी ने जो कुछ किया वह भारत के इतिहास में अमर रहेगा।

बोधन ब्राह्मण ऐतिहासिक व्यक्ति है उसके मारने वालों की बर्बरता का मैंने बहुत थोड़ा वर्णन किया है। उसके कुरूप का लाघव-मात्र प्रस्तुत किया है—करना पड़ा।

कथावस्तु के सग्रह मे महामान्या महारानी साहब ग्वालियर मध्य-भारत के मन्त्रिमण्डल और ग्वालियर के पुरातत्व विभाग ने मेरी बहुत सहायता की है मै उनका बहुत कृतज्ञ हूँ। ग्वालियर पुरातत्व विभाग के डायरेक्टर पाटील का भी मै आभारी हूँ जिनके सौजन्य से मुझको ग्वालियर-किला मान-मन्दिर गूजरी महल और राजा मानसिह के चित्र मिले।

पाठक चाहेगे कि मै तोमरो, ग्वालियर और नरवर के किलो और उनके भीतर स्थित इमारतो, का वर्णन, परिचय मै करूँ कुछ पाठक चाहेगे कि मैं तत्कालीन आर्थिक स्थिति समझने के लिये आकडे दूँ, परन्तु पाठक कहानी चाहेगे इसीलिये अब कहानी बाकी फिर कभी।

झाँसी — वृन्दावनलाल वर्मा

१४–७–१९५०

मृगनयनी

[१]

आस-पास और दूर-दूर तक के गाव उजड चुके थे। खेती का नाम निशान तक न बचा था। बीच-बीच मे जङ्गल भी काट डाला गया था, पर कटे हुये पेड़ो की जडो से नई शाखे फूट निकली थी और भूमि इन शाखो से ढक गई थी।

गाव उजड़े और उनके बहुत से निवासी या तो आक्रमण कारियों की तलवार के घाट उतर गये या भूखो-प्यासो मर गये। जो बचे वे तितर-बितर हो गये। ग्वालियर पर पन्द्रहवी शताब्दि मे अनेक आक्रमण हुये। उतने ही बार गाव निर्जन हुये। पुराने कुछ-कुछ आबाद हुये। जङ्गलो मे नदियो-नालो के किनारे थोड़े से नये बसे। भस्म हो जाने और भस्म मे नये पौधो के उगने का क्रम बना रहा।

बहलोल लोदी ने, फिर उसके उत्तराधिकारी सिकन्दर ने सब तरह के उपाय किये परन्तु ग्वालियर का किला हाथ न लगा। सोचा था राजा मानसिह युवक है, अनुभवहीन, इसलिये ग्वालियर की ईंट से ईंट बजा दी जायगी। गाव मिटा दिये, खेती उजाड़ दी, ग्वालियर नगर को वीरान कर दिया, फिर भी ग्वालियर के ऊँचे किले ने न तो फाटक खोले और न सिर झुकाया। अन्त मे कुओ मे जानवरो की सडी-गली लाशो को डाल कर, मानसिह उसके तोमर भाई बन्दो और अन्य लडने वालो को मन ही मन गालिया देता हुआ, सिकन्दर कालपी की दिशा से दिल्ली की ओर चला गया, क्योकि वहा उसके पठान भाई बन्दो ने सर उठा लिया था।

सिकन्दर लोदी ने अपने दरबारी इतिहास-लेखक से जो अपने उसूलो का कट्टरपाबन्द मुल्ला था, लिखवाया, ग्वालियर को पराजय कर लिया और खिराज का वादा लेकर राजा को फिलहाल छोड़ दिया।

आक्रमणकारियो के चले जाने के बाद इधर-उधर बने बचे तितर-बितर, छिपे लुके ग्रामीण अपने निवास-स्थानो के लिये निकल पड़े। कुछ अपने पुराने स्थानो पर चौकते-चौकते से आ गये, कुछ ने जङ्गल पहाड़ो मे होकर बहने वाली किसी नदी का किनारा जा पकड़ा, और नये सिरे से गाव बसा लिया। इन्होने भी इतिहास को दुहराया। जो लोग मासाहारी थे उन्होने जङ्गल के जानवरो से पेट भरा, जो निरामिष भोजी थे, दुष्प्राप्य जङ्गली फल फूल और, अपने थोड़े से पालतू पशुओ के दूध दही पर प्राणो की रक्षा करने लगे। जिन्होने आक्रमण के समय मे गड्ढो मे बीज छिपाकर रख दिया था, वे लौट आने पर खेती पर चिपट गये।

नदी के किनारे गाव के पास, पहाड़ियो जङ्गल के बीच-बीच मे कुछ खेतो मे गेहूँ और चने के पौधे लहलहा उठे। खेत पकने पर आ रहे थे, मस्ती के साथ झूमने लगे थे।

साक नदी में पानी था, प्रवाह था। अधपके धान्य को स्पन्दन देता हुआ पवन नदी के प्रवाह को भी पुचकार-पुचकार लेता था।

गाव मे एक मन्दिर का खण्डहल था, जो अन्तिम आक्रमण के पहले ही भूतकाल मे मिल चुका था। परन्तु फिर-फिर लौट पड़ने वाले ग्रामीणो ने उसकी मरम्मत की, नई मूर्ति को प्रतिष्ठित किया और अब की बार गाव वालो ने उसको मिट्टी के लोंदो की ऊँचाई देकर फूस से ढँक दिया। आस-पास के सभी गांवो की पचायतो का आदेश था कि ईंट-पत्थर के मकान न बनाये जाये, इसलिये मिट्टी की दीवारो पर फूस छाने का चलन पड़ गया था।

ग्वालियर के पश्चिम दक्षिण में लगभग छः कोस की दूरी पर सांक नदी के किनारे राई नाम का गाँव था। इसमे मन्दिर के साथ ही अधजले और अधटूटे घरो को भी धूम मे छा लिया। बाकी गाँव मे खण्डहर बिखरे पड़े रह गये। इसके कुछ निवासी पडोस के नगरदा नामक गाँव मे जा बसे थे, कोई कभी कोई कभी।

फसल काटकर घर मे या गड्ढो मे रखने की उतावली थी, परन्तु अन्न अभी कहीं-कहीं हरा था। पौधो की लहर को देखकर उतावला किसान हाथ मे हँसिया लिये हुये रह-रह जाता था—'हरी बाल को कैसे काटूँ? होली जलने तक ठहरना ही पडेगा।' किसान जो ठहरा।

सिकन्दर चला गया था, ग्वालियर के किले से राजा मानसिंह के योद्धा बाहर निकल पड़े थे और उनमे से बहुत से अपनी खेती-किसानी की देख-भाल भी करने लगे थे। इसलिये किसान ने भाग्य के भरोसे अपनी उतावली को रोका।

होली आ गई और सध्या के मुहूर्त मे जला ली गई।

[२]

पाँच दिन, रङ्गपञ्चमी तक, होली मनाने की प्रथा थी। किसी युग मे एक महीने तक मनाई जाती थी। जीवन के बोझो ने एक महीने मे घटाकर पाँच दिन मे सीमित कर दिया अब एक दिन भी दूभर था।

सवेरा होते ही कुछ लोगो ने हल्दी की थोडी सी गाठो को बाँटकर रङ्ग तैयार किया और झीकते-झीकते होली खेल ली। जिनकी गाठ मे रङ्ग नही था उन्होने रास्ते की धूल बटोरी और पानी मे घोली। पिछली विपदाओ को भूलकर कम से कम कुछ घण्टो के लिये मतवाले हो जाने की ठान ली। इनमे सख्या स्त्रियो की अधिक थी।

घूँघट डाले हुये, घूँघट के ही भीतर अट्टहास करती हुई स्त्रियो ने एक दूसरे पर मटीला पानी और कीचड उछाला। नाते मे जो पुरुष देवर लगते थे उनको दौड़ धूप मे हराया और तब मानी जब कीचड मे उनको सरावोर कर दिया।

गाव की लडकियो पर कोई पुरुष रङ्ग या कीचड़ नही डाल रहा था। नन्द और भावज के परस्पर नाते वाली स्त्रियाँ अवश्य धूल और कीचड़ को एक दूसरे पर उछाल रही थी। भगवान ने मुश्किलो से यह दिन दिखलाया फिर कसर क्यो लगाई जाय? रङ्ग हो तो रङ्ग-गुलाल तो थी ही नही—नही तो धूल, रङ्ग और गुलाल दोनो का काम सजाने के लिये तैयार थी ही।

फिर से वसे हुये इस गाँव मे एक लड़की अपनी माँ के साथ एक उजड़े हुये गाँव से, कुछ दिन पहले आ गई थी। परन्तु गाँव मे लडकी की तरह रहने के कारण उस पर कोई पुरुष रङ्ग या कीचड़ नही फेक रहा था।

'तुम अभी तक साफ समूची वची खडी हो, लाखी!' एक झोपडे से द्वार पर टटिया की ओट मे खडी हुई हँसती मुस्कराती हुई लड़की से मिट्टी की काली-कलूटी मटकियो मे मिट्टी घोले हुये दूसरी हँसती हुई लड़की ने रास्ते मे दौड़ लगाते हुये कहा।

जिसको लाखी के सम्वोधन से चुनौती दी गई थी वह, ईर्षा की कसक से, अन्य स्त्रियो को धूल और कीचड मे सना हुआ देखकर अपने ऊपर आक्रमण किये जाने के लिये, मुस्कानो से न्योता सा दे रही थी। टटिया को अधखुला छोड़कर लाखी भीतर धँस गई।

'ऊँ ऊँ निन्नी, हमारे कपडे मैले मत करो।' लाखी ने निवारण करते हुये आमन्त्रण दिया।

'वाहर निकलो, वाहर, तुमको सिर से पैर तक न रङ्ग दिया और नचा न दिया तो मेरा नाम निन्नी नही!' मटकिया वाली ने ललकारा।

'अरे रे रे रे रे !!!' लाखी ने हँसते हुये होठों पर दोनो हाथ रख लिये और आंखे मूंद ली। उछल-उछल कर और अट्टहास करते हुये निन्नी ने उसको कीचड़ से सान दिया।

'अब मेरी बारी है।' पास पडे हुये गोबर को झपटकर लाखी ने उठाया और निन्नी की ओर बढ़ी।

वे दोनो समवयस्क थी आयु लगभग पन्द्रह सोलह वर्ष। परन्तु निन्नी बलिष्ठ और पुष्टकाय थी, लाखी दुबली और छरेरी। निन्नी गोबर के सत्कार से डरना नही चाहती थी।

'आओ, आओ, इसी की कमी रह गई है सो पोते देती हूँ।' निन्नी ने हँसते हुये कहा।

लाखी सहमी नही। निन्नी से जा चिपटी। निन्नी ने लाखी के गोबर वाले हाथ को अपने एक हाथ की मुट्ठी मे पकड़ लिया और दूसरे से गोबर को छीनकर उसके माथे और एक गाल पर मल दिया।

'अरी री री ! तुमने तो मेरी कलाई ही तोड दी।' लाखी ने हँसी से कराहा।

निन्नी ने सोचा कुछ ज्यादती हो गई। लाखी को छोड दिया और मुस्कराती हुई तनकर खडी हो गई।

बोली, अच्छा, अच्छा, बुरा न मानो। 'तुम मुझे लगा दो जहाँ तुम्हारा जी चाहे।'

'ऐसे नही। तुझको हराकर लगाऊँगी तब तो बात है।' लाखी ने गोबर वाली मुट्ठी को तानकर कहा।

निन्नी हार नही सकती थी परन्तु वह हारना चाहती थी। भागने के बहाने एक दो डग हटी। लाखी उस पर झपटी। निन्नी ढीली पड गई। लाखी ने लिपट कर उसके माथे और दोनो गालो पर गोबर पोत दिया।

'ब्याज समेत पा लिया, लाखी खिलखिलाती हुई बोली, तुम्हारे गोरे गालो पर कैसा बैठा है! अहा हा हा !! डिठौना सा लग गया!!!

अब किसी की नजर नही लग पावेगी ।।।।

'तुम्हारे एक गाल पर लगने से रह गया है, तो तुमको किसी की दीठ लग जावेगी !'

'हूँ ! तो लगादो, नही तो अपने हाथ से लगाये लेती हूँ ।'

'वाहर चलो, कोई न कोई लगा देगा ।'

'कोई कैसे लगा देगा ? जो तुमको लगा सकता है वही तो मुझको लगा सकेगा ।'

'भावजे है वाहर और कुछ वहिने ।'

'तुम्हारी है कोई ननद ?

'अरी हिष्ट !

'लाखी हँस पडी । निन्नी की वडी-वड़ी आँखो मे वनावटी रोप और होठों पर मुस्कान की फड़कन थी । लाखी की भी उतनी वड़ी तो नही परन्तु काफी वडी आँखे थीं, उनमे से हँसी झर रही थी ।

'तुम्हारा व्याह नही हुआ ?' लाखी ने पूछा ।

'हम गूजरो मे छुटपन मे ब्याह नही होता,' निन्नी ने उत्तर दिया और उससे प्रश्न किया, 'और तुम्हारा ?'

लाखी ने नाही की, 'हम अहीरों मे भी छुटपन मे व्याह वहुत कम होते है और फिर आये दिन की आफतो मे व्याह-व्याह की किसको सूझती है ?'

झोपडी के वाहर होली का हुल्लड़ मच उठा था । जिन्होने सोचा था होली दो तीन घण्टे ही खेलेगे उन्होने अनजाने ही उसकी अवधि वढ़ा दी ।

निन्नी ने वाहर निकल पड़ने का आग्रह किया । लाखी तो चाहती ही थी । निन्नी ने आँगन मे से डवले मे धूल भरी और एक पुराने घड़े में से पानी उड़ेल कर अगले आक्रमणो के लिये सामग्री सँजोली । लाखी ने थोड़ा सा गोवर हाथ मे लिया । दोनो वाहर निकल पड़ी ।

ओट ले-लेकर पुरुष भाग रहे थे । सँभाले हुये घूंघटो को खोल-खोल कर स्त्रियाँ हँसती हुई कीचड के लड्डू वना-वनाकर पुरुषो पर फेक

रही थी। पुरुष नाच-नाचकर, फिरकियां खा-खाकर, उन लड्डुओ को पीठ पर झेल-झेल ले रहे थे।

एक स्त्री ने व्यङ्ग किया, 'बड़े पुरुष बने फिरते हो, पीठ दिखा दिखा दे रहे हो !!'

उस पुरुष ने अकडकर कहा, 'तो लो, हम छाती पर तुम्हारे वार को लेगे।' और आँखों पर हाथ रखकर सामने खडा हो गया। उसके मुँह पर काफी गोवर और कीचड पुत चुका था। पहिचान मे आना कठिन था।

स्त्री ने छाती को ताककर लड्डू फेका। निशाना खाली गया।

'उई ! उई !! उई !!! उई !!!! पुरुष ने उसकी असफलता पर ठठोली की।

स्त्री ने दूसरा लड्डू कुछ निकट जाकर फेका, वह छाती पर जाकर बिगस गया और लिपट गया।

'आह रे !' पुरुष ने आहत होने का बहाना किया।

'अभी क्या हुआ है, अटल लाला।' स्त्री बोली, 'अभी तो मेरी मटकिया मे और कई हथियार है !'

आखो पर से हाथ हटाकर पुरुष ने कहा, 'अरी भौजी, तुम्हारे हथियारो का क्या कोई ठिकाना है !'

लाखी निन्नी के पीछे थी। धीरे से बोली, 'निन्नी, यह तुम्हारे भाई अटल है। कीचड और गिलाव मे कितने सन गये है !! पहिचान मे ही नही आते !!!'

अटल की दृष्टि लाखी के सुन्दर गेहुँये चेहरे पर गई। माथे पर गोवर का उल्टा-पुल्टा तिलक-सा लगा था और एक गाल पर छवा था दूसरे गाल पर क्यो नही पुता इसको देखने के लिये अटल ने लाखी पर फिर आँख फेरी।

'उधर क्या देखते हो लाला, यह लो !' एक स्त्री ने कीचड़ का लड्डू धस्स से उसकी छाती पर रेल दिया।

अटल ने एक स्त्री के पीछे अपनी बहिन निन्नी को पहिचान लिया और वहाँ से भाग गया। कुछ स्त्रियाँ, अपने हथियार सम्भाले हुये उसके पीछे दौड़ी। कुछ और पुरुष पीठ दिखलाते भागे, वे अटल को छोड़कर इनके पीछे पड़ गईं। निन्नी और लाखी पीछे रह गईं। वे भी कीचड़ और गोबर के अस्त्र-शस्त्र साधे हुये थी कि किसी पुरुष की छाती, पीठ, सिर या कन्धे को लक्ष्य बनावे, परन्तु गाँव की लड़कियाँ होने के कारण अपने को अशक्त पाती थी।

'तुम भी किसी पुरुष पर चला दो। लाखी से न रहा गया।

'चला दो मेरे भाई पर! यही है न तुम्हारे मन मे?' निन्नी ने चुटकी काटी।

'हूँ ऊँ!' लाखी ने मुँह बिगाड़ कर कहा।

'अकेले मे मिल जाय तो मुँह पर गोबर का लड्डू मारूँ' उसने सोचा।

निन्नी हँसकर बोली, 'अच्छा जाने दो! मन्दिर की तरफ चलो। वहाँ रसिये गाये जायेगे।

'कौन गायेगा?'

'हम तुम सब।

'बाबाजी भी गायेंगे?'

'क्यो नही गायेंगे? वह एक गीत गाते हैं। उसका रसिया मैं गा दूँगी। तुम गा सकती हो?'

'हाँ ऐसे ही। कितनी देर होंगे रसिये? माँ गाय को चराकर आती होगी। चून पीसना है, फिर रोटी बनानी है।'

'सो तो घर-घर मे यही होने को है। होली तो नित्य-नित्य आती नही। चलो। थोड़ी देर भूखे ही सही।

वे दोनो एक हुल्लड़ की ओर बढी। हुल्लड़ मोड़ पर था।

'बहलोल भागा! सिकन्दर भागा!!' कहते हुये कुछ लोग अटल के पीछे-पीछे दौड़ रहे थे। अटल दिल्ली के बादशाह का अभिनय करता हुआ अकड़ के साथ कूदता-फाँदता जा रहा था। बीच-बीच में

धूल और छोटे-छोटे कङ्कड़ और सूखे गोबर के टुकड़े पछियाने वालों पर फेंकता जा रहा था। दिल्ली वाले को वैसे नहीं मार पाया था तो यो सही।

कुछ समय के उपरान्त यह भीड़ मन्दिर के खण्डहल के पास पहुँची। फूस से छाये हुये खण्डहल के बाहर अधेड़ अवस्था वाला हँसता हुआ पुजारी निकला।

चिल्लाया, 'बोलो रे हरिमाधव की जय ! राधाकृष्ण की जय !!' भीड़ ने दुहराया।

पुजारी बोला, 'मेरे पास थोड़ा-सा लाल रङ्ग है बरसों से सेत रक्खा था। नहा-धोकर आओ। माधव के प्रसाद-रूप थोड़े-थोड़े छीटे सबको मिलेंगे।'

'और मिठाई' पीछे से एक ने कहा।

पुजारी हँस पड़ा,—'यह सिकन्दर बोला !'

जिसने मिष्ठान की मांग पेश की थी वह हँसता हुआ आगे आया।

'सिकन्दर तो भाग गया ! इन लोगों ने भगा दिया। मैं तो अटल हूं।' उसने बतलाया।

'हा, हां अटल गूजर, जो अपने खेतों के साथ-साथ राधा कृष्ण की खेती को भी रखावे। कैसे भूलूं ? नहा-धोकर आ जाओ रसिया गाओ और कुछ मीठा पाओ।'

पुजारी मन ही मन डर रहा था। कोई गोबर, कीचड़ या मिट्टी का लड्डू उस पर न ठोक दे। उन सबों को वहाँ से टालना चाहता था।

धीरे से लाखी ने निन्नी से अनुरोध किया, 'हुमक कर एक लड्डू न तोड़ दो बाबाजी के पेट पर।'

निन्नी धीरे से हँसी। चिऊँटी लेकर निषेध किया, 'अरी नहीं। ये सब कहेगी बडी फूहड़ है।'

वे सब यहा से टल गये, परन्तु सीधे नहाने के लिये नही गये। बहुत दिनो का बँधा-रूँधा हुआ मन फूट-फूट कर बह-बह पड़ रहा था।

जाते-जाते भी कुछ न कुछ उपद्रव करते जा रहे थे। अन्त मे स्त्री-पुरुषों की दो टोलियाँ बन गई। वे गाते-गाते नदी पर पहुँच गये। दोनो दल दो घाटों पर जा पहुँचे। दोनो के बीच मे नदी की मोड और एक छोटी-सी टेकडी थी।

नहाने-धोने के समय लाखी ने देखा निन्नी की गोरी देह बहुत पुष्ट है। यह ऐसा क्या खाती होगी, लाखी सोचने लगी।

इसके उपरान्त स्त्री-पुरुष मन्दिर पहुँचे। पुजारी ने एक बर्तन मे थोडा-सा लाल रङ्ग घोल रक्खा था सबके ऊपर थोडा-थोडा छिडका लाखी और निन्नी पर भी थोडे से छीटे पड़े। उनको अच्छा लगा, परन्तु नाक भोह सिकोडी।

पुजारी ने हँसकर कहा, "राधाकृष्ण का प्रसाद है। इसके सब अधिकारी है।'

अटल बोला, 'प्रसाद कहाँ है? मिठाई दीजिये बाबाजी मिठाई।'

पुजारी मन्दिर-या झोपड़े में से ज्वार के फूले और गुड़ ले आया। सबको थोड़ा-थोड़ा बाँटा।

पुजारी ने आग्रह किया—'अब राधा बल्लभ के सामने एक रसिया और नृत्य हो जाय।'

एक अधेड स्त्री बोली, 'चून पीसना है, रोटी बनाना है। दोपहर चढ़ आया है महाराज।'

परन्तु अन्य स्त्रियो को इसकी परवाह नही थी।

निन्नी ने आग्रह का साथ दिया,—'बाबाजी जो भजन गाया करते है उसी का रसिया गा दो फिर घर चलो।'

अटल ने समर्थन किया।

स्त्रिया गाने लगी कई भोडे स्वरो मे निन्नी का स्वाभाविक मधुर कण्ठ अलग सुनाई पड रहा था। गीत तीन कडी का ही था स्त्रिया एक कड़ी को गाकर चुप हो जाती थी तो पुरुष लय को पकड़ लेते थे।

जाग परी मैं पिय के जगाये,
भाग जगे पिय मोरे घर आये,
उन नैनन मे नीद कहा है जिन नैनन मे आप समाये।

गाते-गाते कुछ स्त्रियाँ नाचने लगी। निन्नी और लाखी ने नही नाचा वे केवल गाती रही। पुरुष भी नाचे। जब अटल नृत्य कर रहा था तब वह आँख चुरा-चुराकर लाखी की ओर देखता था। और किसी ने देख पाया हो या न देख पाया हो, पुजारी ने एकाध बार देख लिया। परन्तु वह रुष्ट नहीं हुआ।

गाते-गाते और नाचते-नाचते दो घडियाँ बीत गईं दिन और चढ आया। मन्दिर के सामने के बरगद के विशाल पेड़ को आक्रमणकारियो ने नही काटा था, इसलिये उसकी छाया मे आमोद-प्रमोद चलता रहा। किसी को भी चढता हुआ दिन नही अखरा। परन्तु थोडे से ज्वार के फूलो और थोडे गुड मे अधिक समय तक विनोद नही चल सकता था, इसलिये वे सब अपने-अपने घरो को जाने के लिये हुये।

पुजारी मोद-मग्न था। बोला, 'भगवान ने हम थोडे से लोगो को यह शुभ दिन दिखलाया। सदा खेती-पाती हरियाती रहे। पशु और दूध घी बढे एक दिन आवे जब तुम सब सोने-चाँदी से भरपूर हो जाओ। और अपने मन्दिर को जैसा का तैसा बनवा लो। फिर यहा भजन हो नृत्य हो, रास लीलाये हो। बार-बार इसी तरह होलियाँ आया करे और इससे बढकर प्रसाद बटे।'

स्त्री पुरुष अपनी पुरानी व्यथाओ को भूलकर आने वाली व्यथाओ का सामना करने के लिये चले गये।

[३]

सध्या होते ही गाँव वालो को अपनी-अपनी थोडी-सी खेती के रखाने की चिन्ता लगी। सब के सब खेत एक ही जगह न थे, कोई कही और कोई कही। कुछ पास पास भी थे परन्तु अधिकाँश अलग-

अलग बीच-बीच मे पहाडियाँ और जङ्गल। बहुत सी अच्छी भूमि परती पड गई थी, जान पड़ता था जैसे छोटा सा जंगल वह भी हो।

अटल हट्टा-कट्टा युवक था। आंखे भीग चुकी थी। सिर के बाल लम्बे थे इसलिये सारी आकृति मे भीमता आ गई थी। कई साल के कठोर ज़ंगली जीवन ने उसके लम्बे चेहरे की लम्बी नाक को कुछ और लम्बा कर दिया था। अपनी बहिन निन्नी को सुख पूर्वक और सुरक्षित रखने मे उसने कोई कसर नही लगाई थी। माँ बाप मार डाले गये थे, घर मे अब केवल वे दो बच्चे थे।

होली की दिन भर की थकावट ने अटल को निश्चेष्ट कर दिया। खेत की रखवाली के लिये जाना था। अपने अलसाये हुये मन को वह बहिन से नही छिपा पा रहा था।

निन्नी ने कहा, 'मैं जाती हूँ खेत के मचान पर, तुम घर पर सो जाओ'

'वाह! वाह!! तुम भी थक गई होगी?'

'मैं तो नही थकी। मै खेत को रखा लूँगी। चिन्ता मत करो।'

'और जो कल थक गया तो कल रात भी जागती रहोगी खेत पर क्या?'

'हाँ, हाँ जागती रहूँगी। कल थकोगे ही क्यो?'

'कल दोज है। कल भी त्योहार मनाये।'

'मै भी मनाऊँगी और रात भर जाग लूँगी।'

'जंगली भैसे, साँभर, चीतल, सुअर आयेंगे और खेती को मिटाकर जायेगे। एक झपकी आई और मैदान साफ!'

'और तुम रात भर जागते रहो?'

'यही तो एक दुविधा की बात है।'

'कोई दुविधा नही। कमान, तरकस भरे तीर और तलवार लिये जाती हूँ। तुम भी चलो। बारी-बारी से जागे और सोवेंगे।'

'यह ठीक है चलो।'

वे दोनों हथियार लेकर खेत पर चले गये। रात होते ही अटल मचान पर सो गया। निन्नी बगल में तीर कमान और तलवार रक्खे हुये बैठी रही।

चन्द्रमा का उदय हो आया था, अब चाँदनी छिटक चली। पास के और दूर के खेतों मे रखवालो का हा-हा हू-हू सुनाई पड़ने लगी। ठण्डी हवा डैने से मारकर सरसराने लगी। निन्नी ने अपनी मोटी चादर लपेटी और अटल के पैताने रक्खे हुई दूसरी चादर उसको उढा दी। निन्नी हा-हा हू-हू का शोर नही कर रही थी।

चुपचाप बैठी हुई खेत के कोने पर आँख पसारे थी। पवन के झोको के कारण कभी-कभी मेढ के छोटे-छोटे झाड-झकूटे हिल जाते थे तो उसको किसी वन्य पशु के आ जाने की शंका हो जाती थी तुरन्त कमान पर तीर चढा लेती थी।

दो पहर रात गये आस-पास के खेतो की हा-हा हू-हू कम हो गई। और दूर के खेतों की बहुत क्षीण। चाँदनी ऐसी छिटक आई कि दूर का भी स्पष्ट दिखलाई पड़ने लगा। जिन झकूटों का निन्नी को कई बार जङ्गली पशु होने का भ्रम हुआ था, अब वे शका का कारण न रहे।। परन्तु बीच-बीच मे आंख झपकने लगी। झपकियों के बीच में अधमुंदी आंख से जाग पडने पर कभी सुअर और कभी जङ्गली भैंसा हवा के सर्राटे के साथ दिखलाई पड-पड जाता था। वह आया, वह आया और गया! मन को भासने लगता। हाथ तीर कमान पर जाता।।

यदि मै थोडा-सा सो लूँ? भैया को जगादूँ? उसने सोचा। नहीं, दिन भर के थके हैं और मैं कुछ वैसी थकी नही हूँ। यदि अकेली ही आई होती तो क्या इस तरह की झपकियाँ ले-लेकर खेत की रखवाली करती? जब ग्वालियर को दिल्ली का सुल्तान घेरे हुये था और जङ्गल पहाड़ के किसी बडे पेड पर रात काटते थे, तब ये, झपकिया क्यो नहीं आती थीं। उसने अपने मन से पूछा और झटके के साथ झपकियो को भगा दिया। अगडाई ली, आँखे मीडी, इधर उधर देखा कि कोई

जङ्गली जानवर तो नही आ घुसे है खेत मे, और सजग सावधान होकर बैठ गई अव कदापि नीद नही आने पावेगी। उसने निश्चय किया। सोचा, धीरे-धीरे कुछ गाऊँ। दिन वाला गीत याद आ गया और वह गाने लगी—

जाग परी मै पिये के जगाये

उसको स्वय अपने गाने का ढङ्ग और अपना स्वर बहुत भाया गीत समाप्त नही हो पाया था कि उसको लगा जैसे कोई वडा जानवर खेत मे आ गया हो। गायन को समाप्त करके खेत के कोने कोने को आँख मे टटोलने लगी। कोरा भ्रम था, उसने निर्धार किया।

खेत से थोडी ही दूर नदी बह रही थी। उसके एक सिरे का पानी बहता हुआ दिखलाई पड रहा था। चन्द्रमा की रिपटती हुई झिलमिल जान पडती थी, मानो चाँदी की चादरो के आवरो पर आवरे चिलचिला रहे हो। छोटी-छोटी सी आडी-सीधी लहरे उठ-उठकर इन आवरो को पहन-पहन लेती थी। सम्पूर्ण लहरो का समूह चाँदी की उन चादरो को ओढ लेने की होड-सी लगा रहा था। पवन के आने जाने वाले झकझोरें इन आवरो को और भी चचल कर रहे थे। लहरो की कल-कल झोको पर नाचती खेलती हुई खेत के हरे पौधो को झूम पर उतर उतर पड रही थी। चन्द्रिका खेत के हरे पौधो की अधपकी बालो को अपनी कोमल उँगलियों से खिला-सी रही थी। हरी पत्तियो पर जमे हुये ओसकण चमक-चमक कर बिखर-बिखर जा रहे थे। निकटवर्ती जङ्गल के लम्बकाय वृक्षो के वडे-बडे पल्लवो को खरभरा-खरभरा कर पवन मानो किसी दूर देश को चला जा रहा था। कभी सनसनाहट और कभी सडसडाहट। इन्ही ध्वनियो मे होकर नाहर से डरे हुये साभरों और चीतलो की तीक्ष्ण और कभी मन्द पुकार। निन्नी ने सोचा, जानवर दूर है परन्तु उसने मन पर इस आश्वासन को टिकने नहीं दिया। भैसे और सुअर तो चुपचाप ही आवेगे वह और भी सचेत हुई।

मचान ऊपर से ढका हुआ था और चारो तरफ से खुला हुआ निन्नी ने चन्द्रमा को देखने के लिये मचान के बाहर सिर निकाला और

ऊपर की ओर आँखे की । लम्बी-लम्बी बरोनियो को भौहो ने छू लिया। आँखे इतनी बड़ी कि उनको वास्तव मे हिरन के छौने की आँख कहा जा सकता था निन्नी ने सोचा आधी रात हो चुकी है । सिर मचान के भीतर कर लिया, भाई की ओर देखा । वह गाढी नीद मे सो रहा था । कभी-कभी खुर्राटे भी भर लेता था जो नदी की कलकल से टकरा जाते थे निन्नी चाहती थी अटल निश्शब्द सोता रहे, क्योकि आँख का उतना भरोसा न करके कान बहुत अधिक ध्यान के साथ लगाये हुये थी—कही कोई वनैला पशु न आ रहा हो ।

पवन धीरे-धीरे मन्द पड़ा । अटल के खुर्राटे विलीन हो गये । नदी की लहरो के अवगुण्ठन छोटे पड गये और चाँदी की चादरे सी तनने लगी । खेत पौधो की झूम हलकी पड गई जैसे सो गये हो । निकटवर्ती बडे पेड़ो की खरखराहट भी निरन्तर न रही ।

एक दिशा मे उन रजत लहरो के उस पार छोटी-छोटी पहाडियो के ऊपर एक ऊँची पहाड़ी सिर उठाकर धूमिल नेत्रो मे चाँदनी को भर-सा लेना चाहती थी, ऊँची पहाडी का शिखर धुये का स्थिर पुञ्ज सा जान पडता था । नदी के इस पार दूसरी दिशा मे, विशाल वृक्षो की सेज के पीछे एक ऊँचा पहाड चन्द्रमा को मानो नीचे उतर आने के लिए आवाहन सा दे रहा था । बीच-बीच मे पतोखी टी—टी ची—ची कर देती थी जिससे न तो चाँदनी विचलित हो रही थी और न पर्वत के ऊँचे शिखर का ध्यान ही । निन्नी की दृष्टि कभी खेत की ऊँघती हुई बालो पर कभी नदी की चमकती हुई चञ्चल ऊर्मियो पर, कभी दूरवर्ती धूमिल पहाड पर और कभी निकटवर्ती पहाड के शिखर पर जा रही थी ।

जहाँ भी रहू इस प्यारी नदी की दमकती हुई कल्लोलिनी धार को अपने पास मे रक्खू । बाहर जाऊँ तो क्या उसको बांधकर, समेटकर नही ले जाया जा सकता ? ऊँघती लहराती बालो को किसी कागज़ पर उतार लिया जाय । पहाडो की ऊँचाइयो को एक स्थल पर क्यों न इकट्ठा कर लू ? बड़े-बडे पेडो के बन्दनवार बना लिये जाये और

डालियों-पत्तो के साजो के झरोखे। उनमे से चाँदी की कड़ियों वाली लहरो को नाचता हुआ देखा जाय और फिर गाऊँ—'जाग परी मैं पिय के जगाये'—लहरें चाँदी और मोतियो के हार से पहिने हुये इठलाती हुई नाचती रहेगी, बन्दनवार सदा हरे रहेंगे, पत्तो की झिल-मिलियाँ निरन्तर चाँदनी की भीगी हुई चमक और फूलो की महक से लदी रहेगी। उसने सोचा। साथ ही स्मरण हो आया—यदि सिकन्दर या उस सरीखा कोई आ गया तो इनको फिर रोंद डालेगा। जिस भांति बनेले-पशुओ से खेती की रक्षा तीर कमान द्वारा होती है क्या उसी भाँति इस नदी और उस जङ्गल पहाड की रक्षा उसी तीर-कमान से नही हो सकती? परन्तु किसानो को यह सब सर्वनाश के लिए छोडकर गिरि कन्दराओं की शरण लेनी पडती है। राजा लोग अपने थोड़े से भाई-बन्धुओं को किसी गढ मे बन्द करके लड़ते-लड़ते मर जाते हैं और उनकी स्त्रियाँ चिता मे जलकर भस्म हो जाती है! क्या ये स्त्रियां तीर-कमान चलाना नही जानती होगी? क्या इनके खेत नही होंगे जिनकी रखवाली करने के लिये उनको मचान पर तीर-कमान और तलवार लेकर बैठना पड़ता हो? उनके खेत नही होगे, क्योंकि रानियाँ तो पर्दे मे मुँह छिपाये बैठी रहती है। सुनती तो यही आई हूं परन्तु क्या उनके हाथ-पैर इतने निकम्मे होगे कि अपने ऊपर आँख और हाथ डालने वाले पुरुषो को घूंसे से धरती न सुंघा सकें? कैसी स्त्रियाँ होगी ये! खाने को इतना और ऐसा अच्छा मिलते हुये भी मन उनके ऐसे मरियल!! चिता मे जलकर मरे स्त्रियो पर हाथ डालने वाले!!! मैं तो कभी इस तरह नही मरने की।

निन्नी ने सहसा दात भीचे।

उसको अपने विचार पर आश्चर्य हुआ। मुस्कराई और खेत के ऊँघते हुये पौधों पर दृष्टि फेरती हुई नदी की ऊर्मियो का चाँदनी के साथ खेल देखने लगी।

हवा और भी ठण्डी हो गई। पहाड़ की ऊँचाइयो, जङ्गलो, विशाल वृक्षो के बन्दनवार बडे-बड़े हरे पल्लवों के झरोंखो, इन चमकीली चंदीली लहरों और पतोखी की उन बोलियों को कैसे एक ही स्थल पर इकट्ठा किया जाय? वह अधमुंदी आँखो सोचने लगी। अच्छा, बहुत सी मिट्टी को सानकर उससे नदी प्रवाह, पहाड़, वृक्ष, पल्लव गेहू चने के लहराते हुये खेत बना लिये जायेंगे। मिट्टी के एक भवन मे यह सब आ जायगा। और उस पतोखी की बोली?, मै गाऊँगी—जाग परी जब परन्तु-विकल्प आगे न बढा। झीम आई और माथा झूम गया, मचान के ढक्कन से धीरे से जाकर टिक गया।

आधी घडी के उपरान्त उसको भासित हुआ मानो नदी की लहरों की कलकल से अटल के खुर्राटे जा टकराये हो। हडबड़ा कर आँख खोली। देखा तो खेत के बीच मे एक बडा सुअर चड़ाको के साथ अन्न का संहार कर रहा है।

निन्नी ने तीर-कमान संभालकर आसन जमाई। सांस साधकर लक्ष्य बाँधा। तीर एक सर्र के साथ सुअर के एक बाजू को फोडकर गर्दन के पार आधा निकल गया। सुअर हुड़-हुड़ करके वही चक्कर खाने लगा अटल जाग पडा। निन्नी ने कमान की डोर पर दूसरा तीर साध लिया था। कुछ क्षण उपरान्त सुअर समाप्त हो गया।

अटल बोला, 'ऐसा अच्छा निशाना तो मै भी नही ले सकता हूं।'

'हूं ऊँ! तुमसे ही तो सीखा है।' निन्नी ने कहा।

ऐसे लक्ष्य निन्नी ने कई बार वेधे थे। अटल स्वयं अच्छा निशाने-बाज था परन्तु वह निन्नी को इसी तरह उत्साहित किया करता था। और फिर इतनी देर तक सोते रहने का प्रायश्चित भी तो करना था। अटल ने अनुरोध किया, 'बेटी तुम सो जाओ। मैने जी भरकर सो लिया है।'

निन्नी यही चाहती थी। अटल रखवाली के लिये बैठ गया और निन्नी सो गई। सुअर को दूसरे जानवरो के लिये बिजूका बनने के लिये वही पडा रहने दिया।

[४]

दूसरे ही दिन दोज थी। हरे भरे युग मे दोज के दिन पूजा, पकवान रङ्ग, गुलाल, अबीर और नाच-गान वाली होली मनाई जाती थी परन्तु राई गाँव मे दोज के दिन के लिये भी सिवाय पूजा और गाने—नाचने के और कुछ न था, पूजा पुजारी के जिम्मे और उछलकूद साधारण जनता की—मानो बटवारा कर लिया हो।

पुजारी के सिवाय बाकी लोगो के लिये निन्नी को बेधा हुआ बनैला बडा सुअर था। जिन लोगो के मन मे दोज के मनाने की साध क्षीण थी वे लोग भी धूल-धक्कड और गोबर कीच-गिलाव की मौज मे मस्त हो गये।

दोज के दिन फिर लाखी और निन्नी की जोडी बन गई। अटल और भी अधिक बहुरूपियेपन पर चढ गया। नर-नारी हँस रहे थे।

'लाखी, आज तो तुम्हारे सारे सावले-सलौने शरीर को गोबर में लपेटूगी।' निन्नी ने झपटकर लाखी को पकड़ते हुये कहा।

वह उससे चिमट कर बोली 'लपेटो, अपने सारे अगो को तुम्हारे अगो से रगड दूगी सो गोबर मे आधा साझा हो जायगा।'

'अच्छा तो चलो।'

'हाँ होने दो। ह! ह!! ह!!! ह!!!!'

'ह! ह!! ह!!! ह!!!! ह!!!!'

दोनो एक दूसरे से उलझ गई और देर तक उलझी रही। उनको इस बात की परवाह नही थी कि ऊपर से कमर तक उघारी हो गई है। बाहर हुल्लड की आहट पाकर दोनो अलग हो गई। दोनो कीचड और गोबर मे सन गई थी। दोनो के माथे, गालो और दूसरे अगो पर गोबर की आडी टेढी चित्रकारी बन गई थी। दोनो एक दूसरे को देखकर बल खाते हुये हँस रही थी। दोनो ने अपने वस्त्र सभाले।

निन्नी ने कहा, 'तुम बहुत तगडी हो, हाथ ऐसे है जैसे महुये की डाले पर मै भी किसी तरह पार पा ही गई। होस हो तो फिर आओ।'

'मेरी बाहे यदि महुये की डाले है तो तुम्हारी साँप की रस्सी जैसी है। हे भगवान कैसी कस जाती है! अच्छा अब चलो दूसरो को छकावे।'

'डर के मारे कोई भी स्त्री तुम्हारा सामना नही करेगी। किसी पुरुप को न डांटो?'

'अरे हिप्ट! गॉव की लडकी है न। ऐसा नही हो सकता। तुम इस गाँव की लड़की नही हो, हमारे भाई पर खेल लो न होली!'

'वाह! बड़ी वैसी हो!! क्या कहेगे गाँव के लोग?'

'अच्छा तो कुछ और सही।'

'पुजारी को छकाना चाहिये, बड़ा रसिया जान पड़ता है।'

'कैसे? लगता है तुमने कुछ भापा है।'

'जव कल गाना-नाचना हो रहा था, तब वह मेरी और तुम्हारी तरफ बार-बार देख रहा था। कभी-कभी भीगकर रीझ-रीझकर।'

'मेरी तरफ! मैंने नहीं परख पाया।'

'परख लेती तो क्या करती?'

'हॉ करती तो कुछ नही। वनैला पशु तो है नही जो उस पर तीर छोड़ देती।'

'आज लखना कि देखता है या नही तुम्हारी ओर।'

'अच्छा, पर अभी तो देर है। तव तक एक और खेल खेले। मिट्टी के गोदे बनाकर एक भवन बनावे। ऊँचे पहाडो की टुङ्गी जैसे गोल शिखर, उन पर कगूरे। द्वारो पर बड़े-बड़े पेडों के तनो जैसे खम्भे और वड़ेरियो पर फूल-पत्ते, मोर, नीलकण्ठ और पतोखियों; पत्तो के झरोखो जैसे झिलमिली। पास मे गेहूँ चने के खेत और उनके नीचे से राई नदी.........'

'इतना सब बनाने के लिये तो कई बरस चाहिये ।'

'अरी खिलौना ही तो है, आओ बनावें—छोटा बनायेगी जितनी मिट्टी अपने पास है उतनी से ही ।'

दोनो इस प्रकार का खिलौना बनाने को पिल पडी । घण्टे दो घण्टे इस खेल मे बीधी रही, तब तक गाँव वालो का हुल्लड समाप्त हो गया । वे सब नदी मे स्नान करने के लिये चलने को हुये । उसके उपरान्त मन्दिर जाना था । फिर रात के शिकार की पङ्गत होनी थी ।

अटल लाखी के आँगन मे आया ।

खिलौने को देखकर बोला, 'ये क्या भदूने से बनाये हैं? नहालो, मन्दिर चलना है ।'

लाखी अटल की ओर आँख फेरकर निन्नी को देखती हुई मुस्कराने लगी ।

निन्नी ने पीठ फेरे हुये कहा, 'हमको यह भवन बना लेने दो पहले ।

अटल ने व्यङ्ग किया, 'ओ हो हो हो । महल बना रही है मिट्टी के लोदों का !! रहने के लिये फूस की एक अच्छी मड़ैया तो बनाले पहले ।'

निन्नी ने हठ किया, 'इसको बनालूँ तो वह भी बन जायगी ।'

अटल लाखी को देखता जाता था और निन्नी से चलने का हठ कर रहा था । अन्त मे निन्नी को मानना पडा । वे दोनो नहाने के लिये उसके साथ चली गईं ।

नहा-धोकर गाँव के नर-नारी मन्दिर पहुँचे ।

पुजारी ने थोडा-सा लाल रङ्ग पहले ही घोल रक्खा था । सब लोगो ने दोज की पूजा की नई लाई गई छोटी सी मूर्ति को प्रणाम किया । पुजारी ने घी की दो-चार बूँदों से होम किया और फिर से प्रसाद रूप लाल रङ्ग के थोडे से छीटे सबके ऊपर छिटके । निन्नी के ऊपर छीटे डालने मे उसका हाथ झिझका । उसकी कसर को लाखी पर पूरा कर दिया । दो छीटे उसके गालो पर जा पडे पुजारी ने अपने बेसुरे गले से एक होली गाई ।

उरझो ना श्याम कही मानो,
फट जैहै चुनरिया जिन तानो।
कंस राजा को राज बुरो है,
गोकुल की गुजरिया मत जानो।
उरझो न श्याम कही मानो,

इस होली को नर-नारियो ने अलग-अलग गाया। निन्नी का मधुर कण्ठ फिर सबसे ऊपर अलग रहा। गाने के समय पुजारी की आँख जैसे ही निन्नी पर जाती उसको निन्नी के हाथ मे तीर-कमठा और बिधा हुआ मृत सुअर नजर आता। 'विकट है यह लड़की' वह सोचता।

जब स्त्रिया नाचने लगी और बारी-बारी से पुरुष, तब पुजारी लाखी को कभी क्षणार्द्ध के लिये सीधे और कभी कनखियो देखता। लाखी की आँख छिप-लुककर, बरबस-सी अटल की ओर जा रही थी इसलिये उसने पुजारी की दृष्टि को एकाधबार ही पकड़ पाया। निन्नी अपने गायन और दूसरो के नृत्य पर इतनी ध्यान-मग्न थी कि उसने केवल कभी-कभी ही यह जानने की चेष्टा की कि पुजारी की आंख कहा घूम रही है उसने पुजारी को अपनी ओर देखते हुये नही पाया।

गायन और नृत्य की समाप्ति पर पुजारी ने गुड़ और ज्वार के थोड़े से फूले प्रसाद मे बांटे।

'निन्नी के लक्ष्यवेध का करतब ग्वालियर के राजा को दिखलाया जाय'—पुजारी ने उसको प्रसाद देते हुये कहा,—'तो राजा और उनके सामन्त दातों तले उँगली दबा लेगे।'

विना किसी संकोच या बनावट के निन्नी बोली, 'क्यों, मैंने कौन-सा ऐसा पहाड़ तोड़ गिराया है? मेरे दाऊ ने तो नाहर और अरने भैसे एक-एक तीर से ही मार गिराये है।

अटल ने निन्नी को उत्साह दिया, 'बाबाजी, इसने भी नाहर और अरने भैसे एक ही तीर से मार गिराये है। इसका काम राजा मानसिंह देखेगे तो बड़े प्रसन्न होगे।'

'मै ले चलूँगा ग्वालियर-नरेश के सामने। राजा मुझको अच्छी तरह जानते है। ग्वालियर मे बडे-बडे मन्दिर है और'—पुजारी ने बात पूरी नही कर पाई।

निन्नी ने रूठते हुये से टोका,—'मुझको नही जाना ग्वालियर वुआलियर किसी राजा-आजा के सामने।'

सब लोग हँस पड़े।

अटल ने कहा—'ग्वालियर बहुत बड़ा नगर है।

'होगा,'—वह उपेक्षा के साथ बोली 'थोड़ी सी झोपड़ियो का हमारा यह गॉव, सॉक नदी और ये जङ्गल-पहाड़ बहुत अच्छे।'

पुजारी हँसा,—'हा हा, ग्वालियर नगर मे सुअर, रीछ, नाहर अरने भैसे कहाँ रक्खे है निन्नी के लिये !'

निन्नी इस बात के भीतर अपनी प्रसशा को अवगत करके अभिमान मे फूल गई।

उसके मुंह से निकला, 'लाखी, तुम भी तीर-तलवार चलाना सीख लो। मैं सिखलाऊँगी, भैया सिखलायेंगे। तुम भी जङ्गली जानवरो को मारना।'

लाखी ने अटल को कनखियों देखा और पास खड़ीं हुई स्त्रियों को देखती हुई मुस्काने लगी। स्त्रियॉ निन्नी की ओर मुंह बिदका कर हँस पड़ी जैसे कह रही हों स्त्रियो का तीर-कमान चलाना कितना भद्दा काम है!

निन्नी ने सहमकर सिर नीचा कर लिया। अटल ने लाखी की कनखीली चितवन को देख लिया था। वह किसी न किसी मिस उनको जी भरकर देख लेना चाहता था। जब वह हँसती थी उसके गालो मे गड्ढे पड जाते थे। एक गड्ढे पर दो-तीन लाल छीटे उभर उभरकर उस हँसी को रङ्ग से रचा-देते थे। अटल उस रचावट को देखना चाहता था परन्तु देख नही पा रहा था।

वे सब हँसते-हँसते वहाँ से चल पडे। उस थोडे से प्रसाद को रास्ते मे ही चबाते चले आ रहे थे। एकाध बार मुडकर लाखी ने देखा तो उसकी आंख अटल की आंख से मिल गई।

घर पहुँचकर लाखी ने सोचा यदि मैं तीर चलाना सीख लूँ तो कुछ बुरा तो करूँगी ही नही निन्नी भी तो लडकी ही है, गूजर–कन्या सीख सकती है तो अहीर-कन्या किससे कम है? मै बहुत जल्दी सीखूँगी। निन्नी से सीखूँगी-अटक पडी तो अटल से भी। इसमे कुछ भी घट नही। सीख लेने पर मैं ग्वालियर के राजा के सामने लक्ष्यवेद भी दिखलाऊँगी राजा खा थोड़ी ही जायगा। निन्नी लजाती है, पर मै नही लजाऊँगी। ग्वालियर देखूँगी, बडा नगर है, बड़े–बड़े चौक और चौहट्टे होगे, मन्दिर और मूर्तिया, चटकदार कपडे पहने हुये नर–नारी।

लाखी की खेती नही थी। पहले बहुत पशु थे परन्तु आक्रमणकाल मे एक गाय को छोडकर बाकी सब या तो मार डाले गये या मर गये। बाप मारा गया और सयाना भाई भी। अब माँ बेटी गाय के दूध और दूसरो की मजदूरी पर जीवन निर्वाह कर रही थी। कभी-कभी कुछ फल-फूल भी ले आती थी।

लाखी निन्नी से तीर चलाना सीखने लगी। माँ उसको बहुत प्यार करती थी। सीखने में कोई अड़चन नही डाली। अटल ने भी सिखलाया बीस–पच्चीस दिन के बाद खेती पक गई और फसल काटकर घने जङ्गल के भीतर छिपे हुये खलियानो मे रख ली गई। लोगो का अधिकाश समय वही बीतने लगा। जङ्गली जानवरो से रक्षा, आग और तीर-कमान से होती रहती थी पुजारी भी वही रमने लगा। अनाज के गाहे जाने पर उसको मन्दिर के नाते कुछ अश मिलना था। बदले मे वह पुराणो की गाथा मे कुछ अपना निमक–मिर्च मिलाकर सुनाया करता था। रात को आग के आस–पास कभी भजन और कभी रायसे।

अनाज गाह लेने के बाद ग्वालियर से राज्य की उगाही के लिये महर्ता आये और पुरानी परम्परा के अनुसार उपज का छटवाँ अंश ले गये। उगाही मे उन्होने कोई क्रूरता नही की बाकी अनाज को किसानों ने छिपा-लुकाकर रख लिया।

लाखी और उसकी माँ की कटाई, मजदूरी मे थोडा-सा अनाज मिल गया, परन्तु वह दूसरी फसल तक के लिये पर्याप्त न था। फसल कटने के उपरान्त गाव मे कोई और मजदूरी नही थी। जीवन–यापन के लिये लाखी ने तीर–कमान के अभ्यास को और भी बढा दिया परन्तु लोहे के तीर या उनके फल दुष्प्राप्य थे इसलिये बाँस के तीरो की नुकीली नोको से काम चलाया। कोई बडा जानवर न मार पाये तो पेट पालने के लिये चिडियाँ और नदी की मछलियाँ ही सही।

आखेट के लिये वह निन्नी और अटल के साथ जङ्गल मे जाने लगी। निन्नी एक दिन कुछ अन्तर पर एक दिशा मे अलग पड गई। केवल लाखी और अटल साथ रह गये।

अटल उसको जी भर देख लेना चाहता था कई बार चाहा था परन्तु एक बार भी सफल न हुआ। वे दोनो एक पेड़ के नीचे किसी जानवर की आहट लेकर खडे हो गये। आहट की दिशा मे आंखें गड़ाकर देखने लगे।

अटल ने मुडकर लाखी की ओर जरा सा देखा। उसने आखो के संकेत से प्रश्न किया अटल ने एक नि.श्वास को दबाया। लाखी ने फिर प्रश्नसूचक दृष्टि की। उसके लम्बे केशो की एक लट कान पर से होठो की ओर आ गई थी। सिर का जरा-सा झटका देकर उसको पीछे किया।

अटल ने कुछ स्थिरता के साथ उसकी ओर देखा। लाखी ने आख नीची नही की।

धीरे से पूछा, 'क्या बात है ?'

'क्या कहूँ ? कैसे कहूँ बक नही फटता !'

फर भी ?'

'मै तुझको बहुत चाहता हूँ। बहुत प्यार करता हूँ।'

'मैं जानती हूँ।'

लाखी ने आँखे नीची कर ली। अटल ने उसके कन्धे को एक बाँह मे भर लिया।

'हम तुम एक होकर सदा साथ रहना चाहते हैं। कभी अलग नही होंगे।' अटल ने कापते हुये स्वर मे कहा।

'कैसे हो सकता है ऐसा? हमारी तुम्हारी जात-पाँत अलग-अलग है।'

'तुम मुझको चाहती हो या नही? पहले यह बात बतलाओ।'

'मैं क्या कह दूँ? तुमको कैसा जान पड़ता है?'

'मुझको जान पड़ता है कि हम—तुम एक हो जायेगे।'

'परन्तु जात-पाँत?'

'पहले हुआ है। हमारी-तुम्हारी जाति मे व्याह-सम्बन्ध हुये है। पुजारी वावा पुरान की कथाओ मे सुनाते रहते है।'

'मेरी माँ और तुम्हारी वहिन मान लेगी?'

'भरोसा तो है।'

'और गाँव वाले? पञ्च और मुखिया?'

"अच्छा, उन्होने न माना तो?'

'न माना तो मै क्या कर सकती हूँ?'

'फिर भी हम लोग एक हो सकते है और एक होकर रहेगे। मैंने प्रण कर लिया है।'

'निन्नी कभी-कभी ठठोली कर बैठती है। वह मेरे चाव को पहिचान गई है। कुछ गाँव वाले भी स्यात् जानते हो।'

'तुम्हारा मन पक्का है?

'मेरे मन से नही, अपने मन से पूछो।'

'वस, अव और कुछ नही पूछना है।'

अटल लाखी को कुछ क्षण अपनी बाँह मे कसे रहा। जिस दिशा से आहट आई थी उस दिशा से एक नर-मोर भागता हुआ आ रहा

था। लाखी तुरन्त अटल की बाँह से अलग हुई। कमान पर बांस का एक पैना तीर चढ़ाकर छोड़ दिया। मोर चीख के साथ वही गिर पड़ा। लाखी ने दूसरे तीर से उसकी पीड़ा को तुरन्त समाप्त कर दिया।

अटल के मुह से निकला, 'वाह ! वाह !!'

उसी क्षण एक झाडी के पीछे से तेदुआ उछल कर ओट के लिये भागा। अटल ने उस पर तीर छोडा परन्तु वह तेदुआ को नही लगा। तेदुआ भाग गया। उन दोनो ने पेड़ की आड़ छोड़ दी। मोर के पास गये। पीछे से निन्नी आ गई। उसने मृत मोर को देख लिया परन्तु भागते हुये तेदुआ को नही देख पाया था।

अटल ने ऊँचे स्वर मे कहा, 'देखो निन्नी, लाखी ने कैसा अच्छा निशाना लगाया है।'

निन्नी ने समर्थन किया, 'वह तुम्हारी गुरू निकलेगी दाऊ।'

अटल हँस पडा। लाखी भी खिलखिला पड़ी।

अटल बोला, 'मैंने तेंदुआ पर तीर चलाया था, पर मेरा निशाना खाली गया।'

'क्योकि तेदुआ से तो हम लोगो का पेट भरता नही। इस मोर से दो दिन काम चल जायगा।' लाखी ने कहा।

अटल अपने चूके हुये तीर को ढूंढ़ लाया। मोर को उठाकर वे सब घर की ओर चलने लगे। निन्नी के हाथ कुछ नही लगा था। लाखी को प्रसन्न देखकर वह कुढ रही थी।

बोली, 'मैं होती तो तेदुआ को यो ही न निकल जाने देती और मोर को न मारती।'

अटल ने इस व्यङ्ग के भीतर छिपी हुई कुढन को पहिचान लिया परन्तु उसके ऊपर कोई प्रभाव नही पडा। लाखी की प्रसन्नता मे कोई कमी नहीं आई।

निन्नी कहती रही, 'तीर खो जाता तो और भी अच्छा होता।'

अटल ने और भी चिढाया, 'तुम्हारा तीर तेंदुआ के पेट को छेदता तुम लपककर चढती पेड पर और तेंदुआ तीर को लिये हुये चल देता किसी पहाड की गुफा मे। तेंदुआ और तीर की तपस्या का फल कभी किसी को न मिल पाता।'

'भाग तो जाता तेंदुआ तीर को चुराकर। गर्दन मे न देती तो तीर के साथ वही सो जाता!!' निन्नी ने तिनककर कहा।

'अच्छा, अच्छा, बहुत अच्छा। फिर कभी सही।' अटल बोला।

लाखी ने निन्नी को फुसलाते हुये कहा, 'पेट भरने के लिये मोर मिल गया और निशाने के लिये तीर, यह क्या कम है?'

(५)

राज्य के सिपाहियो की उगाही के बाद पुजारी की उगाही सहज ही नही हो गई किसानो को अन्न के दर्शन राम-राम करके हुये थे, इसलिये वे देने मे किनर-मिनर कर रहे थे। पुजारी ने कहा, 'शास्त्र का वचन कभी न भूलो, छटवां भाग राजा का होता है सो तुमने दे दिया। बीसवा ब्राह्मण का होता है। उसके देने मे आना कानी करने से यह लोक तो बिगड़ेगा ही परलोक से भी हाथ धो बैठोगे।'

एक किसान खिसयाहट को छिपाता हुआ बोला, 'फिर हम क्या खायेगे?'

'भगवान देगे। मैं भजन जो करूँगा।'

'भजन करने पर भी दिल्ली के सुल्तान ने इतना खून बहा दिया। इतने घर और खडे खेत चौपट कर दिये!'

'देखा इस मूर्ख को! इस घोर नास्तिक को!! अब कोई नई विपद को बुलाने वाला है। करता है एक, भोगमान भुगतनी पडती है हम तुम सबको!'

'अरे, चुप रे चुप! पुजारी महाराज से कैसे बात करता है!!'

'तो तुम दे दो पहले। भर तो लिया है घर और गड्ढा गेहूँ चने से।'

'देगे नही तो क्या तुम सरीखे नट जावेंगे।'

रार-सी होती देखकर वहाँ अटल आ गया। उसने पुजारी का पक्ष लिया। बोला, 'मै तो अपने भाग को खुशी के साथ दूँगा देवता और ब्राह्मण का अंश देना ही पड़ता है। न जाने कहा से बढती हो जावेगी।'

अटल ने पुजारी के चेहरे पर गहरी सहानुभूति की मुस्कान पाई। अधिकांश किसान आनाकानी करते हुये भी जानते थे कि अनिवार्य का निवारण नही होने का इसलिये देने के लिये अपने को विवश पा ही रहे थे; अटल को दानवृत्ति मे पगा हुआ सा देखकर ढल गये। अटल ने सोचा पुजारी की सहानुभूति आगे चलकर काम देगी। सब किसानो ने देवता का वीसवा और ब्राह्मण का तीसवा, यानी पुजारी को कुल बारहवा हिस्सा भेट कर दिया। सब मिलकर अन्न का चौथा भाग किसानो के पास से निकल गया। तीन चौथाई फिर भी बचा रहा। उन्होंने मन ही मन कहकर संतोष कर लिया, जो बाहर के लुटेरे सब का सब ले जाते तो गाठ मे कुछ भी न बचता।

अटल अवसर ढूँढकर पुजारी से एकान्त मे मिला। बडी नम्रता और भोलेपन के साथ उसने चर्चा छेडी।

'महाराज, आपको इतना ज्ञान कहा से मिला? पोथी पत्र तो आपके पास थोड़े ही है, पर जानते आप जगत भर की बाते है।'

'अरे नही भाई। भगवान का भजन करता हूँ। मै तो भगवान के नाम के सिवाय और कुछ नही जानता।'

'बाबाजी, आपको रामायण, महाभारत और न जाने कितने शास्त्र रटे पडे हैं। क्या हम लोग भी पढ सकते है?'

'क्यो नही पढ सकते? तुम क्षत्रिय हो। वेद तक पढ सकते हो।'

'क्या आपने वेद पढे है?'

'अरे यों ही, कुछ-कुछ। कलयुग मे वेदो के पढने पढाने वाले रहे ही कितने है ?'

'क्या स्त्रिया पढ सकती है ?'

'वेद ! अरे राम राम !! स्त्रियाँ और शूद्र वेद नही पढ़ सकते।'

'वेद नही महाराज, पुराण-वुराण।'

'कैसे हो तुम। पुराण को वुराण नही कहते। अनादर नहीं करना चाहिये।'

'वैसे ही कहा। क्षमा कीजियेगा। स्त्रियां पढ सकती है ?'

'पढ सकती है। पुरो और वडे ग्रामो मे लडके-लडकियों की अलग-अलग पाठशालाये रहती ही है। आक्रमणकारियो के अत्याचारो के कारण वन्द हो गई है, उनमे लडकियां भी पढती थी।'

'अत्याचारियो का सामना कैसे किया जावे ?'

'धर्म से। धर्म के हीन-क्षीण हो जाने से, वर्ण के बिगड जाने से ही अत्याचारी सिर पर टूट पड़ते है।'

कुछ क्षण अटल चुप रहा। फिर उसने अपने स्वर मे नम्रता की पुट और अधिक वढ़ाई।

डरते-डरते पूछा, 'वाबा जी महाराज, कौन सा धर्म।'

'अरे धर्म जिसको अपने वडे लोगो ने बतलाया है, राधाकृष्ण की, सीताराम की भक्ति। साधारण लोगो के लिये इतना ही तो बहुत है।'

'महाराज, कृष्ण भगवान् वर्ण मे थे, पर उनकी जाति थी क्या ?'

'अरे तुमको इतनी सी वात नही मालूम। क्षत्रिय थे। खरे क्षत्रिय।'

'सो तो महाराज, सुना है। हम लोग गंवार है, गाँव के जो ठहरे जानते नही है इसलिये पूछा—भगवान् गूजर थे या अहीर।

'गूजर उनको गूजर कहते है, अहर-अहीर परन्तु पुराण मे उनको यदुवशी क्षत्रिय कहा है।'

'चद्रवशी तो अहीर और गूजर भी है।'

'हा हा, उनको चन्द्रवन्शी कह सकते है।'

गूजर और अहीर दोनो बराबरी के है।

'हा हा। काम दोनो के एक से है।'

'अहीर और गूजर मे ब्याह–सम्बन्ध हो सकता है? जब बराबरी के है, शास्त्रो मे ब्याह–सम्बन्ध की मनाई न होगी।'

'अरे रे रे? क्या कहते हो तुम!! पहले हुआ होगा, अब नही हो सकता।'

'आप जो पुरानी कथाये सुनाते है उनमे तो इससे भी बढकर कुछ बतलाते है।'

'अरे ओ! पढा न लिखा, धमकने लगा मठा मूसल की!! मै जो कथाये सुनाता हूँ वे त्रेता–द्वापर की है और यह कलियुग है।'

'आपने कलियुग की भी कुछ ऐसी कथाये सुनाई थी जैसे राजस्थान के किसी एक राजा की, जिसने हाल मे ही एक जाटन के साथ व्याह किया है।'

'मुह लगता है मेरे! पण्डित बनना चाहता है क्या? क्या अपनी बहिन को किसी अहीर के साथ व्याहना चाहता है? गूजर निर्वंश हो गये?'

'नही बाबाजी महाराज, नही ऐसा नही करूँगा, कभी नही। जैसी है उससे बढ चढकर उसका दूल्हा होना चाहिये। मैने वैसे ही पूछा।'

पुजारी का क्षोभ शांत हो गया। पुजारी उसकी और निन्नी की शारीरिक शक्ति को जानता था और गाँव मे दोनो को अपने प्रबल समर्थको के रूप मे पाता था।

पुचकार के स्वर मे बोला, मैने वैसे ही कढे पड कर तुमसे बात कह दी। निन्नी के लिये मै वर की खोज करूगा। तुम तो जानते हो मै इस कठोर काल मे भी देश देशान्तर की यात्रा किया करता हूँ। ग्वालियर जाने वाला हूँ। राजा मानसिह मुझको जानते है।

और उनके सामन्त सरदार भी। ग्वालियर मे गूजरो के कई भले घराने है। वे भी मुझको जानते है।'

अटल ने भोले भाव से पुजारी को मान्यता दी—'आपको जो न जाने वह किसी को नही जानता। आप तो व्यर्थ ही इस छोटे से गॉव मे पडे हैं।'

पुजारी ने कहा, 'राई नदी, ये जङ्गल और पर्वत मुझको भले लगते है। और फिर मैने प्रण किया है कि इस टूटे हुये मन्दिर का जीर्णोद्धार कराऊँगा और एक अच्छी सुन्दर मूर्ति की स्थापना कराऊँगा तब कही दूसरे स्थान की बात सोचूँगा। ग्वालियर इसी प्रयोजन से जाना है।'

'आप ग्वालियर कब जायेगे?' अटल ने पूछा।

पुजारी ने बतलाया—'दस पॉच दिन मे।'

'फिर कब लौटेगे महाराज?'

'दो एक महीने तो लग ही जायेगे।

[६]

सिकन्दर लोदी को ग्वालियर छोडे कई महीने हो गये थे। किले मे घिरे हुये राजा मानसिह, सामन्त सरदार, सैनिक और सेवक किले मे बाहर निकल आये थे और उजडे हुये ग्वालियर को फिर से बसाने के प्रयत्न कर रहे थे।

कई महीने के उपरान्त लोग अपने घरो को लौट आये। अत्यन्त उग्र कष्ट पानी का था। सडी गली लाशो के कारण सारे कुये गन्दे और खराब हो गये थे। नये कुये इतनी जल्दी खोदे नही जा सकते थे। किले के भीतर अच्छे मीठे पानी का पूरा प्रबन्ध था। राजा मानसिंह ने पुनर्वास के लिये आई जनता को किले के भीतर अस्थाई निवास दे दिया और कुओ के स्वच्छ करने का काम तेजी के साथ आरम्भ कर दिया। कुछ कुओ को साफ कर लिया गया और तली तक कई बार उनका पानी निकाल दिया गया। फिर गङ्गाजल की

बूदो और मन्त्रो के उच्चार से उनका पानी पीने योग्य बना लिया। इन कुओ के आस-पास के मकानों की जनता किले के बाहर आ गई। परन्तु अभी अनेक कुये शुद्ध होने को पडे थे। बाहर से ग्वालियर के निवासी पहले थोडे-थोडे फिर बडी सख्या मे आये। टूटे हुये मकानो को उठाने लगे। अशुद्ध कुओ की सफाई होती रही।

एक कुआं साफ तो हो गया था। परन्तु मन्त्रों से शुद्ध नही हो पाया था। कडाके की धूप पड रही थी। मजदूर चिथडो से सिर की रक्षा करते हुये लू और ततूरी मे काम कर रहे थे। कुये के समीप घनी छाया वाला नीम का पेड था। उस छाया मे सुस्ताने के लिये उनका मन ललक रहा था। परन्तु अन्तिम बार कुये का पानी निकाल कर अलग करना था। छाया मे बैठे हुये ब्राह्मण कुये को शुद्ध करने के लिये उकता रहे थे।

एक ब्राह्मण वैष्णव छाप के तिलक लगाये हुये था। पूजा-पत्री का कुछ सामान लिये हुये था। दूसरा उससे बातचीत करता हुआ चला आया था। वह शैव था।

शैव ने वैष्णव से कहा, 'गङ्गाजल की चार छ बूंदों से क्या होगा? मै कहता हू किसी फूल का, फूल न मिले तो शुद्ध मिट्टी का शिवलिङ्ग बनाकर 'ॐ नमः शिवाय' से अभिमन्त्रित करके कुये मे डाल दो, कुआं शुद्ध हो जायगा; क्यों जंजाल बढा रहे हो।'

'गङ्गाजल और फूल या मिट्टी मे जैसे कोई अन्तर ही न हो?' दूसरा बोला।

'शिव की जटाओ से गङ्गाजी निकली है। इसलिए शिव और गङ्गा मे अन्तर है परन्तु मैं पूछता हूं कि शिव बड़े या गगा बडी?'

'लोक समाज और समय के भेद से छोटे बड़े और बडे छोटे हो जाते है।

'क्या अनर्गल बात कहते हो ? जो छोटा है वह छोटा ही रहेगा जो बड़ा है वह छोटा नही हो सकता ।'

'हठ करने का तुम्हारा स्वभाव ही है विष्णु और शिव मे विष्णु को बडा कहा गया है, परन्तु किसी-किसी अवसर पर शिव बडे हो गये है।'

'कभी नही। असम्भव। शिव के सामने विष्णु की क्या बिसात ?'

'व्यर्थ झगड़ा करते हो। सब मार्ग एक ही ठौर को पहुँचाते है।'

'बिलकुल झूठ। सब मार्ग एक ही ठौर पर ले जाते हैं तो गिर पडो कुये मे नदी मे, पहाड पर से, किले पर से पहुँचोगे अन्त मे वैकुन्ठ धाम ! यही न ?'

'अर्थ का अनर्थ तुम जैसे तिलङ्गाना वाले करते है, वैसा तो कोई नहीं कर सकता ।'

'तिलङ्गाना वालो ने ही वेदो के भाष्य दिये है, नही तो डूब मरे होते चुल्लू भर पानी मे तुम गौड़-प्रदेश के सब ब्राह्मण !'

'तुम्हारे माथे मे तो लडने-भिडने के लिये कीड़े कुलबुलाया करते है। तुम्हारी समझ मे इतनी छोटी–सी बात क्यो नही आती कि कुये–बावली मे गिरकर मरना और बात हैं; भिन्न मार्गो से पूजा और आरा–धना करके अभीष्ट तक पहुँचना दूसरी बात। ध्यान और मन को एकाग्र करके किसी भी मार्ग को ग्रहण कर लेने से मनुष्य मोक्ष को पा सकता है।'

'नदियो, पेड़ो, साँप के बिलो, टौरियो, पहाडो, भेड़िया, बिलावों और चाहे जिस पत्थर के टुकडे का ध्यान और मन से पूजा करो कि मिला मोक्ष ! अरे तुमने ही इस युग को कलियुग बनाया !! धिक्कार है तुमको !!!'

'धिक्कार तुमको और तुम्हारे बाप को। अज्ञान के वश समझते हो कि तुम्हारा शैवमत ही सब कुछ है !! नितान्त भ्रम मे पड़े हो। नरक मे जाओगे।'

दोनो के स्वर तीक्ष्णता पर चढ आये थे। दोनो ने अपने-अपने आसन छोड दिये। कुये पर काम करने वाले मजदूर काम छोडकर छाया मे आ गये। शायद तमाशा कुछ और निखरे सखरे, वे लोग चाहते थे।

'नरक मे बिलबिलाओगे तुम और तुम सरीखे सब जिन्होने वर्तमान जीवन को अपने स्वार्थ के सिवाय और कोई महत्व नही दिया। हम लिङ्गायत इस जीवन को स्वर्ग बनाते है और मरने पर कैलाश तो हमारे लिये है ही।' दूसरे ने डपट कर कहा।

मजदूरो का मुखिया बीच मे आ गया। निवारण करते हुये बोला, 'महाराज, लडो मत। हम लोगो के लिये भी कही कुछ है ?'

पहले ब्राह्मण ने तपाक से कहा, 'हम बतला सकते है, यह तिलगाना का विजयजङ्गम नही बतला सकता।'

जिसका नाम विजयजङ्गम बतलाया गया था, बोला, 'यह बतलायेगा। क्या बतलाता है बतला '

भजन, भजन, भजन करो मूढो।' उसने बतलाया।

'किसका ?' मजदूरो के मुखिया ने पूछा।

विजयजङ्गम ने तुरन्त उत्तर दिया, इस पेटू का अपनी मजदूरी और पेट काटकर भरो इस भिखमगे का पेट। भजन से इसका यही प्रयोजन है।

वह झपटा। मजदूर आडे आ गये। वह छुआछूत के डर से वही ठिठक गया।

विजय ने कहा, ये काम करे, तुम भीख माँग-माँग कर खाते रहो। यही है न तुम्हारे भजन की शिक्षा ?

मजदूरो का मुखिया बोला, 'हमारे भाग्य मे यही बदा है। पूर्वजन्म का फल जो भुगतना पडता है। आप सबके भाग्य मे पढना लिखना राज्य करना कराना लिखा है सो बडी जात मे जन्म लेते हो।'

'यह सब भ्रम है' विजय ने प्रतिवाद किया,—'जीवन मे, काम करना, श्रम से रोटी का उपार्जन करना और शिव का नाम लेना,

यही गौरव है। इसी मे जीवन की सार्थकता है। भीख मांगकर खाना छल कपट पाखण्ड से अज्ञानियो की श्रद्धा का सग्रह करते रहना यही सबसे बडा पाप है। पूर्वजन्म ने सबके लिए काम को प्रधान कर रखा है। पूर्वजन्म के सब दु ख श्रम और शिव की गायत्री से कट जाते हैं।'

मजदूर इस व्याख्या को नही समझे।

दूसरा विवादी बोला, बडा शिव की गायत्री वाला बना फिरता है। गायत्री केवल एक है केवल एक।'

'जिमको तुम लोगो ने छिपा-छिपाकर मटीला कर दिया है। सुना सकते हो इन लोगो को अपनी गायत्री।

'तुम तो हो मूर्ख ! गायत्री किसी को सुनाई जाती है ? अत्यन्त गोपनीय है—जड़—जङ्गम।'

शिव की गायत्री ऐसी है जिसका जप चाण्डाल भी कर सकता है और पवित्र हो सकता है, परन्तु तुमको अपना पेट भरने और पाखण्ड रचने से अवकाश कहाँ ?

'कहाँ लिखा है कि शिव की भी कोई अलग गायत्री है ?'

'वासव पुराण मे मूर्ख।'

'और अधिक गाली बकी तो ढेले से खोपड़ा तोड़ दूंगा।'

ढेले से खोपड़ा खोलने के पहले त्रिशूल से तुम्हारी आते हम पहले ही बाहर कर देगे।

फिर एक दूसरे पर झपटे। मजदूर फिर बीच मे आ पड़े।

'चल रे तिलङ्ग राजा के पास। वही न्याय और तेरा दण्ड होगा' वैष्णव ने चिल्लाकर कहा।

विजय भी चिल्लाया,—'मै तैलङ्ग नही हूँ गधे, मै कर्नाटक का हू जहा नन्दी और भगवान शंकर ने अवतार लिये। चल न्याय होगा तो मु ह काला किया जायगा।'

'कलयुग मे अवतार। चल वही निर्णय और न्याय होगा। दूसरा पूगे भरे स्वर मे बोला।'

मजदूर को उसने आदेश दिया, तुम लोग साखी हो हमारे साथ चलो।'

मजदूरो का मुखिया बोला, पर अभी कुछ हुआ तो है ही नही न ढेला चला और न त्रिशूल। बातें जो आप दोनो के बीच मे हुई है सो हम लोग समझे नही।

वैष्णव ने कहा, 'इसने भगवान की बुराई की यह तो तुम समझे ?' सब न चले, अकेले तुम ही चले चलो।'

'फिर यहां काम कौन करायेगा ?' मुखिया ने पूछा !

उस विवादी ने भर्त्सना की,—'भाड़ मे गया काम ! काम को देखते हो या धर्म पर किये आघात को ?'

'मुझको क्या,'—मुखिया ने उपेक्षा के साथ कहा,—'राजा का काम रुका पड़ा रहेगा। आप जानो कुआ रीता कर लिया गया है। आप गङ्गाजल और मंत्र से कुये को शुद्ध कर दो, फिर चले चलो।'

'धर्म के सामने कुंआ—वुआ कुछ नही। चलो मेरे साथ।' उसने हठ किया।

वे तीनों किले की ओर चले। किले के फाटक पर रोके लिये गये। राजा चौथे पहर सन्ध्या के समय मिलेंगे, उन लोगो को बताया गया। वे दोनो दृढ थे। मजदूरो का मुखिया मनचाहा विश्राम पा गया था।

तीनो फाटक के पास एक घनी छाया मे ठहर गये।

तीसरे पहर एक छोटी सी पोटली बाधे राई गाव का पुजारी भी वही आ गया।

आते ही उसने पूछा, क्या फाटक नही खुला अभी ?'

'चौथे पहर खुलेगा।' उसको उत्तर मिला।

विजय ने पुजारी की धूल-धूसरित और पसीने से भीगी हुई आकृति का निरीक्षण किया। पुजारी के चेहरे पर नम्रता थी। पुजारी ने दोनो को टटोला।

विजय के साथी ने पुजारी से प्रश्न किया, 'कौन हो, कहा से आये हो ?

उसने उत्तर दिया, 'छ कोस की दूरी पर राई नाम का एक उजडा हुआ छोटा सा गाँव है। वही से आया हूँ। नाम मेरा बोधन शास्त्री है।'

उस विवादी ने पूरी पडताल की—गोत्र, शाखा, पुत्र, पिता का नाम धर्म कर्म सभी पूछ डाला। जब पूरा पता लगा लिया तब जल पी लेने का अनुरोध किया। बोधन जल पीकर आया था, इसलिये कृपा बनाये रखने भर की वाछा प्रकट की।

'कैसे आये ?' उसने आने का प्रयोजन पूछा।

बोधन ने प्रयोजन प्रकट किया—गाव मे भगवान का मन्दिर था। आक्रमणकारियो ने नाश कर दिया। उसके जीर्णोद्धार इत्यादि की याचना के लिये राजा के पास आया हूँ।

एक से दो हुये—और दूसरा शास्त्री ! विजय के विवादी को अपने भीतर स्फूर्ति का स्पन्दन मिला। बोधन ने विवाद के आने का कारण पूछा।

उसने सविस्तार बतलाया।

बिवादो ने कहा, 'इनका नाम विजयजङ्गम है। तिलगाना या कर्नाटक के है। यह इसको नही मानते किसी भी मार्ग से भी जाओ पहूँचेगे अभीष्ठ स्थान पर ही।'

विजय बोला, 'कैसे मान जाऊॅ ? कूड़ा करकट फांकने और मोहन भोग लगाने के परिणाम और अन्तर को कैसे भूल जाऊँ ?'

बोधन सहमत नही हुआ।

विजय का विवादी बोला, 'अब हम एक से दो हो गये है। करलो जितना शास्त्रार्थ करना हो।'

बोधन ने मोर्चा लेने से इन्कार नही किया।

विजय ने व्यङ्ग किया—'दो नाही की एक हामी तो बन सकती है परन्तु दो मूर्खो का योग एक बुद्धिमान नही होता है।'

बोधन की भौह तन गई परन्तु बोला कुछ नही।

विवादी ने व्यङ्ग का उत्तर दिया, नाम इनका जङ्गभ है, परन्तु है वास्तव मे जड।'

बोधन विवाद को बढाना नही चाहता था और वह राजा के सामने वादी या प्रतिवादी के रूप मे नही पहुँचना चाहता था। बोला, घडी आधी घडी पीछे राजा के सामने पहुँच जाते है, वही निर्णय और न्याय होगा।

चौथे पहर का घण्टा बजते ही फाटक खुल गये। वे चारों भीतर पहुँच गये। कोट की ऊँची दीवार के भीतर कई छोटे छोटे कोट किले जिनमे सैनिको का आवास था। प्रत्येक फाटक पर सन्नद्ध सावधान पहरे। दक्षिणी दिशा के मैदान के छोर पर सास बहू और तेली के मन्दिर थे। वहा फूस के छोटे छोटे झोपड़े डाले हुये कुछ निवासी विपद के दिन काट रहे थे। कुओं के साफ हो जाने की प्रतीक्षा मे पडे थे। राजा का भवन उत्तरवर्ती कोट के भीतर था। इस कोट के फाटक पर थोडी ही देर की प्रतीक्षा के वाद राजा ने उन सबो को अपने कक्ष मे वुला लिया। वे सब राजा को पहिले से जानते थे। मजदूर को छोडकर बाकी तीनों को राजा भी पहिचानता था। उन तीनो को आसन दिया गया। मजदूर खडा रहा।

राजा मानसिह युवावस्था से आगे जा चुका था वडी काली आँखे भरी भौह, सीधी–लम्बी नाक, चेहरा भरा हुआ कुछ लम्बा। ठोडी दृढ होठ सहज मुस्कान वाले। सारा शरीर जैसे अनवरत व्यायाम से तपाया और कसा गया हो। कद लम्बा और छाती चौडी। घनी नोकदार मूछे।

मानसिह को इन लोगो के आने का कारण मालूम था परन्तु उसने विवाद के विषय को नही छेडना चाहा। पुराने परिचय को नया करने के लिये बोधन से पूछा, कहाँ–कहाँ कष्ट झेलते फिरते रहे शास्त्री जी? भगवान ने हमारी सवकी लाज रख ली तो फिर एक

दूसरे से मिलने के दिन पाये गये।' मानसिंह के स्वर की खनक ऐसी थी मानो तलवार झनझना गई हो।

बोधन ने अपने कष्टो की गिनती नही गिनाई, क्योंकि उसने मानसिंह और उसके साथियों की कष्ट गाथाये सुन रक्खी थी। उसने कहा, 'सुना था महाराज को घाव लगे।'

मानसिंह ने मुस्काकर उपेक्षा प्रकट की,—साधारण सी खरोचें थी। शास्त्री जी! दो तीन तीर छू गये बस। मेरे साथी अवश्य बहुत मारे गये और घायल हो गये। परन्तु उन्होंने जो परम्परा बना दी है उसके बल हम लोग ऐसे-ऐसे अनेक आक्रमणो का डटकर सामना करते रहेंगे। एक बात अवश्य बहुत दुख देती है जनता बहुत तबाह हो गई है और कुये अभी तक सबके सब साफ नही हो पाये है।

मजदूर हिलकर रह गया।

बोधन बोला, 'हुये जाते है महाराज, हो ही रहे है।'

राजा ने गाव का हाल पूछा।

बोधन ने सबसे पहले मन्दिर की दुर्दशा का वर्णन करके अपने आने का अभिप्राय प्रकट किया,—'एक आक्रमण मे दो सौ वर्ष पहले मन्दिर नष्ट हो गया था, फिर नष्ट किया गया और फिर बनवाया गया। अब की बार फिर नष्ट हो गया है। उस पर फूस छाया हुआ है श्रीमान् से फिर बनवा देने की याचना करने के लिये आया हूँ।'

राजा ने नि सकोच भाव के साथ कहा, 'पहले कुये, बावलिया, तालाब और नहरो का उद्धार कर लूँ फिर मन्दिर को देखूँगा। जितनी सामर्थ्य होगी सहायता करूगा, कुछ आप देशाटन करके सेठो से उगाही कर लीजिये।'

बोधन चुप रहा। राजा ने बात नही तोडी।

बोला, 'गाव की खेती पाती और जानवरो का क्या हाल है?'

बोधन ने कहा, 'भूमि अभी थोडी सी उठ पाई है। अगले वर्ष भगवान की कृपा से शेष भी हल—तले आ जावेगी, गाये-भैसे थोडी सी ही बची है जङ्गली पशु बहुत उपद्रव किये है।

'कौन कौन से पशु है जङ्गल मे ?'

'अरने भैसें, सुअर, रीछ, चीतल, साँभर—'

'नाहर–तेदुये भी हैं।'

'हा श्रीमान, नाहर–तेदुये भी है।'

'गाव मे कोई शिकारी, लक्ष्यवेधी नही है ?'

'छोटा-सा रह गया है गाव। उसमे दो तीन बहुत अच्छा लक्ष्य बेधते है। भाई, बहिने गूजर और एक अहीर–लडकी।'

लडकिया लक्ष्यवेध करती है ! धन्य है वह गाव !!

'अहीर की लडकी तो नौ–सिखी ही है महाराज, परन्तु गूजर की लडकी जैसी देखने मे सुन्दर और दृढ शरीर की है, वैसी ही तीर चलाने मे बडी निपुण है। सुअर, नाहर, तेदुये को एक ही तीर मे मार गिराती है।'

'एक ही तीर मे ! अच्छा !! अवकाश मिलते ही अहेर के लिये भी मैं किसी दिन आऊगा। आपके मन्दिर को भी देखूंगा और उसके उद्धार की शीघ्र ही योजना भी करूगा।'

बोधन ने मानो सब कुछ पा लिया। विजय और उसके विवादी के निर्णय, न्याय मे उसको केवल श्रोता की रुचि रह गई। राजा उस चर्चा को टालना चाहता था परन्तु बोधन ने उमङ्ग मे छेड दिया,—

'महाराज को इनके विवाद का कुछ निर्णय करना है।

राजा ने उन लोगों के प्रति उदारता भरी हुई आँख घुमाई, मानो आरम्भ करने के लिये कह रहे हो।'

विजय ने आरम्भ कर दिया—'जब लडाई चल रही थी यह ब्राह्मण ग्वालियर मे नही था, मै श्रीमान यही बन्द था। हम लोग दिन रात काम करते नही अघाते थे और न थकते ही थे। हम सबकी समझ

में आ गया कि जीवन इसको कहते है। भगवान शकर के सामने वर्ण, अवर्ण, सुजान-कुजात का कोई भेद नही। हम सब जब कन्धे से कन्धा भिडाकर लड रहे थे, सब एकाकार था तब इन लोगो की छूत-छात को मानते तो एक एक करके गिन-गिन कर मर जाते।

'वह आपदा का समय था। सकट के समय जो कुछ भी उचित किया जाय सब धर्म है। यह सनातन सिद्धान्त है परन्तु निरापद समय मे यह स्वतन्त्रता नही दी जा सकती।' विवादी ने कहा।

राजा ने प्रश्न किया 'और कोई समस्या है या इतना ही ?' मजदूर से पूछा, 'तुम कैसे आये ?

उसने विनीत उत्तर दिया, 'मै कुये की गोध का काम करवा रहा था। झूठ नही बोलूँगा श्रीमान्, इन दोनो मे न तो हाथा-पाई हुई है और न सिर फुटव्वल, केवल जीभ को लडाते रहे और हम लोग जैसी गाली कभी वक जाते है, वैसी गाली भी इनके मुह से नही निकली। केवल मूरख-दूरख कहा सो संसार भर ही मूरख है अन्नदाता।'

राजा ने हँसी को रोक कर कहा, 'तुम जाकर अपना काम देखो। तुम्हारी साखी की आवश्यकता नही पडेगी।'

मजदूर चला गया। राजा ने दोनो विवादियो की ओर दृष्टि फेरी-

विजय ने कहा, 'यह कभी यह कहते थे, किसी भी मार्ग से जाओ ईश्वर की प्राप्ति हो जायगी। संसार के गले पर खाँडा चलाते जाओ और भगवान का नाम लेते जाओ, तो क्या इस मार्ग से भी मोक्ष मिल जायेगा ? वर्ण, अवर्ण के भेद मानकर एक दूसरे से घृणा करते रहो, अछूतो को मनुष्य न समझो, छुआ-छूत के नरक मे रहते हुये भजन की माला डालते रहो तो क्या बैकुण्ठ प्राप्त हो जायेगा ? जो गायत्री सबको पवित्र कर सकती है उसको अन्धेरी मैली कोठरी मे बन्द रक्खो और कहो कि यदि किसी अन्य को इसकी झाँकी मिल गई तो वह अपवित्र हो जावेगी ! यह कैसी गायत्री ?—'

विवादी ने उसको और आगे नही बढने दिया। टोका—'इनके पास, महाराज, इन बातो का क्यो प्रमाण है?'

'हमारा वासव पुराण,'—विजयजङ्गम ने उत्तर दिया—'महाराज जानते है। मैंने लड़ाई के ही काल में कभी-कभी सुनाया है।'

'विवादी बोला, संसार पाप और पापियों से भर गया है। भजन और त्याग से ही पापों के फन्दे काटे जा सकते है। यह कहते है जीवन में सने रहो, क्षण-भगुर जीवन के मोह के माया मे लतपत रहो और एक वार नम. शिवाय कहा नही कि वैतरणी का बेडा पार हुआ।'

शास्त्रार्थ को उग्र तापमान पर पहुँचता हुआ देखकर राजा ने मुस्कान के साथ हाथ के सकेत से निवारण किया।

बोला, 'यह तो व्यर्थ का विवाद जान पडता है। मैने शास्त्रों को नही पढा है।' राजा एक क्षण चुप रहा।

विजय बीच मे कूद पढा,—'शास्त्र पढे है और नही भी पढे है तो सुने तो है।'

राजा ने उसको सकेत से चुप कर दिया।

'तपस्या बडी वस्तु है परन्तु सुनता हूं कि तपस्या करने वाले भय और अहङ्कार के कारण आत्म-दमन मे लीन हो जाते है और इस आत्म दमन को परमपद समझकर दूसरो को अङ्कित करने लगते है। जब ऐसे लोगो को इस लोक मे गौरव नही मिल पाता है तब उस लोक मे उतने अधिक गौरव के पाने की आशा पर उनको अचम्भा होने लगता है और पागल से हो जाते हैं।' राजा ने तौलते हुये कहा।

राजा चुप हो गया। वे दोनो चुप रहे। बोधन तो निश्शब्द तटस्थ बैठा ही था वे दोनो सोच रहे थे राजा ने निर्णय सा दे दिया है, परन्तु यह समझ मे नही आया कि किसके पक्ष मे दिया।

राजा ने बात समाप्त की, 'ये बैठे-ठाले के वाक्-युद्ध व्यर्थ है। कर्म मुख्य है। जो इससे बचना चाहते है, वे ही दाये-बायें की पगडण्डियाँ ढूंढते है। थोडी देर निस्तब्धता छाई रही।

विजय ने स्तब्धता को पहले भग किया—'वासव पुराण मे कुछ इस प्रकार की वात झूठे और सच्चे ढोंगियो के सबध मे कही गई है।'

विवादी बोला,'हमारे यहाँ भी कुछ इसी तरह की वात कही गई है।'

'वौद्ध-शास्त्र मे भी कुछ इसी प्रकार की वात कही गई है।' धीरे से बोधन ने अपना मत प्रकट किया।

राजा ने हँसकर कहा, 'मै नही जानता। मैने कही से सुना था, कह दिया। मै न शास्त्री हूं और न पडित। केवल इतना कह सकता हू कि लड़िये मत। कुछ काम करिये और आगे की तैयारी मे चिपट लगिये क्योकि आक्रमणकारी बार-बार अपने जनपद को रोदने के लिये आवेगे।' बोधन को आश्वासन दिया, 'मै शीघ्र ही आपके गाव की ओर आऊँगा।'

[७]

तीसरा पहर था लू बहुत जोर की चल रही थी। लाखी की माँ गाय के साथ नदी किनारे के भरके की हरियाली चराने और वही छाया में आराम करने के लिए गई हुई थी। लाखी ने बाँस के तीर तरकस मे भरकर एक कन्धे पर बांधे, कमठे को दूसरे कंधे पर लटकाया, छुरी कमर मे डाल ली और नगे पैर निन्नी की झोपडी पर पहुँची। अटल अपने दो बैलो और एक गाय के साथ नदी किनारे कुछ दूर चला गया था।

'अभी तो धूप कडी है। थोड़ी देर मे न चलो।' निन्नी ने अलसाते स्वर में कहा।

'सुअर और अरने भैसे नदी के किनारे किसी दह मे लोर रहे होगे। थोडी देर मे वे जङ्गल मे चरने के लिये घुस जायेगे। फिर क्या हाथ आवेगा? अभी चलो। लू का सरसराटा है, गर्मी नही लगेगी।' लाखी ने आग्रह किया।

अकेली चली जाओ।

'दो ठौ लोहे के तीर दे दो। बास के तीर से भैंसे का कुछ नहीं बिगडेगा और सुअर भी स्यात् ही आन माने।'

'यह कहो, मुझको लिवाने नहीं आई हो, तीरो के लेने को आई हो?'

'अबकी फसल पर कुछ बचा सकी तो लोहे के अच्छे तीर और फल बिसा लूँगी।'

'अच्छा, चलो।'

'दो न सही एक ही तीर मुझको दे दोगी?'

'भैया से माँग लेना, वह कई तीर यों ही दे देंगे।'

'यों ही कोई किसी को कुछ नहीं देता।'

'तो क्या सनसनाती दुपहरी में लडने को आई हो?'

'मेरे आने का बुरा लगा हो तो यह चली।'

'हाँ पहुँचो डाग मे। कहीं न कहीं भैया मिल ही जायेंगे, ले लेना उनसे तीर।'

'मिल जायेंगे तो परवाह नहीं और न मिलेंगे तो चिन्ता नहीं।'

लाखी मुंह मरोड कर चलने को हुई।

निन्नी ने मनाया, 'अरी ठहर भी। यों ही भकुरने लगी। मै चलती हूँ। तीर भी दूंगी।'

'लाखी पीठ करके खडी हो गई। उसाँसे ले रही थी। छरेरी देह पर वक्ष उभर-उभर कर गिर रहा था। निन्नी ने तीर, कमान, छुरी ले ली और जूते पहिने। लाखी को नंगे पैर देखकर उसको अपने जूतो पर अभिमान हुआ।

बोली, 'कुछ अनाज कहीं से आ जावे तो तुम भी जूते बनवा लेना।'

लाखी के चेहरे का रोष छूट रहा था। उसाँस को दबाकर मुस्कराने की चेष्टा करती हुई तिनकी, 'जब लोहे के तीर मोल लूँगी, तब जूते भी बनवा लूँगी।'

निन्नी हली। उसने कहा, 'सुभीता हो जाय तो मै, अपने लिये नई जोडी बनवा लूँ और तुमको अपनी दे दूँ।'

निन्नी के पैर का पंजा बडा था। उसके जूते अपने पैर मे डालकर जब चलेगी तब जो फडर-फडर होगी और दौडने पर एक पैर का जूता कही और दूसरे का कही फिकवर औंधा पड जायगा, सोचकर लाखी को हँसी आ गई।

बोली, 'नंगे पैर चलने मे जो मौज रहती है। वह दूसरे के आसरे नही मिल सकती।'

निन्नी को लाखी का हँसना अच्छा लगा। तरकस मे से लोहे का एक तीर निकालकर उसको दिया। कहा, 'अटक-भीर पड़ने पर एक और दूंगी।'

लाखी ने तीर को बड़े चाव के साथ तरकस मे रख लिया। दोनो चल पडी। जङ्गल गांव से लगा हुआ था। दूसरी ओर नदी। तेज लू से बहती हुई धारे कलोलें कर रही थी। उसको देख-देखकर उन दोनो की आंखे ठण्डक पा रही थी। इसी प्रवाह के कही समीप ही सुअर और जंगली भैंसे पडे होगे यह सोच-सोचकर दोनो हुलसा रही थी। वे दोनों नदी के किनारे को छोड़कर जंगल मे घुस गई। दोनो ने एक हाथ मे कमान और दूसरे मे लोहे का एक-एक तीर ले लिया। लाखी को लग रहा था मानो हाथ मे इन्द्र का वज्र आ गया हो। जगल मे धीरे-धीरे आहट लेती हुई दोनो बढ रही थीं। लू के झकोरो से भूमि के बारीक ककड़ और बिखरे हुये सूखे पत्ते उड-उडकर निन्नी के तपे हुये गोरे और लाखी के सांवले गालो पर पड़-पड जा रहे थे। उन दोनो ने ओढनी को सिर से लपेट रक्खा था। घुटनो तक मोटे लँहगे का कच्छा। उरोज़ कंचुकी से ढके हुये, पीठ से लगे हुये पेट उघाडे। गले मे मूँगी और काँच के छोटे-बडे दानो की माला। कलाहियो पर काच की दो-दो मोटी चूडियाँ। पैरो में काँसे या पीतल तक का कडा नही। शरीर का पसीना पिंड़लियो की धूल पर मोटी पतली रेखाये बनाता हुआ जा रहा

था। लू से उनको ठण्डक मिल रही थी। निन्नी की बड़ी-बड़ी और लाखी की कुछ ही छोटी काली कजरारी आखे घने पेड़ों के पीछे ध्यान के साथ कुछ टटोल रही थी। और कवे झुके हुये मानो 'उछलकर किसी पर टूटने वाली हो।

वे दोनो ऊबड-खावड़ जङ्गल मे कुछ दूर निकल गई। नदी का किनारा छूट गया था। निन्नी के होठ सूखने लगे।

धीरे से बोली, 'नदी का किनारा पकडो। प्यास लग रही है।'

लाखी ने खुसफुसाहट की,—'बस इतने ही मे !'

निन्नी की सीधी—पतली नाक का नथना जरा-सा फूल गया।

'नहीं पिऊँगी',—उसने निश्चय प्रकट किया, 'साँझ तक नही पिऊँगी और तुम पीने के लिये कहोगी तब तुमको भी नही पीने दूँगी।'

लाखी ने चुप रहने का सकेत किया। मानो कुछ हो न हो, मानो शिकार सब कुछ थी। दोनो उसी तौल के साथ आगे बढती गई। आगे एक छोटी सी पहाडी की ओट मिली जो लम्बाई मे नदी की ओर गई थीं। आख के इशारे से दोनो इसी के नीचे की ओर बढी। पहाडी के नीचे साल, सागौन महुये और अचार के वड़े वडे लम्बे पेड थे। पहाडी के ऊपर करधई की घनी हलकी कत्थई रग की झाडी थी। इस दोनो पर चढकर उस ओर के नीचे मैदान के जंगल की निरख करना चाहती थी परन्तु पहाडी की घनी करधई मे घुसने के लिये पतली पगडंडी भी नही थी। दोनो ने अपने लँहगो को घुटनो के ऊपर समेटकर कसकर कच्छा बाँधा। दोनो की गोरी-गोरी जाघे आधी उघड़ गई। लाखी की पतली सुती हुई सी थी और निन्नो को मासल पट्ठो वाली जैसे बैठके लगाने वाले किसी पहलवान की हो। दोनो करधई की घनी झाडी मे घुस जाने के लिये सकरे छोटे से ही मार्ग की तलाश मे झुक-झुककर, हाफ-हाफकर सास साधकर फिरने लगी। एक हाथ में कमान और दूसरे मे सूर्य की प्रखर किरणो मे चमक चमक जाने वाला लोहे का तीर साधे हुये। निन्नी के होठ सूख

रहे थे परन्तु उसने पानी न पीने का निश्चय कर लिया था। ततूरी के मारे लाखी के पैर जल रहे थे। चुरचुराहट न करने के अभिप्राय से वे दोनो सूखे पत्तो पर पद-चाप न करने की सावधानी बरत रही थी। लाखी नंगे पैर ही, परन्तु उसकी आँखे करधई की घनी झाडी की झांकों को टटोल रही थी। ततूरी की जलन अवगत ही नही हो रही थी।

एक ओर निकट ही, भूमि पर खुरो की अस्पष्ट खाँदी और करधई की डालियों की टूटन और कुचलन को देखकर लाखी के सांवले लाल चेहरे पर प्रसन्नता की रेखाये बिखर गई। तीर के इशारे उसने निन्नी को बतलाया। निन्नी की आँख ने भी तत्क्षण टटोल लिया। लाल गोरे चेहरे पर हँसी की गुलालो- सी फैल गई।

निन्नी ने गर्दन उझका कर संकेत किया, 'चढ चलें यही होकर।' दोनो उस टूटन- कुचलन पर पहुँच गई।

निन्नी ने धीरे से लाखी के कान मे कहा, 'अरने भैसे गये है यहा होकर।' 'चलो,' लाखी ने उत्साह प्रकट किया।

सोचा यदि एक अरने को भी बेधकर गिरा दिया तो उसकी खाल से अपने और बुड्ढी मां के लिए जूते बन जायेगे, बाकी को बेच कर कुछ अन्न आ जायगा, मास से मजदूरो की मजूरी चुकजायगी। 'परन्तु'यहभी मन मे उसी समय आया— परन्तु यदि न मिला अरना या तीर खाकर तीर समेत भाग गया तो निन्नी का उधार न मालूम कब चुका पाऊँगी।

निन्नी झाड़ी मे पहले धस गई। वह लाखी को पछेड़ना चाहती थी। खड़े होकर या झुक कर भी चलने के लिए गुंजाइश न थी। बैठ कर और कही लेटकर ही बढ़ा जा सकता था। वे दोनो कही बैठ कर और कही लेट लेटकर रेगने लगी। ऊंची छातिया पत्थरो और करधई के मोटे कांटों से टकरा-टकरा जा रही थी परन्तु मानो उनमे पत्थरो और कांटो से भी लड़ जाने की दम हो। करधई की टेढ़ी-मेढ़ी डाले सिर से

बाँधी हुई ओढनी मे अटक-अटक जा रही थी। गोरी सलोनी भुजाओ मे काटे खरोंचे कर रक्त की पतली लीके निकाल रहे थे, धून और धूप उनको सुखाकर मरहम का सा काम कर रही थी। उन दोनो ने करधई की डालो मे उलझी हुई ओढनी को सावधानी के साथ सुलझाया और कमर से कस लिया। विना तेल के लम्बे-काले केश कुन्तलो मे आंधी के एक दो झोको ने धूल और करधई के छोटे- छोटे सूखे पत्ते भर दिये। वे दोनो अब अबाध- गति से धीरे-धीरे बढकर पहाडी की चोटी पर पहुँच गई। करधई के एक बडे झाड के नीचे खडे होने योग्य स्थान था। दोनो तीर-कमान साधकर खडी हो गई। इधर-उधर आंखे दौडाई, परन्तु टटोल में कुछ नही आया। घुटने छिल गये थे। हवा लगने से कुछ कसक जागी। झुक कर उनको पोंछा, फटकारा। सोचने और सुस्ताने के लिए बैठ गई। कान लगाये थी। पवन नदी की ओर बह रहा था। पेडो की कुछ खरखराहट आंधी की मद द्रुतगति के साथ दुर्बल या तीव्र सुनाई पडती थी। कुछ क्षण के उपरात नदी की दिशा मे पत्थर की ठोकर का शब्द सुनाई पडा। दोनो चौंक सी पड़ी। उझक कर देखा। कुछ नही दिखलाई पड़ा खडी हो गई। देखा नदी की ओर दो बडे-बडे सुअर चले जा रहे है। थोडी देर बाद वे नदी के भरके में उतर गये।

निन्नी ने कहा, 'ये पानी पीकर लौट जायेंगे चलो। लाखी असहमत हुई, पानी पीकर नदी के किसी गड्ढे मे लोटेंगे, ठहरो।'

थोडी देर ठहर कर वे दोनो उसी प्रकार पहाड़ी पर उतरी। जब नीचे पहुँच गई कुछ क्षण सुस्ताई। कमर से ओढनी खोलकर सिर से लपेट लिया और नदी के किनारे की ओर सावधानी के साथ चल दी।

वे आहट लेती जा रही थी। सिवाय आंधी की खरखराहट के और कुछ नही सुनाई पड़ रहा था। ज्यो-त्यो करके उस भरके मे पहुँची जहाँ दोनो सुअर उतर गये थे। भरके मे एक मोड थी। उस मोड़ से सूअरो के निकल जाने की ताजी खुरी बनी हुई थीं। भरके

के ऊपर छोटी-सी झाड़ी थी। वे उस झाड़ी की ओट के लिये भरके की सीधी ढाल पर पेट और पंजों के बल चढ़ी, कमान की डोर और तीर को मुंह मे चापे हुये।

ऊपर पहुँचकर पहले फूली हुई सांस को ठिकाने किया, फिर उझक कर कगार के नीचे डावर को देखा। डावर मे एक सुअर का सिर गर्दन तक निकला हुआ दिखलाई पड़ा। दूसरा सुअर नही दिखलाई पड़ा। सुअर की बडी-बडी खीसें थीं। निन्नी ने झाडी के झरोखे से सुअर की गर्दन का निशाना बनाया और डोरी को पूरा खींचकर तीर का सन्धान कर दिया। तीर गर्दन मे धस गया। सुअर वही हुडक कर पानी को मचाने लगा। एक उछाल लेकर किनारे पर आ पडा और चीं-ची करने लगा। दूसरा भरके के नीचे से भागता हुआ जङ्गल की ओर चला गया। उस पर लाखी या निन्नी ने तीर नही चला पाया।

सुअर की हुडक और चीं-चीं पर ऊपर के डावर से फड़-फड़ का शब्द हुआ। कुछ ही क्षणो के उपरान्त एक भरा पूरा अरना भैंसा उस डावर के ऊपर वाले टीले पर आ खडा हुआ और इस भरके तथा उस टीले के बीच मे, किनारे पर खड़े हुए अस्तप्राय सुअर को देखने लगा। अरना कीचड मे लतपत था इसलिये अधिक भीमकाय दिखलाई पड रहा था।

उन दोनो ने कमानो पर तीर चढा लिया। पहले लाखी का छूटा। निन्नी ने नही चला पाया।

लाखी का तीर अरने के पट्ठे मे हटकर कलेजे की कोख पर पडा। और अधिकांश धस गया। अरने ने चीत्कार किया और तुरन्त भड-भड़ता हुआ टीले के नीचे चला गया। दूसरे तीर के चलने की बारी नही आई।

अरना जङ्गल की ओर भागा। पत्तो की चुरचुराहट पत्थरो की खड़खड़ाहट और वृक्षों की डालियो की सर्र-फर्र कुछ दूर तक सुनाई पडी। हवा उल्टी चल रही थी इसलिये फिर और कुछ नही सुनाई पड़ा।

किनारे पर पडा हुआ सुअर अन्तिम साँस ले रहा था। उसके मर जाने पर वे दोनो भरके से नीचे उतरी।

निन्नी के रूखे होठो पर भरी मुस्कान थी बोली, 'सोचती हूं पहले पानी पीऊँ या सअर की गर्दन मे से तीर निकालूं और उस भैंसे को ढूंढूं, फिर पानी पिऊँ।'

'पहले मै पीती हूँ। तुम जीती मे हारी।' लाखी ने कहा।

वे हँसती हुई पानी मे उतर गईं। जी भरकर पानी पिया।

निन्नी ने सुअर की गर्दन से तीर निकालकर धोया। सुअर को परिक्रमा सा देकर, देख लिया। उसको अपने निशाने पर अभियान था। लाखी बोली, 'उस भैसे को देख लो। यह तीर मुझको दे दो, स्यात् काम आ जाय।'

निन्नी ने नाक भो सिकोडी। कहा, 'भैंसे के पेट मे तीर लगा है। न जाने कहा पहुँचा होगा। भैंसा भी गया तीर भी। इसको भी देदूँ तो दो तीर गये।

लाखी को अखर गया। बोली, 'पेट मे नही लगा है खॉक मे लगा है, जहा ताक कर मारा था। कही पास ही पडा होगा। तुम्हारा तीर लौटा दू गी।'

'गर्दन को निशाना क्यो नही बनाया?

'आधी का झोका आ जाता तो तीर सिर के बाहर बह जाता या सिर की हड्डी मे लग कर निकम्मा हो जाता।

'ओ हो! निशाने की बडी सझम बूझ है।'

'आज नही तो फिर कभी दिखलाऊँगी। दे दो एक तीर। तुम सुअर की रखवाली करो तब तक मै अरने को ढूंढती हूँ।'

'नहा दूंगी। बास के तीर तो लिये हो। एक ही दिन मे दो तीर कैसे खो दूं।

'न दो मै बास के तीरो से अरने को ढूंढ निकालूँगी।

लाखी अरने को ढूंढने के लिये मुह बिगाडे हुये चल पडी।

निन्नी ने रोका, मेरा सिर न कोल खाओ। ठहरो चलती हूं।' लाखी नहीं रुकी। निन्नी दौड़कर उसके पास पहुँची।

बोली, 'तुम्हारा बहुत बुरा स्वभाव है। जब घर में भावज बन कर आओगी तब कैसे निभाव होगा ?'

लाखी की आँखो से चिनगारियाँ छूट गई।

तिनक कर कहा, 'बहुत बढ़-बढकर बोलने लगी हो ! जैसे कही की रानी हो। थोड़े से तीरो पर इतना घमण्ड। मैं बाँस के तीरो से वर करके दिखलाऊँगी जो तुम्हारे लोहे के तीर और भाले कभी नही कर सकेंगे। न मारा बाँस के तीर से, कभी अरने को तो मेरा नाम लाखी नहीं।'

निन्नी दौड़कर उससे लिपटने को हुई। लाखी हटी।

बोली, 'छोड दो मुझको यही और अपना सुअर उठा ले जाओ। तुमको गूजर होने का बडा अभिमान है तो हमको भी अहीर होने का कम मान नही है।'

निन्नी नही मानी। जबरदस्ती लोहे का तीर उसके हाथ मे पकड़ा दिया।

'हम तुम दोनो निर्धन है। दोनों एक से। तुम्हारी सम्पदा तुम्हारी माँ है, मेरी मेरा भाई। तुम मेरी और उनकी होकर रहोगी, बुरा न मानो लाखी !' निन्नी ने कहा।

लाखी तीर लिये रही। मुह फेर कर बोली, तुमसे किसने कहा कि तुम्हारे घर मे आकर बस जाऊँगी ?

'कोई कहे या न कहे, पर जानते सब है। तुम्हारी आँखें उनकी आँखे ढोल पीट कर कहती है।

'तुम्हारी आँखे ही पीटती ढोल जो तिल का ताड बना देती हैं।'

'अरी, मैने तो ताड का तिल बनाया है ! पुजारी बाबा ने ग्वालियर से लौटकर भाई से कहा था।'

'और यह भी कहा होगा कि तुम ग्वालियर के राजा की रानी होने वाली हो !'

'होवे कोई अभागिन। राई नदी और इस खुले जगल को छोड कर मै ग्वालियर के किले मे कैद होने को जाऊँगी! बावली हुई है क्या ?'

'और तुम बावली हुई हो क्या जो मै तुम्हारे घर की लाडा चेरी बनने जाऊँगी ?'

'नही लाखी घर की मालकिन।'

'फिर वही बात! तुम ऐसा कहोगी तो मै रो पडूँगी। गालियाँ दूँगी। अपनी माँ से कह दूँगी। मेरी सौगन्ध है, बतलाओ तुमसे किसने कहा है ?'

'भैया ने।'

'कब ?'

'जब पुजारी बाबा ग्वालियर से लौटे। भैया ने कहा कि राजा शिकार खेलने आवेगा और मन्दिर बनवावेगा अगले बरस की उगाही अथाही को भी छोड देगा।

'तुम्हारे भैया ने कहा, 'मैं पूछूंगी उन्होने कहा ?

निन्नी उससे लिपट गई। लाखी ने प्रतिरोध नही किया।

बोली, 'सचमुच बतला तेरे और भैया के बीच मे कभी कुछ ऐसी-वैसी बात हुई है न ?'

लाखी ने मुह छिपाकर कहा, 'ऐसी-वैसी बात क्या है ?

'कोई प्यार की बात ? जैसी कथा–कहानी मे सुनते आते है ?

'हट !'

'ऐ है है हट-बट नही ठीक बतला।'

'हमारी तुम्हारी जात मे ऐसा कैसे हो सकता है।'

'क्यो नही हो सकता है ?' भैया कहते है हो सकता है।'

'गाव वाले क्या कहेगे ?'

गाँव वाले कहा-सुनी करेंगे तो नदी ऊपर किसी दूसरे डूंगर जङ्गल में चले जायेंगे, परन्तु अपनी भौजी बनाने की साध को तो पूरा करके ही छोड़ूँगी।'

लाखी दूसरी ओर मुह करके लाजो मे डूबने उतराने लगी।

निन्नी ने कहा। 'तुम्हारी माँ को मै मना लूँगी।'

लाखी बनावटी खिसियाहट के स्वर में बोली, 'अरी तो क्या सब यही इसी जलती धूप में होना है क्या ?

निन्नी ने उसका मुह पकड़कर अपनी ओर मोड़ा। ठोडी को गदेली भरकर पुचकारा,—तो हँस दे मेरी लाखी, नही तो दङ्गा करूंगी। मेरी भली लाखी !!'

लाखी हँस पड़ी। बोली, 'लो अब चलो, अरने को ढूंढ ले।'

'और तीर चाहिये ? निन्नी ने हँस कर पूछा।

आँखो को स्थिर करके और होठो की लाज भरी मुस्कराहट को समेटते हुये उसने उत्तर दिया, 'एक ही बहुत है। अटक पड़ने पर और ले लूँगी।'

वे दोनो अरने की खोज मे निकल पडी।

थोडी दूर चलकर लाखी यकायक रुक गई। बोली, 'सुअर को अकेला छोड़ आई', 'कोई नाहर तेंदुआ आकर न घसीट ले जाय। तुम लौट जाओ।

'ले जाय तो ले जाय, 'निन्नी ने कहा तुमको अकेला नहीं छोडना चाहती।'

परन्तु उसने सोचा यदि नाहर तेंदुआ झोली मे आई शिकार को घसीट ले गया तो दो कुटुम्बो के भोजन की योजना नष्ट हो जायगी। जरा सी ठिठकी। लाखी समझ गई, उसने लौट पड़ने का हठ किया।

निन्नी ने तरकस से लोहे का तीर निकाला। बोली, अरना यदि घायल हुआ तो विपद का सामना करने के लिये दो तीर रक्खो मैं सुअर के पास जाती हूँ। जल्दी लौटना।'

लाखी दूसरा तीर लेकर अरने की खोज मे चली गई। निन्नी सुअर के पास लौट आई।

लाखी घायल अरने के खॉंद लेती हुई चौकन्नी सी जा रही थी। एक पत्थर पर उसको खून के छीटे मिले। आगे धार-सी लगी हुई थी। सामने एक नगा टीला था। टीले पर चढकर उसने इधर-उधर आँख पसारी। एक छोटी-सी झाडी की बगल मे घायल अरना बैठा हुआ झीमे ले रहा था। लाखी ने तरकस मे से बांस का बड़ा और पैनी नोंक वाला तीर निकाल कर अरने की गर्दन पर भरपूर बल के साथ छोडा तीर थोडा छिद्र कर रह गया। अरना उठा। उसने लाखी को देखते ही आँख से आग सी बरसाई। पूँछ उठाकर उसकी ओर झपटा। लाखी टीले पर थी। अरने की असमर्थता का उसको विश्वास था। फिर भी उसने डोरी पर लोहे के तीर को चढाकर पूरे जोर के साथ दोनों आँखो के बीचो-बीच मस्तक पर छोडा। तीर अरने के माथे पर पर खूँटी की तरह जा गड़ा। अरना सिर नीचा करके तीर के छुटाने की धुन मे लगकर खुरियो से भूमि को उखाड़ता हुआ गिर गया। लाखी ने संधान के लिये दूसरा तीर डोरी पर चढा लिया, कदाचित उठ खडा हो और दूसरी झपट लगावे। अरने का माथा धीरे-धीरे ढीला पडा। बॉस का तीर गर्दन से छूट कर नीचे गिर गया। थोडी देर मे अरने के पैर ढीले पड गये। उसकी अवशिष्ट शक्ति के निरीक्षण के लिये लाखी ने बॉस का एक तीर डोरी को पूरा खीचकर छोडा। वह गर्दन मे थोड़ा-सा ठठा। अरने ने सिर को थोडा-सा फडफडाया परन्तु वह खडा नही हो सका लाखी ने समझ लिया कि मर रहा है।

लाखी ने नदी की ओर मुह करके जोर से निन्नी को पुकारा परन्तु निन्नी को सुनाई नही पडा।

हर्षमग्न लाखी आधी घडी वही खडी रही। अन्तिम वार अरना हिला, फिर उसने टागे तान ली। समाप्त हो गया। लोहे का दूसरा तीर को डोरी पर चढाये लाखी सावधानी के साथ टीले पर से उतरी-जैसे

फूँक-फूँककर कदम रही हो वह तुरन्त उसके पास नही गई दूर से परिक्रमा लगाई जिस ओर अरने की लाल आँखे थी उसी ओर पहुँचने पर थमी। उन आँखो को देखकर शरीर मे फुरेरू आ गई। कितना भयंकर होता है अरना। उसने सोचा। फिर डोरी पर तीर चढाये हुये उसके समीप आ गई। पूरा विश्वास हो गया कि अरना कभी का मर चुका है।

ऊँह करके सिर पर पहुँच गई। लात की ठोकर से हिलाया। बांस के दोनो तीर तरकश मे रख लिये और कलेजे मे धसे हुये तीर को दोनो हाथो खीचने लगी। न खीच सकी। तब नीचे बैठकर दोनो पैर अरने मे अड़ाये फिर कठनाई के साथ तीर को निकाल पाया माथे वाले तीर को निकालने मे भी कठिनाई हुई। दोनो तीरो को वैसे ही लिये वह दौडकर निन्नी के पास पहुँची।

'मिल गया क्या?' निन्नी ने उसको देखते ही पूछा।

'हाँ हाँ, ये देखो।' लोहू लुहान तीरो को दिखलाते हुये उसने उत्तर दिया।

'मैं भी देखूँ। इतना हल्ला गुल्ला, हो गया है कि नाहर तेंदुआ कोई यहां नही आयेगा चलो, कहा है।' निन्नी ने कहा।

वे दोनों दौडकर अरने के पास पहुँची।

निन्नी ने अरने को ध्यान से देखकर मन ही मन प्रण किया, 'मैने यदि एक ही तीर से कभी अरने को, वही का वही ढेर न कर दिया तो मेरा नाम झूठा।'

बोली, 'वास के तीर से इसकी गर्दन फोड़ लेती तुम ? या माथे की खाल को ही वेध लेती।

'नही मैने झूठा घमण्ड किया था वहिन।'

'वहिन नही ननदबाई कहो ननदबाई।'

'फिर वही भद्दी बात।'

'भद्दी बात नही, सुन्दर सलौनी बात। जैसी तुम सुन्दर सलोनी हो।'

'तुमसे बढकर जो इतनी गोरी और लाल हो ?'

अच्छा अभी कुछ दिनो न मैं तुमसे भौजी कहूगी और न तुम ननद कहना। भैया के सामने वैसा ही वर्ताव करती चली चलेगी जैसा करती आई है। किसी को न मालूम पडेगा।

'कैसी रस मे डूब गई हो। इन जानवरो के उठाने की तो चिता करो।'

निन्नी ने हँसकर कहा, 'भैसे को तुम ऊठा ले चलो सुअर को मै टाँगे लेती हूँ।'

अरे राम !' लाखी बोली—'हम दोनो एक सुअर को ही न उठा पायेगी, भैसे के लिये तो चार छ आदमी चाहिये।'

'निन्नी ने सुझाया सुअर को टागे लिये चलते है फिर गाव से कुछ लोग आकर अरने को उठा ले जायेगे।'

वे दोनो सुअर के पास लौट आई उन्होने सुअर को उठाने का प्रयत्न किया, परन्तु न वन पडा। निन्नी ताव पर आ गई।

'इसकी दोनो टागे साधकर मै पीठ करके वैठ जाती हूँ। पीठ पर उठाती जाऊगी तुम पूरा वल लगाकर चढा देना। अकेली लादकर ले चलूँगी।'

'अकेली ! लाखी ने आश्चर्य प्रकट किया।

'हाँ अकेली पीठ पर लादकर ले चलूँगी। वैसे हम दोनो नही ले जायेगी।

'तुम मेरे हथियार ले लो।'

काफी प्रयास के वाद निन्नी ने लाखी की सहायता से उस बड़े सुअर को पीठ पर लाद लिया। नदी के किनारे वे दोनो चौथे पहर ही गाँव में आ गई। निन्नी ने सुअर को अपने घर मे उतार लिया। कुछ लोग गाँव मे थे और कुछ गाव के वाहर, वे सव आ गये। अरने भैसे का ठौर ठिकाना वतला दिया गया। उसको उठाने के लिये पाच छः चले गये। लाखी अपने घर जाने

की ही थी कि एक स्त्री ने आकर लाखी को समाचार दिया, 'तुम्हारी माँ को लू लग गई है। घर पर अचेत पडी है।'

लाखी और निन्नी दौड़ी गई।

[८]

जब वे दोनो घर पहुँची तो उन्होने बुढिया को अचेत नही, मरा हुआ पाया। लाखी बिलख-बिलखकर रोने लगी। निन्नी भी रोई, परन्तु लाखी को अधिक विह्वल देखकर सँभल गई।

लाखी कह रही थी, 'अब मेरा कोई नही रहा।'

निन्नी ने समझाया, 'हम लोग है। जन्म भर साथ नही छोडेगे।'

और स्त्रिया भी आ गई। उन्होने समझाया—बुझाया।

एक ने कहा, 'जब हम सब पहाड की कन्दराओ मे समय काट रहे थे तब यदि मा सिधार जाती तो रो भी न पाते कि हल्ला सुन कर कोई सिर पर न आ जाय। जहा हम लोग जियेगे-मरेगे, वही तुम भी। रोना पीटना बन्द करो। गाय को पालती पोसती रहो, अन्न थोडा-सा घर मे है ही, न होगा तो थोडा-थोड़ा लोग देंगे। और फिर जङ्गल लगा हुआ है। भगवान देंगे।'

अटल आ गया। उसने भी समझाया। बुढ़िया के दाह की तैयारी हुई उधर से अरने को लट्ठो पर लादकर कुछ लोग ले आये। अटल उसकी चीर फाड़ का प्रबन्ध करके बुढिया को दाह के लिए ले गया।

दाह करके जब अटल लौटा, रात हो गई थी। उसके बाद अन्य स्त्रियो के साथ लाखी नदी मे स्नान करने गई। लौटकर जब घर आई तब घर को सूना पाकर फिर रोई।

निन्नी ने अनुरोध किया, 'कहो तो हम लोग यहा आ लेटे, चाहो तो उस घर मे चली चलो। यहा अंधेरे सूने घर मे तुमको अकेली कदापि नही रहने दूँगी।'

अटल ने भी हठ किया।

लाखी ने सोचा इस प्रकार उस घर में पहुँचना लिखा था भाग्य मे ! परन्तु विवश थी । सूना घर भाँय-भाँय सा कर रहा था। मौत के घर मे वह अकेली नही लेटना चाहती थी। परन्तु मा के मरते ही अटल के घर जाना-बड़ी विडम्बना होगी ।

अटल ने उसको चुपचाप बिसूरते हुए देखकर आँगन से गाय को खोला ।

बोला, 'निन्नी तुम इनको लेकर ब'न-भांड़ो सहित आ जाओ ?'

लाखी इन्कार नही कर सकी । अटल गाय को लेकर अपने घर चला गया ।

गाँव के कुछ लोगो ने सोचा, 'यह गाय को हथिया ले गया और लडकी को भी फास लेगा ?'

निन्नी उसके थोडे से अनाज का वही प्रबन्ध करके वर्तन भांड़े लेकर जो थोड़े ही थे—लाखी को अपने घर लिवा लाई ।

गांव वाले सुअर और अरने के चीरने मे लगे रहे । गांव भर को कई दिन के भोजन का प्रसाधन मिल गया । लाखी को भैंसे की खाल ।

निन्नी ने लाखी को खिला-पिलाकर अपने पास लिटा लिया । लाखी को नीद नही आ रही थी । ध्यान कभी मृत माता की ओर कभी सुअर के लक्ष्यवेध और कभी अरने भैंसे की उन आँखो की तरफ जा रहा था।

एक वार उसने, सोचा, यदि अरना भैसा कम घायल होता और टीले पर चढ आता तो माँ बेटी का दाह एक साथ ही होता ! क्या मे भी मर जाऊ ? क्यो मर जाऊं ? क्यो ऐसे ही मर जाऊं ? कुछ जीकर अच्छी तरह जीकर क्यों न मरूँ ? सवको मरना है परन्तु जीवन का कुछ देर सुनकर ही मरना चाहिये ।'

नि[illegible] ने सोचा लाखी दुखी है । बोली, 'लाखी, मैने तुमसे आज बहुत ब[illegible]क की । मुझको क्षमा कर दोगी ! आगे कभी तुम्हारे मन को दुखाऊ तो मेरी जीभ काट कर फेक देना ।'

'नही मेरी निन्नी' लाखी ने कहा और सिसकने लगी। अटल ने उस सिसक को सुना।

अधीर स्वर मे बोली, 'चाहे ससार इधर का उधर हो जाये, चाहे मेरी बोटी-बोटी हो जाय, तुमको कभी कष्ट नही होने दूँगी लाखी।'

'मैं भी यही कहना चाहती थी,' निन्नी कहा।

लाखी की सिसक बन्द हो गई। उसने धीरे से कहा,'मुझको भरोसा है। सोचा इस घर मे इसी तरह से आना था।'

गाव वालो ने चटपट चीर फाड करके सुअर को बाँट लिया, अटल को बाँट मे अधिक भाग मिला। अटल को निन्नी के बल और निशाने का बडा गर्व हुआ। वह यह नही भान कर सकता था कि दुर्बल छरेरी लाखी भी कुछ कर सकती है—अरने भैसे को गिरा सकती है!

अरने की खाल का बहुत मोल है। बदले मे काफी अन्न मिलेगा बहुत दिनो गुजर होगी सोचा और तुरन्त ग्लानि के साथ अपनी भर्त्सना की उस खाल का उपयोग करूँ! धिक्कार है!! एक गरीब लडकी ने अपनी जान जोखम मे डाल-डालकर इतना वडा पराक्रम किया, मै सियार की तरह ताँक-झाँक लगाकर चोरी करूँ!! राम राम!!! खाल पूरी की पूरी उसकी। मैं एक चिन्दी भी उसमे से न लूँगा उसके पास जूते नही है, नगे पैरो गाय चराने के लिए जायगी और नगे पैर जङ्गली पशुओ का सामना करेगी। अन्न भी उसके पास कम ही है खालका लाभ भी उसी का रहेगा। जिससे उसके लिए खेती करूँगा।

दूसरे दिन उसने लाखी को उदास देखा। निन्नी उसके पास ही थी। ग्वालियर से लौटकर आये हुये पुजारी की बातो को उसने दुहराया।

कहा, 'निन्नी का नाम चारो दिशाओ मे फैल गया है कि बड़ी लक्ष्यबेधिन है। अब तुम्हारा भी फैलेगा लाखी।'

निन्नी मुँह चिढाकर बोली, 'सो क्या मिल जायगा हम लोगो को ?'

अटल कहता गया, 'अब और कीर्ति फैलेगी हमारी निन्नी भारी से भारी सुअर को अकेली पीठ पर लाद लाती है। ग्वालियर से राजा मानसिह आये कभी शिकार खेलने, तब देखेगे वह कितना अच्छा तीर चलाती है निन्नी और लाखी।'

लाखी की उदासी मे से वाक्य फूटा, 'राजा सुअर को पीठ पर अकेले उठा लायेगे डाँग मे से ?'

[६]

तैमूर के प्रलयङ्कर विनाश ने दिल्ली की सल्तनत को उतना निर्बल नही किया था जितना रास्थान के राजपूत और अन्तर्वेद के पठानो के निरन्तर अनवरत भयङ्कर युद्धो और उत्पातो ने। दिल्ली के शासकों ने अन्तर्वेद से लेकर बङ्गाल तक के प्रदेशो को छोटे-छोटे पठान जागीरदारों मे बाँट दिया था। इन सबके पास, चार-चार छ-छ हजार तक की सख्या मे सेना रहती थी अन्तर्वेद मे अकेले एक जागीरदार के हाथ मे पैतालीस हजार पठान और सात सौ हाथी थे। दिल्ली शासक की कमर जरा ढीली पडी कि ये स्वतन्त्र हो जाने के ताव पर आ जाते थे। मार-काट करते रहना और जनता को सोखते रहना तथा उस शोषण के सहारे ऐश आराम करना ही इनमे से अधिकांश का उद्देश्य रहता था। रातपूत परस्पर की प्रतिहिसा और लडाई से अवकाश ही कम पाते थे इसलिये इनके अक्षुण्ण बने रहने मे इने-गिने ही विघ्न थे।

मेवाड उन थोडे से राज्यो मे था जो कम से कम, अपने जनपदो की रक्षा के लिये सदा व्यग्र से बने रहते थे। गुजरात और मालवा के पठान शासको से मेवाड का प्राय युद्ध चलता रहता था। मेवाड को कभी-कभी दिल्ली के शासको की भी भिडत ओढ़नी पडती थी। मालवा के महमूद खिलजी को पराजित करने के उपरान्त राणा कुम्भा ने चित्तौड मे कीर्ति स्तम्भ बनवाया, तो महमूद खिलजी ने

मन की जलन को शात करने के लिये माँडू मे सतखण्डा महल बनवाया। जौनपुर के शासको का राज्य बुन्देलखण्ड के उत्तरवर्ती क्षेत्र, कालपी तक था। महमूद खिलजी ने मेवाड या गुजरात मे गुन्जाइश न देखकर कालपी पर चढाई कर दी और उसको अपनी सल्तनत मे शामिल कर लिया।

महमूद खिलजी के मरने के वाद उसका पुत्र गयासुद्दीन उत्तराधिकारी हुआ। इसके समय मे कालपी हाथ से चली गई परन्तु उसको फिर से अधिकृत करने की हविस गयासुद्दीन के मन मे सदा बनी रही। गयासुद्दीन ने मेवाड के साथ सधि कर ली। बडी सख्या मे राजपूत मालवा मे रहते थे। उसने इनके साथ अच्छा वर्ताव करना शुरू किया। आशा करता था कि इनकी सहायता से गुजरात और दिल्ली का भी मुकावला कर लूँगा।

कालपी दिल्ली के अधीन हो गई थी। उसको विश्वास था कि मेवाड़ और दिल्ली की टक्कर के समय कालपी पर आक्रमण कर देने से काम बन जायगा। परन्तु उसका स्वभाव अधीर, उद्धत, कामुक और कपटप्रिय था। मदिरा पीने पर वह सहज स्वभाविक मानव सा हो जाता था। पीता अधिक नही था परन्तु पी लेने पर उसकी मानवीयता उपेक्षण और हास्य-प्रियता तथा कामुक्ता वढ जाती थी। हिन्दूओ के साथ वह अत्याचार नही करता था। कट्टरता का वह मजाक उड़ाया करता था-शराब पीने पर-इसलिये मुल्ला वर्ग उससे रुष्ट रहता था—कामुकता के अंधेपन मे वह पुरुष और स्त्री की पहिचान नही रखता था। और खाई खड्डो की परवाह नही करता था।

चवालीस पैतालीस साल की आयु थी लड़का नसीरुद्दीन पच्चीस वर्ष का जवान था परन्तु उसका स्नेह एक ख्वाजा के ऊपर सबसे अधिक था। नसीर को मुल्लाओ से घिरवा रखा था। नसीर मुल्लो के राजकीय प्रभाव को जानता था। उसको नमाज और रोजो से इतना प्रेम नही था जितना उस भविष्य का जिसकी वह बाट देख रहा था और जिसको वह मुल्लो के और उनसे प्रभावित तथा प्रेरित मुसलमान

सरदारों के हाथ मे देखता था। गयास ने सोचा नसीर को मुल्लो के सुपुर्द करके मुल्लो और नसीर—दोनो से छुट्टी पाई, परन्तु वह यह न देख सका कि किसी दिन 'नमाज छुटाने गये और रोजे गले पड़े' की कहावत चरितार्थ होगी? अभी तो चैन से गुजरती है का वह कायल था। उन दिनो नसीर के पर निकले भी न थे।

बादल घिर आये। प्रचंड वेग के साथ पानी बरसने लगा। माडू की रूखी-सूखी पहाड़िया हरी भरी हो गई। नदी नालों ने किनारो की मर्यादा छोड़ दी। मालवे का 'पग-पग रोटी डगडग नीर' तो विख्यात ही है, अब अंगुल-अंगुल पर पानी भरने और समाने लगा।

महल के नीचे का कालिया दह-सरोवर पानी बादलो की बूँदो और पवन के प्रचड़ झकोरो से उतावला सा हो उठा। संध्या का समय था, परन्तु जान पडता था जैसे रात हो गई हो।

निजी कक्ष की बारहदरी मे खिडकी के पास तख्त पर रंग-बिरंगे गुलगुले रेशमी मसनद और तकियो मे डूबा हुआ-सा गयासुद्दीन बैठा था। खवासिनें रत्नजटित सोने की सुराही और कटोरे लिये खडी थी। नीचे उसका मुह लगा ख्वाजा मटरू बैठा हुआ था। एक दो कटोरो को चूस कर उसने खवासिनो को विदा कर दिया। खिडकी से ठडी हवा के झोके आ रहे थे। गयास को फुरेरी आई।

'ऐसा रूप तो कही कभी देखा नही खुदावन्द नियामत।' ख्वाजा ने आँख नीची करके अर्ज की।

'कैसा म्यां?' खिचडी बालो वाली दाढी को हिलाकर और खिचडी बालो वाली मूछो पर उंगली फेरते हुये गयासुद्दीन ने पूछा।

'ग्वालियर से नजदीक पर, एक गाँव मे।'

'किस गाँव मे? ग्वालियर से कितनी दूर? कौन है ये?'

ख्वाजा ने बतलाया।

'अब तक क्यो नही जाहिर किया तुमने? इन दिनो इस मौसम मे तो वे दोनो यहा महल मे होनी चाहिये थी। गयास ने व्यग्रत्ता प्रकट की।

ख्वाजा मटरू ने व्याख्या की—'जहाँपनाह देहात मे खुबसूरती नही पाई जाती है इसलिये जब पहले पहल सुना तो यकीन नही किया, फिर सरकार उन मुल्ला मौलवियो की उलझन और दूसरे राजकाज मे उलझ गये।'

'जहन्नुम मे जाये मुल्ले मौलवी। मेरा बस चले तो सारे के सारे फिरके को हिन्दुओ के वैकुण्ठ मे पहुँचा दूँ, जहा करते रहे बहस कयामत तक परियो और फरिश्तों से। खैर बरसात खतम होते ही कालपी पर धावा करना है, जरा दाये होकर ग्वालियर के करीब से निकल चलेगे। उनका कुछ हाल सुनाओ।,

'एक गूजर है, दूसरी अहीर। दोनो शिकार खेलती है। तीर चलाती हैं।

'काहे का शिकार खेलती है? किस चीज का बाण चलाती है? नजर के न? तीखी चितवन के? तू भी मटरू शायर है।'

'नही जहाँपनाह, यह शायरी नही है। सीधी-सच्ची बात है। जँगली जानवरो का शिकार खेलती हैं और लोहे के लम्बे तीर चलाती हैं।

'तोबा! तोबा!! और वे खूबसूरत भी है!!! कहां की हांक रहे हो? कही नशा तो नहीं कर आये ख्वाजा?'

'नही आलमपनाह! जिन लोगो ने देखा है वही अर्जकर रहा हूँ। दोनो गांव के गरीब घर की छोकरिया है खाने को नही जुडा तो शिकार से गुजर-वसर कर उठी। कपड़े पहिनने को नहीं। घर—मड़ैया पर सिर्फ फूस, जिससे बरसात की मूसलाधार थोडी सी ही बच सकती है। पैर मे जूते नही।'

'विचारियो के फफोले पड-पड़ आते होगे।'

'अक्सर शिकार नही मिलता तो जङ्गल के कंद-वंद से पेट भरती हैं। फटे कपड़ो में पैबन्द नही लगा पाती तो जङ्गली-पेड़ो के पत्तो से तन ढक लेती है। हुजूर ने एकबार उस काफिर शायर कालिदास की शकुन्तला का जैसा जिकर सुना था वैसा ही।'

'यहाँ कोई मुल्ला मौलवी तो बैठा नही है जो तुम कालिदास को काफिर कहो। वह क्या शायर था। शायर नही शायरो का जौहर था। दुनिया के किसी भी पर्दे पर ऐसा शायर नही हुआ। गयासुद्दीन का गला भर आया और आँखे गीली हो गई। ख्वाजा ने समझ लिया कि सुराही की नियामत ने अपनी गोदी में समेट लिया है।

ख्वाजा बोला, 'आलमपनाह नाम भी उनके बड़े मिठास भरे है। गॉव मे जिसको निन्नी कहते है उसका असली नाम मृगनयनी है और दूसरी जिसको लाखी कहते है असल मे लाखारानी है।'

'उनके कोई और है ?'

'एक भाई है उनका। कुछ ऐसा वैसा ही नाम है उसका। बहुत गरीब है।'

'मालामाल कर देगे। कुछ दे-लेकर बुला न लो।'

'बन्दापरवर के मुकाबिले मेरा तजुर्वा नही के बराबर है। पराई सल्तनत मे रुपये या जेवर के लोभ लालच से काम नही चल सकेगा।' कालपी के ऊपर धावा करने के सिलसिले मे ही वह काम बन पावेगा।

'इस कम्बख्त बरसात के लिये क्या किया जाय ? यह लो, और तेजी के साथ बरस पडा। जैसे आसमान मे छेद हो गये हो! मै तो आज रात ही चढ़ाई के लिये कूच बोल देता लेकिन रास्ते मे वेहिसाव कीचड, वडी-वड़ी नदियो के पूर वगैरह-बगैरह जान खा जायेगे।

'तब तक मै हिकमते लडाऊँगा, हालाकि उम्मीद कम है।'

'फिर भी !'

'खानावदोश, नट, वेडिये कन्जड दुनिया भर का गश्त लगाया करते है। इनके जरिये कभी-कभी काम वन जाता है। कोशिश करूँगा।'

'जरूर मेरे प्यारे मटरू। आज से ही अपना काम शुरू करदो। कहाँ है ये नट वेड़िये इन दिनो ?'

'ये लोग शहर मे नही रहते है। खानावदोश है, कभी किसी गाँव के पास, कभी किसी जङ्गल मे। मै पता लगाता हूँ।'

एक खवासिन खासनी हुई आई। हाथ बाँधकर खडी हो गई, जैसे कुछ कहना चाहती हो। गयास ने बोलने की अनुमति दी।

'काजी आजम दीदार हासिल करने का फरमान चाहते है।' खवासिन बोली।

गयास ने दांत भीचे। मन मे कहा, यही वक्त मिला इसको यहाँ मरने के लिये। परन्तु प्रधान काजी प्रभावशाली व्यक्ति था। गयास को अनुमति देनी पडी। खवासिन चली गई। थोडी देर बाद अदव करता हुआ काजी आ गया। गयास ने रुखाई के साथ आसन दिया।

इशारे से आने का कारण पूछा। परन्तु काजी बोलने नही पाया और गयास ने कहा, 'आप जानते है कि यह वक्त मेरा अकेले रहने का है। ऐसे वरसते पानी मे कैसे आये। ऐसी कौन-सी मुसीबत आ गई है?'

'जहाँपनाह।'

'कहिये, कह डालिये। अव तो आप मेरे हुजूर मे आ ही गये है।'

'जहापनाह जिस मसजिद को वनवा रहे है उसके कारीगर एक वदमाशी करना चाहते है—'

'वस इतनी सी वात! गजव खुदा का!! आपके दिमाग मे माशे दो माशे अकल तो होनी ही चाहिये।' प्रधान काजी को वहुसख्यक पठान सरदारो की श्रद्धा प्राप्त थी और नसीरुद्दीन उसके कदमो मे सिर रखने को तैयार रहता था। काजी जरा तेज पडा।

'जहाँपनाह कारीगरों ने मस्जिद के सदर दरवाजे, वाजू के लिये जो पत्थर तैयार किये है उनमे वेलबूटो पत्तियो और फूलों की पच्ची-कारी के साथ चिडियो और, वन्दरो की मूरतें नक्श कर दी है। मना करने पर भी नही माने। कल बडे सवेरे वे इन पत्थरो को सजाकर ऊपर की मन्जिल रचा देगे। फिर मस्जिद के इस हिस्से को तुड़वाना पडेगा जो वहुत वुरी बात होगी।'

'और कुछ?'

और खुदाबन्द यह है कि इन लोगो ने बिना पूछे-माजे मीनार की गुम्बदो की खिडकियाँ कमानीदार न बनाकर, जो ईराक का नमूना है, बंडेरीदार बनाई है जिसमे हिन्दुओ के मन्दिरो जैसे वन्दनवार रख दिये है।'

'और भी कुछ ?'

'हाँ जहापनाह। सदर दरवाजे की गोख के लिये जालियाँ, झरोखे उनके ऊपर के कँगूरे मन्दिरो के जैसे रच डाले है। कँगूरा के साधने के लिये मोर और घोडो के सिरवाले पत्थर बनाये है। उन्होने इन सबो को सँजी डालने के लिये कल का दिन रक्खा है। यह सब तुगलकी सादगी और नकशे नमूने के खिलाफ है। मसजिद के दुखने वाले तुन्दी और बुलन्दी की जगह इस सिगार और सजावट को देखकर गलत फहमी मे पड जायेगे कि यह मस्जिद है या मन्दिर '

'उसमे बुत न हो तो भी

'बिला शक जहाँपनाह।'

'किसने कहा ?'

'मुल्ला और मौलवी फतवी दे रहे है।'

'अब तक कहाँ सो रहे थे ये ? बहुत सा हिस्सा तो मसजिद का बन भी गया है।'

'उसमे कोई ऐसा बडा नुक्स नही है।

'मुल्ला और मौलवियो के बाप ने कभी इमारते बनवाई थी हिन्दुस्तान मे ?'

'जहाँपनाह !'

'आप लोगो का एतराज, चिडियो, बन्दरो घोड़ो और मोरो की तस्वीरो से ज्यादा ताल्लुक रखता है। है न ऐसा ?'

'जहापनाह ने ठीक फरमाया।'

'कारीगरो ने जो कुछ पुराने जमानो से कारीगरी के रिवाज मे सीखा है, उसी को तो पेश कर रहे है।'

'मगर जहांपनाह यह रिवाज गलत है। कुफ्र में सना हुआ। जान-बूझकर कारीगर शरारत कर रहे है। मना करने पर भी न माने।'

'अपने मन के सलोनेपन के तकाजे से कैसे लड़ जाये वे गरीब? आप समझे?'

'बन्दा क्या अर्ज करे जहांपनाह? मौलवी इसके खिलाफ फतवा देने वाले हैं।

'कारीगरों की फितरत मे कुछ मसलहत भी दिखलाई पड़ रही है।' काजी प्रश्न-सूचक दृष्टि करके रह गया।'

गयास ने सरूर के लहजे मे बतलाया, 'मोर खूबसूरत चिडिया है सो आप लोगो मे से मोर कोई भी नही; उसको देखते ही आप लोगों को अपनी कमी डस-डस लेगी। घोड़े का सिर्फ सिर दिखलाया गया है, इसलिये आपको याद आती रहेगी कि आप आधे घोड़े है और आधे कुछ और। वन्दर की तस्वीर पेश करने मे मसलहत की हद करदी उन कारीगरो ने-आप सब असल मे बन्दर है, बिलकुल बन्दर। खिलाओ तो चपड़ चूँ-चूँ करें और न खिलाओ तो भी वही करें, न भले को ठिकाने से रहने दें और न बुरे को! और—'

गयास की स्मृति और व्यङ्ग शक्ति को सुरा के बढते हुये सरूर ने झोका दे दिया। काजी क्रोध के मारे तमककर चुप रह गया। गयास ने ख्वाजा की ओर देखा। ख्वाजा ने सोचा बात बढ गई है।

बोला, 'जहांपनाह और सब रहने दे, उन तस्वीरो को हटवाने का फरमान दे दें।'

गयास ने सहमति का सिर हिलाया। कहा, 'अच्छा ऐसा ही करो और मौलवियो से कह दो कि फतवे को बस्ते मे बन्द करके रख दे और अक्ल को ज्यादा घास न चरने दे।'

काजी अदब करने के बाद चला गया।

सुल्तान ने खाना मागने का आदेश किया। ढले हुये स्वर मे ख्वाजा मटरू से कहा, 'उस काम को जल्दी करना है।'

[१०]

भारत के पहाड, जङ्गल, नदी-नाले विस्तृत क्षेत्र और लम्बे चौडे अन्तर अनगिनत छोटे–बडे राज्यो की संख्या और जनपदो के खण्डो की भिन्नता को बढाने मे सदा से सहायक रहे है, परन्तु एक छोर के विचार और मत को दूसरे छोर तक पहुँचाने मे न तो वे और उनके उत्पादन अनेक छोटे-बडे राज्य-रजवाडे और भिन्न-भिन्न जनपदो के सीमावद्ध संकुचित खण्ड कभी बाधक हो पाये है। शकर उत्पन्न हुये सुदूर-दक्षिण मे और अपने विरोधी को हराने को तथा अपने मत के प्रचार के लिए भी पहुँच गये काश्मीर ! चैतन्य हुये दूरतर्वी बङ्गाल मे और उनके मत के प्रचारको ने अपना सस्थान बनाया वृन्दावन मे !! तक्षशिला का ब्राह्मण काञ्ची के विद्यालय मे और काची का काश्मीर और काशी मे !!! गङ्गा और गोदावरी का नाम उत्तर मे दक्षिण और पूर्व से पश्चिम के छोर-छोर तक, घर-घर मे, जङ्गल से पर्वत की कन्दराओ मे—मानो हिमालय, विन्ध्याचल, सह्याद्रि सब एक ही थैली के चट्टे–बट्टे हो।

उस युग के हिन्दू को तीर्थ यात्रा के लिये, प्राणों की बाजी लगाकर एक छोर से दूसरे छोर पर पहुँचने के लिये कम से कम छ: महीने लग जाते थे। घर वाले जानते थे कि गया को गया सो गया। परन्तु बडे समाचारो और किसी विशेप मत की व्याख्या को एक सिरे से दूसरे सिरे तक पहुँचाने मे पन्द्रह दिन लग जाये तो वहुत समय लग गया। कभी कभी कश्मीर का कोई वडा महत्वपूर्ण समाचार तो रामेश्वर दस दिन मे ही पहुँच जाता था। इस मुह से उस मुह उस गाव और नगर भारतीय जन आसानी के साथ इधर उधर की लम्बी यात्रा नही कर पाता था परन्तु भारतीय समाचारो के लिये नदी–नाले, जङ्गल पर्वत मानो, कोई अड़चन ही नही रखते थे।

ग्वालियर से सिकन्दर लोदी के चले जाने का समाचार फैल गया, गुओ के सट्टा डालने की बात रुकी न रही और निन्नी का एक तीर से

बडी- वडी खीसो वाले सूअरों का मारना और कन्धों पर एक भारी भरकम सुअर को कोसो की दूरी से अपने वर उठा ले आना तथा अरने भैस का लाखी द्वारा 'बास के तीर से ही' मारा जाना, दूर-दूर तक थोडे से समय मे विख्यात हो गया। खबर मालवा की राजधानी मॉडू, मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़, गुजरात की राजधानी अहमदाबाद पहुची। और भी अन्यत्र स्थानो पर। साथ ही प्रसिद्ध हुआ उन दिनो युवतियो का अप्रतिम, अद्वितीय, असाधारण सौन्दर्य और लावण्य भी।

देखने के लिये और सभव हो तो सॅग्रहण, के लिये भी राजाओ और समान्तो का भी जी ललचाया। दीदार के लिये मुमकिन ही नही सहज भी है उन दोनो को पकडकर हरम मे दाखिल कर लेना—मालवा और गुजरात के सुल्तानो के दिल की धडकने बढी अप्सरायें उनकी लुनाई के सामने कुछ नही। परियाँ उनकी खूबसूरती के सामने नाक रगडती है-पर लगा-लगाकर बात फैली। बडे घराने की हिन्दू स्त्री तो घू घट डालकर भीतर वैठना और कुसमय आने पर चिता मे जल कर खाक होना जानती है। ये दोनो अवश्य इन्द्र के किसी आखाडे से नीचे उतर आई है! तब तो शेर तेदुये, सुअर और अरने भैसे को बाँस के तीर से मार गिराती है!!

गुजरात का सुलतान महमूद बघर्रा तो इस समाचार को सुनकर वेताब ही हो गया।

गुजरात की राजधानी अहमदाबाद को बसे पचहत्तर वर्ष से ऊपर हो गये थे। यहा चौदहवी शताब्दी के अन्त मे तैमूरलङ्ग ने दिल्ली मे एक लाख हिन्दू और एक लाख मुसलमानो का तथा दिल्ली के सेना-नायको और सरदारो का वध किया। वहाँ गुजरात, मालवा जौनपुर बङ्गाल स्वतन्त्र हो गये। गुजरात का पहला स्वतन्त्र सुलतान अहमदशाह था। वह घोर न्यायी था। उसने एक हत्या के अपराध मे अहमदाबाद की सड़क पर अपने दामाद के टुकड़े—टुकडे करवा डाले थे और हिन्दू सामान्तो को अपना धर्म दे देने या

सिर दे डालने के सिवाय और कोई मार्ग तो कभी देता ही न था।

परन्तु गुजरात के महान प्रतीक सौन्दर्या का उसके पाषाण हृदय पर भी प्रभाव पडा। हरे-भरे विशाल वन, लहलहाते हुये खेत लहराती हुई नदियां मधुर बोली और मृदुल नारी। उसने अहमदाबाद मे एक बडी मस्जिद और मनोहर महल बनवाये। चौड़ी तरङ्गिणी साबरमती के किनारे असबल को अहमदाबाद में परिवर्तित और परिवर्धित कर दिया और मस्जिद के रूप मे गुजरात की हरियाली, सुन्दरता, चमक-दमक, मधुरता और मृदुलता साकार कर दी। उस का हृदय पिघल कर जितना सीधा रह गया था, उतनी सिधाई—सादगी मसजिद के मुहानो और पार्श्वो मे साकार हो गई और गुजरात का प्राकृतिक, विभूतिमय चमत्कार पूर्ण सौन्दर्य अनजाने ही मसजिद के अनुपात बेलबूटो और पच्चीकारी मे मूर्त हो गया था। महमूद बघर्रा इसी अहमदशाह का पौत्र था और इसी मसजिद के किनारे वाले महल मे रहता था।

महमूद बघर्रा साढ़े तीन हाथ से अधिक ऊँचाई का था परन्तु चौड़ा इतना था कि बौना मालूम होता था इस समय आयु उसकी लगभग पैतालीस वर्ष की थी। मूछे इतनी लम्बी कि सिर पर उसकी गाठ बाधता था और दाढी नाभि के नीचे तक फटकार मारती थी।

सबेरे हाथ-मुह धोकर बारादरी की दालान में तख्त पर आ बैठा। नौकर कलेवा ले आये। डेढ सौ पके केले, सेर भर शहद और सेर भर मक्खन यह रोज का कलेवा था।किसी दिन रात मे जागने के कारण कुपच हो गया तो केले केवल सौ। शहद और मक्खन की तौल मे कोई कसर नही।

महमूद ने कलेवे पर हाथ साफ करने शुरू कर दिये। ढ़ेर गायब होने लगे समाचार। देने और आदेश लेने को प्रधान जासूस और खबर-नवीस हाजिर हो गये। सब सिर नवाये, हाथ जोड़े खड़े। कलेजे में धडकन होठो पर कडी मुहर।

आलिफ लैला मे उन्होने सिन्दवाद और जिन्न के किस्से पढे थे, वे सव उनको सच प्रतीत हुये। कलेवा अभी समाप्त नही हुआ था। समाप्ति के पहले उसको सवेरे का काम पूरा कर डालना था।

एक केले के दो कौर करने के वाद वघर्रा ने प्रधान जासूस की ओर मुह फेरकर 'ऊँघ' की। जैसे बादल गरज गया हो! जासूस ने काँपते हुये सिर उठाया। आँखे नीची किये बोला, 'मालवा के सुल्तान गयासुद्दीन खिलजी—'

वघर्रा के मुह मे आधा केला एक तरफ था, आधा गले से नीचे उतर जाने की जल्दी मे। आधा मुह खाली था उसी दिशा से दवी हुई कडक निकली—'सुल्तान नही है वह नामाकूल। गुलाम खानदान का खिलजी है। कहो। उसकी वावत क्या कहना है?'

कापते हुये कठ को सभालकर जासूस ने कहा, 'जहाँपनाह, गयासुद्दीन खिलजी की दोस्ती मेवाड के काफिर राना के साथ ज्यो की त्यो चल रही है। मेवाड के राना ने दिल्ली के सुल्तान—मै भूल गया, वख्शा जाऊँ—दिल्ली के सिकन्दर लोधी की फौज को हरा दिया है।'

वघर्रा के मन्तव्य को सुनने के लिये जासूस ठहर गया। कुछ एक छोटे केले को समूचा मुह मे डालकर वघर्रा बोला, 'जैसे किसी नाले ने प्रवाह के जोर से वांध को फोड़ डाला हो—'एक मूजी ने दूसरे मूजी को मारा। कहते जाओ। गयासुद्दीन आजकल क्या कर रहा है?'

जासूस ने वतलाया,—'जहाँपनाह, वह एक खूवसूरत ख्वाजा लौडे के बहुत कहने मे है।'

'अच्छा है। मरेगा। और आगे?' वघर्रा वोला, जैसे जमीन के नीचे से दरार मे होकर वोला।

जासूस अनुमान से कुछ संभाव्य को भी कहता गया, 'गयासुद्दीन फौज की बढती कर रहा है। ग्वालियर पर चढ़ाई करना चाहता है, क्योकि ग्वालियर के पास राई के गाँव मे दो वहुत खूवसूरत हिन्दू लडकिया है जो शिकार खेलती है। जगली भैसे, शेर, सुअर, तेंदुआ

रीछ वगैरह को एक-एक तीर से ही मार गिराती है। गयासुद्दीन इन लडकियो को माडू ले आना चाहता है।

'ह ! ह !! ह !!! ह !!!! ह !!!!!' बघर्रा हँसा। हँसी के साथ ही केले के अध--चबाये टुकडे गिर कर दूर जा पडे। दरबारियो को वह हँसी ऐसी, जान पडी जैसे धरती फट पड़ी हो। जासूस बगलें झाकने लगा। काटो तो खून नही ! न मालूम अब क्या होगा।

बघर्रा ने हँसी को रोका और एक बडे केले के टुकड़े को मुह मे डाला। चबाते हुये कहा, 'कहाँ की दास्तान बना लाये हो ? खूबसूरत लडकियाँ शेर और भैसे को एक तीर से गिरा देती है। भीलनी होगी कमबख्त। काली-कलूटी खबीस !!'

जासूस प्राणो की खैर मनाता हुआ बोला, 'जहाँपनाह एक लडकी गूजर है और दूसरी अहीर तसदीक करली है। दोनो बहुत हसीन है।'

बघर्रा गम्भीर हो गया। खाते-खाते सोचने लगा। 'ऊँची जात की हिन्दू लडकियाँ और वे भी इतना हसीन शिकार खेलती है।'

केले समाप्त करके बघर्रा ने सेर भर शहद केलो के पचाने के लिये पेट मे पहुँचाई। कुछ न कुछ पेट मे दोपहर के भोजन तक बना रहे इसलिये ऊपर से सेर भर मक्खन भीतर डाला। इन सबको हल करने के लिये एक सुराही पानी पिया। फिर सात आठ पान दातों के नीचे दावे। नौकर छिलके और थाल उठाकर चले गये।

बघर्रा ने तकिया के सहारे पडकर दाढी पर हाथ फेरते हुये कहा, 'बहमनी सल्तनत की कोई नई खबर ?'

जासूस ने चैन की साँस लेकर उत्तर दिया, मुहम्मद ग्वाँ के कतल के वाद दक्खिनी और विलायती फकीरो मे द्वन्द और भी बढ़ गया। बहमनी सल्तनत की टूटन-फूटन से नई सल्तनते बन रही है। विजयनगर का राजा उन से लडता रहता है।

'मालूम है।' बघर्रा ने कहा, जैसे जाती हुई आधी किसी वडे पेड को एक बड़ा सपाटा दे गई हो,—'लेकिन बहमनी सल्तनत के बाजुओ

मे इतनी ताकत हमेशा बनी रहेगी कि विजयनगर के राजा को पछाडती रहे, रह गया मालवे वालो सो वह बहमनियो का कुछ विगाड नही सकता। मै उसका होश जल्दी ठिकाने लगाऊँगा। पुर्तगाली क्या कर रहे है।

'जहाजी ताकत को बढाने मे लगे है। उन्होने पाँच जहाज नये तैयार करवाये है।'

'कोई फिकर नही। खबरनबीस, तुर्की के सुल्तान आजम खलीफा शरीफ को लिखो कि तैयार रहे। तुर्की और गुजरात की ताकत पुर्तगालियो पर बेपनाह कहर बरसावेगी।

'जहाँपनाह।'

'माडू पर चढाई बरसात मे की जावेगी। बादल की बिजलियो और नदी-नालो के पानी के भरोसे जब गयासुद्दीन माडू के बिल मे घुसा होगा तब मै अपनी बिजलियाँ मालवे पर कड़काऊँगा............ बरसाऊगा। तैयारी को बढ़ाओ।'

'जो हुक्म जहाँपनाह।'

'फिलहाल कही भी तो लडना है।'

'हुक्म जहाँपनाह? चम्पानेर के आस-पास राजपूत फिर सिर उठाने लगे है।'

'अभी सात बरस भी नही हुये है कि जब मैने सबका कत्लेआम करवा दिया था। इसको इतनी जल्दी भूल गये ये लोग!'

'बहमनी सुल्तान ने काँची के सारे मन्दिर तोड दिये थे, वहाँ फिर मन्दिर बनाये जाने वाले है।'

उन मन्दिरो को मैंने देखा था, बुतो को भी। कुछ भी हो मन्दिर थे खूबसूरत। बुतो को तोड डालते, काफी था। पत्थर को जान देने के फन मे हिन्दुओ ने जिस कमाल को हासिल किया है, ताज्जुब होता है। हमारे मुसलमान तो वैसी कारीगरी नही कर सकते। उन

कारीगरी को जवान मे ही अदा नही कर सकते, वैसा करतब कर दिखलाना तो बहुत दूर की बात है।'

दरबारी सिर झुकाये हुये चुप रहे। बघर्रा ने मन मे कहा, 'पहाडो पेड़ो, फूल-पत्तियो, कोयल की कूको और परियो की लोच-लचको को जैसे एक साथ इन मन्दिरो के बनाव सिंगार मे टाकी और हथौडे से मचल मचल कर उतार दिया हो। मै तो देखकर ठगा सा खडा रह गया था। और बुत भी वेपनाह खूबसूरती के। चाहता था उन बुतो को वैसे ही निगलकर पेट के किसी कोने मे रक्खे रहूँ। अरे यह तो कुफ्र है। लेकिन कुफ्र अगर दिल को चैन दे तो क्या बुरा? तोवा! तोबा!! खुदा खैर करे।'

पेट पर हाथ फेरकर बघर्रा ने एक लम्बी सास ली जैसे वरसात मे कोई कच्चा मकान गिरा हो। दरबारियो को चुप देखकर उसने अपनी बात का प्रायश्चित किया,—'मन्दिर तोड दिये, बुत फोड़ दिये तो खैर, अच्छा ही किया। न रहेगा बास न बजेगी बांसुरी, जैसे कि यहा काफिर शायर कहते है। अब उन लोगो को फिर से नये मन्दिर नही वनाने चाहिये। मुमकिन है कुछ मन्दिर तोड़े जाने से बच गये हो और उन्ही को कह दिया हो कि नये सिरे से बनाये जा रहे है। तुम खुद गये थे वहा जासूस?'

जासूस काप गया,—बघर्रा चाहता भी यही था,-'बोला, 'जहापनाह मै पुर्तगालियो की काररवाइयो की जाच मे लगा रहा। काची खुद नही जा पाया। बख्शा जाऊँ।'

बघर्रा ने मुलायम स्वर मे कहा,-(फिर भी जान पडा जैसे कई फटे बास एक साथ बज पडे हो),—कोई बात नही। मुझको इन दिनों काची या विजयनगर मे दिलचस्पी नही है। माडू मे बहुत से हिन्दू कारीगर है। मुसलमान होने को वे तैयार नही है। जबरदस्ती उनके साथ की नही जा सकती। माडू की चढाई के नतीजे मे उनकी यहा

पकड़ लाऊँ और मजहब बदलने के लिये न कहूँ तो वे अहमदाबाद को और भी सजा देंगे। मुल्लों और काजियों ने मेरे ख्याल की ताईद कर दी है, इसलिये कोई दिक्कत नहीं। जजिये की शकल में उनकी मजदूरी में से थोड़ा-सा काट लिया जाया करेगा।'

'जो हुकुम जहांपनाह। ग्वालियर में भी बहुत होशियार कारीगर हैं।'

'मांडू को पीसने के बाद ग्वालियर को भी कूटा जायगा। कौन-सा गाव है जहां वे दो छोकरियां रहती हैं? ग्वालियर से कितनी दूर है?'

गाँव का नाम राई है। ग्वालियर से करीब छः कोस दूर।'

'ठीक है। बरसात में देखूँगा। आज चम्पानेर की तरफ दोपहर का खाना-खाने के बाद कूच। जब तक हजार पांच सौ सिर धड़ से खुली लड़ाई में रोज जुदा न करूँ तब तक चैन नहीं पड़ता।'

'जहाँपनाह।' दरबारियों ने नीचे सिर किये हुये ही क्षीण मुस्कान में भिगोकर समर्थन को प्रकट किया।

बघर्रा ने फिर डकार ली जैसे कोई बड़ी धौंकनी फटकर बोल गई हो, मानो पेट के भीतर से किसी ने दोपहर के निकट आने-जाने की इत्तिला और दोपहर के भोजन की मांग एक साथ भेजी हो।

अन्य नित्य नैमित्तिक काम की बातें करके दरबारी बघर्रा के आदेश लेकर चले गये।

'दो गोरी सांवरी सलौनी छोकरियां आजादी के साथ शिकार खेलती हैं और वे भीलनी भी नहीं हैं, हालाँकि भीलों में भी खूबसूरती देखी है। हिन्दू कारीगरों ने पत्थरों में तरह-तरह की खूबसूरत औरतों को बेहिसाब तरफों और तरहों में पेश किया है, लेकिन इस किस्म की औरतों को कहीं नहीं उभारा है। अगर मिल गई तो देखूँगा। कम से कम ख्याल अच्छा है, मजेदार है कुछ भी न मिला तो जङ्गल की कसरत तो हाथों पैरों को मिलेगी ही। तलवार और

तीर से कटकर लुढकते हुये सिर और धड पर बहता हुआ खून।'
बघर्रा ने सोचा।

[११]

सघन वर्षा से थोडा सा अवकाश मिलते ही अटल ने बँधियो वाले एक खेत मे धान वो लिया। पास लगे हुये एक ढलवे खेत मे थोडी सी ज्वार, वाकी भूमि को उनारी के लिये रख छोडा। कुछ समय के उपरान्त धान के बीज जम निकले। जैसे ही धान कुछ वडी हुई खेत मे फैलाकर जमा दी। बहुत पानी वरसा और खेत भर गया तो एक ओर से बँधिया को काटकर फालतू पानी निकाल दिया। दो महीने मे धान खेत मे लहराने लगी, ज्वार भी बड़े-बडे पत्तों वाली और होनहार। भाई- बहिन और लाखी, तीनो, खेतो की रखवाली मे तत्पर थे।

खाने का अन्न समाप्त होने को आया। वन्य पशु जङ्गल मे अधिक फासले पर खिसक गये। खेतो को रखाना था और पेट भरना था। रखवाली के लिये एक मचान धान के खेत पर था और दूसरा जङ्गल के किनारे ज्वार की रखवाली के लिये। जानवर विचक गये थे और रात मे कभी इस पहर और कभी उस पहर आ जाते थे। दिन मे मिलते बहुत कम थे। जङ्गल मे हरियाली इतनी अधिक हो गई थी और झाड़ ऐसे पल्लवित हो गये थे कि शिकार हाथ नही लगता था। अटल ने अपना सब अनाज खा लिया। अब केवल लाखी का रह गया था। लाखी की और अपनी गाय की दोहनी पर तीनो की गुजर नही हो सकती थी। पानी कभी-कभी इतना बरसता था कि दिन में घर से ही निकलना दुस्सह हो जाता था। रात मे बदली और पानी के कारण इतना अँधेरा छाया रहता था कि जङ्गली जानवरो को चिल्ला-चिल्लाकर तो भगाया जा सकता था परन्तु तीर से उनका शिकार नही किया जा सकता था।

लाखी के अन्न को छूने से अटल का प्रण इनकार कर रहा था। तो अब नया क्या खावे? गाँव के लगभग अन्य लोग भी इसी परि- स्थिति मे थे। उनसे कुछ नही मिलना था। राई नदी मे से मछलियां भी नही पकड़ी जा सकती थी।

लाखी ने कहा, 'अनाज रक्खा तो है। कुछ दिन उससे काम चलाओ।'

'जब बूढी मा का देहान्त हुआ। तब मैने प्रण किया था कि इस अन्न को तुम्हारे लिये खेत मे बोऊँगा। इसलिये इसको नही छूना चाहता हूँ।'

'तो अपना अन्न मुझको क्यों खिलाया ?'

'तुम्हारा ही तो था वह।'

'और यह तुम्हारा और निन्नी का नही है ?'

'है तो, पर मैने प्रण जो किया था।'

'और मै भी कोई प्रण कर लूँ तो ?'

'कैसा ? कौन सा ?'

'वैसा ही।' समझ से काम नहीं लेते ?

'निन्नी से भी पूछ लूँ बाहर गई है, आती होगी।'

'तो मेरे कहने का कोई मोल नही है ?'

'है। नही पूछूँगा निन्नी से। पर जब यह चुक जायगा तब क्या करेगे ?'

'नदी कम हो जायगी, मछली मिलने लगेगी और वर्षा कम हो जाने पर शिकार भी। तब तक धान और ज्वार पक उठेगी।'

अटल ने उस सुरक्षित अनाज मे से कुछ ले लिया। निन्नी जब बाहर से आई देखकर बोली, 'भैया, तुमने इसमे क्यो हाथ लगाया ?'

अटल ने उत्तर दिया, 'इन्होने कह दिया तो ले लिया। घर मे आज के लिये और कुछ था भी नही। इन्होने कहा यह भी तो अपना ही है।'

निन्नी ने लाखी पर व्यङ्ग की मुस्कान डाली। बोली, 'ठीक तो कहा।'

अटल बाहर चला गया। उन दोनो ने पीसना पीसा और रोटी बनाई, तब कही साँझ को पेट भर पाया।

रात के पहले ही वे तीनो खेतो की रखवाली के लिये चले गये।

निन्नी और लाखी धान वाले खेत के मचान पर जा लेटी, अटल ज्वार वाले पर पहुँच गया।

रात होतें हीं अन्धेरा छा गया। गहरी काली घटाये। आकाश मे चन्द्रमा के होते हुये भी चादनी का नाम नही। रुक रुक कर फुहार पड जाती थी। हवा चल रही थी, परन्तु मच्छर झुण्ड बांध-बाधकर टूट-टूट पड रहे थे। थोड़े से कपड़े, परन्तु इतने की शरीर को ढक लें शरीर ढका नहीं कि गर्मी और पसीने के मारे ठंडक के लिये फिर, अङ्गो को बाहर निकालना पडता। फिर मच्छर और फिर गर्मी और पसीने का क्रम। उन दोनो को बैठ जाना पडा।

निन्नी ने कहा, 'कुछ बातचीत ही करे।'

लाखी बोली, 'बातचीत करने को है ही क्या? कुछ गाओ।'

'गाऊँ तो पर मच्छर मुह मे घुस-घुस पड़ रहे है। जी चाहता है सब मच्छरो को पकड पाऊँ तो मारकर भस्म कर दूँ।

'सुना है वडे लोग राज-रजवाड़ो मे इससे बचने के लिये मछहरी लगा लेते हैं।'

'मैने भी सुना है।

'कैसी होती होगी मछहरी ?'

'क्या मालूम। जानकर क्या करोगी ? लगाओगी क्या मछहरी ?'

'अपने भाग्य मे कहा लिखी है। एक अरना भैसा मार ले तो उसकी खाल से पहले तो दो महीने का अनाज ले ले। दूसरा मार ले तो उससे कुछ कपडे और दो मछहरिया ले ले—एक अपने लिये और दूसरी तुम्हारे लिये।

'हाँ तीसरी की अटक भी क्या है। तुम्हारे और भैया के लिये एक ही वहुत है।'

'फिर तुमने ठठोली की। गाँव वाले यो ही अनखाये से देखते है, कभी तुम्हारे मुह से ऐसी बात किसी के सामने निकल जाये तो क्या होगा ?'

'बात उजागर हो जाय तो अच्छा ही है। ब्याह रचा दिया जायगा।'

'गाव के पञ्च नही होने देगे।'

'रखेली की तरह रख ले तो गांव के पञ्च कुछ नही कहेंगे, ब्याह हो जाय तो मानो उन पर गाज गिर पड़ेगी।'

'मै तो अकेली ही बनी रहूँगी। किसी की रखेली वनकर रहने से पहले राई नदी मे गले से पत्थर बांधकर डूब मरना भला है। तुम्हारे साथ रहकर जन्म कट जायगा।'

'मैं क्या अकेली ही बनी रहूगी ?'

'ब्याह करोगी ?'

'करूँगी जब मन चाहेगा।'

'तुम्हारा मन या तुम्हारे भैया का मन ?'

'देखा जायगा। आज रात तो ब्याह होना नही है।'

दोनो मच्छरो को भगाने मारने मे लग गई। कुछ देर बाद खेत के एक कोने पर छपछप शब्द सुनाई पडा। दोनो चौकन्नी होकर सुनने लगी।

लाखी को एक आकार दिखलाई पड़ा। साफ नही निबेंरा। परन्तु उसने लोहे का एक तीर छोड दिया। वह आकार भस्स से हुआ। उसने दूसरा छोड दिया। आकार को वह तीर भी लगा। अरने भैसे की ऊँची डिडकार हुई, परन्तु वह गिरा नही। भाग गया। जङ्गल मे भागने की थोड़ी दूर तक आहट मिली। फिर कुछ नही सुनाई पड़ा।

'अरना था। भाग गया,—'निन्नी ने कहा, 'तुमने तो बहुत उतावली कर दी।'

'खेत मे आता तो धान को रोद डालता।' लाखी बोली।

'कितनी धान रोद डालता ? दो तीर खो दिये ! बहुत बढिया तीर थे। तुमको कुछ सूझता थोड़े ही है।'

'तुम गिरा लेती उसको ?'

'गिरा न लेती तो तीर तो न खो देती।'

जैसे उन दिनो चिलचिलाती दोपहरी मे अरने मे से दोनो निकाल कर लौटा दिये थे ऐसे ही सवेरे ये दोनो भी ढूँढकर लौटा दूँगी ।'

'ढूँढ लिया अरने को ! और लौटा दिया तीर !! अरना कोसों पर जाकर दम लेगा !!!'

'तो प्राण न खा जाओ । भोर तक धीरज धरो ।'

बडा घमण्ड करने लगी हो ।'

'उस अरने की खाल के जूते न बनवाये होते और अनाज न ले लिया होता तो ऐसे-ऐसे न जाने कितने तीर आ गये होते मेरे पास ।'

'कौन अकेले हम लोगो ने खाया वह अनाज । और जूते तो तुम्हारे बने थे और उनके जिनके साथ तुम्हारा जीवन बीतना है ।'

'मै खा गई वह सब ।'

'अब हम लोग खा रहे है तुम्हारा अन्न, सो नित्य उलहना दिया करना ।'

लाखी जीभ काटकर रह गई । निन्नी थोडी देर चुप रही परन्तु अधिक समय तक स्तब्ध रहना उसको नही रूच रहा था ।

बोली, 'क्या-क्या लौटाओगी मुझको तुम ?'

'जो कुछ लूँगी वह सब ।'

मेरे भाई को भी ?'

'बात ही करना हो तो कुछ और चर्चा करो जिससे रात भर बतबढियाव होता रहे । यदि इस बात को तुमने कहा तो अभी मचान पर से उतर पडूंगी और अरने को भी ढूँढने और तुम्हारे अनमोल अनोखे तीर लाने के लिये जङ्गल मे चल दूँगी ।'

'ओ हो हो हो ! बडी अर्जुन पॉडवा हो न ।'

'अभी दिखलाये देती हूँ मैं क्या हू ।'

लाखी ने तलवार उठाई और धम्म से मचान के नीचे कूद पड़ी । निन्नी ने उसको नही पकड पाया । निन्नी मचान पर से उतरी । तब तक लाखी नगे पाँव कीचड़ मे छप-छप करती हुई कई डग आगे निकल

गई। निन्नी ने दौड़ना चाहा परन्तु वह दौड न सकी। लाखी छरेरे शरीर की थी इसलिये उसको अधिक बाधा नही हुई।

निन्नी ने चिल्लाकर कहा, 'तुमको मेरी सौगन्ध है, खड़ी रहो? मेरा मरा मुह देखो जो एक पग भी आगे धरो!!'

लाखी रुक गई। निन्नी ने उसको जा पकड़ा। 'लौटो।' निन्नी ने कड़े स्वर मे कहा।

'नही।' दृढ़ता के साथ लाखी बोली।

'तो मै तुम्हारे साथ ही मरने चलूँगी।' निन्नी ने निश्चय प्रकट किया।

दूसरे खेत के सिरे वाले मचान से अटल ने कुछ सुन लिया और कुछ देख लिया। वह उतर कर इन दोनो की तरफ आया।

वही से चिल्लाकर—'क्या बात है?'

निन्नी ने धीरे से लाखी से कहा, 'लो अब निपटो उनसे चाहे उनके मचान पर चली जाओ।'

'तुम चाहती हो कि मै मर जाऊँ या कही निकल जाऊं, जब देखो तब लड़ा करती हो।'

'मै ही कही, क्यो न चली जाऊ जिसमे तुमको काटा न आँसे। निन्नी ने सोचा परन्तु कहा कुछ नही।

निकट आने वाले अटल की ओर देखने लगी। अटल ने पास आते ही आश्चर्य के साथ पूछा, 'यह क्या? कहा जा रही हो तुम दोनो नंगे पाँव?'

निन्नी ने तुरन्त उत्तर दिया, 'अरना आया था। तुमने नही देखा दाऊ।'

निन्नी बोली, 'इन्होने उस पर दो तीर चलाये। उसको दोनो लगे। वह डिडका और भागा। तुमने नही सुना? कहाँ थे तुम?'

अटल ने शरमाते-शरमाते बतलाया, 'मैंने जैसे ही पैर फैलाये सो गया। जब तुम चिल्लाई तब आँख खुली, देखा तो तुम दोनों

यहाँ खड़ी खड़ी कुछ बात कर रही हो। मचान से क्यों उतर आई ?'

लाखी ने बोलने के पहले गले को साफ किया, परन्तु निन्नी ने बीच में ही कहा, 'इन्होने कहा, तीर न खो जाये, अरने को ढूंढ लें। और यह कूद पड़ी। मै रोकने के लिये लपक आई।'

'विकट हो तुम दोनों। जाओ मचान पर। तीरो की चिन्ता मत करो। कल ढूँढ लेगे अरने को। जाओ।'

निन्नी ने लाखी का हाथ पकड़कर मचान की ओर खीचा वे दोनो जब मचान पर चढ गई, तब अटल अपने मचान की ओर गया।

निन्नी ने लाखी के गले मे हाथ डालकर कहा, 'सौगन्ध खाती हूँ कि आगे फिर कभी ऐसी बातचीत नही करूँगी।'

'अनाथ जानकर चाहे जो कुछ कह लेती हो।'

अपने को अनाथ कहकर मुझको भद्दी डायन मत बनाओ। अनाथ तो मै हूँ। सौगन्ध खाती हूँ अपने प्यारे से प्यारे की सौगन्ध खाती हू कि चाहे जो कुछ हो जाय आगे कभी नही लड़ूंगी।'

इस सौगन्ध के खाते ही लाखी हिलककर निन्नी से लिपट गई।

'ऐसी सौगन्ध क्यो खाई निन्नी ?' लाखी ने फफकते हुये कण्ठ मे कहा।

'क्योकि मुझको ताव जल्दी से आ जाता है। इस सौगन्ध के कारण अब कभी नही आयेगा।'

'मे अपने सारे पुरखो की सौगन्ध खाती हूँ कि तुम चाहे जैसी गालियाँ मुझको देना, मारना-पीटना पर मै कभी बुरा नही मानूँगी।'

'बस सब निबट चुका। आगे मेरी-तुम्हारी लडाई कभी नही होगी। अच्छा अब हँस दो।'

'हुँ ऊ—'

'ब्याह करोगी न भैया के साथ ?'

'फिर वही बात ?'

'हाँ-हाँ अवश्य। तुम्हारी पक्की ननद जो बनना चाहती हूँ, तुमको लाड़ के साथ भौजी कहना चाहती हूँ। एक बार अपने मुह से कह तो दो।'

'क्या मेरे हाथ की बात है ?'

'है। यदि हो तो, करोगी ?'

'करूँगी।'

'और यदि न भी हो तो ?'

'करूँगी, करूँगी तो भी करूँगी। नही तो कही मर-खप जाऊँगी तुम्हारे भैया मे हिम्मत होनी चाहिये।'

'उनमें है हिम्मत, मैं जानती हूँ।'

'तो मुझमे किसी से कम नही पाओगी।'

दोनो एक दूसरे से देर तक लिपटी रही। पसीने मे भीग गई। इतने पसीने मे कि मच्छरो ने नही काट पाया।

लाखी ने अलग होकर कहा, 'देखती रहो कोई जानवर न आ जाय।'

'कई लोहे के तीर रक्खे है। चलाना। मै भी चलाऊँगी।' निन्नी ने आश्वासन दिया।

'इस अंधेरी रात मे हल्ला करना तीर चलाने से कही अच्छा। अधिक तीर नही खोना चाहती। आगे काम देगे।' लाखी ने प्रतिवाद किया।

निन्नी हंसी—तुम्हारे दूल्हा तो कह गये है, तीरो की चिन्ता मत करो।'

लाखी ने उसका गाल मसल दिया।

'अरी री री !' निन्नी ने हँसी के तूफान से कहा।

लाखी ने आग्रह किया, 'कुछ गाओ। तुम्हारा गला इतना मीठा है कि जब तुम गाती हो जान पडता है कि कोयल कूक रही हो। जोर से गाओ, जानवर भी मुग्ध होकर वही के वही रह जाये।'

निन्नी ने गाना कहीं सीखा नहीं था, कहीं-कहीं सुना था। स्वर उसका स्वाभाविक मधुरता से भरा हुआ और कान ग्रहणशील थे, बुद्धि प्रखर, इसलिये उसको कई गीत आते थे! उसने गाया। रात के अधिकाँश भाग मे वे दोनो गाती हँसती रही। सवेरे देर तक सोती रही।

हाथ मुह धोने के उपरॉत वे दोनो अरने की खोज मे निकल पडी। वहुत दूर तक खाँद और रक्त के चिन्ह मिले। फिर कोई पता नही चला। दोपहर के लगभग लौट आये। अटल और निन्नी को तीरो के खो जाने का रञ्ज नही था। लाखी को कुछ था।

[१२]

गयासुद्दीन कालपी पर आक्रमण वर्षा के अन्त मे करना चाहता था। ख्वाजा मटरू को उसके मन के नट बेड़िये नही मिले। इतने में एक दिन समाचार मिला कि गुजरात सुल्तान महमूद बघर्रा एक बडी सेना लिये मांडू पर आ रहा है।

गयासुद्दीन निकम्मा नही था। उसने मुकाबला करने के लिये तुरन्त तैयारी कर दी। मेवाड़ को सहायता करने के लिए लिखा।

पचास वर्ष यशस्वी राणा कुम्भा ने मेवाड का राज्य किया था राज्य के लोभी बेटे ऊदा ने अपने पिता को विष देकर मार डाला। उस राज्य-लिप्सा को ऊदा, पाँच वर्ष ही असमर्थित और असमर्थ सन्तोष दे पाया। इस बीच मे चम्पानेर के राजपूत सिर पर कफन बांध-कर गुजरात के बघर्रा से मरते-मिटते लोहा लेते रहे। ऊदा को रायमल ने चित्तोड से मार भगाया। मेवाड को विपद ग्रस्त समझ कर दिल्ली के सुल्तान ने चढाई की। राणा रायमल ने उसको मार भगाया। गयासुद्दीन का मेवाड से सन्धि कर लेना इसी का परिणाम हुआ।

माँडू से सहायता की याचना आने पर मेवाड ने युद्ध की तैयारी कर दी। गुजरात के बघर्रा के शरीर की जितनी भूख अन्न, फल, माँस

इत्यादि के लिये थी, उससे कही अधिक भूख और प्यास उसकी आत्मा को लडाइयां लड़ने और खून बहाने की लगी रहती थी। उसको मनुष्य लड़ने को न मिलते तो वह हवा, पहाड़, पेड, पत्थर किसी से भी लड़ता भिडता रहता। शरीर की कराल जठराग्नि को बनाये रखने के लिये आत्मा का यह पाचक चूर्ण वह अपने लिये अत्यन्त अनिवार्य समझता था।

बरसात छीजने को आ रही थी। पानी कई दिन से नही बरसा था इक्री-बिखरी बदली छितरा-छितरा जाती थी परन्तु दिन मे धूप और रात मे तारे प्राय. निकल आते थे। दक्षिण की वायु वेग से चल उठो थी। परन्तु नदिया और बड़े नाले अब भी अपनी उन्माद पर थे। ऊँची नीची पहाडियाँ, पहाडियो और नदियो के बीच के मैदान हरियाली से लद गये थे। जङ्गल मे कोसो तक मैदानो और पहाड़ो के पाश्वो पर वृक्ष विशाल चमत्कार और हरियाली से भर गये थे। पहाडो की चोटियो के किनारे—किनारे लहलहाते वृक्षो के पक्तिबद्ध समूह कगूरो पर नाचते हुये मोरो जैसे प्रतीत होते थे। उन पर इधर से उधर उड़ते हुये सुओ तोतो की पाँते हरियाली की होड़ सी गलती थी। सुओ की लाल चोंचे उन पेड़ो पर उड़ते हुये लाल छीटे से जान पडते थे। नालों की ढी पर हरश्रृङ्गार फूल उठा था। मधु मक्खियाँ सनसना कर इन फूलो से अपना कुछ सग्रह कर उठी थी।

मार्ग ऊँचे घास से छा गये। बीच-बीच मे कुछ अन्तर पर रूखा गीला कीचड़ दिखलाई पडता था। मार्ग के दोनो ओर के बडे-बड़े झाड ही बतला रहे थे कि उनके बीच मे मार्ग है। बघर्रा अपने पचास हजार घुड़सवारो को लिये और पाँच सौ हाथियो पर सामान लदवाये हुये माँडू की दिशा मे आ रहा था। माँडू की पठार पर गयासुद्दीन उसका सामना करने के लिए उतर आया दोनो की मुठभेड के लिए कई नदियो, पहाड़ों और जङ्गलो की आड पड़ी थी बघर्रा अभी धार के किले से भी दूर था। धार माँडू से उत्तर मे लगभग ग्यारह

कोस है। बघर्रा धार पर आक्रमण न करके धार और माडू की वींच की दिशा मे आ रहा था।

एक जगह मार्ग प्राय.लुप्त हो गया था। मार्ग-दर्शक भ्रम मे पड़ गये। सन्धया होने मे विलम्ब था परन्तु थोडी ही दूर पर वाढ मे वल खाती हुई एक चौडी नदी भी पार करने को पडी थी। मार्ग खोजने वाला दल सेना के सामने से इधर–उधर फैल गया। थोड़ी दूर जङ्गल मे उनको धुआं दिखलाई पडा। खौजने वाले धुयें के पास सतर्कता के साथ पहुँचे। वहा नट-बेडियो का एक छोटा-सा डेरा था।

नट-बेडिये दस-पन्द्रह से अधिक न होगे। पेडो की झुरमुट मे थुमियो के ऊपर घास और पत्तो से कुछ झोपड़ियाँ छा रक्खी थी। एक वडे से झोपडे मे उनके गधे, दो भैसे और बकरियाँ बकरे बधे हुये थे। कुछ बन्दर खूँटियो से। एक झोपडे के किनारे कमठे तीरो भरे तरकस और लम्बे छुरे रक्खे हुये थे। छोटे बच्चे डाल से टगी हुई डालियो मे थे। पाच सात अधेड और जवान स्त्रियाँ खाना पकाने मे लगी हुई थी, पुरुष एक मरे जानवर की काट छाँट मे लगे हुये थे। उन सबके केश लम्बे थे। पुरुष फटी मैली धोतियाँ पहिने थे। स्त्रियाँ चिथड़ो-गुदड़ोदार पायजामे। ओढनी कोई नही ओढे थी। उगेजो पर केवल चोली कसे हुये कानो मे जस्ते की बालियाँ और नाक मे पीनल के बड़े-बड़े नथ। गले मे काच के रङ्ग-बिरङ्गे गुरियो की मालाये।

डेरे के चारो ओर बडे-बडे लक्कडो का डेरा था। मार्ग–दर्शको ने निकट की ओट से समझ लिया कि कौन है।

'ओ रे ओ!' मार्ग-दर्शको का अगुआ उन लोगो का ध्यान आकृष्ट करने के लिये चिल्लाया। उन सबने तुरन्त देख लिया और फुर्ती के साथ खडे हो गये। उनके चेहरो पर भय नही था, केवल आश्चर्य था। इनका मुखिया अधेड अवस्था का था। बोला, 'क्या है?'

अगुआ ने कहा 'गुजरात के सुल्तान की फौज यही पास आ गई है और तुमको खबर नही।

'हमको नही मालूम ।'

'माडू का रास्ता बतलाओ और नदी का घाट ।'

'हमको नही मालूम ।'

'फौज को इसी घडी उस पार उतरना है ।'

'काहे के लिये ?'

'काहे के लिये ! तुम्हारे पुरखो को उतारने के लिये । निकलता है इस बाडे मे से या हम रण-सिगा बजाकर फौज के हाथियो को तुम्हें कुचल डालने के लिये-बुलावे ?'

एक युवती ने गिडगिडाहट के साथ कहा,—परन्तु उसकी आँखों मे कोई गिड़गिडाहट नहीं थी,—शरारत थी,—'अरे महाराज, क्यों यो ही खाये जाते हो ? हमारा तमाशा देखो, नाच, रस्से पर ढोलकी बजाते हुये दौडना, कुलाये, एक पेड़ से दूसरे पर उछल कर पहुँचना, बन्दरो के खेल और अनगिनत करतब। सुन्दरिया ! अरी ओ सुन्दरिया ! !' उसने झोपडी मे बँधे हुये बन्दरो की ओर मुह करके सम्बोधन किया। छातियाँ मटकाई और मार्ग-दर्शको के प्रति शरारत भरी आख चलाई ।

'कितनी फ़ूहड है नटनी ही तो ठहरी ।' अगुआ ने सोचा ।

बोला,'यह सब सुल्तान सलामत और उनके सरदारो को दिखलाना। इनाम मिलेगी । हमको तो रास्ता बतलाओ ।'

'कहाँ है तुम्हारे बादशाह और सरदार ! मै तो दिखलाऊँगी आसमान तक का रास्ता । बलि जाऊँ तुम्हारे महाराज पर । क्या इनाम मिलेगा ?'

'बादशाह के जो मन मे आवे ।'

नटो के मुखिया ने कहा, 'रास्ता तो सीधा है ।'

अगुआ बोला, 'हम लोग भूल गये है । चलो साथ।'

उस युवती ने तुरन्त एक झोपडी मे से अपनी ओढनी उठाई और जूते पहने। नटो का मुखिया भी तैयार हुआ। कुछ नट और अधेड़ अवस्था वाली एक स्त्री भी ।

अगुआ ने मुखिया से पूछा, 'तुम्हारा नाम ?'

'पोटा।'

'और इस लडकी का नाम।'

'पिल्ली।'

'स्त्रियो को साथ लाने की जरूरत नही है।'

'आय हाय! तुमको जरूरत न होगी मै तो चलूँगी। ये रास्ता दिखायेंगे, मै खेल दिखलाऊँगी।'

'कहाँ के रहने वाले हो तुम लोग ?'

'इसी मालवा के।'

अगुये को उन सबो को साथ लेना पडा एक कोस चलने पर अगुये ने मार्ग दिखला दिया। वहाँ से गुजरात की सेना की चहल-पहल कुछ सुनाई पडी।

मुखिया ने इनाम मागा।

अगुआ ने नाही की,—'नदी का घाट तो बतलाओ।'

पिल्ली थिरककर बोली, 'चाहे मार डालो, जब तक मै अपना खेल तमाशा बादशाह को नही दिखलाऊँगी, घाट नही बतलाया जायगा।'

अगुआ को विवश होना होना पडा। वे सब सेना मे पहुँच गये। सुल्तान महमूद बघर्रा को भूख लग आई थी। अविलम्ब हाथियो पर से तख्त, उतारा गया और जोडकर रख दिया गया। मसनद तकिये लगा दिये गये। खाना आ गया।

कलेवा के अलावा बघर्रा दिन भर एक मन गुजराती वजन का भोजन करता था, जो इस गये-गुजरे जमाने मे बीस सेर के बराबर होता है। भोजन रोटिया, मास के नाना प्रकार व्यजन, दाल, शाक, दही इत्यादि रहते थे जिनको रसोइये हाथियो पर पकाते हुये या गरम रखकर चलते थे।

बघर्रा ने खाना शुरू किया ही था कि सेना के एक सिरे पर कुछ असाधारण शोर सुनाई पडा।

'क्या है यह ?' बघर्रा ने पूछा—जैसे कोई पेड टूटकर गिरा हो। पहरेदार दौड गये। लौटकर वतलाया, रास्ता वताने वाले नट आये है। उनके साथ कुछ औरते भी है। खेल तमाशे दिखला रही है सिपाहियों को।

'लाओ इधर।' बघर्रा ने पाव भर का एक ग्रास मुह मे डालते हुये मिठास के साथ कहा—जैसे पेड की कोई डाल टूट पडी हो।

नटनी और नट बघर्रा के पास आ गये। सुल्तान को नजर उठा कर देखना अशिष्टता समझी जाती थी — उसके लिये कड़ा दण्ड भी था। नट चुपचाप खडे हो गये।

नटनियो ने विशेप कर पिल्ली ने, देह की असाधारण लोचो-लचको से असम्भव सी कुलाचे खानी आरम्भ कर दी। पिल्ली ने तख्त की मसनद पर एक बडा सजीव ढेर भर देखा और भोजन के छोटे वड़े समूह। वह नीची निगाहो अपना खेल दिखलाती रही। बघर्रा को शरीर की ऐसी मोड-मरोड देखकर आश्चर्य हुआ। कुछ क्षण के लिये भोजन के ढेरो को कम करने से हाथ रुक गया।'

वहुत खूब!' बघर्रा के मुह से निकला—जैसे किसी पहाड पर से चट्टान टूट कर लुढकी हो।

नट काँप गये। पिल्ली की सिट्टी भूल गई। वह अदब के साथ खड़ी होकर नीचे से ही सुल्तान को भाँपने लगी। उस शरीर, दाढी और मूँछ को देखकर उसके रोंगटे खड़े हो गये। सुल्तान ने पाव-पाव भर के ग्रासो से भोजन करना जारी कर दिया।

एक ग्रास को चवाते-चबाते बघर्रा बोला, 'कहा रहती हो ?'

पिल्ली के कानो को प्रतीत हुआ जैसे किसी बड़े भरे हौज मे भसा कूदा हो

बारीक स्वर मे बोली, 'सरकार माडू के पास एक जङ्गल के रहने वाले है हम लोग।'

'कहां जा रहे हो तुम लोग ?' जैसे कोई चट्टान फटी ।

'सरकार मेवाड़ की तरफ ।'

'क्यों ?' जैसे लोहे के गले आपस में टकरा गये हों ।

'वहाँ के राणओ और सरदारो को अपने खेल दिखलाने के लिये ।'

'यहा से कब चल दोगे तुम लोग ?'

'दो-तीन दिन मे । बादल साफ हुआ नही कि चल पड़े ।'

'कौन लोग हो ?'

'हिन्दू और मुसलमान दोनो ।'

'यह कैसे ?'

'सरकार, हम खुदा और भगवान दोनो को मानते है और सब जानवरो का मास खाते है ।'

'तोबा ! तोबा !?'

'मेवाड़ का राणाजी कहाँ है ?'

'चित्तौड़ मे होगे महाराज ।'

'चित्तौड मे नही है । मुझसे जूझ-मरने को आ रहा है । यहाँ से चालीस–पचास कोस की दूरी पर है । मांडू के सुल्तान को खतम करके आता हू उस पर भी । कह देना कि चम्पानेर का जो हाल किया वही उसका भी करूगा ।'

'जो हुकुम सरकार ।'

'कसम खाओ ।'

'खु.ा की कसम ।'

'भगवान की भी खाओ ।'

'कसम भगवान और खुदा की ।'

नट हाथ बाध कर इनाम के लिये झुक गये ।

'रास्ता और घाट दिखलाओ इनाम मिलेगा ।' बघर्रा ने कहा मानो मोटी भीगी दरी को किसी ने फाड़ा हो ।

वे लोग चले गये। खाना खाने के वाद सुल्तान बघर्रा सेना सहित चल पड़ा। नटो के वतलाये हुये घाट से साँझ होते होते वह नदी के पार हो गया और रात के लिये जगल को अपना शिविर बना लिया।

सवेरा होते ही नटो ने अपना डेरा उखाडा और तेजी के साथ कतराते हुये मार्गो से माडू की दिशा मे चल दिये।

बघर्रा के जासूसो ने दूसरे दिन समाचार दिया कि बिलोचियो ने गुजरात के उत्तर मे एक लाख की सख्या मे सिंध से घुसकर लूटमार उपद्रव मचा दिया है। उसने तुरन्त लौट पडने का निश्चय किया। माँडू के सुल्तान और दो देहाती छोकिरियो के पीछे न पडकर बिलोचियो को पहले कुचल डालना जरूरी है फिर देखा जायगा। उसने सोचा।

महमूद बघर्रा बीच से ही लौट पडा और अहमदाबाद न जाकर गुजरात के उत्तर की ओर चल दिया। बिलोचियो को वेतरह खदेडा। सिंध प्रदेश के उत्तर मे सिंध नदी के किनारे बिलोची कुछ जमकर लड़े परन्तु हरा दिये गये और वडी संख्या मे मारे गये वहां बघर्रा को विदित हुआ कि जूनागढ के दक्षिणवर्ती ड्यू टापू पर पुर्तगालियों ने लड़ाई के जहाजो को वडी संख्या मे जमा किया है और एक वडी सेना उतारकर गुजरात मे घुसने वाले है। माँडू के आक्रमण को अनिश्चित काल के लिये स्थगित कर वह पुर्तगालियों का सामना करने के लिये सिंध से सीधा गुजरात चला आया।

पोटा के वर्ग के नट माँडू के जगलो मे आ छिपे। वर्षा के अन्त तक वही वने रहे। उस डरावने सुल्तान और प्रचण्ड 'राणाजी' के झझट मे वे नही पड़ना चाहते थे। शंका करते थे सुल्तान अब आया और तव आया। परन्तु न सुल्तान आया और न राणा जी आये।

गयासुद्दीन को राणा रायमल के वापिस चले जाने का समाचार

अविलम्ब मिल गया था। वह चाहता था मेवाड के राजपूत पहले जूझ जाये फिर बघर्रा से टक्कर लूँ। ऐसा न हुआ। उसने अपने मन को वहकाया राणा असल में लडना नहीं चाहते थे। सोचते होंगे मै और सुल्तान महमूद कट मरे फिर मौके का फायदा उठाये, मैं भी समझ लूँगा।

परिस्थिति को निरापद देखकर ख्वाजा मटरू ने पोटा के दल का पता लगा लिया

उसको बुलाकर कहा, 'सुना है तुम बहुत होशियार हो।'

'क्या काम है हुजूर ?' उसने विनय की।

मटरू ने राई ग्राम की उन दोनो लड़कियो का परिचय दिया क्या करना है यह भी बतलाया।

बोला, 'अगर तुम उन दोनो को किसी भी तरकीब से माँडू या हमारे इलाके में लिवा लाओ तो मुह माँगा इनाम पाओगे। तुमको खर्चे और अटक-भीर के लिये कुछ टके दे दिये जायेगे। काम कर लाओगे तो सोना-चाँदी से पूर दिये जाओगे। रहने के लिये माडू मे एक आलीशान मकान दे दिया जायगा। तुम्हारे सारे साथियो को भी बहुत इनाम मिलेगा।'

उसने कहा, हम लोगो को मकान नही चाहिये। हमको एक ही ठौर जमकर रहने की हमारे धरम में मनाई है— 'हमको कसम है। हम आपके हुक्म को पालने का उपाय करेगे। पूरा उपाय।'

'कुछ जादू-टोना जानते हो ?'

'जादू-टोना नही जानते तो जङ्गलो के सांप-बिच्छू, नाहर तेदुये कैसे कावू मे कर लेते है।'

'अच्छा जाओ, करो काम। तुमको आज कुछ गहने कपडे और काफी पेशगी रकम मिल जायगी।'

पोटा सामान लेकर चला गया।

(१३)

ग्वालिअर फिर से बस गया । कारीगरो और व्यवसाइयो के सब अपना काम कर उठे। गाव के किसान मजदूर रोते झीकते फिर से अपने धधे मे लग गये और ग्राम्य पचायते पुन अपने शासन नियन्त्रण और सचालन के कार्य मे व्यस्त हो गयी । मानो एक बडा अन्धड आया था, झाड, झाडियो को झकझोर गया, कुछ पेडो को उखाड गया, अनेक की डाले तोड गया, फिर सब ज्यो का त्यो।

ग्वालियर की सीमाओ के अन्तपालो–सरहद्दी–गढपतियो–को सतर्क और सजग रखने के लिए राजा मानसिह ने उपाय कर दिये। नरवर का विशाल गढ ग्वालियर के तोमरो के अधीन लगभग डेढ सौ वर्ष से चला आता था। ग्वालियर से बहुत दूर नही था—लगभग पच्चास कोस दक्षिण–पश्चिम मे। मालवा के सुल्तान से मोर्चा लेने के लिए पहला बडा अड्डा यही था।

मानसिह ने नरवर को भी सावधान कर दिया।

तोमरो ने नरवर के किले को कच्छपघातो–कछवाहो से लिया था। कछवाहो को यह बात काटे सी गडती रही। भूमि की भूख वाले उस युग मे यह बात भुलाई कैसे जा सकती थी? मानसिह के समय मे नरवर के कछवाहो का अन्तिम वशज राजसिह था। जवानी के जोश मे उसकी राज्य–लिप्सा और तोमरो के प्रति, प्रतिहिसा घनीभूत हो गई थी। वह ग्वालियर की सीमा के बाहर मालवा के सरहद्दी नगर चन्देरी मे रहता था और कभी माडू के सुल्तान, कभी दिल्ली के बादशाह को अपने अभीष्ट की प्राप्ति के प्रति उकसाया करता था। नरवर से चन्देरी लगभग बीस कोस के अन्तर पर है। चन्देरी मे मालवा के सुल्तान का सूबेदार रहता था। वह ग्वालियर की शक्ति को जानता था। नरवर के ऊपर आक्रमण नही कर सकता था। सुल्तान करे तो करे उसका निश्चय था। राजसिह अवसर की ताक मे था।

चन्देरी के दक्षिण पूर्व से वेतवा पहाडो और जगलो को पैनती-कुरेदती पूर्व मे लगभग चार कोस के अन्तर से उत्तर की ओर चली गई है। नई चन्देरी के किले और नगर के कोट को मालवा के सुल्तानो ने नये सिरे से वनवाया था। पुरानी चन्देरी उजड पडी थी।

चन्देरी नई चन्देरी-का किला नगर के ऊपर उत्तर से पूर्व की ओर घूमकर जाने वाली एक ऊची पहाडी पर था। चन्देरी का सूवेदार इसी मे रहता था। नीचे वसा हुआ नगर सघन था। यही एक वडे भवन मे राजसिह रहा करता था। उसके पडोस मे एक गायक था जिसके गले की मधुरता और वीणा पर अगुलियो की चतुराई विख्यात हो गई थी। वह राजसिह को अपना गायन और वीणा-वादन कभी-कभी सुनाया करता था। दोनो में मैत्री थी' गायक को इससे यदाकदा कुछ सहायता मिल जाती थी।

सूवेदार गायन-वादन का शौकीन नही था। फिर भी कभी-कभी थोडा वहुत साथ देता था। गायक का नाम वैजनाथ था। जाति का ब्राह्मण। गायन-वादन के अभ्यास वढाने मे उसको दिन और रात भूख और प्यास, अवसर और कुअवसर की परवाह नही रहती थी। नगर मे उसे वैजू कहते थे। वैजू के घर के सामने एक चित्रकार की लडकी रहती थी। वह चित्रकारी से वढकर संगीत कला मे निपुण थी। वर्णशकर होने के कारण उसका युवावस्था प्राप्त हो जाने पर भी विवाह नहीं हुआ था। रूपवती थी, लाखी से कुछ मिलती-जुलती। वैजू से उसने गायन-वादन भी सीखा था परन्तु चित्रकारी मे उसे विशेष रुचि थी। राजसिह के भवन पर जव वैजू गाता था तो लडकी तम्बूरे का साथ देती थी और वीच-वीच में अपने कण्ठ से उसकी लय को साधती थी। पिता ने मरते-मरते तक विवाह की चर्चा की, कोई भी विवाह करने को तैयार नही हुआ। इसने भी विवाह न करने की प्रतिज्ञा कर ली। उसका नाम कला था।

शरद ऋतु लग गई। शुक्ल पक्ष की चांदनी पेड़ों के लहलहाते पत्तो और दूवा पर बैठी हुई ओस की बूँदों के साथ खेलने लगी। शरद पूर्णिमा की रात मे बैजू का गायन राजसिंह के यहाँ हुआ। कला तम्बूरे की झंकार और बीच-बीच मे अपने स्वर से उनका साथ दे रही थी। कला की आँखे आई हुई थी, हल्दी का भीगा कपडा आँखों पर डाले थी, रस मे इतनी डूबी हुई थी कि आई आखो की उसको चिन्ता न थी।

राजसिंह की छोटी सी सभा मे उसके कई मित्र बैठे थे। उनमे मे एक चारण था। चारण कुछ कहने के लिए उतावला था। गायन के बीच-बीच मे उसी के मुह से सबसे ज्यादा वाह! - वाह!! निकल रही थी। गायक बैजू उस वाह-वाह पर कृतज्ञता-ज्ञापन के लिए मुस्करा भर देता था। चारण की वाह-वाह के प्रति कृतज्ञता प्रकट न करना अनिष्ट तो होता ही शायद कभी हानिकारक भी हो सकता था।

गायन की समाप्ति पर राजसिह ने यथा-सामर्थ्य गायक को कुछ भेट किया।

चारण बोला आप जैसे गायक हो बैजनाथ जी, वैसा दान राजसिह जी उस दिन देगे जब इनकी पुरानी वापौती लौट आवेगी।

राजसिह ने उठी हुई साँस को रोका।

बैजू ने कहा जो मिल जाय वही बहुत है। अपनी आत्मा के भीतर से जो कुछ पाता हूँ वह सवसे बढकर है।

चारण ने अपने भाव की धार तेज की—जब नरवर के किले मे इनका झण्डा फहरावेगा, तब मै इनको कहूँगा, तभी आपको मेरे राजा सोने और मोतियो से आदर देगे। तभी मेरी छाती जुडायगी, मेरी आत्मा भी

और तभी मैं सबके सामने अमल करूंगा और मद का प्याला बाटकर पीऊंगा, राजसिह के मुंह से निकला

कला ने आंखो की पट्टी को जरा सा हटाकर राजसिंह की ओर देखा।

चारण बोला, हमारे पुरखो ने राजसिंह जी के पुरखो के साथ नरवर को छोड़ा था जब तोमरो ने नरवर का हरण किया। हमको आन है कि तब तक नरवर में पैर नही रक्खेगे जब तक कछवाहो का राज्य नरवर मे फिर से नही हो जाय।

बैजू राजनीति को नही जानता था उसे लगा राजसिंह किसी दिन अपने कुछ साथियों और चन्देरी के सूबेदार के सग नरवर पर धावा कर बैठेगा, जिसका परिणाम बुरा अधिक अच्छा कम होगा।

हमारे लिये तो बिना राज्य के भी आप राजा है। नरवर बहुत बड़ा किला सुना है। बहुत रक्तपात होगा। 'बैजू ने कहा'।

राजसिंह नशा किये था। मर जाऊंगा किसी दिन। अपनी भूमि को फिर से पाये बिना मर जाना ही अच्छा।

कला ने फिर आंख की पट्टी को उठाया। उसने राजसिंह को ऐसी बात कहते पहले कभी नही सुना था।

चारण ने चर्चा को तेज किया; मर क्यो जाओगे कुमार? मारोगे और नरवर को फिर पाओगे। चन्देरी के सूबेदार, मालवा के सुल्तान आपको यो ही नहीं मर जाने देगे. यो ही मरते स्यार, राजपूत ऐसे नही मरा करते।

राजसिंह ने सिर हिलाकर बतलाया कि उसका प्रयोजन, मार कर मरने मे था—यों ही मर जाने का अभिप्राय न था।

चारण ने एक उत्तेजक कवित्त सुनाया जिसका तात्पर्य था—सिंह और राजपूत कही भी जाकर अपने बाहुबल से राज्य को बना लेते है बैजू के गायन का जो प्रभाव हुआ था उस पर अपने प्रभाव को चढा देने का उस कवित्त पाठ का उद्देश्य अधिक था, राजसिंह को भड़काने का कम।

बैजू को न तो कवित्त का साहित्य अच्छा लगा न उसके पाठ की कर्कश ध्वनि।

कला तमूरे को आवरे मे रखती हुई कुछ सोचने लगी। राजसिह ने बैजू को प्रसन्न करने के लिये कहा, बैजनाथ जी, वह शुभ घड़ी भी किसी दिन भगवान लायेगे। देर सवेर जब आयगी, आवेगी अवश्य। परन्तु उस घडी के आने के पहले आपकी अनेक बैठके होगी और आपका सम्मान किया जावेगा। दिवाली आ रही है और उसके उपरान्त फिर देवठान एकादशी, फिर कार्तिक पूर्णिमा, फिर ब्याह पञ्चमी—

बैजू ने राजसिह की सूची को आगे बढने से रोक दिया—इन त्योहारो पर मै चन्देरी मे नही रहूँगा। सुना है ग्वालियर का राजा सङ्गीत का बडा प्रेमी है और जानकार भी। देश देशान्तर के गवैये वहां इकट्ठे होने वाले है। मै उस उत्सव को देखना चाहता हूँ।'

राजसिह ने सिर नीचा कर लिया।

चारण ने दबे स्वर मे कहा, 'ग्वालियर का राजा! वही तो हम लोगो का पुराना बैरी है।'

'बैरी तो नरवर है" बैजू ने भोलापन प्रकट किया।

'उसी के राज्य मे तो नरवर है।' चारण ने बतलाया।

राजसिह का एक मित्र बोला 'सुलतान ग्वालियर पर चढाई करने वाला है। माँडू मे तैयारी हो रही है। फूस-माघ तक कूच हो जायगा।'

राजसिह के मन मे यकायक एक विचार उठा। एक क्षण अपने मित्र की ओर देखकर उसने कहा, इनको जाना चाहिये एक लाभ होगा। तुम भी जाओगी कला?'

कला ने सिर नीचे किये हुये उत्तर दिया, 'जाना तो चाहिती हू। गुरु-जनो की आज्ञा मिल गई तो चली जाऊँगी।'

बैजू की समझ मे साफ-साफ नही आ रहा था। उसने वैसे ही हामी का सिर हिला दिया।

राजसिह के कण्ठ मे यकायक मिठास आ गई। 'जाना अच्छा रहेगा। बहुत ठीक रहेगा! बहुत कुछ काम बन सकता है।' उसने संकेत भरे शब्दों मे कहा।

बैजू बोला 'आपकी कृपा से सब ठीक रहेगा। देखूँगा कौन-कौन गवैये सामने आते है ग्वालियर मे।'

चारण और राजसिंह ने एक-दूसरे की तरफ देखा । उसके मित्र ने भी किसी आकस्मिक रहस्य को जानने का कुतूहल व्यक्त किया । कला ने भी आँख की पट्टी उघाडकर जहाँ की तहा कर ली।

राजसिंह ने कला से अकेले मे कुछ कहा। फिर तितर-बितर हो गये।

[१४]

ग्वालियर के किले के दक्षिणी मैदान मे पुनर्वास के लिये लौटे हुये लोगो के अब कोई झोपड़े नही रहे थे। वे अब किले के नीचे नगर मे जा बसे थे। उस मैदान के पूर्वी छोर की दीवार के नीचे छोटे-बडे, ऊँचे-नीचे बाँसो पर विविध रङ्गो के घड़े घास-फूस और मिट्टी के पक्षी तथा डोरियों पर लटकते, चक्कर खाते हुये छोटे-छोटे गोले घूम रहे थे। सामन्तो और सैनिको के साथ मानसिंह तीरन्दाजी का अभ्यास करा रहा था। एक घड़ी दिन चढे ही अभ्यास करने वाले इकट्ठे होकर समूहो मे बँट गये थे। मानसिंह के साथ विजयजङ्गम भी था।

जिन्होने अभ्यास का आरम्भ ही किया था वे बड़े-बड़े लक्ष्यो को साध रहे थे। जिनको पारगत समझा जाता था वे छोटे के सामने थे। इन सबके पीछे मोटे कपडे के रेत भरे बोरो की दीवार उठा दी गई थी जिससे तीरो की नोकें कोट की दीवार से टकराकर झड न जाये।

मानसिंह और विजय के सामने डोरी से लटकता हुआ एक छोटा-सा घडा था। इसको उतारा गया और उसमे पानी भर दिया गया। काठ की एक छोटी-सी बतख उसमे डाल दी गई।

मानसिंह ने विजय से कहा, 'टाग देने के बाद इस घोड़े को हिला दिया जायगा। चक्कर खाते हुये घडे के भीतर बतख को तीर छेदकर निकल जाय तब बात है।'

'कितने तीरो मे एक लग जाय तो सफल वेध समझा जायगा ?' विजय ने पूछा।

'पांच' मानसिंह ने उत्तर दिया।

'पहले राजा,' विजय ने स्वीकार करते हुये कहा।

'पहले आचार्य, राजा' ने मुस्कराकर प्रतिवाद किया। 'आचार्य, यदि इस लक्ष्य को वेध कर लो तो अरने भैसे और हाथी के मस्तक को फोड दोगे।'

'महाराज, हम लोग लडाई के सिवाय और कही किसी का मस्तक नही फोड़ते।। जीव हिंसा को पाप समझते है।'

'इस लक्ष्य को वेध करते हुये सोचोगे न कि शत्रु के मस्तक को छेद रहे है ?'

'नव अवसर आने पर शत्रु का शिरोच्छेद करने में हाथ नही काँप जायगा ?'

'कभी नही काँपा। पिछली लडाई मे किया था न मैने भी कुछ ?'

'तो उस समय शत्रु के सिरो को क्या मिट्टी का ढेर समझकर तीर चलाये थे ?'

'नही तो जब जैसा समय आता है तब तैसा सोच लेते है।'

'जब यह घडा हिलेगा तो क्या उसकी उतनी तीव्र गति हो जायगी जितनी घुड़सवार की होती है।'

'तो क्या दौडते हुये घोडो पर तीर चला उठे ?'

'घोडो पर नही, अन्न के खेतो का नाश करने वाले अरनो सुअरों और पक्षियो पर चलाओ।'

'आप कहेगे मोर, नीलकण्ठ और हँस सरीखे पक्षियों पर भी चलाओ।'

नही तो। 'और अनेक चिडियाँ है।'

'हमारे सिद्धान्त के विरुद्ध है।'

'आप कैसे शैव है! कुमार देवताओ की सेना के सेनापति और आपके आराध्यो मे—

'आज आपको क्या हो गया है? क्यो इतना हठ कर रहे है! अभी कुछ ठण्ड है फिर धूप तीव्र हो जायगी, करिये न आरम्भ।'

'बात यह है कि मै एक-दो दिन के लिये शिकार खेलने जाना चाहता हू इच्छा है कि आपको भी साथ ले जाऊँ। नाहर तेदुये इत्यादि भी मिलेंगे। इनको तो आप मारेगे?'

'इनको भी नही मारूँगा, शिकार मे साथ नही जाऊँगा।'

अपने हठ को छिपाने के लिये विजय हँस पड़ा, 'आप असल मे मेरे चित्त को विचलित करके लक्ष्यवेध मे चुकाना चाहते है, इसलिये इस अनुपयुक्त प्रसङ्ग पर ही शास्त्रार्थ कर उठे।'

राजा ने भी हँस दिया। कहा, 'अच्छा जाने दीजिये। पहले मैं शरसन्धान करता हू लग गया तो आपको इसी प्रकार का दूसरा घड़ा मिल जायगा, चूक गया तो आप चलावे। इसी प्रकार पाँच तीरो मे अभ्यास चलेगा।'

घडे को वेग के साथ हिला दिया गया। राजा ने दृढता के साथ सांस साधकर निशाना लिया। तीर चूक कर रेत की बोरी मे जा छिदा। विजय ने भी बहुत साधकर तीर छोड़ा वह भी असफल रहा। मानसिह के एक तीर से घड़ा तो फूट गया परन्तु काठकी बतख का वेध वह नही कर सका। विजय ने दो बार घड़े को फोड़ा परन्तु बतख का वेध वह भी न कर सका।

दूसरे समूहो का अभ्यास चल रहा था बड़े लक्ष्यो को सहज ही वेध लिया जाता था परन्तु छोटो का वेधना बहुत दुष्कर हो रहा था। किसी ने वेध लिया तो वह अपनी सफलता के उल्लास मे मग्न हो हो जाता था।

मानसिंह और विजय ने दूसरे निशानो पर अभ्यास किया, कही सफलता मिली, कही नही मिली। अभ्यास मे एक पहर गया। सब लोग अपने-अपने धनुषबाणो को सभाल कर ले गये। मानसिंह और विजय साथ-साथ राज भवन मे आ गये।

मानसिंह ने कहा, 'तुर्क लोग तीरदाजी मे बहुत बढे-चढे है। जब तक हम लोग उनकी अपेक्षा अच्छे तीरदाज नही हो जाते है तब तक उनका सामना सफलता के साथ नही हो सकता। हम लोगो मे साहस शौर्य इत्यादि सब कुछ है परन्तु इसकी कमी है।

विजय बोला, 'और कई कमिया है। जिनमे से एक बडी कमी अच्छे घोडो की है। तुर्कों के पास अच्छे घोड़े हैं महाराज को स्मरण होगा कि मैने तेलङ्गाने के दक्षिणवर्ती विजयनगर राज्य का कुछ वृत्तान्त सुनाया था। बहमनी सुल्तानो से लडने मे विजय नगर की अपार सेना इन दो त्रुटियो के कारण ही रह-रह जाती है।'

मानसिंह ने निश्चय के स्वर मे कहा, 'मै इन दोनो त्रुटियों को दूर करना चाहता हूँ। अभ्यास-अभ्यास घोर अभ्यास से हम लोग तीरंदाजी मे तुर्को से आगे निकल जायेगे। घोडो की समस्या अवश्य दुरुह जान पडती है सो मेवाड के मार्ग से प्राप्त हो सकते है। मेवाड के राणा को मैं अपना बड़ा मानता हूँ, इस काम मे वे सहायता करेगे।'

'सोना–चाँदी बहुत चाहना पडेगा। कहाँ से आयगा इतना ?'

विजय ने सदेह प्रकट किया।

'सोना-चाँदी की कमी नही रह सकती। शासन का प्रबन्ध अच्छा रक्खा जा रहा है। प्रजा अन्न उपजावेगी। सेठ और व्यापारी उद्योग-धन्धो को बढ़ायेगे, फिर कमी नही रह सकती।'

'आपको भवन बनवाने है, मन्दिर भी।'

'सोचा था, परन्तु अभी नही। ध्यान में ही नही आया है कि भवन किस प्रकार का बनेगा और कैसा। दक्षिण का नमूना तैल

मन्दिर है परन्तु किसी और ढंग का बने तो अच्छा रहेगा। सबसे पहले शस्त्र और सेना फिर कही भवन और मन्दिर।'

'और शिकार? इन सबसे पहले।'

'मैंने वैसे ही कहा।'

'परिश्रम कर लेने पर कुछ अवकाश भी तो चाहिये।'

'जीवन मे कायम-काम ही सब कुछ है। एक काम से मन उचटे तो दूसरा करने लगे। मै तो अवकाश इसी को कहता हूँ।'

'आपकी इस बात को मैं बहुत पहले गाँठ मे बांध चुका हूं।' इसीलिये परिश्रम से आल्हाद पाता हूँ। 'प्रण किया है जब भवन और मन्दिर बनवाऊंगा तब मजदूरो के साथ नित्य एक घण्टे मै भी पत्थरों पर श्रम करूँगा।'

'शिकार खेलने कब जायेगे, महाराज?'

'ह! ह!! ह!!! फिर व्यंग!!! नही जाऊंगा। उस गांव का वह ब्राह्मण दो बार आकर बुला गया है। हुलास में आकर उस से कह देता हूँ कि शीघ्र आऊँगा। परन्तु वह हुलास क्षणिक सा रहा, मैं भूल गया।'

'आज फिर स्मरण हो आया।'

'मेरे साथ न्याय करो आचार्य। मै केवल मन बहलाव के लिये नही जाना चाहता हूं जङ्गलो मे। तीव्र गति के साथ दौडते हुये भयकर पशुओं को एक तीर से मार गिराने की क्रिया मे निपुण होना चाहता हूँ। बन सका तो वहाँ के टूटे हुये मन्दिर के उद्धार मे भी कुछ सहायता कर दूँगा।'

'गांव के उस शास्त्री ने कुछ और भी कहा था?'

'स्मरण नही आता।'

'कुछ बहेलियो की बात कही थी।'

'कही होगी, याद नही रही।'

विजय को राजा ने भोजन कराया। फिर स्वयं किया। भोजन के उपरान्त विजय मानसिंह को वीणा-वादन सुनाया करता था। वह इसका अच्छा जानकार था। वीणा-वादन पर मानसिंह मुग्ध हो गया। जब रुका, विजय से उमङ्ग मे भरकर कहा, 'पहले के लोगो ने बड़े-बड़े मन्दिर और विशाल मूर्तिया बनवाई है—मै चाहता हू सङ्गीत को पत्थरो मे खुदवा दूं।

'पत्थरो मे सगीत ?' विजय ने वीणा को एक ओर रखकर आश्चर्य प्रकट किया।

'क्या कुछ असम्भव है ? अजमेर के चौहान राजा विग्रहराज ने विग्रहराज नाटक और हरकेली नाटक को खुदवा दिया था न शिलाओ पर ?'

'परन्तु सङ्गीत ? यह तो हृदय और गले की चीज है।'

'क्या अकेले मैंने ही ठेका लिया है सब निर्धार करने का। एक सुझाव दे दिया कुछ आप भी सोचो।'

'यह भी किसी क्षणिक उल्लास की ही उपज है महाराज, या कुछ और।'

'आप जितने सरस सङ्गीतकार हो, आचार्य; उतने सरस वार्ता-कार नही हो।'

'महाराज, मेरे गुरुओ ने खरी बात कहने और निस्पृह रहने की शिक्षा दी है।'

'अच्छा, मै वचन देता हू कि उल्लास क्षणिक नही रहेगा। मै सगीत को पत्थरो मे मूर्त करने की बात सोचा करूँगा।'

'राग—रागनियो की मूर्तिया और उनको आरोही-अवरोही अल-कार, ताने उभार कर, खोदकर पत्थरो को सजीव किया जायगा क्या ?'

'अभी कुछ नही कह सकता। कहा न कि आप भी सोचते रहो। लालसा है कि उसको देखकर अनजान भी किसी गीत को गा उठे। वीणा पर किसी और राग को मूर्त करिये।'

'अच्छा कुछ क्षण। फिर थोड़ा-सा विश्राम करिये राजा तो देखिये।'

विजय ने कुछ क्षण वीणा वजाई। मानसिंह ने एक घड़ी विश्राम किया और काम के लिये भवन के बाहर निकल आया।

[१५]

राई गाँव के निवासियो ने धान की फसल काट ली। ज्वार अभी खड़ी थी।

झटपट खलियान मे बालो को सुखाया और कूटकर चावल गाड़ लिये। पयाल को जाडे के लिये सुरक्षित रख लिया। राज्य का गहना आया, छटवा अंग ले गया। पुजारी ने अपना अंग ले लिया। किसानो ने सोचा बाहर के लुटेरो से बच गये यही बहुत है, इनको देना तो भाग्य मे ही लिखाकर चले है। लुटेरे कहीं से न आ टूटे तो ज्वार मे से दे-दिवाने के बाद भी खाने के लिये कुछ दिनो को हो जायगा। चावलो से आशा कम थी, क्योकि स्त्रियो के लिये कुछ कपडे चाहिये थे और काँसे पीतल के कुछ गहने—यदि एकाध छल्ला चादी का भी हाथ पड़ जाय तो क्या बात है।

पुरुष बचे हुये चावलो को खेती के औजारों और तीरो मे पलटवाना चाहते थे परन्तु उनकी बहुत ही कम चल सकी। नगे पैरो, नगे हाथो स्त्रिया कब तक और कैसे रह सकती है? तिथि त्योहारो पर भी बिना कडो और चूडो के पैर और हाथ, आखो मे आसू ला देते है। यह बात पुरुषो के मन मे छिदी हुई थी। कहा, 'उनारी की फसल पर गहने और कपडे—लत्ते ले लिये जायेगे।' स्त्रियो ने हाय की सांस भरकर हामी भरदी, मुंह लटका लिये। पुरुषो को चावल का अधिकाश भाग हटाकर काँसे-पीतल के कडे-चूडे लेने पड़े। जाडो के लिये थोडे से कपडे और कुछ कजूसी करके थोडे—से तीर।

विजय को राजा ने भोजन कराया। फिर स्वय किया। भोजन

गाँव मे अटल का घर कुछ हरा-भरा समझा जाता था, क्योकि तीनो स्वस्थ थे, परिश्रम करते थे और शिकार खेलते थे हरे-भरे घर मे भी कडे-कूडे एक भी नही ! वस्त्र ही कम । परन्तु यहाँ वस्त्रो और गहनो के मुकाबले मे तीरो को हारना नही पडा । कोई ऐसे जानवर हाथ नही लगे थे जिनकी खालो से वस्त्रा और हथियारो को ले लिया जाता । खाने के लिये थोडे से चावल रख लिये गये। ज्वार की फसल आने वाली थी, फिर उन्हारी । इसलिये बाकी चावलो को हथियारो और वस्त्रो की खरीद के लिये उठा लिये । लाखी को चादी का एक छल्ला और निन्नी को गले के लिये एक छोटी पतली सी ही सही हसली की आवश्यकता प्रतीत हुई । छल्ला थोडे मे आ सकता था । तीर बहुत आवश्यक थे । यह लाखी की माग थी । मुझको तीर नही चाहिये एक हसुली बिना गला बिलकुल सूँना रहता है इसलिये मेरे लिए हँसुली आनी ही चाहिए यह तकाजा निन्नी का था ।

जितने तीर निन्नी के पास थे वे उसको पर्याप्त नही जान पडते थे । वह लाखी को अपने कुछ तीर दिये रहती थी परन्तु लाखी उनको अपना नही कह सकती थी । अटल उन तीरो को लाखी को नही दिलवा सकता था । कुछ वस्त्र दोनो को चाहिये थे । उतने चावलो से इतना सब हो जाना दुष्कर मालूम होता था ।

अटल ने फुसलाने का प्रयत्न किया ।

'अबकी बार एक बर्छी लाता हूँ । दोनो उससे अभ्यास करना । पास से मार सकती हो और दूर से फेककर भी ।'

'अच्छा तो मैं गले के लिये हँसली नही लूँगी मेरे लिये बरछी ला दो ।' निन्नी ने कहा ।

लाखी बोली, 'एक बरछी मेरे लिए भी । मुझको चादी का छल्ला नही चाहिये । उन्हारी की फसल पर छल्ला ले लूँगी । अभी बरछी और तीर ।

'चावलो को कौन खायगा जो रख लिये है ? उनसे हम दोनों को दो-दो एक-एक छल्ले भी मिल जायेगे ।' निन्नी ने सुझाया ।

'फिर खाने के लिए क्या बचेगा ?' अटल ने मृदुलता के साथ पूछा ।

'ज्वार मे भुट्टे आ गये है । पकने तक उनसे काम चलायेगे ।' निन्नी ने वतलाया ।

लाखी ने उत्तर दिया, 'जाडा पडने लगा है, जङ्गल का घास सूख गया है, कुछ जानवर ढूँढ़ने से मिल ही जायेगे । उनसे काम चलेगा । नदी मे मछलियाँ आ गई है । उनको भी देखो ।'

अटल ने समझ लिया कि उसकी नही चल सकेगी । वरछी की वात सुलगाकर पछताया । फिर भी उसने आशा नही छोडी ।

कहा, 'अच्छा तो तीर, कपड़े, छल्ला और हंसुली रही । वरछी उन्हारी फसल पर । थोडे से चावल रक्खे रहने दो ।'

'नही । वरछी अवश्य आवे ।' निन्नी वोली ।

'वरछी तो आनी ही चाहिये ।' लाखी ने हठ किया ।

अटल को मानना पड़ा । भोजन की प्राप्ति भाग्य के भरोसे ।

चावल लेकर वह ग्वालियर चला गया । पुजारी भी उसके साथ गया ।

वे दोनो तीर कमान लेकर जङ्गल मे जा पहुँची । जहाँ लाखी को घायल अरना पडा मिल गया था वहां उन्होने देखा, गधो, वकरे वकरियो, वन्दरो के साथ कुछ लोग आ ठहरे है । झिझकी ।

निन्नी ने कहा—'न जाने कौन है ये लोग ।'

लाखी ने अनुमान किया, 'लुटेरे नही हो सकते । कोई भूले भटके से जान पड़ते है । पास से चलकर देखे । क्या है, अपने पास भी तीर कमठे और छुरे है ।'

निन्नी उत्तेजित होकर वोली, 'डर किस वात का ? अपने पास है क्या जिसे यह छीन ले जायेगे ? चलो देखे ।'

वे उनके निकट पहुँच गईं।

यह समूह पोटा और पिल्ली का था। हाल ही मे आया था। सबके सब झोपडे बनाने की युक्ति कर रहे थे। इन दोनो को अपने पास आया देखकर वे सब ध्यान के साथ देखने लगे। पोटा आगे बढा। पिल्ली उसके पीछे। निन्नी के विलक्षण सौन्दर्य को देखकर पोटा किसी के बतलाये हुये परिचय को मन मे तोलने लगा। उन दोनो को तीर-कमानों से सजा हुआ देखकर उसकी आशा को कोई ठेस नही लगी।

पिल्ली बोली, 'क्या तुम दोनो इसी गाँव की हो?'

उन्होने हामी का सिर हिलाया।

'गाँव पास ही है क्या?' पोटा ने पूछा।

लाखी ने दूरी बतलायी।

पिल्ली आगे बढ आई। सुन्दर चोली पहिने थी और बढिया पैजामा—ख्वाजा मटरू के टकों की देन। परन्तु ओढनी नही थी उसके शरीर पर।

उङ्गलियाँ नचा कर और नाक के नथ को हिलाकर उसने कहा, 'आओ न, इधर आओ। बन्दरो का तमाशा दिखलायेंगे, नटो के नाटक रस्से पर ढोलकी बजाते हुये नाच। कुछ इनाम दोगी? क्या दोगी।'

निन्नी ने शात निसकोच भाव से कहा, 'हमारे पास देने के लिये कुछ नही। हमारा गाँव बहुत गरीब है।'

एक अधेड़ नटिनी आ गई।

बोली, 'अरी ये तो हम सरीखी गरीबनी है, इनसे क्या इनाम लेना। इनको वैसे ही अपने सब खेल-तमाशे दिखलायेंगे। आओ बेटी इधर आओ, हमारे पास अच्छे बड़े पके सीताफल है। बड़े मीठे है।

निन्नी और लाखी ने एक दूसरे के प्रति देखा।

पिल्ली तुरन्त कुलाँचे खाने लगी। वे दोनो रुचि और अचम्भे के साथ उसके शरीर की लोचो-लचको को निरखने लगी।

हाँफ को साधकर पिल्ली इन दोनो के पास आ खडी हुई।

उसने बड़े निहोरे के साथ कहा, 'आओ इधर आओ, वहिन हम वन्दरो के खेल दिखायेगे।'

पोटा वोला, 'आकाश मे रस्से पर नाचते हुये कभी देखा है तुमने किसी को?'

लाखी पिल्ली के शरीर की बनावट को परख रही थी। निन्नी ने कहा, कभी नही देखा।'

'कभी सुना।'

'न कभी सुना।'

'तो लो आओ। अभी दिखलाता हूं। हम हारे थके तो है, पर तुम-को ये खेल जादू-टोने दिखलाना हमको बहुत अच्छा लगेगा।'

'खेल देखो और सीताफल खाओ, आओ वेटी इधर।' अधेड नटिनी ने आग्रह किया। पिल्ली को मालूम हो गया कि दोनो उसकी कुलाचो के आश्चर्य से भर गई है परन्तु उनके तीर कमठो और वगल के छुरो को देखकर उसके मन मे कुछ ग्लानि हुई।

उसने पूछा, 'ये तीर कमठे काहे के लिए बाँधे है?'

लाखी ने उत्तर दिया, 'शिकार खेलने जा रही थीं हम दोनो, इधर तुम लोगो को देखकर चली आई।'

'शिकार खेलती हो इस घने-भयावने जंगल मे! कौन-सी चिडिया मारती हो तीरो से! चिडियो को तो हम गुलेल से ही मार गिराते है।' पिल्ली ने कहा।

निन्नी मुस्कराती हुई बोली, 'चिडियों को हम लोग उङ्गलियो के कंकड़ो से मार लेते हैं। हमारी लाखी ने एक ही तीर से अरने भैंसे को छेद डाला था।'

'इनका नाम लाखी है। और तुम्हारा वेटी?' पोटा ने प्रश्न किया।

लाखी ने बतलाया, 'इन्होंने बड़ी बड़ी खीसों वाले बनैले सुअर एक एक तीर से ही लिटा दिये हैं। इनको निन्नी कहते हैं, पर असली नाम मृगनयनी है।'

पोटा ने सोचा जैसा सुना था वैसी ही है। दूसरी भी उन्नीस बीस ही बैठेगी।

नटों का समूह अपने निवास के लिये लकड़ियों का घेरा बना रहा था। अभी अधूरा था। वे दोनों अधूरे घेरे के भीतर हो गईं।

अधेड़ नटनी एक टोकनी में से दो बड़े—बड़े पके सीताफल ले आई। निन्नी ने लेने से नाहीं कर दी।

बोली, 'हम कुछ शिकार मारकर ले आवें और तुमको दें, तब हम भी तुमसे कुछ ले सकती हैं। यों हीं सेंतमेंत, किसी का कुछ लेना हमारे कुल की रीति नहीं है।'

अधेड़ नटनी ने आग्रह किया, 'अरी तुम दोनों महलों में रहने लायक हो! बड़े—बड़े पलङ्ग पर आराम करने जोग!! लौंडिया—बांदियाँ तुम्हारी हाजिरी में खड़ी रहें!!! हुकुम करो और हम उस को पालें। सीताफल तुम्हारे ऊपर न्योछावर है। देखो तो, ऐसी हैं जैसे गुलाब और कमल के फूलों से बनी हो इनकी देह। किसी राजा के साथ होगा तुम्हारा व्याह, तब कभी-कभी हमारी और सीताफलों की याद करना भूलना नहीं। शिकार मारकर दोगी तब हम लोग ले लेंगे, पर इस समय हमारी यह भेंट कबूल करलो, रानी'

निन्नी को यह भाषा बुरी लगी, लाखी को अच्छी।

लाखी ने कहा, 'ले लो, निन्नी ले लो। अभी दिन भर पड़ा है। कोई न कोई शिकार जङ्गल में मिलेगा सो इनको व्याज समेत चुका देंगी।'

नटों के आग्रह के पीछे किसी विशेष अभिप्राय को न देखकर निन्नी ने एक सीताफल ले लिया। दूसरा लाखी ने। जब तक उन दोनों ने सीताफल समाप्त किये पोटा ने एक टोकनी में से लम्बा रस्सा

निकाला। दो गुणाकार नोकदार वांसो मे एक ओर और वैसे ही दो वांसो से दूसरी ओर उस रस्से को बाधकर ताना, और कडा कर लिया। अधेड़ नटिनी के सकेत पर पिल्ली दो बड़े—बडे सीताफल और लाई। उन दोनो ने खाने से इन्कार किया, परन्तु पिल्ली और अधेड नटिनी के लचक—लचक कर किये हुये आग्रह को वे ठुकरा न सकी। उन्होने इन फलो का खाना समाप्त नही कर पाया था कि गले मे ढोल वाधकर पोटा अपने साथियो की सहायता से रस्से पर पहुच गया। चलने लगा।

वें दोनो आश्चर्य के साथ उसकी क्रिया को देखने लगी। पिल्ली मचल—मचलकर, मचक-मचक कर नाचने और गाने लगी। पोटा कभी धीरे-धीरे, कभी द्रुतिगति के साथ रस्से पर इधर से उधर और उधर से इधर चलने लगा। पिल्ली के गायन और नृत्य का साथ देने के लिये वह गर्दन में पडी हुई ढोलकी को भी वजाता जाता था।

निन्नी का आश्चर्य शीघ्र समाप्त हो गया। कुछ क्षण उसको पिल्ली का गाना भाया परन्तु कुछ ही क्षण। वह अपने मन को कारण नही समझा सकती थी परन्तु उसको पिल्ली के गायन मे वेसुरापन और भद्दापन प्रतीत हो रहा था और नृत्य मे बहुत भोडा पन - क्या स्त्रियाँ इतनी निर्लज्ज भी हो सकती है ? उसके मन मे ग्लानि के साथ वार-वार प्रश्न उठ रहा था।

लाखी को उसके गायन और नृत्य मे कुछ कुरस नीरस नही लग रहा था। उसका ध्यान पोटा के सतुलन और विलक्षण लाघव पर मुग्ध हो रहा था।

उसके मन मे उठा, क्या मैं ऐसा कर सकती हू ? क्यो नही कर सकती ? इस नटनी सरीखी कुलाचे चाहे न ले पाऊं, परन्तु इस नट के समान रस्से पर तो चल फिर लूंगी, अवश्य चल फिर लूंगी। देह को साधने और सास को सभालने ही का तो काम है, सीखूंगी, घर मे रस्सा है ही। जगल मे वास काट लाऊँगी। आज ही छुरे से चार वाँस

काटूँगी और लौटते ही अभ्यास करूँगी। यदि शिकार मिलता रहा तो नटो को दिया करूँगी और उनसे इस विद्या को सीखकर ही रहूँगी।'

नट प्रदर्शन को समाप्त करके रस्से से नीचे उतर आया। उसने पूछा, 'बेटी कैसा लगा ?'

निन्नी ने केवल सिर हिलाया, लाखी ने उत्साह के साथ कहा,'बहुत अच्छा लगा। कब तक रहोगे तुम सब यहाँ ?'

'कुछ ठीक नही अभी तो आये ही है। नदी का सहारा है। हमारे जानवरों के चरने के लिये घास यहा बहुत है आस-पास कई गाव है। है तो छोटे ही, पर अपने खेल तमाशे दिखलाते रहेंगे और पेट पालते रहेगे। ग्वालियर भी दूर नही है। कभी वहाँ भी खेल दिखलाने जायेगे, पर अभी तो यही पड़े है।' पोटा ने कहा।

पिल्ली बोली, 'तुम आया करो, तुमको रोज कोई न कोई नया खेल दिखलाया करेगे। अभी दिखलाया ही क्या, और कितना है। अनगिनत तमाशे हैं हमारे पास। तुम्हारे गांव मे भी आयेगे हम।'

निन्नी ने हतोत्साहित किया, 'गाव मे तमाशे के बदले कुछ नही मिलेगा। बहुत गरीबी छाई है।'

अधेड नटनी ने उत्साह प्रकट किया, 'बेटी हम लोग बहुत कमा खा लेते हैं। एक गाव मे कुछ न सही। तुम्हारे सहारे यहां जङ्गल मे दिन काट, लेगे यही क्या कम है ? आया करो, भला। कसम हैं, आया करो बेटी दोनो। और देखो शिकार क्यो खेलती हो ? यह तो मर्दों का काम है, जङ्गल मे शेर भालू होगे। खाई खड्ड और काँटे है। तुम्हारे कन्धो पर तो फूलो की मालाये और कमर मे मोतियो की करधोनी होनी चाहिये। तीर कमठो के ही आया करो। वैसी बहुत भली लगोगी।'

पिल्ली ने अपने वक्ष फड़काकर आँख मिचकाई और मुस्कराई लाखी को वह उपहास—जनक फूहडपन जान पड़ा। ग्लानि और क्षोभ के कारण निन्नी का चेहरा तमतमा गया।

निन्नी ने कहा, 'अब हम लोग शिकार खेलने जा रही है। मिल गया तो तुमको भी देंगी।'

पोटा ने अनुरोध किया, 'हम लोग भी तीर चलाना जानते है। सग मे ले लो हम मे से दो-एक को, मदद मिलेगी। दो से तीन और तीन से चार भले।'

लाखी हामी भरने वाली थी। निन्नी ने तुरन्त निषेध किया, 'शिकार मे जहा दो से तीन हुये कि शिकार हुई चौपट। हम लोग किसी को साथ नही लेती यहाँ तक कि मै अपने भाई को भी साथ नही लेती।'

कहाँ है तुम्हारे भाई ?'

'ग्वालियर गये है, आज ही।'

'कब तक लौटेगे ?'

'चार-पॉच दिन मे आ जावेगे।'

अधेड नटनी ने कहा, 'अच्छा कोई बात नही। तुम दोनो अकेली ही चली आओ, पर शिकार मिल जाय तो हम लोगो को न भूल जाना। हमारे पास बहुत बढिया चावल और मालवे का गुड है हम तुमको देगे।

निन्नी ने पूछा, 'तुम लोग कहाँ से आ रहे हो ?'

उसने उत्तर दिया, 'दूर मालवे के एक जङ्गल से। हम गरीबो का कोई घर नही होता। जिस जङ्गल मे डेरा डाल लिया वही हमारा घर बन जाता है।'

लाखी को पिल्ली के वस्त्रो की चमक—दमक और बहुमूल्यता पर आश्चर्य हो रहा था। ये लोग अपने खेलो से बहुत कमा लेते होगे, तभी इनके पास अच्छे कपडे है।

निन्नी बोली, 'तुम्हारे चार सीताफल हम लोग खा गईं——

अधेड़ नटिनीं ने टोका, 'अच्छे लगे न ? हमारे पास और बहुत है। जङ्गल में से तोड़ते-बीनते लाये है।

निन्नी कहती गई,—'सेतमेत तुम्हारा कुछ भी नही लेगी। जानवर मार कर देगी तभी तुमसे फल चावल और गुड लेगी।'

निन्नी लाखी को लेकर जङ्गल के एक कोने मे चली गई।

नटो का सन्तोष और हर्ष फूट पडने को हुआ। अधेड नटिनी ने होठ पर उङ्गली रखकर वर्जित कर दिया।

पिल्ली बोली, 'इनको और गाव वालो को जादू-टोने के करतब दिखलाओ।'

अधेड़िन ने कहा, 'धीरे-धीरे, सबका सब इकट्ठा नही। बड़ी आँख वाली के भाई को आ जाने दो।'

पिल्ली ने बतलाया, 'नाम उसका मृगनयनी है, भूल गई क्या ?'

'कच्ची गोलियाँ नही खेली हूँ यह सारी जिन्दगी। तू छोकरी ही है अभी, तू भले ही भूल जाइयो।' अधेड नटिनी ने भर्त्सना की।

'नही भूलूँगी,' पिल्ली ने आश्वासन दिया।

'यहाँ के लोगो ने जो कपड़े कभी देखे सुने न होगे, तू उनको मृगनयनी के भाई के सामने पहिनियो। और देख उसके सामने घूँघट डालियो, तभी वसीकरण पावेगी। ऐसी ही अधनङ्गी खड़ी हो जायगी उसके सामने तो कही वह बिचक न जावे।'

अधेडिन ने कहा, 'कुछ छिपाव—लुकाव करने से आदमी का मन बढता है शुरू मे उसको लुभाने के लिये ऐसा ही कर, फिर जैसा ठीक दिखे वैसा करना। किसी तरह भी उसके भाई को—,' उसने वाक्य पूरा नही किया, आँख की एक हल्की झपकी से मनोरथ समझा दिया। पिल्ली अपने हठ पर आरूढ जान पड़ी '

पोटा ने जरा रूखे स्वर मे अधेडिन का समर्थन किया, 'समझ के काम करना पिल्ली ! नायकिन ठीक कह रही है।'

पिल्ली ने तुरन्त आज्ञाकारिता का भाव ग्रहण किया। वे सब अपने काम मे लग गये। चौथा पहर नही आने पाया कि उन्होने लक्कडों का

मजबूत घेरा बना लिया। उसके भीतर झोपडे खडे कर लिये और अपने जानवरो तथा सामान के लिए ठौर कर लिया।

एक घडी पीछे निन्नी और लाखी आ गई। एक-एक सुअर की टॉगे थी। दोनो छोटे थे, निन्नी वाला कुछ बड़ा था। कमान और तरकस कधो पर डाले शिकार के खून से भीगी हुई नटो के पास आ खडी हुई। वे सब के सब बाडे को खोलकर बाहर आ गये। पोटा आतकित हुआ और अधेडिन भी कुछ डिग गई। पिल्ली ने उनके रूप मे साकार भीमता देखी।

उन दोनो ने शिकार को जङ्गल की बेलो से बांध रक्खा था। लाखी के जानवर को निन्नी ने खोलकर नीचे रखवा दिया। अपना बाधे रही।

नटों से उसने कहा, 'यह तुम्हारे लिये है। खाते हो न इसको?'

नटो ने हर्ष प्रकट किया। उन लोगो से बेडे के भीतर चलने और सीताफल खाने के लिये प्रार्थना की।

निन्नी बोली 'सीताफल बहुत खा लिये हैं। फिर कभी देखेंगे। इसके बदले मे थोड़ा सा चावल और गुड दोगे? तुमने कहा था।'

अधेडिन और पिल्ली के मुह से एक साथ निकला, 'जरूर।'

पोटा ने कहा, 'थोड़ा नही, बहुत। भीतर आओ न।'

लाखी बोली, 'समय कम है। नदी मे पानी पीते हुए घर पहुँचना है। ढोरों की उसार करनी है।'

अधेड़िन और पोटा बेडे के भीतर दौड गये और छः सेर चावल तथा एक भेली गुड़ की ले आये।

निन्नी ने कहा 'अरे यह तो बहुत है! इतना नही।'

'नही बेटी'—पोटा ने आग्रह किया, 'यह कुछ भी नही है। तुम्हारे ऊपर न्योछावर है। वाह, कैसा निशाना लगाया है! बड़े-बड़े सूर सामंत भी नही लगा सकते!!'

अवेड़िन बोली, 'ले लो, ले लो। हम और भी ला-लाकर देंगे। तुम्हारे गाँव में अन्न कम पैदा होता है शायद।'

'हाँ,'–लाखी ने कहा और अपनी ओढनी में दोनो चीजो को बाध लिया।

पिल्ली ने अनुनय की,–'कल फिर आना, भला। हम बहुत-से खेल दिखलायेंगे। दूर देशों की बाते सुनायेंगे। अच्छे अच्छे कपड़े दिखलायेगे।'

लाखी ने कहा 'अच्छा।'

वे दोनों चली गईं।

जब अदृश्य हो गईं, नटो ने बेड़े को बन्द कर लिया।

अवेडिन बोली, 'पिल्ली ने कपडो की बात चतुराई के साथ कही। इनमे से एक भी हाथ चढ जाय तो दूसरी को भी ढाल लेगे। काम सभाल कर करना है। वह जो तगडी लडकी है—नयनी या निन्नी कुछ कठिन जान पडती है। दो आदमियो को सवेरे ही माँडू भेजो। कुछ टके सोने चादी के गहने और रेशमी कपडे जल्दी से मगवाओ। गुड और वढिया चावल भी लेते आवे और'—शेप वाक्य वहुत धीरे से कहा।

पोटा ने अपने समूह मे से दो आदमी छाँट लिये।

अवेडिन ने पिल्ली से कहा, 'तुमको वहुत सूझ-बूझ के साथ काम करना है। इनको नित्य यहाँ किसी न किसी मिस से बुलाओ। जानती हो जवान लड़कियां और औरतें किन चीजो पर सबसे अधिक रीझती हैं।

'जवानों पर।'

'मूर्ख ही रही। न जाने कब अकल आयेगी। जवान लडकियाँ और औरते भडकीले कपडों दमकते हुये गहनो पर रीझती हैं। उनके लिये अपने प्राण तक देने के लिये तैयार हो जाती है। उनका धरम ईमान कपडो और गहनो मे बसता है। उसी से अपनी जवानी को सजाती है। फिर

'समझ गई, मुझको बतलाओ क्या करना है।'

'खेल कूद पर नहीं रीझेंगी ये। इनको ये नव गाने सीखनी-सीखानी शुरू कर दो। गहने आये जाते हैं। फिर गहने देना। गले में कुछ भी डाल ले जाने की मैंने ठानी। जब तक वह मौका नहीं आया, खूब मिल-मिल कर, घुल-घुलकर बातें करो। तब तक-समझ गई न?'

'हाँ।'

'और जब इनका या इनमें से किसी का भाई नौटार आ जाये तब उसके ऊपर प्रेम की आँधी छोड़ दो। उसको इन लड़कियों समेत बान-कर मालवे की सीमा पर ले चलना है। इस बीच में मांडू में कुमुद आ गई तो, बस काम बन गया।'

'ठीक है।'

'याद रखना इस गोल की नायकिन मेरे पीछे तुम्हीं को बनना है।'

[१६]

हाथ मुंह धोने और नहाने के उपरान्त लाखी ने घर में चार लकड़ियाँ ढूँढीं। उनको छाँटने के बाद ले आई।

निन्नी से कहा, 'उस नट ने जो किया था, देखती हूँ मैं भी कर सकती हू या नही।'

'खाना नहीं बनाना है? कब बनाओगी?'

'तुम बना दो मेरी भली सी निन्नी।'

'खा लोगी मेरे हाथ का बनाया हुआ?'

'आज नही तो किसी दिन खाना ही है।

'तो मुझसे ननद कहो, एक वार ही कह दो।'

'हूँ-ऊँ। वडी वैसी हो।'

'एक वार कह दो तो रोज खाना बना दिया करूगी।'

'जिससे मै निकम्मी हो जाऊँ और तुम मुझ से लड़ा करो।'

'अच्छा आज वना दूंगी, फिर तुम वना दिया करो। पर एक वार कह दो।'

'ननद जी वना दो खाना।'

'अभी लो भौजी।'

वे दोनो एक दूसरे से लिपट कर हँसती रही।

निन्नी खाना बनाने लगी। लाखी ने नट के रस्से के तनाव का अनुकरण किया। लकडियो को गाड कर कस लिया। अभ्यास करने लगी और वार-वार गिरने लगी। रस्सा ढीला पड गया तो उसको फिर से कस लिया। जव तक निन्नी ने खाना पकाया वह उस अभ्यास मे लगन के साथ उलझी रही। अन्त मे रस्से पर कुछ क्षणो के लिये सधने लगी। एक वार चार—पाँच डग उस पर चली भी। हर्ष के मारे फूल गई। दौडकर निन्नी के पास पहुँची।

हाफती हुई सी बोली—'मैं एक अठवारे मे रस्से पर चलने लगूँगी। मै भी कह सकूँगी कि आकाश मे चल सकती हूँ।'

निन्नी ने बधाई दी—'हा हाँ क्या कहना है। बडा अनूठा काम है न? मैने चावल पकाये है। अपने तो बहुत मोटे थे जिन्हे भैया ले गये हैं। ये बहुत अच्छे है। गुड भी है आज तो! भैया जब आयेगे तब तो पञ्चत सी करेगे। आओ गुड़ चावल की बधाई लो।'

दोनो ने उस रात साथ मे बैठकर एक ही वर्तन मे खाया। मचान पर पहुँचकर लाखी देर तक सोचते-सोचते सो गई। कव सबेरा हो और नटो के डेरो पर पहुँचूँ, निन्नी को भी साथ ले जाऊँगी, ढोरो को किसी चरवाहे को सौप दूगी। निन्नी ज्वार की रखवाली के लिये जागती रही। जब रात को नीद आई तब उसने लाखी को जगा दिया।

सवेरे हाथ मुह धोने के बाद, ढोरो का प्रबन्ध करके और कुछ बासी खा—पीकर नटो के डेरो पर पहुँची। तीर कमठे और छूरे लिये ही थी।

नटो ने बहुत आव—भगत की। अधेडिन और पिल्ली ने पाँवड़े से बिछा दिये।

लाखी ने रस्से का खेल देखने की वाछा-प्रकट की। नट ने बांसों को गुणाकार गाडकर रस्से को कसकर तान लिया। ढोलकी गले मे बांधकर रस्से पर पहुँच गया। पिल्ली एक बहुत रंग—बिरगी बढिया ओढनी ओढ कर आ गई। पोटा रस्से पर चलने फिरने लगा। पिल्ली हाव-भाव के साथ नाचने-गाने लगी।

निन्नी का मन उस ओढ़नी और रस्से पर के नाच और ढोलकी की ढपाढप से उकता गया। लाखी का मन ओढ़नी और नट के आकाश नृत्य मे बट-बट जाता था। परन्तु उसने अपने मन को एकाग्र करके नट के आकाश नृत्य की तौल पर अधिक लगाया। नट ने रस्से को जोर के साथ इधर—उधर हिलाते डुलाते ढोलकी बजाते हुये चलना आरम्भ किया। लाखी अचम्भे मे डूबने लगी।

निन्नी ने मन मे कहा, इस काम के लिए बहुत अभ्यास चाहिये। पर सीख लेने पर इससे क्या लाभ होगा? यदि सुअर-या भैंस को बर्छी से भेदना मैने सीख लिया तो रस्से पर इस तरह से झूलने से कही अच्छा रहेगा।

नट खेल समाप्त कर नीचे उतर आया।

लाखी के मुह से यकायक निकला, 'क्या मै भी सीख सकती हूं इस काम को?

'जरूर,' सब नट—नटनियो ने एक साथ कहा।

निन्नी ने देखा-कल जितने नट बेड़े मे थे उनमे से कुछ नही है। जिज्ञासा नही हुई। सोचा अपने किसी काम से कही चले गये होगे।

पोटा बोला, 'बहुत जल्दी सीख लोगी। तुम्हारी देह बहुत छरेरी है। कुछ ही दिन मे सिखा दू गा। आज से ही गुरु कर दो।'

लाखी ने निन्नी की तरफ देखा।

निन्नी ने कहा, 'आज एक अरने को मारने का बात सोच रही हूं। यदि नाहर हाथ लग गया तो और भी अच्छा। अच्छी खाल अच्छे मोल बिक जायगी'

पिल्ली बोली, 'अभी तो दिन भर पडा है, आओ अब तक कुछ बडे—बडे नगरो की बाते सुनाऊँ।'

लाखी सहमत हो गई। निन्नी को भी मानना पडा। नट एक जगह सिमिट गये। स्त्रियाँ एक स्थान पर इकट्ठी रह गयी। पिल्ली एक-झोपडी के भीतर उन दोनो को ले गई। अन्य नटनियां बाहर बैठ गई।

पिल्ली ने एक पिटारी मे से कुछ बहुमूल्य ओढनियां निकाली। एक—एक करके दिखलाने लगी और सराहना करने लगी। उन दोनो ने इस तरह के कपड़े कभी नही देखे थे दोनो चाव के साथ देखने—टटोलने और सराहना को सुनने लगी।

निन्नी ने सोचा, इन कपड़ो में हमारा तो कोई काम कभी चलना नहीं है। इनको पहिनकर न तो रसोई बनाई जा सकती है, न ढोरो और खेती का काम किया जा सकता है और न शिकार खेली जा सकती है। एक काटा बीधा या डाल उलझी कि फटकर फुर्र हो जायगी। पहिनकर यदि भाई के सामने गई तो कहेगे नटिनी है! राम!! राम!!! राम!!!! कितनी लाज-हीन है यह पिल्ली!!!!!

'बहुत दाम होगे इनके?' लाखी ने देखते-देखते प्रश्न किया।

'अरी हाँ, बहुत। बडी अनमोल है।' पिल्ली ने कहा।

'तुम्हे कैसे मिल गई? किसी ने इनाम मे दी है क्या?'

'और क्या? वैसे हम लोग मोल थोडे ही ले सकते है। ये कपडे तो बडे—बड़े नगरो मे ही मिलते है।'

'तुमको कहाँ मिले ये?'

'माँडू मे रानियो के पहिनने के कपडे है ये । यानी रानिया या हमारी।तुम्हारी सरीखी मन वाली ही पहिन सकती है इनको । माँडू के राजा को खेल दिखाया । उन्होने प्रसन्न होकर इनाम दे दिया।'

अवेड़िन ने बाहर से ही रङ्ग चढाया,—'अरी वेटी, राजा क्या है, मानो इन्द्र है। वहुत सोना-चादी, हीरे-जवाहर, मोती है उसके पास। वडे-वडे महल। वह इसके खेलो को देखकर लट्टू हो गया था।' पिल्ली नखरे के साथ हँस पडी । लाखी ने भी साथ दिया निन्नी भी हँसना चाहती थी परन्तु भीतर के किसी झटके ने हँसी को होंठो पर क्षीण मुस्कान मे आकर सकुचित कर दिया।

पिल्ली बोली, 'मेरे मन मे तुम दोनो वहिनो के लिये इतना प्यार पसीज उठा है, न जाने क्यो, कि चाहती हू एक-एक दोनो ले जाओ और पहिनो। मै तो खेल मे नाचने के समय कभी-कभी ही पहिनती हूँ, सो वहुत-सी रक्खी है। ले लो एक-एक।'

उन दोनो को यह नही रुचा। निन्नी को विराग गडा । लाखी उस अवकाश नृत्य को सीखना चाहती थी। उनमे से किसी को भी रुष्ट नही करना चाहती थी।

मुस्करा कर बोली, 'अभी नही लेगे हम । जव कुछ देने योग्य हो जायेगी; तव लेगी। अभी तो हमारे लिये ये काम की नही है ?'

अवेड़िन ने पूछा, 'तुम्हारा व्याह हो गया है ?'

'नही' निन्नी ने विना सकोच के उत्तर दिया।

उसने दूसरा प्रश्न किया, 'कही सगाई हो गई है ?'

लाखी को सङ्कोच हुआ। निन्नी ने दृढता के साथ उसके प्रश्न पर प्रश्न किया 'तुमको इससे क्या ?'

लाखी ने सावने का प्रश्न किया—'नही हुई है। निन्नी, इन्होने वैसे ही पूछा ; कोई वात नही।'

अवेडिन सहारा पाकर वोली, 'अरी हाँ।देखो तो तुम दोनो कितनी रूपवती और गोरी-नारी हो जैसे जङ्गल की रानी हो, तुम्हारी सगाई

होगी किसी बड़े राजा के साथ। मै हाथ देकर बतला सकती हूँ। ज्योतिषी जो बात नही बतला सकते, वह हम लोग बतला सकते है। जो जन्त्र–मन्त्र कोई नहीं जानता है वह हम जानते है। जङ्गल की जिन जड़ी बूटियो को राजधानियो के बडे–बडे वैद्य नही जानते उनको हम लोग पहिचानते है। काले नागराज से हम कटवा ले तो जड़ी के जोर से और मन्त्र की मार से पलो मे विष को दूर कर दें।'

निन्नी नही सहमी परन्तु उत्तर नही दे सकी। मुस्करा कर रह गई। लाखी ने अपने हाथ की गदेली पसार दी।

अघेड़िन कुछ देर तक रेखाओ को देखती रही। उसने परिणाम सुनाया 'तुम किसी बडे किलेदार को व्याही जाओगी, किसी बडे ठिकानेदार को।'

वे दोनो हँस पडी। अधेडिन को जरा भी सकोच नही हुआ। बोली देख लेना बहुत जल्दी मेरी बात सच्ची होकर रहेगी। तुम दिखलाओ मृगनयनी अपना हाथ।'

निन्नी सकोच कर रही थी। लाखी ने पकड कर उसका हाथ बढ़ा दिया अधेडिन ने ध्यान के साथ देखा।

कहा, 'तुम तो बेटी बड़ा भारी राज्य भाग मे लिखा कर चली हो। राजा की नही किसी बड़े महाराज की रानी बनोगी। झूठ निकले तो मेरी जीभ काट कर फेक देना।' अधेडिन ने अपनी जीभ बाहर निकाल कर भीतर करली। जीभ पर काफी मैल जमा था।

वे दोनो उस कौतुक को देखकर हँस पडी।

लाखी ने हँसते-हँसते 'पूछा कहा का राज्य मिलेगा इनको?'

अधेड़िन ने उत्तर दिया, 'बेटी बहुत से राज्य आस–पास है। बिल्कुल ठीक इसी घडी तो नही बतला सकती। परन्तु देवताओ को बलि चढ़ा कर ध्यान करते-करते, कुछ दिन बाद यह भी बतलाऊँगी। वैसे देखो इतने राज्य तो आस—पास ही है—ग्वालियर, कालपी,

मालवा, मेवाड़ और न जाने कितने। हम लोग सब देशों मे घूमा करते है। वहुतेरो का तो नाम भी याद नही है।'

राज्यो की गिनती की लपेट मे उसने मालवा को सावधानी के साथ रक्खा। वे दोनो नही समझ पाईं।

अघेड़िन बोली 'अब हम लोग अपना काम देखती है तुम तीनो लव तक अपने मन की बातें कर लो।'

'हम लोग भी जङ्गल की तरफ जाती है। निन्नी में कहा।'

पिल्ली ने रोका, 'वाह—वाह थोड़ी देर ठहरो अभी तो बहुत दिन पडा हुआ है।'

अघेडिन अन्य स्त्रियो को लेकर वहां से चली गई।

निन्नी ने पूछा, 'यह तुम्हारी कौन है ?'

पिल्ली ने बतलाया, 'यह हम लोगो की सब कुछ है। हमारे गोल की मुखनी है यह। इन्ही का हुकुम चलता है।'

'स्त्री मुखनी ?' 'जो रस्से पर चलते है वह होंगे मुखिया ?'

'वोहर बालो से वही बात करते है, पर हमारे भीतर हुकुम इन्हीं का चलता है। हमारी जात मे वूढी पुरानी स्त्रियो की ही चलती है।'

'तुम्हारी कौन है यह।'

'हमारी मा है और रस्से पर चलने वाले हमारे काका है। हम सब एक ही कुटुम्ब के है।

'तुम्हारा व्याह हो गया है ?'

'अभी नही हुआ है। सगाई भी नहीं हुई है। तुम कराओगी अपना व्याह और यह तुम्हारी बहिन ?'

'बहिन नही है सखी है।

'कराओगी व्याह ?'

'हिष्ट।'

'हिष्ट कैसी ? मे कराऊँगी अपना व्याह। तुम दोनो भी करोओ। जवानी के दिन है। यहा तो समय खेलने-कूदने और खाने-पीने का है।"

'खाती-पीती भी है और खेलती-कूदती भी है।'

'अरे यह सब कोरा और रूखा है, बिना राग-रङ्ग, आराम और चैन के। हम लोग तो ऐसे दूल्हे ढूंढ देंगी कि जैसे नायकिन माँ ने तुम्हारे हाथ देखकर बतलाये हैं।'

लाखी बोली, 'अभी तो हमको अपने पेट पालने है। घर के हमारे बडे करेंगे यह काम। वह ग्वालियर से आ जाये, तब उनसे चर्चा करना।'

निन्नी खडी हो गई। लाखी से कहा, 'देर हो रही है, चलो अब।' वह भी खडी हो गई।

पिल्ली ने रोक रखने का प्रयत्न किया।

लाखी बोली, 'कल दिन भर रहेगी। मै रस्से का काम सीखूगी तुम इनको कहानिया सुनाना।'

निन्नी ने जाते जाते कहा, 'यदि कुछ शिकार मिल गया तो तुम्हारे डेरे पर आवेगी।'

वे दोनो चली गई। सन्ध्या तक नटो ने उनकी प्रतीक्षा की परन्तु वे नही आई। उनको बहुत भटकने पर भी कोई शिकार नही मिली थी। जङ्गल के सीधे मार्ग से घर पहुँच गई।

[१७]

अटल को ग्वालियर गये आठ दिन के लगभग हो गये थे। दो दिन से निन्नी और लाखी को कुछ चिन्ता रहने लगी थी। दिन मे वे नटो के डेरे पर या आखेट के लिये जङ्गल मे रहती थी। संध्या के पहले घर आ जाती थी ढोरो की देखभाल की, भोजन बनाया, खाया और रात मे ज्वार को रखाने के लिये मचान पर पहुँच जाती।

इन दिनो रस्से पर चलने का लाखी ने इतना अभ्यास कर लिया था कि पोटा नट को हँसी आती थी।

सुल्तान का नाम लेकर दिल्ली और नायकिन ने मालवा की राज-धानी माडू के महलो, नगर, दूकानो, सम्पत्ति और तड़क-भड़क की उन दोनो के मन पर धाक बिठलाने मे कसर नही लगाई। उन दोनो मे निन्नी और लाखी को जङ्गल मे कोई ऐसा जानवर नही मिला जिसको देकर नटो से वे कोई सामान लेती। मुफ्त मे वे कुछ लेना नही चाहती थी।

दोनो सध्या के पहले ही उस दिन घर आ गईं। ढोरो को बाँधने और चारे का प्रबन्ध कर रही थी कि अटल आ गया। वह हाथ मे बर्छी लिये था, पीठ पर तरकस मे लोहे के कुछ तीर। नये मोटे गहरे लाल रङ्ग के कपडे की छोटी-सी पोटली को दूसरी बर्छी पर कन्धे से टाँगे था। भारी-भरकम चोचदार जूतो पर धूल, पैर धुले हुये, चेहरा धुला तपा हुआ। आँखो मे प्रसन्नतापूर्ण मुक्तता जैसे किसी बडे समाचार को सुनाने के लिये व्यग्र हो। आँगन की एक तरफ उसने एक रस्से को दो-दो लकडियो के गुणाकारो पर बँधा हुआ तना पाया। आश्चर्य हुआ।

आल्हाद के स्वर मे पुकार लगाई—'कहाँ हो री ?'

लाखी ने कहा, 'आई।'

निन्नी बोली, 'भैया !'

दोनो मुस्कराती हुई आईं। अटल ने तपाक के साथ हाथ वाली बर्छी को पैंदी के बल आँगन में गाड दिया और एक हाथ मे कन्धे वाली पोटली को ले लिया दूसरे मे दूसरी बर्छी को।

तने हुये रस्से की ओर देखकर हँसते हुये कहा, 'यह क्या खेल है?'

'खेल तो है ही,'—निन्नी बोली 'बतलाऊँगी, पहले यह कहो कि इतने दिन कहाँ लगा दिये ?'

'बहुत चिन्ता रही !' लाखी हर्ष को नही छिपा पा रही थी।

अटल ने पैर फैलाये, 'अरी बडे-बडे समाचार है। थोड़ी देर मे सुनाऊँगा। दोपहर का रक्खा है खाने को कुछ ? या सेतमेत बतला दूं ?'

अटल पाल मारकरथी बैठ गया। चुप्पी साध ली। निन्नी ने उसके हाथ से बर्छी छीन ली। लाखी ने गढी हुई बर्छी को उखाड़ लिया।

निन्नी ने आदेश दिया, 'खोल लो लाखी इनकी पीठ पर से तरकस, फिर मै देखती हूँ इनकी पोटली को इसी मे है इनके बडे-बडे समाचार जिनकी ठसक के मारे मौनी बाबा बनकर बैठ गये है।'

झूठ-मूठ का विरोध करते हुये अटल बोला, 'पहले खाना! पहले खाना! पहले खाना!! तब तीर-तरकस और पोटली!!! अरे रे रे, सब छीन लिया!!!! सब लूट लिया!!!!!'

वे दोनो विनोद मे डूबने उतराने लगी। पोटली झटपटखोली। उसमे एक मोटी लाल धोती और दो चोलियो के मोटी छींट के टुकडे निकले। उन्ही मे चादी की एक पतली हसुली और चाँदी के दो छल्ले। तरकस को लाखी ने कन्धे पर चढा लिया और बर्छी को हाथ मे लिये बड़े चाव के साथ देखने लगी। निन्नी ने अपने गले में हसुली डाल ली, एक छल्ले को उँगली मे डाल लिया और दूसरे को लाखी की उँगली मे पहिना दिया। छल्ला लाखी की उँगली मे ढीला बैठा। परन्तु वह अपनी बर्छी और लोहे के तीरो पर, उस समय अधिक ध्यान दिये थी।

निन्नी ने कहा, खाना दोपहर का नही बचा, होता भी तो न देती। चावल और गुड खिलावेगी—बढिया और चांदनी से होड़ लगाने वाला बढिया गुड।'

'ऐं!'—अटल ने चुप्पी को तुरन्त समाप्त किया 'गुड और चावल कहा से आ गये?'

वे दोनो हँस पडी।

निन्नी बोली, 'तुम्हारे समाचारो से भी बडा समाचार है।'

बतलाओ बतलाओ। 'अटल उत्सुकता के मारे चीख पडा'।

निन्नी ने कहा, 'पहले तुम यह मानो, भैया कि तुम्हारे सब समाचार इतने ही थे और अब तुम्हारी गाठ मे कहने को कुछ नहीं है। फिर हम बतलायेगी।'

'मेरी गाठ मे बहुत–बहुत समाचार है।' अटल बोला, 'नहीं तो आठ दिन काहे मे लगा दिये ? पहला बडा समाचार तो यह है कि पुजारी बाबा राजा से मिले थे। राजा ने उनको पक्का वचन दिया है कि वे शीघ्र शिकार खेलने राई आयेंगे और, और—नहीं बतलाता, पहले तुम बतलाओ कि चावल और गुड कहां से आ गये यहाँ और यह रस्सा क्यो तान रखा है ?'

निन्नी ने अनखाकर कहा, 'राजा लोगो के वचनो का क्या ? उन्होंने कई बार पुजारी बाबा से कहा कि आयेंगे और नही आये। राजा के वचन–कच्चे। छोटो की बात बडी होती है और बडो की छोटी। आ भी गये तो मेरा लक्ष्यभेद देखकर कौन राई का गाँव जागीर मे लगा जायेंगे! और कोई समाचार!'

अटल, जिस बात के कहने को उकता रहा था और रुक–रुक जाता था, बोला, 'वहा लाखी की सूरत से मिलती जुलती एक लडकी देखी और मै कई बार चक्कर में पड गया। चिन्ता हुई यह ग्वालियर मे कैसे और कब आ गई. एक बार पूछ भी बैठा तो हंसाई हो गई।'

लाखी ने मुस्कराकर मुंह फेर लिया और हंसी को रोकने के लिये मुंह दबा लिया। निन्नी ठहाका मारकर हस पडी।

हसी को रोक कर लाखी का कधा झंझोडा वह फिर भी हंस पडी।

निन्नी ने लाखी की ओर देखते हुये कहा, कोई उल्टी—पुल्टी बात तो नही कर बैठे थे उससे ?'

लाखी आँगन के एक कोने में भाग गई।

अटल बोला, 'अरे हिष्ट! क्या पागल हूँ।'

इस पर वे दोनो और भी हसी।

निन्नी ने पूछा 'भ्रम-टूटा कैसे ?'

अटल ने झेप को हंसी मे घोलते हुये कहा, 'वह नाचने गाने वाली और चितेरिन निकली।'

'ऐसे भूले भैया तुम ?'

लाखी धीमे स्वर मे बोली, 'अरी अब रहने भी दो। क्यो बात को बढा रही हो ? और कुछ पूछो।'

निन्नी ने पूछा, 'और भी कोई बडा समाचार है या बस ?'

'हाँ हाँ, अभी बहुत से पडे है। पहले अपना सुनाओ।' अटल ने उत्तर दिया।

निन्नी ने बतलाया—'यहाँ डाँग मे कुछ नट आये है अधफर रस्से पर एक नट नाचता है। उसकी यह नकल लाखी ने आँगन मे उतार डाली है। किसी दिन यह उस नट को इस खेल मे पछाडेगी। नटो के पास बहुत अच्छे चावल है और गुड भी। एक शिकार का एक जानवर हमने उनको दिया, चावल और गुड उनसे ले लिया उनके पास अनमोल कपड़े भी हैं। मुझको तो अच्छे नही लगे। एक बड जानवर का सुभीता लग गया तो एक ओढनी लाखी के लिये ले लूँगी।'

'तुम अपने लिये नही लोगी तो मै क्यो लेने लगी ?' लाखी ने आक्षेप किया।

'हाँ आं, कुछ ही है तुम्हारा यह समाचार,—अटल ने अपने समाचार को महत्व देने के लिये कहा, 'ग्वालियर मे बड़े-बडे मेले लगे। लक्ष्य-वेध का काम किले मे अपनी आँखो देखा। रस्सी से लटकती हाडी मे पानी पर तैरते हुये काठ के छोटे से खिलौने को वेचने के लिये हजारो ने बडी—बड़ी सास साधकर तीर चलाये हाड़ियाँ तो बहुतेरो के तीरो से फूटी, परन्तु खिलौने का वेध केवल राजा मानसिह ने कर पाया सो केवल एक वार। किले मे फिर गाने-बजाने का मेला जुडा। ग्वालियर मे दूर-दूर के जन आये थे इसको देखने के लिये। मै भी गया दो-तीन दिन गया। चन्देरी का कोई बड़ा गवैया आया था। उसके साथ वह लड़की थी। वे दोनों बहुत-बहुत गाते थे और बीन बजाते थे समझ मे तो नही आया पर बहुत लोगो को सिर हिलाते देखा सो अच्छा ही गाया बजाया होगा।'

फिर हँसकर बोला, निन्नी तुम्हारा गाना उन लोगों के सामने टी-टी सा जान पड़ेगा।'

'मैने क्या कही सीखा है ?सीखलूँ तो देखूँ उस गवैया को।' निन्नी ने तिनक कर कहा।

लाखी के प्रति मुह फेरकर अटल कहता गया, 'यह समाचार तुम सुनलो। हमारी जाति का एक अच्छा घर ग्वालियर मे है। दो भैंसे, एक जोडी बैल, चार गाये चार पॉच बछड़े बडा मकान और एक कुयें की खेती है लडका होनहार है। ढोर चराता है और खेती करता है। घर-भरा है। मॉ-बाप भाई वहिने है। मै उस लडके के साथ निन्नी की सगाई करना चाहता हूँ। चर्चा कर आया हू परन्तु बात पक्की नही की है। सोचा पहले अपने घर पर बात को मथलूँ तब पक्की करूँ। हमको कुछ देना नही पड़ेगा। देना भी पड़ा तो धान वाला खेत बेच दू गा। वे लोग निन्नी के पैरो के लिये चॉदी के कड़े तक देगे।'

बर्छी को वही छोड़कर निन्नी घर मे चली गई। उसने वही से लाखी को बुलाया-बाते सब हो चुकी है खाना बनाने आओ यहाँ।

लाखी ने उसके पास आकर तीर और बर्छी को एक ओर रख दिया।

चूल्हे को साफ करते हुये निन्नी बोली, 'भैया से कहना कि सगाई की चर्चा को आगे न बढावे मै व्याह नही करूंगी।'

'उस नटनी ने हाथ देखा था, पर वह ब्राह्मण तो है नही।' लाखी ने धीरे से कहा।

पागल हो गई हो क्या ? मैं ब्याह नही करूंगी। तुम लोगो का सुख देख-देखकर ही सुख मनाऊँगी। तुम लोगो को नही छोड सकती।'

'घर अच्छा है। बड़े नगर मे है।'

'कह दिया कि मर भले ही जाऊँ परन्तु वहॉ नहीं करूँगी। कह दो भैया से। तुम नही कहोगी तो किसी से कहलवा दूँगी।'

'गॉव वाले क्या कहेगे ?'

'जब तुम्हारे लिए मुझको या भैया को गाव वालो का डर नही है तो मेरे ही सम्बन्ध मे क्यो होना चाहिये ?'

'अच्छा अभी कहे देती हूं ।'

'हां मेरी लाखी ।' निन्नी का स्वर काप रहा था। अटल ने बातचीत का कुछ अश तो सुन लिया था। लाखी ने पूरी वार्ता सुना दी।

अटल सन्न सा रह गया। कुछ क्षण चुप रहा।

थोड़ी देर बाद बोला, 'अच्छा ठीक है। मैने उचित ही किया जो बात पक्की नही की। और कही देखा जायगा खोज मे रहूंगा।'

उसने निन्नी को बुलाया। इधर उधर दृष्टि डालती हुई आई और उसकी बगल मे खडी हो गई।

'बेटी, तेरे मन से उल्टा पुल्टा कभी कुछ नही करूँगा। उठा ले जा अपनी यह बर्छी। कल से कर इसका अभ्यास। देखूं अरने को कैसे फोड़ती है इससे तू।' अटल ने कहा।

निन्नी ने हंसकर बर्छी को उठा लिया। लाखी को धकयाती हुई खाना बनाने के लिये रसोई घर मे ले गई। वही से बोली, 'इनके हाथ का बनाया खाना मैं खा चुकी हूँ। आज तुमको भी खाना पडेगा।'

'अच्छा —आ।' अतिम स्वर को लम्बा करते हुये अटल ने हामी भरी।

[१८]

सवेरे अटल को ढोर सम्हालने थे और निन्नी तथा लाखी को कई काम करने थे — बर्छी का चलाना, नये तीरो का परीक्षण नटो से किसी जानवर के बदले मे एक साडी का लेना। लाखी के लिये एक और भी काम था—रस्से पर चलने की कुशलता का बढाना और अटल को दिखलाना। अटल ढोरो को गांव के किसी किसान की देख रेख मे, कम से कम, उस दिन के लिये बनाये रखने की जुगत करली, जो आठ दिन से उनको चरने के लिए ले जाता था, क्योकि अटल को भी नटो का वह अद्भुत खेल देखना था।

वे तीनो दिन चढे नट-शिविर मे पहुँच गये। नटों ने निन्नी और लाखी को दूर से ही पहिचान लिया। उन दोनो के हाथ मे बछिया को देखकर कुछ कुतूहल हुआ।

पोटा बेडे से बाहर निकल आया। अटल को प्रणाम किया, प्रश्न सूचक ढीठ दृष्टि थी निन्नी और लाखी पर।

निन्नी ने कहा, 'मेरे भाई है।'

नट उन तीनो के प्रति आदर का प्रदर्शन करता हुआ बेड़े के भीतर ले गया। नटनियो और अन्य नटो ने निन्नी के दिये हुये परिचय को सुन लिया। पिल्ली अधनङ्गी बैठी हुई बन्दर के सिर के जुयें बीन-बीन कर नष्ट कर रही थी। उसको तुरन्त लेकर झोपड़ी मे चली गई। नायकिन ने मोटे कपड़े की एक फटी, गुदडियो वाली, चादर अटल के बैठने के लिये बिछा दी। अटल को जीवन मे कभी ऐसा आदर नही मिला था। ठाठ के साथ बैठ गया। निन्नी और लाखी खडी रही।

लाखी ने पोटा का नाम बतलाते हुये कहा 'रस्से पर यही चलते है।'

पोटा तुरन्त विनय के साथ बोला,– आँख मे उसके खोजबीन का पैनापन और ठिठाई थी,— 'मै अभी दिखलाता हू चाहे सारे काम पडे रहे पर तुमको तमाशा दिखलाऊँ।, एक ही नही कई तमाशे'

पिल्ली एक बहुत ही कीमती, रङ्ग-विरङ्गी और बारीक ओढनी ओढकर आ गई। वह नायकिन के पीछे खडी हो गई। नायकिन ने परिचय दिया, 'इस लडकी की कसरतो को देखो पहले, जो उछलती हुई गेद को भी अपनी कुलाचो से भुलवा देगी। देखो, इसने अपनी देह को कैसे कमाया है! कैसा सुन्दर बनाया है और कैसी सलौनी है यह!!!'

पिल्ली एक हलकी सी मोच लेकर नायकिन के पीछे से आगे आई। वही से उसने अटल को अपने अङ्गो को जरा-सा फड़का कर

आँशिक दिखलाया। सिर पर घूँघट को जरा—सा बढाया, एक क्षण के लिये चितवन घुमाई और सिर नीचा करके उसकी ओर कनखियो देखने लगी सलज्जता की इस बनावट को अटल नहीं समझा। कुछ अनोखी सी लगी। परन्तु निन्नी और लाखी के गाल कानो तक लाल हो गये। अटल ने उसको देखा, परन्तु आंख को न जमा सका। दूसरे नटो की ओर देखने लगा जैसे कोई भकुआ हो, परन्तु फिर से पिल्ली को देखने के लिये इच्छा प्रबल हो गई।

पोटा बोला, 'मै रस्से को तान लूं। अभी खेल शुरू होता है।'

नायकिन ने पिल्ली को जरा—सा और आगे करके कहा, 'यह बहुत शरमाती है, पर कमानियो, कुलाचो और रस्से पर नाच होने के समय अपनी कारीगरी मे ऐसी मस्त हो जाती है कि अपने को बिलकुल भूल जाती है।

वह सब देखने के लिए अटल के मन मे कुलबुली—सी मच गई। पोटा रस्से को तानने लग गया। नायकिन ने पिल्ली को आँख का इशारा किया।

पिल्ली ने ओढनी को वक्ष और कन्धे पर लपेट लिया, बिजली की गति वाली आँख की एक कोर अटल पर फेरी और कुलांचे लगाने लगी। अटल ध्यान के साथ उसकी मोचों—मरोडो, कूद—फांद और देह की लचको को देखने लगा। उसने किसी भी नर-नारी मे इतनी फुर्ती और देह की कमाई नही देखी थी।

जैसे ही पोटा ने रस्से को ताना और ढोलकी गले मे डालकर रस्से पर चढ़ने को हुआ, पिल्ली ने व्यायाम बन्द कर दिया और ओढनी को खोलकर ओढने लगी। उस समय भी उसने चितवन और अङ्गो की फड़कन को लाज के झरोखे से अटल के सामने प्रस्तुत किया और पोटा ने रस्से पर विविध गतियो से चलना आरम्भ किया और पिल्ली ने असीम स्वच्छन्दता के साथ नृत्य। अटल का मन पोटा के काम पर अधिक रीझने लगा। पिल्ली ने और भी अधिक प्रयत्न

के साथ अटल का ध्यान आकृष्ट करने की। चेष्टाये की निन्नी और लाखी पोटा की गतियों को अधिक चाव से देख रही थी। पोटा रस्से को झूला सा बनाकर इधर से उधर झूलता रहा और पिल्ली के नृत्य पर ढोलकी की ताल देता रहा।

जब वह खेल को समाप्त करके रस्से पर से उतर आया, बोला, 'बेटी लाखी, तुम भी थोडा—सा अभ्यास कर लो।'

लाखी पहले लजाई, पर फिर निन्नी के कन्धे के सहारे रस्से पर पहुंचकर बैठ गई और सधने के लिये थोडी देर कापती रही। दृढता के साथ खडी हुई, कुछ क्षण स्थिर रही। एक—दो डग चली, तौल बिगडी और नीचे आ गिरी। पैर मे कुछ धमक आई परन्तु उसको दबाने के लिये हँसने-लगी।

पिल्ली खिलखिलाकर हस पडी। अटल ने देखा उसे हंसते हुये थोड़ा—सा घूँघट डालकर कटाक्ष किया। लाखी ने नही देखा परन्तु निन्नी और अटल ने देख लिया। निन्नी बोली, 'चलो लाखी, जङ्गल मे बर्छी का अभ्यास करेंगे।'

'जङ्गल तो यही है। कहाँ मारी—मारी फिरोगी?' नायकिन ने कहा।

निन्नी ने आग्रह किया, 'अभ्यास अवश्य करना है। पास के किसी बड़े छेवले के पेड़ पर करेंगे। उसके बाद बर्छियाँ भाई को देकर शिकार के लिये जङ्गल मे निकल जायेंगे।'

'अच्छा।' नायकिन ने मान लिया।

ये दोनो थोड़ी दूर छेवले के पेड़ पर बर्छी चलाने का अभ्यास करने लगी। अटल वहीं बैठा रहा।

नायकिन ने उससे कहा, 'इस लडकी का खेल तुमको कैसा लगा? बहुत अच्छा '। अटल बोला।'

पिल्ली इठलाती हुई झोपड़ी मे भाग गई।

नायकिन ने धीरे से कहा, 'तुमको तो यह देखते ही चाहने लगी है।'

'हाँ आँ-हूँ।'

'देखो न, वह समझ गई मैं क्या कहना चाहती हूँ इसलिये तुरन्त कूद गई। कितनी लजवन्ती है।'

अटल को आधी घडी ही पहले देखे हुये उसके निर्लज्ज प्रदर्शन का पूरा स्मरण था। मुझको चाहती है! चाह कर क्या करेगी? व्याह करेगी। और लाखी? राम! राम!! राम!!! उसने सोचा।

नायकिन से कुछ नही कहा। उस दिशा मे देखने लगा जिसमे निन्नी और लाखी बर्छी चलाने का अभ्यास कर रही थी।

नायकिन ने दूसरा पहलू पकडा। सकेत से पोटा को अपने निकट बुला लिया। पिल्ली झोपडी के एक थूमे के निकट खड़ी थी।

नायकिन ने कहा, 'इनको देश-देशान्तरो का हाल सुनाओ तब तक दोनो आ जाती है। माडू कालपी, मन्दसौर कितने बड़े बडे और कैसे तडक-भडक वाले शहर है। तुमने पहले कभी देखे?'

अटल ने उत्तर दिया, 'मैं तो अपने गाव और आस-पास के गांवो को छोडकर और कही कभी नही गया। अबकी बार ग्वालियर गया था। और कुछ नही देखा।'

पोटा ने देखे और अनदेखे नगरो की कहानी को गहरा रग-रगकर सुनाया। अन्त मे बोला, 'हमारे साथ मॉडू चलो तो देखना ग्वालियर उसके सामने रत्ती बराबर नही बैठेगा?'

'निन्नी लाखी को कहा छोड जाऊँगा?'

'साथ लेते चलना। बड़ी अच्छी है वे भी विचारी देख लेगी कि दुनिया मे सांक नदी और राई गाव से भी वहुत बढ़-बढ़ कर कुछ है।'

पिल्ली थूमे के पीछे से खांसी।

नायकिन ने कहा, 'वह देखो खासी की बोली मे कह रही है कि माँडू चलो। तुमको सब तरह का सुख मिलेगा हमारे साथ मे।'

अटल सिकुड़ गया।

पोटा बोला, 'इन लड़कियों की गजब की तीरन्दाजी को देखकर मॉडू का सुल्तान दॉत तले उंगली दबायेगा और न जाने कितना इनाम न दे देगा।'

'माँडू कितनी दूर है? कहाँ होकर जाते है?'

'बहुत दूर नहीं है और जवान के लिये संसार का कोई भी कोना दूर नही होना चाहिये। वैसे एक रास्ता नरवर होकर है। यहाँ से बिना ग्वालियर गये सीधे पहुच सकते है। पच्चीसक कोस होगा, बस।'

ग्वालियर के राजा शिकार खेलने आ रहे है। वे इन लडकियो की निशाने बाजी देखेगे। माँडू फिर कभी सही।'

ग्वालियर के राजा का नाम और उनके आने का समाचार सुनकर नटो को हड़कम्प हो आया। पोटा ने चर्चा को टाला।

'हमारे पास कुछ अनमोल साडियाँ है इन लड़कियो को दे देना चाहते है।'

'दाम कहाँ से आयेगे देने को?'

'हम तो वैसे ही देना चाहते है।'

'वे नही लेगी, सेतमेत नही लेगी।'

'हाँ हाँ ऊँचे मन वाली है, महलो मे रहने लायक।'

'क्या?'

'मतलब उनका ऐसा ऊँचा मन है जैसा महलो मे रहने वाली रानियों का होना है।'

'हो सकता है और होगा तुम देखोगे कुछ ओढनियो को ?'

'अच्छी बात है। यो ही बैठे-बैठे क्या करेगे।'

अटल का कुतूहल जागा। उसके सामने कई चुन्हरियाँ आ गई। वह उनको देखने लगा। यदि इनमे से एक को भी लाखी ओढे तो कैसी दिपेगी वह ? उसने सोचा। कपडो को देखते-देखते उसकी आख बहु-मूल्य चुन्हरी ओढे हुये पिल्ली पर गई। उसने फिर आख चलाई। अटल की आख के सामने तुरन्त लाखी का चित्र पिल्ली के साथ ही खिच गया। उसके मन मे ग्लानि आई।

'पानी पी आऊँ नदी मे।' अटल ने कहा। नटो का पानी वह नही पी सकता था। उठकर नदी की ओर चला गया।

पोटा और नायकिन की खुसफुस होने लगी।

'ऐसे काम होता नही दिखता है।'

'पिल्ली पर तो ढला है वह कुछ।'

'बस यही एक सहारा दिखता है।'

'माडू से लौट आवे वे लोग तो कुछ और उपाय चलावे।'

'साथ मे कुछ ले तो आवे।'

'हा गहने, कुछ टके और, और कुछ अच्छे सवार। शायद जरूरत पड़ जाय।'

'वह काम है वडे खटके का। कही ग्वालियर का राजा अपने दल-वल के साथ न आ धमके।'

'आ भी जाय तो हम लोगो के लगाव को कोई भी नहीं समझ पावेगा।

'गहनो की वात इस आदमी के सामने न की जाय। लडकियो को दिखलाये जाये और उनको फुसलाया जाय। लडकिया अच्छे कपडो और कीमती गहनो की शौकिन होती है उनके पीछे अपने जात तक दे दे। अकेले मे समझाये तो शायद कहने मे आ जावे। इस आदमी को कहीं खपा देगे। और लडकिया को लेकर चल देगे।'

'जरा कठिन जान पड़ता है। पर कुछ उकत–जुगत निकालेगे। दोनो मांडू से लौट आवे तभी कुछ तै हो सकेगा।'

एक घडी के पीछे अटल लौट आया और उसके बाद लाखी और निन्नी ने भी आ गई। वे दोनों अभ्यास पर सन्तुष्ट थी।

निन्नी ने प्रफुल्ल स्वर मे कहा, 'भैया, हम लोग बहुत शीघ्र बर्छी का चलाना सीख लेगी। तीर चलाने से यह कही सहज है।'

'फेककर भी चलाया?' उसने पूछा।

लाखी ने उत्तर दिया, 'हा, हा।'

निन्नी बोली, 'भैया तुम बछियाँ रख लो, हम दोनो शिकार खेलने जाती है। कोई बड़ा शिकार मिल गया तो उसके बदले मे इन लोगो से लाखी के लिये एक अच्छी चुन्हरी ले लूँगी।'

'एक तुम्हारे लिये भी लेनी है।' लाखी ने कहा।

उसी प्रकार की एक चुन्हरी ओढे अटल ने पिल्ली को देखा। पिल्ली ने मुस्कान के साथ तुरन्त अटल पर चितवन चलाई। इस तरह की रङ्ग-विरङ्गी, फूलदार बारीक चुन्हरी ओढ़े हुये लाखी कैसी लगेगी? उसमें से उसका रोम–रोम झांकेगा जैसा इस नटनी का दिखलाई पड रहा है। कैसी आख चलाती है! अङ्गो को कितना फडकाती है!! नाचते समय कितनी बेशर्मी दिखलाई थी इसने!!! लाखी इस प्रकार की चुन्हरी पहिनकर क्या इसी नटनी सरीखी नही दिखेगी? क्या वह कुछ दिपेगी और निन्नी? मेरी बहिन! इस तरह के कपडे पहिने यह कैसी दिखाई पडेगी? नटनी-सी न? राम!! राम!!! उसके मन मे ग्लानि की कोचने उठी।

उसने कहा, 'अपने यहाँ, ऐसे नही पहिने जाते।'

नायकिन बोली, 'रानियाँ तो पहिनती है।

अटल ने प्रतिवाद किया, 'न मैने कभी देखा और न कह सकता हूं और न हम लोगो को राजा—रानी बनना है।'

'तो भी एक को तो घर मे रख ही लेगे। अवसर—काज पर काम आ सकती है।' निन्नी ने लाखी के भविष्य मे होने वाले ब्याह का संकेत किया।

'देखा जायगा,'—लाखी ने कहा, 'लेगे, तो दो लेगे एक नही ली जायगी।'

वे दोनों शिकार खेलने जङ्गल मे घुस गईं। अटल बछिया लिये हुये घर चला आया

सन्ध्या के पहिले नट-शिविर मे नौ-दस दिन पहिले बाहर गये नट आ गये। आते ही उन्होने सावधानी के साथ अपनी फेंट मे से एक पोटली दी और गर्व से सकेत द्वारा प्रकट किया कि साथ मे कुछ इससे भी अधिक प्रबल साधन लाये हैं।

निन्नी और लाखी जङ्गल मे पूर्ववत् भटक कर रीते हाथ घर आ गईं।

[१६]

दूसरे दिन निन्नी और लाखी कही नही गईं। घर का काम किया, बछियो का अभ्यास और लाखी ने—रस्से पर चलने का दृढ प्रयत्न। अटल अपने ढोरो के साथ चला गया।

रात को उन दोनो ने निश्चय किया

निन्नी बोली, 'कई दिन से जङ्गल मे कुछ भी नही मिल रहा है। जानवरा के खाँद तो मिलते हैं, पर दिखलाई उनकी पूँछ तक नही पड़ती। सवेरे के काम-काज से निबटकर जल्दी जङ्गल मे घुस चलै और एकाध कोस आगे बढ़ जाये। देखे शिकार कैसे नही मिलता। जानवर नटो के डेरे और हम लोगो के फिर—फिर वही घूमने के कारण कुछ दूर हट गये हैं।'

लाखी ने समर्थन किया, 'बिलकुल ठीक। साथ मे एक बरछी भी ले लो तो कैसा रहे?'

निन्नी ने कहा, 'मै ले लूँगी अपनी बरछी। पीठ पर बांध लूँगी। झाडी-झङ्खड़ मे अडचन जान पड़ी तो हाथ मे ले लूँगी। अवसर आने पर पहले तुम तीर चला देना, फिर मै देखूँगी।'

'ठीक है।' लाखी ने आश्वस्त किया।

सवेरे का काम-काज करके और कुछ-खा-पीकर वे दोनो जङ्गल की ओर चली गईं। गाव से थोडी दूर निकल जाने पर उनको पोटा मिला।

नट ने कहा, 'तुम लोगो को रात मे जानवरो की कोई बोली सुनाई पड़ी?'

'कौन से जानवर की?'

'अरनो की डिडकार और सुअर की हुर्र—हुर्र?'

'नही तो।'

'ओफ! वही तो बतलाने को आया हूँ। हमारे डेरे से कुछ दूर उधर पीछे की तरफ न जाने कितने जानवर ऊधम करते रहे है। शायद आपस मे लड रहे थे।'

'या नाहर ने दिखाई दी हो। कई दिन से खेतो के पास जानवर नही आये। तुम्हारे डेरे से कितनी दूर जान पडते थे वे?'

नट ने अपने अटकल और जानवरो की दिशा को बतलाया। वे दोनो उसी दिशा मे उल्लास के साथ चली गईं।

नट अपने डेरे की तरफ बढ गया।

निन्नी और लाखी जानवरो के चिन्हो की तलाश मे दूर निकल गईं।

बहुत से खाद मिलने शुरू हुये। खाद जङ्गल के खुले और साफ स्थानो मे दिखलाई पड जाते थे परन्तु पथरीली या घास और झकाड वाली भूमि मे बहुत कम। निशान एक दूसरे पर चढ़े हुये से मालूम पड रहे थे और साफ समझ मे नही आ रहा था कि किस जानवर के है। कभी अनुमान करती थी कि अरनो के है, कभी भ्रम हो जाता था

कि घोड़ो के हैं। घोड़ो के यहा कहा से आये? उन्होने अपने भ्रम का खण्डन करना चाहा। दोनो एक झाडी की ओट मे खडी हो गई। खुसफुस करने लगी।

'सुअर और भैसे के खुर तो चिरे होते है, घोडे के खोंद जान पडते है।' निन्नी बोली।

लाखी ने कहा, 'घोडो के ही हो सकते है परन्तु यहा घोडे कहाँ से आये? कही से तुर्क न आ गये हो!'

'चिन्ह किसी बड़े दल के नही है। तुर्कों ने चढाई की होती तो अपने गाँव वालो को बहुत पहले मालूम हो जाता। रात को हर टीले-पहाड़ पर से आग जलती हुई दिखाई देती। गाँव-गाँव से ढोलो की ढप-ढप सुनाई पड़ती और एक पचायत का कुटवार दूसरी पचायत को समाचार दौड़कर दे जाता। कही ऐसा न हो कि राजा मानसिह के सवार पहले से आ गये हो।'

'वाह! पहले यहाँ आते या गाँव मे? और फिर यहाँ ग्वालियर से आने के लिये मार्ग भी नही है।'

बगल मे फैला हुआ ऊँचा पहाड, ढालू जङ्गल, पथरीली जगह नीची-झाड़ी, समतल भूमि पर सघन विशाल वृक्ष—कही झुरपुटो मे कही बिखरे हुये। गाँव लगभग एक कोस की दूरी पर। नटो का डेरा भी दूर था। उन दोनो ने इधर-उधर देखा। कुछ दूरी पर, एक टौरिया की ओट मे खड़-खड का शब्द सुनाई पडा।

'कोई जानवर है। स्यात अरना हो।' निन्नी ने बहुत धीमे स्वर मे कहा।

'हाँ अरना ही होगा, सुअर नही हो सकता, आवाज़ ऊँची थी।'

उन्होने कान लगाया परन्तु कुछ सुनाई नही पडा।

निन्नी ने पीठ पर से बर्छी को खोल लिया।

लाखी ने कहा, 'बर्छी मुझको दे दो। अरने के लिये तुम्हारे हाथ का तीर अच्छा रहेगा।'

'नही ।'—निन्नी ने समझाया,—'बर्छी को मेरी मुट्ठी और कलाही ज्यादा बल के साथ चला सकेगी, तीर तुम्हारा अच्छा रहेगा । उग टौरिया की ओर चलें जहा से आहट आई है ।'

वे दोनो टौरिया की दिशा मे चलीं । टोरिया के नीचे पहुंचकर देखा तो टोरिया को इतनी उलझी हुई झाडी से भरा हुआ पाया कि उसमे लेटकर जाने की भी गुञ्जाइश न थी । उनको विश्वास था कि टौरिया के ऊपर से आहट नही आई, बल्कि पीछे या बगल से । भूमि ऊंची नीची थी और घास कुछ अधिक ऊँचा । कही नाहर पड़ा हो और उछलकर सिर पर आ धमके, भालू किसी अदृम्य झाडी मे से झपटकर गले से आ चिपके, सुअर सपाटा भरकर घुटने तोड दे जाँघ फाड़ डाले; और यदि कही किसी अगोचर झाडी के पीछे एक ही अरना हुआ और छाती पर आ टूटा—तो क्या होगा ? वे दोनो कलेजे को कडा करके भी कुछ ऐसा ही सोच रही थी । पहाडी का सिरा थोडी ही दूर रह गया । वहा से दूसरी पहाडी के ढाल की ऊँचाई शुरू होती थी : दोनों पहाड़ियो के बीच मे जगह खाली मालूम होती थी । लगता था जैसे कोई चौडा सा मार्ग हो । वे दोनो सावधानी के साथ एक-एक डग धरती हुई, इधर उधर ताकती झाँकती इसी सिरे की ओर जा रही थी । सिरे के निकट पहुँचकर वे ध्यान के साथ आहट लेने लगी । निन्नी बर्छी सम्भाले और लाखी कमान पर लोहे का तीर चढाये ।

निन्नी को अवगत हुआ जैसे सिरे की मोड़ के पीछे कोई खांसा हो । लाखी को भासित हुआ जैसे उसकी बगल मे टौरिया के ऊपर किसी ने उस खासी को दुहराया हो । निन्नी ने लाखी की टेहुनी को अपने खाली हाथ की उङ्गली से कोचा । दोनों ने एक दूसरे के प्रति देखा । पशु नहीं है, कोई मनुष्य है—यह मानकर उन दोपों का गला सूख गया । दोनों ठिठकी ।

बहुत धीरे से लाखी बोली, 'कोई मनुष्य है, अरना या सुअर नही है।'

निन्नी ने चुप रहने और चुपचाप ओट लेने के लिये आँखो का सकेत किया।

थोडी देर उसी स्थिति में वे दोनो खडी रही।

निन्नी ने बहुत धीमे स्वर मे कहा, हवा से पेडो की टहनियाँ रगड खा गई थी, और कुछ नही था।'

लाखी ने असदिग्ध नाही का सिर हिलाया। बोली, 'लौट पडो।'

निन्नी भय की लज्जा और निर्भयता के हठ के द्वन्द मे पड गई। उसने आँख के सकेत से थोडी देर खडे रहने का आग्रह किया। कुछ ही क्षण पीछे उन दोनो को टौरिया के ऊपर से स्पष्ट खाँसने का शब्द और मोड के पीछे से घोडो की टापो की आवाज सुनाई पडी। दोनो धक से रह गई।

निन्नी ने एक ही क्षण उपरात भोह सिकोड़ी, होठ सटाये और भाले को मुट्ठी मे साधकर कसा। तीर को पकड़े लाखी का हाथ काँपने लगा। होठ उसके हिल रहे थे। धीरे काँपते स्वर मै बोली, 'पीछे हटकर ओट ले लो सवार आ रहे है।'

निन्नी के भी कान ने धोखा नही खाया था। आस—पास कोई अच्छी ओट का सहारा न देखकर वह लाखी के साथ पीछे को मुड़ी। लौटकर देखा तो सिरे की मोड पर दो घोडो के थूथर दिखलाई पड़े। पहाडी पर चढ जाने के लिये बीते भर का भी मार्ग दिखलाई नहीं पड रहा था। जहाँ से आई थी उसी रास्ते से जाने में छिपाव की कोई गुजाइश नही के बराबर थी। पहाडी के समानान्तर वाली बगल मे कुछ दूरी पर पेडो की एक झुरमुट थी। वे उसी दिशा मे मुडी। परन्तु इसकी ओट मे पीछे नही पहुँच पाई। शस्त्र—सज्जित चार सवार सिरे

की पीछे की मोड से उस स्थान पर आ गये जहा से वे लौट पड़ी थी। वे दोनो एक छोटी सी झाडी के पीछे दुबकने का प्रयास करने लगी।

चार सवारो के जो आगे था, चिल्लाया, 'घबराओ मत जङ्गल की परियो! हम तुमको खुश करने के लिये ही आये है। चलो हमारे साथ।

कलेजे की धक धक के साथ निन्नी खडी हो गई। उसके मुह से फटे स्वर मे निकला, 'कौन हो तुम ?'

सवाल के वाद ही निन्नी के कलेजे की धक धक बन्द हो गई और अपने शिकार का सफल इतिहास उसकी स्मृति मे विजली की तरह कोध गया।

लाखी भी खडी हो गई।

'कहा चले तुम्हारे साथ ?' लाखी बोली। स्वर निष्कम्प ऊँचा और पैना था। होठ सूखे।

सवार लोहे की जाली का कवच पहिने हुये थे, झिलम पर साफे बाँधे थे। उनकी ऑखो की जगह केवल गोल छेद दिखलाई पड रहे थे। सवारो ने कोई जबाव नही दिया। आगे बढ आये। उनके निकट आकर थम गये।

आगे वाले सवार ने कहा, 'एक एक घोडे की पीठ पर आकर दोनो बैठ जाओ। फेटे से तुमको कस लिया जायगा। गिरने का कोई डर नही रहेगा। ऐसी जगह ले चलेगे जहा जिन्दगी भर गुलछर्रे उडाओगी। निकल आओ झाडी मे से यहा।'

सवार घोडे पर से उतर पडा। कन्धे पर तीरो का तरकस और कमान कसे था। कमर मे खमदार लम्बी शमशीर। उन दोनो की तरफ बढा - उसके पीछे वाला सवार भी घोड़े पर से उतर कर बढा। घोडो को दोनो ने छोड दिया था। घोडे घास पर मुह फेरने लगे। वाकी दो सवार आरुढ रहे।

निन्नी ने तीखे पैने स्वर मे रोका, 'वही खडे रहो! हमको क्यो छेडते हो ?'

'शुरू-शुरू में बाज-बाज इसी तरह सडकती-तडकती है फिर अर्सामर्न लगती है। हुकुम की बन्दगी के लिये आये है हम लोग। घोड़ो पर सवार हो जाओ, इसके बाद तुम्हारे भी हुकुम के सामने सिर झुकायेंगे।' वह बोला।

'चुप'' निन्नी कड़की, जैसे बिजली तडक गई। सवार ने अपने पैदल साथी को लाखी के पकडने का इशारा किया और स्वय झाडी का चक्कर काटकर निन्नी की बगल पर आया।

उसने ठटठा मारकर कहा, 'अच्छा ! बर्छी लिये हो !! और तीर कमान !!! फजूल है, फेक दो बर्छी। तुम्हारा-आपका नाम, मृगन-यनी है ?'

'हाँ, कडक के साथ निन्नी के मुह से निकला और बज्रमुष्ठि की बर्छी का फल झन्न के साथ सवार के कवच को छेदकर पसयिो के भीतर जा धँसा। लाखी ने तानकर दूसरे पैदल की आँख वाले छेद को निशाना बनाया। ससे छूटकर तीर आँख के भीतर दूर तक धस गया। दोनो 'ओह।' के साथ गिरकर तपडने लगे। लाखी ने एक तीर घोडे की गर्दन पर छोडा। वह भी गिर गया। तुरन्त निन्नी ने कमान को कन्धे से उतारकर तरकस से तीर निकाला और दो घुड-सवारो मे से एक पर छोडा। सवार तेजी के साथ मुड़पडे थे इसलिये तीर चूक गया। लाखी ने एक दूसरा तीर छोडा आड़ मे आ गई थी इसलिये तीर ने एक पतले पेड़ की डाल को काटा और वह गया। नन्नी ने दूसरा तीर छोड़ा। वह भी खाली गया। सवार मोड पर पहुँच गये थे, बिना सवार वाला दूसरा घोडा दौडकर उन भागते हुये सवारो के साथ हो गया मोड के पीछे पहुँचते-पतेचते भी उन सवारो के पीछे दो तीर और गये परन्तु लगे उनमे से किसी को भी नही। मोड़ के पीछे से दौडते हुये घोडो की टापो का शब्द सुनाई पडा। फिर शान्त। इधार कुछ क्षण वे दोर्नो आगन्तुक तड़पे कराहे फिर बिलकुल शान्त।

निन्नी और लाखी के कलेजे मे फ़िर धुकधुक हुई। एक दूसरे से कुछ कहना चाहती थी। परन्तु मुह से बक नही फट रहा था।

लाखी का गला सूख गया था। भर्राये स्वर मे बोली, बर्छी को उसकी पसलियो मे से खीचकर चलो जल्द यहाँ से ।'

निन्नी कोई उत्तर न देकर भूमिशायी सवार को निकट लाकर देखने लगी वह मर चुका था। निन्नी ने काँपते हाथ से बर्छी निकालने की कोशिश की न निकल सकी। हाथ की मुट्ठी बँध नही सकी। लाखी ने तीर-कमान को घास मे एक तरफ रख दिया। बैठकर लाश की बगल मे पैर अडाये और एक कस मे बर्छी को निकाल लिया खून की धार फूट निकली। निन्नी ने दूसरी ओर मुस फेर लिया। लाखी ने बर्छी उसके हाथ मे दे दो और लपक कर अपना तीर कमठा उठा लिया जैसे किसी पर तत्तकाल चलाना हो। फिर ऊसने दौडकर दूसरी लाश और मरणासन्न घोडे मे से अपने तोर निकाल कर तरकश मे रख लिये। उसकी आँखो मे पागलपन सा छा गया था। सुन्न सी खड़ी निन्नी के पास आकर कन्धे को झटका दिया।

उसी भर्राये हुये स्वर मे बोली, 'यहाँ से जल्दी चलो। या खोये हुये तीरो को ढूँढने की सोच रही हो ? जल्दी ! जल्दी !!

निन्नो सचेत हो गई। कहा, 'छोडो तीर को चलो घर । बहुत तीर हो जायेगे। घर पर और भी रक्खे है।'

लाशो को वही छोड़कर वे तेजी के साथ चल दी। उनकी इच्छा घने जङ्गल को छोडकर नदी के किनारे होते हुवे घर पहुँचने की थी।

गाँव के पास पहुँचकर वे धीमी पडी। बर्छी और तीरो पर रक्त सूख गया था परन्तु मन के भीतर ग्लानी भी थी।

निन्नी ने कहा, 'नदी मे इनको धो लो और नहा कर घर चलो ।'

लाखी बोली, नदी मे कोई सवार न सो।'

'दूर से दिखलाई पड जायेगे । हुये तो भगाकर घर पहुँच जायोगी।'

'तव तो गाँव फर को सचेत करना पडेगा। कही गाव पर धावा न हो जाय।'

'भैया न जाने कहा होंगे। उनको छोड़कर कैसे कही भाग कर छिप सकते हैं ? चलो, नदी किनारे। थोडी ही दूर नटो का डेरा है उनके पास हथियार भी है। वे सवार उतने ही रहे होंगे, या इधर-उधर थोड़े से और होंगे। गांव पर धावा नही हो सकता।'

लाखी सहमत हो गई। उन दोनो के पास तरकसो मे अभी और कई तीर थे। नदी किनारे चौकन्नी होकर पहुँची। आँख पसारी। गाव के इधरे-विखरे चरते हुये ढोरो के सिवाय कुछ नजर नही आया। नदी में जाकर उन्होने बर्छी और तीरो को धोया। नहाया और घर गईं। घर पहुँचकर अब उनको डर लगा। घर मे जैसे कोई बडा जङ्गल हो, जैसे वहां कोई खाने को दौड रहा हो, जैसे वे निश्शस्त्र हो निस्सहाय। घर की टटियाँ बन्द कर लेने पर उनको और भी डर लगा। निन्नी ने टटिया खोल ली। घर के बाहर आकर इधर-उधर देखने लगी।

लाखी बोली, 'उन्होने बडी देर लगाई। ढोरों को लिये न जाने कहा डोल रहे होगे।'

निन्नी ने कहा, 'यही मे सोच रही थी। चाहती हूँ हम सब ब्यालू करके मचान पर चल दे।

थोड़ी देर मे सन्ध्या हुई। गाव वाले अपने-अपने थोडे से ढोर लेकर आ गये। दूर से उनके शब्द को सुनकर निन्नी को भान हुआ जैसे कई घुड़सवार दौड़ते चले आते हो। आधी घडी पीछे अटल भी अपने ढोरो सहित आ गया जैसे ये दोनो उसके लिये आँखे बिछाये बैठी हो।

निन्नी वोली; 'कहा थे अभी तक, वडी देर लगाई।'

अटल को अचरज हुआ, 'देर लगाई।' पशुओ को तो पानी पिलाकर लौटने का समय यही है। क्यो, क्या बात है ?'

लाखी ने कहा, 'हम दोनो को लग रहा था जैसे कुसमय हो गया हो।'

पशुओ को सार मे बाँधने के बाद, अटल को उन्होने पूरा वृत्तान्त सुनाया। अटल को विश्वास नही हो रहा था। अन्त मे मानना पड़ा।

बोला, 'तुर्को की कोई छोटी-सी ही टुकडी है। बहुत होते तो तुम दोनो घिरकर मारी जाती। तुमको पकडकर तो वे ले ही नही जा सकते थे। आज मेरे लाये तीर और बर्छे सार्थक हुये। हमारे तोमर राजा ने चम्बल और यमुना की सीमाओं और घाट घाटियो पर मोर्चे बाध रक्खे है। उनके बीच मे होकर चार-छः का ही निकल आना सहज हो सकता है। कोई बड़ी टुकडी या सेना बिना बडी लडाई और मारकीट के यहाँ तक नही आ सकती चिन्ता मत करो। रात मे मचान पर हम तीनों रहेगे। दोनो सो जाना, मैं जागता रहूंगा। कल से इतनी दूर शिकार खेलने मत जाया करो। बस। फसल कटने को आ गई है। अनाज गाह-कर गड्ढे मे रख ले, फिर कोई बात नही।'

दूसरे दिन सबेरे मचान पर से घर आने के बाद थोड़ी ही देर हुई थी कि पोटा आया। उसकी आखो की ढिठाई मे खोजबीन नही थी। पुतलियो के घुमाव-फिराव के अन्तरो में कुछ भय सा था।

आदर सूचक प्रणाम के बाद बोला,'इन बेटियो को कल कुछ शिकार मिला था क्या? मिला हो तो थोडा हमको दे दो।'

अटल ने अभिमान के साथ कहा, 'शिकार नही मिला, कुछ चोर मिले थे सो इन्होने उनको मार भगाया।'

'चोर! ओ भगवान!! ओ घाट घटौरिया देवता!!! ओ गोड़ बाबा!!!! हम लोग वहाँ सूने मे अकेले पडे है। क्या करे? नट ने भयातुरता प्रकट की।

अटल बोला, 'तुम तो कई हो तुम्हारे पास हथियार भी है।'

नट ने भय के उसी स्वर मे कहा, 'हमारे पास कुछ कपडे है। चावल और गुड़ भी थोडा सा है। कुछ और सामान है। गाव की पचायत और पटेल कह दे तो हम लोग गाँव के पास ही अपना डेरा डाल ले।'

'कोई नाही करेगा।' थोड़ा-सा सोचकर उसी अभिनान के स्वर मे अटल न कहा।

नट प्रसन्नता प्रकट करता हुआ वहा से अपने डेरे को चला गया।

धीरे से उसने नायकिन से कहा, 'हमारी साट–गांठ का उसको पता नही है। थोड़े दिन गांव के पास ही रहकर कोई और क्रिया बर्त्तनी पड़ेगी।'

सन्ध्या के पहले उन्होने अपना शिविर गांव के निकट खडा कर लिया।

(२०)

वज्र-मुष्ठि मे बर्छी की मूठ को पकडकर नोक से कवच को झनझन के साथ फोड़ा और चोर को धराशायी कर दिया! दो दिन के ही अभ्यास से कितना सफल, प्रबल तौला हुआ प्रहार रहा!! दूर-दूर तक कही भी कोई सहायता प्राप्त नही, रोने-चीखने तक की कोई सुनता नही!!! कोई और स्त्रियां ऐसी परिस्थिति मे पडी होती तो डाकू उनको उठा ले जाते और उनके सतीत्व को उजाड देते!!!! निन्नी के हृदय के एक कोने मे अभिमान जाग-जाग पड रहा था। परन्तु वे तुर्क रहे होगे आगे अनेको को साथ लायेगे। तब क्या होगा? यह डर निन्नी के अभिमान को दबा-दबा डालता था।

लाखी ने अपने ऊपर आते हुये उस नकाबपोश का वेघ झाडी की ओट लेकर, क्षण भर मे निशाना बाँधकर किया। घोड़े को दूसरे तीर से फोड डाला, उसी पर चढाकर तो वह तुर्क भगा ले जाना चाहता था। परन्तु क्या उस समय इतना सोचा था? कुछ भी याद नही आता कैसे बखाना जाय? बात चारो तरफ फैलेगी। यदि तुर्कों की फौज की फौज चढ दौडी और खेती, पशु और घर मिटा दिये तो लोग कहेगे इन लडकियो ने ही सब सत्यानाश खडा करवाया—लाखी ने सोचा।

उन दोनो ने अपने पराक्रम की कथा को सिवाय अटल के और किसी को नही सुनाया। अटल से अनुरोध किया कि वह किसी को उन सवारो को मार डालने का हाल न बतलावे।

अटल के अभिमान ने कथा को पहला रूप दिया-लडकियो ने चोरो को मार भगाया, दूसरा रूप–'चोरो के पास हथियार थे, वे घोडो पर सवार थे, घाव खाकर भागे।' तीसरा रूप–'चोर तुर्क थे या अन्तर्वेद के कोई पठान, लूटने–मारने को आ रहे थे कि इन विकट लडकियो ने मार भगाया चौथा रूप–'इन दोनो ने तुर्को व पठानो को तीरो से छेद दिया, वे तीरो को ही ले जा सके।' मार डालने की बात किसी से नही कही और न चोरी का अभिप्राय बतलाया कि वे इन लडकियो को ही उठा भागने को आये थे।

परन्तु गांव वालो को चोरी के अभिप्राय के समझने मे क्षण भर का भी विलम्ध नही हुआ। उनको शका हो गई कि फिर कोई बडा हमला होता है और फिर वन-कन्दराओ मे मरने-खपने या अधमरे हो जाने की बारी आती है। राजपूतो का परस्पर युद्ध तो था ही नही जिसमे खेती, गांव और स्त्री की इज्जत नही बिगाडी जा सकती थी।

दूसरे–तीसरे ही दिन गिद्धो, चीलो और ढोरो के चराने वाले ने दो मरे हुये मनुष्यो और एक मरे घोडे का पता दिया। नटो ने अपने अन्वेषण अनुसंधान द्वारा उनका समर्थन किया। कवच, झिलम और मृत तुर्को के हथियार भी लाकर गॉव वालो को दिखला दिये। लाशो पर और जो कुछ पाया हो उसको अपने डेरे मे रख दिया।

गांव की जन-सख्या अल्प थी। थोड़े से नटो के आ जाने से गाव की चिन्ता कम नही हुई। नटो की जाति, उनका व्यवसाय, किसी भी गाव के अङ्ग या अग न होना, उस गॉव ने उनको हिला-मिला नही सकता था। लाखी, निन्नी और अटल को नटो का अधिक सम्पर्क प्राप्त था इसलिये वे उनको अपने से उतना ज्यादा अलग नही समझते थे, परन्तु गाव की चिन्ता या भय की अवहेलना नही कर सकते थे।

आक्रमण के भय को शमन केवल एक ही उपाय द्वारा हो सकता था—ग्वालियर के राजा की सहायता।

गाँव वाले पुजारी के पास पहुँचे।

'बाबा !' एक गाँव वाले ने कातर स्वर मे कहा, 'हम किसान लोग किसी से नही लड़ते। लडाई राजपूतो तुर्को और पठानो का काम है, परन्तु गाँव की दो लडकियाँ कुछ पागल है—इनके तीरो से दो तुर्क या पठान अपने जङ्गल मे मारे गये—'

अटल ने तुरन्त टोका, 'बाबा वे डाकू इन दोनो को जबरदस्ती उठा ले जाना चाहते थे। हथियार न उठाती तो क्या करती ? अपनी जान खो देती ? पुरखो को डुबो देती ?'

गाव वाला बोला, 'वैसे ही तोरई छोकता है, मुझको बात कर लेने दो।'

अटल मुह बिदरा कर चुप रहा।

गांव वाला कहता गया, 'घोडो की टापो के चिन्हो से जान पडता है कि वे सब बहुत से थे। लडकियाँ कुल चार बतलाती है पर इतने अवश्य थे कि दो को मरा छोडकर बाकी जहाँ से आये थे वहा पहुँच गये। अब वे लावेगे अपने साथ न जाने कितनो को। यदि आ गये तो न फसल बचेगी, ढोर और न हम लोगो के प्राण। आप ग्वालियर जाकर राजा से कहिये।'

ग्वालियर होकर ही अभी तो हम लौटे है। राजा ने फिर से वचन दिया है कि चार छ दिन मे आयेगे।' पुजारी जी ने कुछ निराश स्वर मे कहा।

गांव वालो ने प्रार्थना की कि 'एक बार और कष्ट करो। किसी बहाने हो राजा को अपने साथ लिवा लाओ। गाँव का एक बूढा बोला, पुजारी देवता, अबकी बार मन्दिर को और तुमको पिछली फसल से दुगना चढायेंगे हस गाव वाले।'

पुजारी को भविष्य बुरा नही लगा परन्तु वर्तमान ने क्षणिक ग्लानि डाल दी। मुस्कराया। मुस्कान मे होठो के एक कोने पर छोटा-सा तिरछापन आ गया।

अटल ने तुरन्त कहा, 'पुजारी महाराज को लोभ लालच दिखाते हो, जो संसार छोडे हुये इस फूस के मन्दिर मे अपने पोथी–पत्रो समेत पडे रहते है। वह किसके लिये ? हमारे अनाज की चढोत्री के लिये ?'

पुजारी को अटल की बात अच्छी नही लगी, की थी उसने चाटूकारी, परन्तु पुजारी को गड गई—मन पर उसका प्रतिकूल खुद गया, अनाज की चढोत्री के लोभ में यहाँ पडे रहते! परन्तु उसने अपनी मुस्कान को नही छोड़ा।'

बोला, 'फिर से जाता हूँ। आशा है कि अबकी बार लिवाकर ही आऊँगा। और बिना बिलम्ब के आऊँगा।'

अटल ने विनय की, 'मै भी साथ चलूँ।'

पुजारी ने रूखे स्वर मे अस्वीकार किया, 'नही मै अकेला ही जाऊँगा। दो तीन दिन के बाद। एक पाठ पूरा करते ही चल दूँगा।'

गाव वाले आशा और उत्साह के साथ लौट आये। नटो ने विशेष उत्साह प्रकट किया। परन्तु सोचा टिके रहे या राजा के आने के पहले कही खिसक जाये।

लाखी और अटल ने टिके रहने और राजा के सामने अपने खेल दिखलाने का आग्रह किया।

गाँव वाले फसल काटने पर पिल पडे। पकने मे थोडी सी कसर थी परन्तु वे और अधिक नही ठहरना चाहते थे। अटल ने भी काटी। सबने पास-पास खलियानो मे रख ली अबकी बार खलिहान जगल मे नही बयाये। अटल ने निन्नी और लाखी को जङ्गल मे जाने से रोक दिया। वे दोनो गाँव के पास के पलास के वृक्षो पर बर्छी चलाने का अभ्यास करने लगी। गाव वालो का अब उनका यह अभ्यास ज्यादा कसकने लगा।

स्त्रियां चाहती थी, दोनो कही टल जाये तो अच्छा। सब सोचते थे, पागल हो गई है—बिलकुल गोंड भीलनी, नही तो क्या ऊँची जाति की लड़कियों मे ऐसे कुलक्षण होते हैं !

गाँव वालों की वृत्ति उन दोनो से छिपी नही रही। एक दिन अटल खाना खाकर खलिहान मे चला गया। वे दोनो हथियार लेकर खलिहान से कुछ ही दूर बर्छी चलाने के अभ्यास के लिये निकटवर्ती पलाश वृक्ष समूह के नीचे पहुँच गई। बर्छियो को पेड से टिकाकर छाया मे बैठ गई।

लाखी ने कहा, 'यदि हम लोग हथियार चलाना न जानती होतीं तो वे लोग हमको छोड देते ? हमारा सर्वनाश हो जाता तो गाँव वाले क्या करते ? क्या कहते ?'

'रोते किलपते और क्या करते ?' निन्नी बोली।

'स्यात रोते भी नही। हमारे भाग्य को दो चार गालियाँ देकर अपने-अपने काम मे लग जाते।'

'इन लोगो की समझ मे यह क्यो नही आता कि हम तीनो गाँव में न होते तो इनकी आधी फसल को जङ्गली जानवर चौपट कर जाते और वे चार तुर्क गांव की आधी स्त्रियो को नष्ट-भ्रष्ट कर जाते।'

'मुझको एक सन्देह है निन्नी—ये लोग हम दोनो को पकड़ने आये थे।'

'क्यो ?'

'क्योकि तुम्हारे गोरेपन की, तुम्हारी आखो की, तुम्हारी छवि की चारो दिशाओ मे कीर्ति फैल गई है।'

'दुर पगली ! तुम कुछ कम सलोनी हो ?'

'हुँ या नही हू—दर्पण आरसी तो अपने पास है नही। पर मेरा कहना ठीक है कि वे हम दोनो के पकडने के लिये ही आये थे। यहां से ग्वालियर चल देना अच्छा होगा।'

'फिर साक नटी, जङ्गल, शिकार और खेत ? ये वहां कहां मिलेंगे।

'एक और कारण है। तुमने सुना है या नही ? सुना होगा।'

'नही तो क्या बात है ?'

'एक स्त्री ने मुझसे ठठोली की थी-तुमको गर्भ रह गया है।'

'ऐ' ! क्या है ऐसा कुछ ?'

'अरी हट !'

'जैसे ही ज्वार को घर मे गाही तुम्हारा व्याह रचूँगी। नटो से ओढनी इसलिये लेनी है।'

'गाव वाले नही होने देगे।'

'पुजारी को कुछ अनाज दे-दिवाकर साव लेगे।'

'देखो।'

'और किसी ने कही यह बात ?'

'और तो किसी ने नही कहा। पर दूसरी स्त्रियाँ भी अनखाई-सी रहती है, मानो मैं कुजात हो गई हूँ।

'तुमको जो कुजात कहे वह कुजात।'

'अभी कहा तो नही है परन्तु डर है कही कह न उठे !'

'तो कही भी जायेगे सभी जगह ऐसी ही कहा-सुनी और बुराई होगी।'

'बाहर अपने को गूजरी कह उठूँगी।'

'अरी वाह ! डर काहे का है ? क्यो डरे ? कोई पाप नही हो जायगा। पुजारी बाबा कथा, कहानियो मे सुनाया करते है। व्याह के बाद तो गूजरी हो ही जाओगी। मैने और भैया ने तो व्याह होने के पहले ही तुम्हारा अपना चौका एक कर लिया है।'

'गाँव वाले गाँव मे रहने नही देगे। जाति का दण्ड बहुत कठोर होता है।'

'तब कही बाहर चल देगे। इतनी दूर जहाँ कही इन गाँव वालों की काँव-कांव सुनाई ही न पडे।'

'इन नटों की भी एक भ्यात है ! किसी गाव मे नही रहते, घूमते फिरते वने रहते है और मौज करते है ।'

'उस लडकी को तो देखो, पिल्ली को । राम ! राम !! कितनी आंखे मटकानी है और अङ्गो को कितना फडकाती है । 'वारीक चुन्हरी उसके शरीर पर तो वहुत ही घिनावनी लगती है ।'

'उसी को मेरे लिये लेना चाहती हो ! कभी नही ओढूँगी । नटिनो सी जंचने लगूंगी ।'

'हाँ—सो तो अपने मोटे कपड़े वहुत अच्छे । अब मारी बात पुजारी के लौटने पर तै करेगी ।

[२१]

साँज के वाद का समय । ठण्डी हवा । खुली हुई लम्वी—चौडी खिडकियो के दक्षिणी मन्द समीर के भीने-भीने झोके । चन्द्रमा की मुस्काने महल के नीचे की वृक्षावलि पर । माँडू के विशाल महल के उस बडे कमरे मे तख्त के ऊपर मखमली मसनद और तकियो पर गयासुद्दीन । नीचे ख्वाजा मटरू नीची निगाहे । तख्त के पास खूबसूरत खवासिने ललक के साथ, काच की सुराही मे आवरूदार उफनाती हुई लाल लाल शराव लिये हुये । सोने की रत्नजड़ित कटोरी मे पहुँच-पहुँच वह होठो पर सुरसुराती हुई गयासुद्दीन को स्वप्न लोक का आमन्त्रण दे रही थी ।

'मटरू ! सुल्तान ने सम्बोधन किया ।'

मटरू ने सावधानी और विनय के साथ सिर उठाया, हाथ जोड़े, जरा—सा खवासिनो की तरफ देखा और चुप रहा । सुल्तान ने खवासिनो को सकेत किया । वे सुराही को तख्त के पास वाले ऊँचे पीढ़े पर रख-कर चली गई ।

मटरू ने काँपते हुये स्वर मे कहा, 'जहांपनाह, अबकी बार काम नही वन पाया ।'

'क्यो ? क्या हुआ ?' हाथ मे प्याले को लिये हुये सुल्तान ने पूछा ।

'चार सवार गये थे, उनमें से दो वहीं खेत रहे।'

'किस तरह ? किसने मारा उनको ? क्या मानसिंह के सिपाही पहुँच गये वहाँ ?'

'नही जहाँपनाह। उन्ही लड़कियों मे से एक ने बर्छी चलाई और दूसरी ने तीर।'

'सवारो ने कुछ बेअदबी की होगी।'

'वैसे नही आ रही थी तो उन्होने पकडना चाहा।'

'बिलकुल गधे थे वे सब। निरे काठ के उल्लू। बाकी दो कहाँ है ?'

'आज ही लौटे है। उन्होने सब हाल सुनाया है।'

'उनको कैद मे डाल दो। नही आती थी खुशी खुशी तो बहका फुसलाकर चम्बल के इस पार कर लेना था अपने इलाके मे, फिर चाहे कुछ किया जाता। नट क्या कर रहे है ?'

'जहाँपनाह। नट—

'तुम भी अहमक हो। क्यो रुक गये ? कहो न क्या वे भी मार डाले गये ?'

'नही जहाँपनाह। उन्होने कुछ गहने और सिक्के मंगवाये थे सो भेज दिये गये, मगर वे अभी तक कुछ नही कर पाये है।'

'हुँ।' सुल्तान के क्रोध को मदिरा के सरूर ने उत्तेजित किया।'

मटरू को सुल्तान के स्नेह और कृपा-पात्र होने का अभिमान था। यकायक इस रुख को देखकर चौकड़ी भूलने लगा। विषयान्तर की खोज मे लगा।

सुल्तान को मदिरा की प्याली देते हुये मटरू ने कहा, 'महमूद बघर्रा सिंध की तरफ से लौटकर फिर तैयारी मे है।'

सुल्तान को विषयान्तर बुरा नही लगा। कुछ ढलते हुये स्वर में बोला, 'कहाँ की तैयारी मे ?'

दिन मे उनको जासूसो ने बतलाया था, परन्तु इस समय बात स्मरण से ओझल हो गई थी।

'जहापनाह आजकल पुर्तगालियो का मुकाबला करने के लिये जहाजो की तैयारी मे लगा है सुल्तान महमूद ।' मटरू ने कहा ।

'उस हब्शी को मेरे सामने सुल्तान मत कहा करो' गयासुद्दीन चिल्लाया ।

मटरू चुप रहा ।

'राजपूताने के ऊपर चढ़ाई करने के लिये जा रहा है वह, मुझको याद आ गया । हम ग्वालियर पर चढाई करेगे ।'

'वेश-क जहांपनाह ।'

'नरवर होकर हमला होगा । नरवर को घेरे रहने के लिये कुछ दस्ते छोड़कर ग्वालियर का मुहासिरा किया जायगा । एक छोटा-सा दस्ता चम्बल के रास्ते से राई गाँव को दबायेगा । उधर से मै ग्वालियर होता हुआ आ पहुँचूँगा । नटों के पास खबर भेजो कि तब तक वे किसी तरह उन दोनो को अपने पास से इधर-उधर न हिलने भटकने देवे ।'

'तुम मेरे साथ चलोगे ।'

'खुदावन्द की नियामत है ।'

'मैं अभी क्या कुछ कड़ा पड गया था ?'

'नही ऐसे तो कुछ नही जहापनाह ।'

'हाँ ठीक । मेरी गैर मौजूदगी मे माडू की नायबी शाहजादा नसरुद्दीन करेगा ।'

'बजा है जहापनाह ।'

सुल्तान ने दूसरे प्यारे प्याले को चुस्कियो का लक्ष्य बनाया । यह उसके नित्य अभ्यास के प्रतिकूल था ।

मटरू ने देखा सुल्तान ढल गया है । 'कुछ क्षण उपरान्त बोला, 'जहाँपनाह, उन दो सवारो को बख्श दिया जाय । वैसे उनका कोई कसूर नही है ।'

'कभी नही । उन्होने अपने दो साथियो को क्यो मर जाने दिया ?'

ख्वाजा मटरू चुप साधकर रह गया। जब नरवर पर हमला होगा तब ग्वालियर का तोमर हाथ पर हाथ धरे बैठा रहेगा ग्वालियर मे ? जिसने दिल्ली के बादशाह बहलोल और सिकन्दर से टक्कर ली वह क्या ग्वालियर के किले मे बन्द होकर ही लडेगा ? अगर इन हजरत की ही आंख या छाती पर कोई तीर आ बरसा तो क्या यह माडू जीते जी लौटकर आयेंगे ? किसी तरह इस लड़ाई से मेरा पिंड छूट जाय तो बड़ी बात हो। यह खतम हो गये तो नसीरुद्दीन सुल्ताल बनेगा। क्यो न अभी से उसकी खैर मनाने लगूँ ? मगर इससे पीछा छूटे तब तो वैसे इस तरह कभो पहले नही बिगड़े। शायद फिर मुहब्बत मिहरबानी करने लगें। देखूंगा। मटरू सोच रहा था।

सुल्तान बोला, 'मेवाड मे नकली राना ऊदा और असली राना रायमल का किस्सा तो खतम हो गया है, लेकिन मेवाड मे कुछ कमजोरी अब भी है। अगर बघर्रा वहाँ उलझा रहा तो हमको ग्वालियर की लडाई मे सुभीता रहेगा हम मेवाड को किसी तरह की भी मदद नही देगे, 'क्योकि पिछली मर्तबा राना फौज लेकर आये और बघर्रा से बिना लडे ही लौट गये। वैसे भी फिलहाल मै दो मोर्चो पर लड़ाई नही लडूँगा। एक ग्वालियर ही काफी ठीक रहेगा। क्या कहते हो ?'

मटरू ने सुल्तान को फिर ढला हुआ पाया, वह अपनी पिछली गलती को दुहराना नही चाहता था।

'बोला यही ठीक है जहापनाह।'

'नरवर ग्वालियर की चढाई के लिये यह मौसम मज़ेदार है। नटों के पास होशियारी के साथ खबर भेज देना। जो कुछ मैने कहा है होकर रहे।'

'जहापनाह।'

[२८ [

दोपहरी के समय को छोड़कर दिन मे राजा मानसिंह किसी न किसी काम मे व्यस्त रहता था। लोगो से मिलने का समय नौ बजे से बारह बजे तक। न्याय का शासन तीसरे पहर की अन्तिम घड़ियों मे। चौथे पहर के आधे भाग मे सेना की तैयारी और अश्वारोहण; दिन के पहले पहर की तरह। रात के पहले पहर मे भोजन और राज्य-व्यवस्था की चर्चा, दूसरे पहर मे सँगीत। यह कार्य-क्रम गर्मी की ऋतु मे कुछ घट बढ जाता था।

तीसरे पहर की समाप्ति मे कुछ विलम्ब था। मानसिंह अपने भवन के सभा—मण्डप मे सिंहासन पर बैठा था। सभा मे मन्त्री, सचिव इत्यादि यथास्थान थे। उसके कुछ निकट एक नया यूथपति खड़ा था। नाम निहालसिंह अट्ठाईस-तीस वर्ष का युवा था। छरेरी गठीली देह, सहसा प्रवर्ती लक्षण वाली आँख। मानसिंह ने इसको कुछ समय पहले ही अर्जित किया था। कुशल उपयुक्त साथियो को ढूँढ निकालने की मानसिंह मे प्रतिभा थी।

यदि दिल्ली के सुल्तान ने जौनपुर पर फिर आक्रमण किया तो जौनपुर सुल्तान की सहायता करनी पड़ेगी। आक्रमण अनिवार्य सा जान पड़ता है। राजा मानसिंह ने मन्त्री से कहा।

मन्त्री बोला, 'परन्तु यदि मालवा के सुल्तान ने हमारे ऊपर चढाई कर दी महाराज तो हम जौनपुर की सहायता नही कर सकेगे। यदि हमारे ऊपर पहले आक्रमण हो गया तो क्या जौनपुर का सुल्तान हमारी सहायता करेगा? जौनपुर का सुल्तान बगाल की ओर चला गया था, सम्भव है फिर लौट पडा हो।'

'परन्तु मालवा के सुल्तान की सन्धि मेवाड़ के साथ है और मेवाड़ हमारा मान्य है। फिर मालवा की सल्तनत को गुजरात के वघर्ष से चैन कहाँ है? 'वह हमारे ऊपर हमला करने का अवकाश कैसे पायगा?' मानसिंह ने पूछा।

मन्त्री ने वेधड़क उत्तर दिया, 'महाराज, गयासुद्दीन सनकी और अबल है। हम लोग उसके विग्नह का विश्वास तो कर सकते है, परन्तु सन्धियो का भरोसा नही कर सकते ।'

राजा ने हँसकर कहा, 'हमारी की हुई सन्धियो के सम्बन्ध मे भी लोग इसी प्रकार का व्यङ्ग कर सकते है ।'

राजा ने निहालसिंह की ओर स्नेह की दृष्टि फेरी । वह तुरन्त बोला हम मालवा और दिल्ली दोनो से लड़ लेगे । अपने लिखे हुये वचन का पालन करेगे ।'

सचिव ने कहा, 'और यदि मालवा के गयासुद्दीन खिलजी ने हम पर पहले धावा कर दिया और जौनपुर दिल्ली के बादशाह के डर के मारे फिर बगाल भाग गया और हम खिलजी से लडाई मे उलझ गये, उसी समय बादशाह ने जौनपुर पर आक्रमण कर दिया; तब हम यदि जौनपुर की सहायता न करे तो लिखे हुये वचन को भग करने का अपराध हमारे सिर आयगा या जौनपुर के सिर जायगा ?'

निहालसिंह उत्साह के साथ बोला, 'हम दोनों मोर्चो पर युद्ध कर लेंगे।'

मानसिंह ने निर्णय किया, 'ऐसी परिस्थिति मे हम दो मोर्चो पर लड़कर अपने बल को क्षीण नही करेगे ।'

मन्त्री और सचिव ने समर्थन दिया । निहालसिह निर्णय को समझने की कोशिश करने लगा ।

मन्त्री ने कहा छोटा सा काम और रह गया है । बैजू गायक को आज सवेरे ही विदाई दी जानी थी । उसने नही ली । कुछ सनकी-सा है । कहता है ग्वालियर मे ही रहूँगा , हमारे चिट्ठे मे इतना उकास- नही है कि एक ऐसे गायक और उसके साथ वाली वैसी गायिका और चित्रकारिणी को मासिक वेतन पर रख सके । आजकल तो हमको अपनी नव वचन सेना पर खर्च करनी पड रही है ।

राजा हँसकर बोला, 'मेरे चिट्ठे मे कमी करके उन दोनों कलाकारो का वेतन बाँध दो। राज्य है काहे के लिये ? प्रजापालन, कला की रक्षा और बढोत्तरी के ही लिये न ? प्रजा और कला, दोनो के लिये हमे अपने प्राण दे देने के लिये तैयार रहना चाहिये। इन दोनों की रक्षा का ही तो दूसरा नाम धर्म का पालन है। कहाँ है आचार्य विजयजङ्गम ?'

मन्त्री ने उत्तर दिया, 'किले के भीतर जो सरोवर बन रहा है उसकी मजदूरी से नही लौटे है।'

विजय को 'कायक'—शारीरिक श्रम मे इतना विश्वास था कि अपना पसीना बहाये वह किसी से कभी कुछ नही लेता था।

'कितना बडा कलाकार और पडित है वह। राज्य से कुछ नही लेता। बीणा सुनाने के बदले मे एक कौडी नही लेता। कहता है अपनी रक्षा के पल्टे मे बीणा को सुना देता हूँ। परन्तु आय की कमी को शारीरिक श्रम से पूरा करता है। एक से अब तीन हो जायेगे। इनकी आजीविका का प्रबन्ध तो, मन्त्री जी, राज्य की ओर से होना चाहिये राजा ने कहा।'

मन्त्री सहमत नही हुआ,—'महाराज, आपके और मन्त्रियो के चिट्ठे मे कुछ कटौती करके ही प्रबन्ध किया जा सकेगा, वैसे तो नही हो सकता।'

'करो। अपने चिट्ठे के सम्बन्ध मे मैने पहले ही कह दिया है।' राजा ने मुस्करा कर कहा।

निहालसिह की समझ मे राजा के दोनो निर्णय अब आये। उसने नीचा सिर कर लिया।

द्वारपाल ने आकर सूचना दी, 'राई गाँव से पुजारी जी आये है। दर्शन करना चाहते है।'

राजा ने अनुमति दी। द्वारपाल पुजारी लाने को भेजा गया। परस्पर अभिवादन के बाद पुजारी से राजा ने कुशलवार्ता पूछी।

पुजारी ने कहा, 'श्रीमान ने कई वार वचन दिया कि राई आकर शिकार खेलेंगे। अब तो साथ लेकर ही टलूंगा ग्वालियर से।'

'क्षमा करना शास्त्री जी, राज्य की व्यवस्था को विलकुल ठीक अवस्था मे स्थापित करने की धुन मे शिकार को भुला सा दिया है। शीघ्र ही आने का उपाय करूँगा। वैसे भी राज्य भर का एक दौरा तो जाडो-जाडो मे मुझको करना ही है, राई भी आऊँगा, अर्थात यदि इस बीच मे किसी शत्रु से चटक न गई और युद्ध मे उलझ न जाना पडा तो।'

'युद्ध तो महाराज, 'छलागे भरकर आ रहा है।'

'कैसे ? कहाँ से शास्त्री जी ?'

'अभी तो उसकी भूमिका हमारे गाँव में उत्तर से आई है। चाहे चली वह अन्तर्वेद से हो या मालवा से।'

'पहेली से बूझ रहे हो ! स्पष्ट कहो शास्त्री जी।'

पुजारी ने विस्तार के साथ पूरी कथा सुना दी।

मन्त्री ने कहा, 'महाराज, ये लोग अन्तर्वेद से नही आये होगे। कालपी और इटावा अपने मित्रो के हाथ मे है। ये लोग तुर्क या पठान सवार मालवा के खिलजी के सिवाय और किसी के नही हो सकते।'

बात को निखारने के लिये मानसिह बोला, 'इस बुरे काल मे चार लुटेरो का कही से भी आ जाना सम्भव है।'

पुजारी ने विनय की,—'महाराज, लुटेरे तो कही से भी आ सकते हैं परन्तु उन सुन्दर लड़कियो का अपहरण करने वे किसी शक्तिशाली की आज्ञा पर ही आये होगे वहां।'

राजा ने पुजारी पर प्रश्न-सूचक दृष्टि की मानो उन लडकियों के सम्बन्ध मे और जानना चाहता हो।

पुजारी ने वतलाया,—'मैने पिछले जेठ के महीने मे और पीछे भी उन लड़कियो के लक्ष्य-वेध की कुशलता के विषय मे, कुछ कहा था।

उनकी सुन्दरता के विगय मे या तो कवि कुछ कह सकता है या कुशल चित्रकार और, मै इनमे से एक भी नही।'

राजा समझ गया और समझने के साथ ही कुछ लजा भी गया।

निहालसिह बोला, महाराज का राई गाव पधारना आवश्यक हो गया है। जनता के मन मे विश्वास का सचार हो जायगा, शत्रु सुनकर काप जायगा और महाराज नाहर अरना इत्यादि का शिकार भी खेल लेगे।'

राजा ने अपना निश्चय सुनाया,—मै कल ही राई की ओर यात्रा करूँगा। निहालसिह अपने दल को साथ ले चलेगा। खाने-पीने की सामग्री की पूरी व्यवस्था यही से लेकर चलो।'

[२३]

एक पहर दिन नही चढा था जब गाव के अधिकांश स्त्री-पुरुष खलिहानो मे पहुँच गये। एकाध मे दॉय भी होने लगी थी। अटल ने बैल चलाये, निन्नी और लाखी भुट्टो को सकेलने-वगोडने मे लग गई। पुजारी हाँफता हुआ-सा तेजी के साथ आया। दूर से ही चिल्लाया, 'अरे ओ! अरे ओरे !! थम जाओ !!! महाराज की सवारी आ रही है !!!!'

खलियानो मे जो लोग काम कर रहे थे सब थम गये। पुजारी ने पुकार को दुहराया। स्त्री–पुरुष सरपट उसके पास आ गये घेर लिया। उनके चेहरो पर उत्सुकता और अल्हाद की रेखाये फैल गई।

'कब ?' उन लोगो ने पूछा।

'अरे अभी आ रहे है पीछे आ रहे है। अब आते ही होगे बन्द करो काम। बड़े भाग्य से राजा के दर्शन होते है।'

'धन्य हो पुजारी बाबा आप ! हमारा तो भाग्य जाग गया अब काम नही करेगे। चलो रे सब दर्शन करने।'

'अरे ऐसे नही। मूर्ख हो न ! जल्दी से नहाओ। थालियो मे दीपक सजाओ। जब महाराज आवे तब उनकी आरती उतारो। हमने मन्दिर के पास गेदा के कुछ फूल पौधे लगाये है।' उनमे से कुछ फूल ले लो। अच्छा, नही। निन्नी और लाखी की थालियो के लिये हम तोड देगे फूल। नही तो तुम लोग सारे पौधे ही उखाड कर फेक दोगे।

'हां उजालेगे घी के दिये, पर थालिया तो सबके पास है ही नही. कचुल्ले चाहे सबके यहा निकल आयें।'

'अच्छा, जिसके पास जो निकल आवे उसी मे घी के दिये रखकर आरती उतारना। राजा भगवान का अवतार या पूर्वजन्म का योगी होता है भला। नहा-धोकर अच्छे कपडे पहिनकर गाँव के बाहर खडे हो जाना स्वागत करने के लिये।'

'कपडे अच्छे कहाँ से लावे ?'

'अच्छा जैसे हो वैसे ही सही। नटो से उधार ले लेना। अब मै मन्दिर जाता हू। वही तो ठहरेगे राजा।'

'कब तक पधारेगे राजा ?'

'दो–तीन घडी के भीतर। चल पडे होगे इस बेला तो वे। घोडे कुदाते आ रहे होगे दलबल के साथ। देखूँ कौन लुटेरा आता है यहाँ ?'

पुजारी उतनी ही तेजी के साथ मन्दिर की दिशा में चला गया।

गाव वालो के लिये जैसे नदी मे यकायक बडी बाढ आ गई हो और किसी तरह सम्भाले न सम्भलती हो। इधर-उधर भागने दौडने लगे। नहाने गये। जैसे कुछ वस्त्र उनके पास थे, धो निचोडकर उनको सुखाया और पहिन लिया। पुजारी ने निन्नी और लाखी को थोडे से फूल दिये।

निन्नी और लाखी के उत्साह का उफान कम हो गया। उनको मालूम हो गया कि स्वागत का लगभग सर्वांश उनके ही सिर है। 'लहगे मोटी छीट के, परन्तु धोने पर भी भदरंगे, कही उनकी फटनो पर

गांठे लगी हुई। चोलिया रङ्ग-बिरङ्गी, परन्तु मोटे कपड़े की। ओढ़नी लाल, पर वह भी मोटी-झोटी।

लाखी ने सुझाव दिया, 'नटो से उधार ले लें बढ़िया चुन्हरी ?'

निन्नी सोचने लगी।

लाखी ने कहा, 'उनके पास कुछ गहने भी है।'

'तुनने देखे है ?' निन्नी ने पूछा।

'हाँ,' उसने बताया, 'कल दिखलाये थे। देखते ही आखो मे चका-चौंध लग गई।'

निन्नी फिर सोचने लगी। लाखी उसका मुंह ताकने लगी।

निन्नी बोली, 'नटो से कपड़े या गहने उधार लेकर नही पहिनना चाहिये-भाग्य मे होगे तो अपने पसीने की कमाई के पहिनेगे।'

'वे लोग देने को तैयार है। कहते थे। पिल्ली बढ़िया कपड़े पहिन-कर खड़ी होगी आरती उतारने और हम दोनो के हाथ होगे ये चिथड़े गुदडे से।'

'अपने ऐसे ही अच्छे। कपडो पर तो राजा इनाम देगा नही। नट-नट-बेड़िये ही हैं और हम लोग, हम लोग।'

'तुम्हारी तो सनक है जब जैसी उखाड़ पड़े।'

'तो क्या नटिनी बन जावे ? डांग-डूँगर मे ये जो तितलियाँ उड़ रही है क्या वैसी बनावट बनाले ? राजा से क्या बात छिपी रहेगी कि पिल्ली नटिनी है ? राजा हम दोनो को हुरकिनी बेड़नी समझ बैठेगा।'

'तो तुम मेरे लिये उनसे उस तरह की एक ओढनी मोल लेने की बात क्या कहती थी।'

'अरी पगली, बुरा मान गई क्या ? व्याह के समय पहिनाऊँगी तुमको उस तरह की ओढनी। पर इस अवसर पर न तो मैं पहिनूँगी और न तुमको पहिनने दूँगी। राजा को अपना जौहर दिखलाऊँगी। तीरकमान से।'

निन्नी ने उसके गाल मींड दिये। लाखी के चेहरे की तमतमाहट चली गई।

भोजन करते करते और थालियो, कचुल्लो मे दीपक सजाते-सजाते दो घडियाँ निकल गई। पुरुष गाँव के बाहर इकट्ठे हो गये। स्त्रियाँ घरो से बाहर नही निकली थी। अटल दौडता हुआ आया। टटिया के बाहर से पुकार लगाई,–'अरी चलो री सवारी आ गई।'

उन दोनो ने दीपक जला दिये हाथ और आचल की ओट मे थालियों को लिये गाव के बाहर आ खडी हो गई और स्त्रियाँ भी आ गईं। पुरुष एक तरफ खडे हो गये, स्त्रियाँ एक तरफ। उन्ही मे नट वर्ग भी था। पिल्ली बहुत तडक–भडकदार पोशाक मे आई। उसकी थाली भी सबसे अच्छी थी।

राजा घोडे पर सवार धीरे-धीरे इन लोगो की ओर आया। उसके पीछे निहालसिंह था। कुछ दूरी पर पीछे घुडसवारो का छोटा सा दल हाथी नदी मे छोड दिये गये थे।

पुरुषो की पहिचान मे भी जब राजा नही आया था, उसी क्षण से उन्होने सिर झुकाकर हाथ जोड लिये। स्त्रियो ने घूँघट डालने और खोलने शुरू कर दिये। लडकियाँ मुह उघाडे थी। निन्नी और लाखी के हृदय धड़क रहे थे। निन्नी नियन्त्रण के लिये कठोर प्रयास कर रही थी।

राजा और भी निकट आया। घोड़ा आबदार था। तेज होने के लिये लगाम को चबाये डाल रहा था। सईस बगल मे जरा हटकर चल रहे थे।

पुरुष वर्ग मे पुजारी थाल मे माला, चन्दन, हल्दी, चावल लिये सबसे आगे बढा। राजा घोडे पर से उतर पडा। सईसो ने घोड़े को थाम लिया। राजा ने ब्राह्मण को प्रणाम किया। उसने चिल्लाकर आशीर्वाद दिया। मानसिंह के चौडे माथे पर चन्दन-तिलक लगाया और उसकी झुकी हुई गर्दन मे माला डाल दी।

मानसिंह स्त्रियों के सामने आया उन्होने उसकी आरती उतारी। उनके फटे हुये मोटे मैले कुचैले कपडे देखकर उनके मन मे उठा—मै इनका राजा हूं ? इनका राजा ???

निन्नी स्थिर हो गई थी। आरती के लिये उसने दोनो हाथों से थाली बढाई। राजा के सिर पर बढिया, रेशमी, रंग-बिरगी मुडासा था जिस पर जडाऊ कलगी और लिपटी हुई मुक्तामाल। गले मे सोने का रत्न जटित हार।

निन्नी ने अपनी बडी-बडी आँखो की लम्बी बरौनिया एक क्षण के लिये ऊपर को की। यह है राजा ' भरी हुई साचे मे सी ढली हुई देह। ऊँचे कन्धे धनुप-बाण कन्धे पर और ढाल पीठ पर। लम्बा खड्ग कमर मे। वीर होगा यह राजा। नाहर और अरनो को मार देने का बल होगा इसमे ! तुर्कों को मार भगाने की शक्ति होगी इसके कलेजे और हाथो मे !!! उसने सोचा। आँखे नीची पड गई।

यह कौन ? यह कैसे ? राख के ढेर मे चिनगारी कहा से आई ? इस सडियल गांव मे ऐसा सौन्दर्य !! राजा ने प्रश्न सूचक दृष्टि पुजारी की ओर की।

पुजारी ने उत्साह के साथ-इतने उत्साह के साथ कि जितना उसको कभी अनुभव न हुआ होगा-कहा, 'महाराज, इस लडकी का नाम मृगनयनी है। गाव मे इसको लोग निन्नी कहते है। यही है हमारी वह कन्या जिसने एक-एक तीर से बड़े-बडे नाहर अरने भैंसे खीसो वाले सुअर मार गिराये है। ऐसा निशाना लगाती है कि आपके सामन्त भी चकरा जाये। गाती भी बहुत अच्छा है हमारी निन्नी।

निन्नी ने क्षणखण्ड मे पुजारी की ओर देखा, होठ जरा से सकुचित किये, मानो कह रही हो क्या बके जा रहे हो ?

राजा मुस्कराकर बोला, 'शास्त्री जी धन्य है यह गाँव जहा सब गुणो से सम्पन्न मृगनयनी जैसी स्त्री हो।'

पुजारी ने तुरन्त टोका, 'महाराजाधिराज, मृगनयनी कुमारी कन्या है।'

उमग भरी हँसी के साथ राजा ने कहा, 'हो हो [illegible] कौन है यह ?'

पुजारी ने उत्तर दिया, 'गूजर ठाकुर। यह [illegible] है। अटलसिह इसका नाम है। बडा अल्हड है-पुजारी [illegible] कुछ और भी कहना चाहता था।

एक बुड्ढे ने टोका,—'अरी, चुप खडी हो, जैसे तुम्हारे होठों को किसी ने सी डाला हो! सामने हमारा रक्षक, हमारा राजा खडा है, और तुम तिडी भूल गई!! कुछ गाना वाना आता है या बिलकुल गवार ही हो!!! देखो कैसा सलोना है हमारा राजा!!!'

निन्नी ने एक बार मानसिह की ओर देखा और सिर नीचा कर लिया

मानसिह ने भी देखा और उन आखो को बार-बार देखने का चाव जागा।

राजा बोला, 'मृगनयनी, तुम्हारे तीरो की परीक्षा लूंगा। ग्वालियर तब लौटूंगा जब तुम्हारे लक्ष्यवेध की परीक्षा कर चुकूंगा।'

निन्नी ने नीचा सिर किये हुये उसकी आरती उतारी। थाली मे एक फूल था। आँखो को ऊँचा करके उसके मुडासे पर डाला। फूल नीचे गिर गया। राजा ने उसको उठाकर अपनी पगडी मे खोस लिया। वह वही खडा रहना चाहता था। स्त्रिया गा उठी। लाखी ने आरती के लिये थाली आगे बढाई।

पुजारी ने व्याख्या की, 'महाराज, इसका नाम लाखारानी है; कहते हम लोग इसको लाखी है यह अहीर है। कुमारी है। बडी बहादुर है। इन्ही दोनों लडकियो ने उन दो वैरियो को मार गिराया था और दो को भगा दिया था। यह भी बडा अच्छा निशाना लगाती है।'

'देखूंगा, राजा मुस्कराते हुये बोला, 'इन दोनों कुमारियो ने तो रामायण महाभारत का युग सामने लाकर खड़ा कर दिया।

लाखी ने आखे खोलकर मानसिह को देखा। मुस्कराकर आरती उतारी और उसकी पगड़ी पर फूल फेका जो नीचे जा गिरा। उसी समय निन्नी अपनी स्वाभाविक निर्लज्जता को दवाती हुई मानसिंह के सामने थाली लेकर आ गई। लाखी वाले फूल को मानसिह ने नीचे से नही उठा पाया। निन्नी ने देखा, सवने देखा। मानसिह को उसके वस्त्रो पर आश्चर्य हुआ। इस गाँव मे ऐसे कपडे ! परन्तु नट–नटनियो की वेशभूपा ने उसको वतला दिया कि ये वास्तव मे कौन है। तो भी उसने पुजारी से पूछा, 'यह कौन है ?'

पुजारी ने नही वतला पाया। नटो की नायकिन तुरन्त आगे बोली, 'महाराजाधिराज, यह नट जाति की है। मेरी लडकी कुआँरी है अभी। ऐसे खेल करती है कि जिसका ठिकाना नही। हम लोग अपने खेल महाराज को दिखलायेंगे।'

उसकी आरती को स्वीकार करके मानसिंह नटो के समीप एक क्षण भी नही ठहरा।

कहा, 'तुम लोगो का भी खेल देखूँगा, मै यहा कई दिन ठहरूँगा।'

पुजारी ने विनय की, 'अब महाराज, मन्दिर की ओर पधारना होवे। वही बरगद के नीचे डेरा लगेगा न ?'

'हाँ शास्त्री जी, उसी के लगभग।' राजा ने उत्तर दिया।

राजा कुछ देर वही ठहरना चाहता था परन्तु ठहरने के लिये कोई कारण नही था। स्त्रियाँ भोडी तरह एक ग्राम्य गीत गा रही थी। लाखी का स्वर उस गीत मे कुछ मिठास डाल रहा था। निन्नी नही गा रही थी।

राजा ने कहा, 'यहाँ की स्त्रियाँ तो शास्त्रीजी, खूब गाती है।' राजा ठिठका।

पुजारी ने झझोड़ सी लगाई, 'महाराज मन्दिर को सिधारें, वे सव वही आकर और भी गीत सुनावेगी।'

राजा को वहाँ से चलना पडा। चलते-चलते उसने एक वार फिर मृगनयनी की ओर आंख फेरी। निन्नी को कनखियो देखकर आँखे नीची करली। मन्दिर पहुँचकर राजा रुक गया। खण्डित मूर्तियाँ इधर-उधर विखरी हुई पड़ी थी। उन्मेप की विजली सी कौंध गई मानो खण्डित मूर्तियो ने चुपचाप उसकी तीव्र भर्त्सना की हो।

दृढस्वर मे बोला, 'शास्त्री जी मै इस मन्दिर का जीर्णोद्धार करूगा और—'

उसकी स्मृति मे दिल्ली की कुतुव मीनार के सामने गड़ी हुई लोहे की भारी-भरकम ग्लाक पर अनङ्गपाल तोमर प्रथम का खुदवाया हुआ वचन उभर आया—मै इस भूमि को फिर सच्चे अर्थो मे आर्यावर्त वनवाऊँगा।

मानसिह हिल गया, उसका गला भर आया। नियन्त्रण किया। गला साफ करके धीरे से उसने कहा,'मन्दिर को शीघ्र वनवऊँगा।

'महाराज की जय हो। महाराज सब कुछ कर सकेगे।' पुजारी ने आशीर्वाद दिया।

राजा की आँख एक यक्षिणी की खण्डित मूर्ति पर गई। गाव की दिशा मे ध्यान उचटा।

राजा पुजारी से पूछना चाहता था, 'क्या स्त्रियाँ यहाँ गीत गाने आवेगी।' परन्तु साहस नही हुआ। शिविर की योजना में लग गया।

अटल इत्यादि पुरुप राजा के शिविर का तमाशा-हाथी, घोड़े सैनिक इत्यादि—देखने के लिये मन्दिर की ओर चले गये। स्त्रियाँ अपने-अपने घर लौट आईं।

निन्नी और लाखी प्रसन्न थी। निन्नी अपने किसी अनजाने स्पन्दन को दवाकर लाखी को और अधिक प्रसन्न करने का प्रयास कर रही थी।

निन्नी ने लाखी के कन्धे से झूलकर कहा, 'मुझको तो जकड़ सी लग गई थी, तुमने वहुत अच्छा गाया।

'तुम तो ध्यान मे मग्न हो गई थी। सोच रही होगी हमारे बरसाये हुये फूल को राजा ने धूल में से उठाकर माथे पर चढा लिया।'

'अरी तुम्हारे फूल को भी पगडी मे खोस लेते, पर उधर से वह फूहड़ पिल्नी आ गई न मेढकी की तरह फुदकती हुई। छाती को कितनी निर्लज्जता के साथ उचका रही थी! उस पर वह चुन्हरी ऐसी लगती थी जैसे कानी के टेट पर सिन्दूर की बिन्दी !!

'अरी तो मेरा कन्वा क्यो तोडे डालती है?' तुम तो निगाह नीची किये थी, तुमने वह सब कहाँ से देख लिया?'

'आँखे नीची थी पर मुदी तो थी नही।'

'और कनखियो भी कुछ देखा।'

'तुम तो ऐसी पुतलियाँ फैला फैलाकर देख रही थी जैसे राजा को बरौनिया और पलको के भीतर भर लेने के लिये अँगूठो पर तुल गई हो।'

'ह! ह!! ह!!! ह!!!! उनको बरौनियो से बाधकर पलको के भीतर नो तुमने भरा है। मैं यही तो सब परख रही थी मेरी ननदबाई। आँखो मे भर कर फिर कहा ले गई उनको?' लाखी ने निन्नी के हृदय पर उँगली रक्खी।

'अरी कैसी है तू! कहां राजा भोज कहा गगू तेली !!'

'हॉ हॉ हाँ आँ! शास्त्री जी, धन्य है यह गाव जहा सब गुणो से सम्पन्न मृगनयनी जैसी स्त्री हो !! पुजारी बाबा ने टीप जमाई महा-राजाधिराज, मृगनयनी कुमारी कन्या है !!!'

निन्नी ने उसका मुह बन्द करने के लिये झपटकर अपनी गदेली बढ़ाई। लाखी हँसती हुई भागी। निवारण करती हुई बोली, 'दूर खडी रहो। पहले मेरी बात पूरी सुन लो अपनी भुजाओ के बल भरोसे बहुत न रहना, हाँ आँ।'

निन्नी ने अपने होठ पर बार-बार आने वाली कम्पनमयी मुस्कान को मोटी ओढ़नी के छोर से नाक तक छिपा लिया परन्तु आखे छल करती रही।

लाखी उसी प्रकार कहती रही, 'पुजारी ने बतलाया—अभी तक कुआँरी है बिचारी। ह! ह !! ह !!! बिचारी ने नयन उठाये और किसी को कोई सन्देशा भेज दिया। राजा की आँखो ने उस सन्देश को अपनी पलकों पर ले लिया। और फिर इन्होने उनको और उन्होने इनको जो कुछ गुपचुप समाचार दिया-लिया सो लाखी ने अपनी आँखे फाड फाड कर देख लिया! और उन कनखियो ने कसर पूरी कर दी। अरी निन्नी मुझसे बने मत।'

'ओ हो हो हो! तुम कही की बडी कवि हो न! तुम्हे तो अपनी बीती आती है सो तुमने बखान डाली। सच बतलाओ लाखी, भैया और तुम्हारे बीच मे कुछ इसी तरह का चलता रहा है न?'

'अरी वाह! कैसी टाली अपनी करतूत मेरे सिर पर!!'

'असम्भव बाते क्यो करती हो लाखी? कहाँ गरीब किसान, कहां इतना बडा राजा!'

'किसान ही तो राजा को बनाता है और फिर गूजर तोमरो से किस बात मे कम है।'

'भाग्य भी तो कुछ होता है न?'

'सो उस नटिनी ने हाथ की रेखाये देखकर पहले ही बतला दिया।'

'रेखाये तो तुम्हारी भी देखी थी!'

'अब तो मुझको विश्वास हो गया। तुम्हारे भैया भी कुछ होकर रहेगे।'

'अभी मे ऐसी बडी बडी अशाये मत बाधो।'

लाखी दौड़कर निन्नी के गले से लिपट गई। गद्गद् हो गई, रो पडी।

हिलकियो मे बोली, 'यदि कालीमोई को अपना सिर भेट करके तुमको ग्वालियर की रानी बनवा सकूँ तो कभी नही झिझकूँगी।'

(२४)

दूसरे दिन मानसिंह ने शिकार का आयोजन किया। आस-पास के गांव से हँकाई करने वाले आ गये। शिकार का खेल और राजा का सङ्ग। वे सब मोद मग्न थे। अटल भी शिकार मे शामिल होना चाहता था परन्तु हँकैया बनकर नही। इससे भी बढकर उसकी कामना थी, निन्नी और लाखी के लक्ष्यवेध-परीक्षण की। राजा से कैसे कहे? अपनी कामना प्रकट करने के लिये उनके पास तक पहुँचे ही कैसे? राजा ने निन्नी की कितनी प्रशसा की थी! उसके नाते गाव को धन्य कहा था!! तो उनकी परीक्षा कब हो? घड और गे दो को फोडने की जगह यदि निन्नी और लाखी कही, अरने या नाहर को फोड दे तो क्या बात! और यदि मैं भी एकाध खिसारा सुअर अपने तीर से पटक लूँ तब तो सभी कुछ बन जाय!! उसने सोचा। पुजारी से कहा। विनय सी की। सोचने लगा। उसी समय पुजारी के पास निहालसिह आया। मूँगिये रङ्ग की शिकारी पोशाक पहिने था।

आते ही बोला, 'महाराज की आज्ञा है कि उन लडकियो के लक्ष्य-वेध की परीक्षा आज ही इसी शिकार मे ली जाय।'

पुजारी अपने महत्व को बढाने के लिये और अधिक बिचार मग्न दिखलाई पडा। अटल कुछ कहने के लिये फडफडाने सा लगा। निहालसिह व्यग्र था। पुजारी ने तौलते हुये से कहा, 'लडकियां ही है। शिकार तो उन्होने खेली हैं परन्तु ऐसी बडी हँकाई मे जोखिम बहुत है।'

निहालसिह ने व्यग्रता प्रकट की, 'मै क्या करूँ। आप चलकर महा-राजा को समझा दें। वैसे उन्होने कहा है कि लडकियो को कही उनके निकट ही मचान पर बिठला दिया जायगा, जहां से वे बिना किसी संकट के तीर चला सके। शीघ्र निश्चय करिये।

पुजारी के पहले ही अटल ने निश्चय व्यक्त किया, 'वे नही डरती। बीहड भयङ्कर जङ्गल मे पैदल घूमती है। उन्हे मचान-क्चान नही चाहिये।'

'तुम कौन हो जी ?' निहाल ने पूछा।

'मृगनयनी का भाई, अटलसिंह मेरा नाम है। मै शिकार खेलना चाहता हूँ।' अटल ने उत्तर दिया।

निहाल उपहास मे हँसा। सोचा यह शिकार खेलेगा ! राजा और सीमन्तो की बराबरी करना चाहता है !!

पुजारी को कहना पडा, 'अच्छी बात है। जाओ अटल, दोनो को यही भेज दो। यहा से मचान पर चली जायेंगी। कह दो महाराज से, रावजी, वे अभी आती है। पर उनके पास मूंगिये रङ्ग के कपड़े नही है।'

'मूँगिये रङ्ग के तो मेरे पास भी नही है।' अटल ने चलते–चलते अपनी टीप जमाई।

निहाल मुस्कराकर 'अच्छा' कहते हुए चला गया। अटल गाव की ओर सरपट भागा। निन्नी और लाखी घर पर थी।

'अपने हथियार सम्भालो ! जल्दी करो !! राजा ने शिकार के लिये बुलाया है !!! तुम्हारे निशाने की परीक्षा होनी है !!!! हथियारो को माजकर चमकदार बनालो !!!!!' अटल ने कहा।

मन की हिलोड़ को दबाकर निन्नी बोली, 'हथियार तो मँजे रक्खे है।

लाखी बगल देकर मुस्कराई। निन्नी पर जरासी आख चलाई। निन्नी दूसरी तरफ देखती हुई हथियार उठाने घर मे चली गई।

अटल ने लाखी से कहा, 'तुम्हे भी बुलाया है। खडी क्यो रह गई? मुझे भी जाना है।'

लाखी भी घर मे चली गई। निन्नी को पकडकर झँझोड डाला। धीरे से बोली-'कहो कैसी रही ? '

'अरी कोरी परीक्षा है। क्यो मेरी देह को नोचे डाल रही है।'

'कोरी परीक्षा नही है। भाग जागने वाला है'

'यदि परीक्षा मे खरी न उतरी ? बाण चूक गये तो ?'

'तुम हारोगी तो भी जीतोगी। पर हारोगी नही।'

'बडी ज्योतिषिन हो न ! उधर ज्योतिषी जी आगन मे खडे है बडी उतावली मे !!'

'गड़बड बकी तो दो ठूँसे दूँगी मुह मे।'

'बड़ी है न सो करलो मनचाहा उत्पात। लो अब राम का नाम लेकर उठाओ और बाधो अपने–अपने हथियार। बर्छी भी रक्खेगी।'

उन्होने अपने–अपने हथियार उठाये और बाधे। लाल ओढनी को चोली पर कसते हुये सिर को ढक लिया। गाँठो वाले भदरगे लँहगे की कच्छ लगाली। द्वार पर घोडे की आहट मिली। निन्नी ने मुस्कान को दबाया। लाखी हँस पडी। बोली, 'देखा ! राजा को चैन नही है। सवार भेजा है।'

'निन्नी घूँसा तानकर उस पर झपटी और रुक गई। कहा, 'तुम बहुत बुरी हो।'

दोनो अपनी-अपनी बर्छिया लिये हुए आँगन मे आ गईं। अटल मूँगिया रङ्ग के कपड़ो की पोटली लिये हुये बाहर से आया। वह अपनी उमग भरी मुस्कानो को सँभाल ही नही पा रहा था।

बोला, 'शिकार मे लाल कपडे नही पहने जाते। राजा ने ये भेजे है पहिनो इन्हे जल्दी।'

निन्नी ने बिना किसी मुस्कान के कहा, 'अभी तक तो मैंने लाल कपडे पहिने ही शिकार खेली है।'

'अब इन्हे पहिनो, नही तो राजा को बुरा लगेगा।' लाखी हँसती हुई बोली।

अटल ने पोटली खोली। अच्छे बुनाव की दो धोतियाँ, दो छोटे-छोटे मुडासे और एक लम्बा कुर्ता।

अटल ने कहा, 'धोतियां तुम्हारे लिये है, कुर्ता मेरे लिये।'

अटल ने कुर्ता पहिन लिया। निन्नी और लाखी घर मे जाकर धोतियाँ पहिनने लगी।

लाखी बोली, 'राजा ने मूँगिया रग की चोली क्यो नही भेजी?'

निन्नी की आख पर ज़रा-सा ताव आया। फिर हँस पडी।

'राजा चोली पहिनता तो भेज देता।' निन्नी ने कहा।

वे दोनो नये कपडे पहिनकर अटल के सामने आ गई।

अटल बोला, 'अब जची! और देखो मै भी ठीक रहा।'

निन्नी ने मुड़ासे को उतार कर हाथ मे ले लिया।

'अच्छा नही लगेगा।' उसने कहा।

'क्यो नही लगेगा।' लाखी बोली, 'पुरुष का सा काम करने चली तो पुरुष जैसा बनना पडेगा। रक्खो मुडासा सिर पर।'

निन्नी ने वैसा ही रख लिया। आरसी थी नही जिसमे अपने चेहरे मोहरे को देखती। उल्टा-पुल्टा इखरा बिखरा सा हो गया। केशो की एक लट आगे झाक उठी, एक दो कानो पर लटक आई।

वे दोनो नये कपडे पहिनकर अटल के साथ मन्दिर जा पहुँची। वहां से निहाल उन तीनो को बरगद सी थोडी दूर राजा के शिविर के पास ले गया। राजा चल पडने के लिये तैयार था। हाका करने वाले अपने ठिकानो के लिये पहले ही जा चुके थे।

राजा ने उन दोनो की वेष भूषा को उत्सुकता के साथ देखा। निन्नी के मुडासे पर आंख जा अटकी। निन्नी ने एक बार ऑख उठाकर नीची करली। दूसरी दिशा में मुह फेरकर देखने लगी।

राजा ने पूछा, 'घोड़े पर चढना जानती हो?'

'नहीं।' उत्तर मिला।

'अच्छा चलो। मैं भी पैदल ही चलूंगा।'

निन्नी लाखी की ओर देखने लगी।

वे सब जगल मे लगान के लिए चल पडे।

घने पहाड़ी जङ्गल के एक ठौर पर मानसिह अपने कुछ साथियो सहित रुक गया। मार्ग दर्शक साथ था। लगान कहा कहा है, किसको कहाँ वैठना है, शीघ्र निश्चित हो गया।

मानसिह ने मार्ग–प्रदर्शक से कहा, 'इन दोनो को मेरे निकट वाले मचान पर विठला दो।'

अटल के लिये भी स्थान तय हो गया था।

निन्नी वोली, 'सव ठौर मेरे देखे हुये है।'

'सारा जङ्गल! मानसिह ने मुस्कराहट के साथ आश्चर्य प्रकट किया।'

लाखी ने कहा, 'हाँ महाराज।'

'तो भी,'—मानसिह ने मार्ग-दर्शक को संकेत किया, 'तुम इनको मचान पर सुरक्षित विठला देना।'

वे दोनो मार्ग-दर्शक के साथ चली गई। मानसिह अपने मचान पर जा वैठा और लोग अपने-अपने मचान पर सतर्कता के साथ जा रुपे।

जव निन्नी और लाखी नियुक्त स्थान पर पहुँची, मार्गदर्शक ने मचान पर चढ़ जाने के लिये सकेत किया।

निन्नी ने खुसफुस स्वर मे अस्वीकार किया, 'मचान पर नही वेठेगी। यहाँ से तीर के लिये निशान अच्छा नही वैठेगा।'

'राजा की आज्ञा है।'

'राजा की आज्ञा से ही तो नाहर और अरना विधकर गिर नही जावेगा।'

'नीचे प्राणो की जोखो है।'

'चिन्ता मत करो तुम जाओ।'

'राजा क्रुद्ध होगे।'

'किससे? मुझसे? चिन्ता मत करो।'

'तुम लोगों से नही, मुझ से। आफत मे पड़ जाऊँगा।'

'डरो मत। चढ जाओ किसी पेड पर हँकाई होने वाली होगी।'

मार्ग-दर्शक अपना माथा टटोलता हुआ चला गया और थोडी दूर एक वडे झाड पर चढ गया।

'अब ?' लाखी ने धीरे से पूछा।

निन्नी ने उत्तर दिया, 'यह पेड आड़ के लिये बहुत अच्छा है। बर्छिया इससे टिका दो। मकान के ऊपर तीर चटा लो। तरकश मे दो-दो तीन-तीन झट-पट निकाल लेने के लिये तैयार रक्खो। एक दिशा मे मुह करके तुम खडी हो जाओ, दूसरी मे मैं। आडे ओटें अच्छी ही है। जानवर जब बहुत निकट आ जावेगा, तब कही देख पावेगा।'

'देखे आज कुछ निकलता है डाग मे से या नही।'

'अवश्य निकलेगा। कई दिन से हम लोग जंगल में आये नही है। उस पर हो रही है वडी भारी हँकाई। शिकार की कमी रह ही नही सकती।'

'वह सुनो, क्या बज रहा है।'

दूर से ढाल की आवाज सुनाई पडी। दोनो सतर्क हो गई।

हाँके वालो ने काफी दूर से जगल को घेरकर हँकाई की। हांकने वालो की संख्या वडी थी, इसलिये एक वडे क्षेत्र के पहाड और झाडी को ढंग से घेरने मे सुविधा रही।

लगान दूर-दूर तक लगे हुये थे और इतने थोडे-थोडे अन्तर पर कि छोटा सा जानवर निकले तो दिख जाय।

नाहर, भालू, अरने, तेदुये, सुअर इत्यादि सभी भयंकर पशु ढोलों और रमतूलो की तुमुल ध्वनि के कारण अपने अपने ठियो पर क्षुब्ध हो होकर हिले डुले और हँकैये जहा-जहा होकर उनको निकाल ले जाना चाहते, निकालने लगे।

निन्नी और लाखी के निकट से सबसे पहले मोरे भरभराती हुई निकली, फिर लोमड़ी। इसके अनतर कुछ समय तक कुछ नही आया।

हाकने वालो के बाजो और हल्ले–गुल्लो का शब्द एक बडा घेरा डालता हुआ–सा धीरे–धीरे निकट आता हुआ सुनाई पड रहा था ' कभी किसी दिशा मे अधिक सिमटा हुआ, कभी किसी मे बिखरा हुआ–सा ।

एक दिशा से नाहर के गर्जने की आवाज सुनाई दी । लाखी ने बगल से निन्नी का हाथ कोचकर स केत किया । निन्नी ने स केत से ही उसको जवाब–दिया तैयार हूँ ।

नाहर दूर वाले किसी लगान से निकला था । उसको तीर लगा और वह घायल होकर झाडी मे जा गिरा । उसका गर्जन वहा से आ रहा था ।

यकायक लाखी के सामने से खडबडाहट की आवाज आई । निन्नी ने मुडकर देखा । दोनो ने कमानो पर तीर चढा लिये बडे-बडे चीतलो का एक झुण्ड आया । निन्नी ने तीर चलाने का निषेध किया । चीतल भागते हुए निकल गये ।

'क्यों ? लाखी ने धीरे से पूछा ।

'इन–पर नही ! नाहर या अरने पर ।' निन्नी ने धीरे से उत्तर दिया ।

हांका होता चला आ रहा था । थोडी देर तक उनके पास से कुछ नही निकला—सिवाय दो तीन वन–बिलावों के ।

वन—विलावो के पीछे फिर खडबडाहट का शब्द हुआ । दौनो ने फिर तीर चढ़ाये । अबकी बार साँभरो का झुण्ड था । निन्नी ने फिर मनाकर दिया ।

–'इन पर भी नही ।'

साभरो का झुण्ड भाग गया । दूसरी दिशा के किसी लगान वाले ने उस झुण्ड पर तीर चलाया । गिरने की आवाज आई ।

'यदि अब कोई न आया तो निशाना लगाने को कुछ भी नही मिलेगा ।' लाखी ने धीमे क्षुब्ध स्वर मे कहा ।

किसी और लगान से फिर गरज सुनाई पडी । निन्नी ने सोचा, यह तेंदुये की बोली हो सकती है ।

थोडी देर तक उन लोगो के सामने या निकट से कुछ भी नही निकला । कमानो पर तीर सुधियाये हुए विलम्ब हो गया । कन्धो मे थकावट और पीडा कसक देने लगी । हाथ नीचे करके सुस्ताने लगी ।

उसी समय निन्नी को अपने सामने की झाडी के पीछे पत्तो के दबने की चुरचुराहट सुनाई पडी । झाडी के झांके मे होकर आंख गडाई । परछाही सी जान पडी । परन्तु साफ नही दिखलाई पडा ।

मानसिंह के मचान की दिशा से किसी जानवर के गिरने और खुरो की समेटने फेकने की आवाज आई ।

निन्नी के सामने वाली झाडी के पीछे से एक दबी हुई थोडी हुंकार सुनाई पडी । निन्नी ने डोरी पर तीर चढा दिया । लाखी ने भी मुडकर देखा ।

एक क्षण उपरान्त ही पूरी लम्बाई–चौडाई वाला भरा–पूरा नाहर मानसिंह के मचान की दिशा से गर्दन जरा सी मोडकर देखते हुये आता दिखलाई पडा । निन्नी ने तुरन्त गर्दन का निशाना बाधा और पूरी शक्ति के साथ डोरी को खीचकर तीर छोड़ दिया । अविलम्ब दूसरा चढा लिया ।

नाहर की गर्दन मे तीर धस गया । नाहर ने तड़प और हुंकार के साथ ऊपर को उचाट भरी और जिस ठौर से उचटा था उसी पर गिर कर अपने बड़े नाखूनो मे धरती खोद–खोदकर धूल उडाने लगा । तीक्ष्ण हुंकारे तो निकाल ही रहा था । लाखी उस पर तीर छोडना चाहती थी । निन्नी ने रोक दिया । नाहर अन्तिम सासे लेने लगा । लाखी ने हर्षोन्मत्त होकर निन्नी के सटे हुए कपोल की चुटकी लेने के लिये हाथ बढ़ाया परन्तु हाथ इतना कांप रहा था कि चुटकी लेने मे गले के ऊपर का ही कपडा दबा पाया ।

मानसिंह ने अपने मचान पर से नाहर की दबी हुङ्कारों को सुना। उसने सुअर पर तीर चलाया था। वह मर चुका था। मानसिंह मचान पर से उतर कर यहाँ आना चाहता था परन्तु उसको विश्वास था कि निन्नी और लाखी का मचान पेड की इतनी ऊँचाई पर बँधा होगा कि वे संकट मे पड ही नही सकती।

थोड़ी देर बाद नाहर समाप्त हो गया। हाँका बढता आ रहा था।

लाखी के सामने कुछ दूरी से खडबड और जोर की साँस का शब्द सुनाई पडा। लाखी तैयार हो गई। नाहर पर एक दृष्टि डाल कर निन्नी ने मुडकर तीर सम्भाला। कमान पर तीर चढाया ही था कि एक वडा पूरा अरना भैसा फुफकारे मारता हुआ सामने से छोटी-छोटी झाडियो को रौदता कुचलता आ गया। लाखी ने सिर का निशाना लेकर तीर छोडा, कोई दूसरा निशाना ठीक बैठता ही नही था, तीर अरने के माथे पर पडा और थोडा-सा धँस गया। अरने ने दोनो को देख लिया। झपटा।

जब तक लाखी दूसरा तीर चलावे, निन्नी ने अरने के मस्तक के बीचो-बीच का निशाना लेकर तीर छोड दिया। तीर अपने निशाने पर तो लगा परन्तु इतनी जल्दी चलाया गया था कि पूरी शक्ति को लेकर न छूट सका। माथे की ऊपर हड्डी की एक तह को ही फोड सका। ठठ कर रहा गया। अरने ने जोर की डिडकार लगाई और उनकी ओर पूँछ उठाये हुये आया। लाखी ने दूसरा तीर छोडा। तीर ने उसके नथने को ही फोड पाया। अरना थोडा—सा हिचका। परन्तु अन्तर इतना कम रह गया था कि तरकस मे से तीर निकालकर प्रत्यचा पर नही चढाया जा सकता था। अरने की वडी—वडी लाल आँखो से अङ्गार छूट रहे थे और फुफकार मे से फेन उड रहा था।

निन्नी ने कमान को एक ओर फेककर बर्छी उठाई और अरने की दिशा मे सीधी की ही थी कि वह लपका। निन्नी पेड़ से एक पग आगे

बढ आई। लाखी ने बगल से कमान की डोरी पर तीर चढाया परन्तु छोड़ नही पाया।

सिर को थोडा सा नीचा किये हुये उन दोनो को अपने माथे और सीगो की जड़ से पीसकर फेंक देने के लिये अरना ओर बढा। उन दोनो का कचूमर निकलने के लिये एक क्षण ही और रह गया था कि निन्नी ने पूरे वल और बेग के साथ अरने के माथे पर बर्छी ठोक दी। बर्छी तीर से कुछ ऊपर जाकर लगी। अरना उपेक्षा के साथ बढता चला आया। निन्नी एक हाथ से बर्छी के डाड को पकडे रही और पेड के तने से छोटी सी बगल काट गई। अरना खाई हुई बर्छी समेत पेड से जा टकराया। निन्नी के हाथ से बर्छी छूट गई। मूठ के तने पर अड गई।

अरने के अपने ही धक्के से बर्छी का फल माथे की हड्डियो को तोडता फोडता और भी धँस गया। निन्नी उछल कर पीछे हट गई। उसने अपना छुरा निकाल लिया। लाखी ने तीर कमान को फेककर अपनी बर्छी उठाई और अरने पर हूलना चाहती थी कि अरना लड़खडा कर गिर पड़ा, चौपड़ हो गया। सिर हिलाने लगा और जल्दी-जल्दी फूसने लगा। उसको चक्कर आ रहा था। परन्तु वह मरा नही था।

निन्नी ने उसकी गर्दन का निशाना ताककर छुरे को फेका। वह ऊपर से निकल गया। खन्न से अरने की वगल मे जा गिरा। लाखी ने पूरी शक्ति के साथ उसकी कोख पर बर्छी चलाई परन्तु अरना लड-खडाते पैरो पर भी उठ खडा हुआ और बर्छी एक टाग को छीलती हुई धरती मे धस गई मूठ लाखी के हाथ से सटक गई, । लाखी अपने छुरे को निकाल कर पीछे हटी। उस छुरे के सिवाय उन दोनो के हाथ मे अब और कोई हथियार न था। आतुरता मे फेके हुये तीर कमानो के लिये गाठ मे आधा क्षण भी नही था निन्नी को केवल एक उपाय सूझा।

उसने उछलकर अपनी ओर वाले एक सीग को दोनो हाथो से पकडकर अरने को प्रचण्ड वेग के साथ धक्का दिया। अरना मुड गया, हिल गया और धम्म से गिर गया। निन्नी भी उसके सीग को पकड़े हुए उस पर गिरी परन्तु तुरन्त सम्भल गई। उसका छोटा सा मूंगिया मुडासा झटके के साथ खुलकर अरने पर गिरा-एक छोर अरने पर, बाकी धरती पर।

पीछे से, मानसिह के मचान की तरफ से किसी के दौड़कर आने की आवाज आई। निन्नी अरने को छोड़कर पीछे हटी कि नगी तलवार लिये हुये मानसिह को आते देखा। मानसिह ने उसकी झपट और अरने के भरभराकर गिरने का दृश्य कुछ दूर से देख लिया था। वह अरने की ढिडकार सुनकर मचान से उतर आया था।

अरना फटी हुई आखो अन्तिम फुफुकारें ले रहा था। कुछ दूरी पर नाहर मरा हुआ पडा था।

मानसिह ने मरते हुये अरने पर तलवार उबारी, परन्तु चलाई नही। धीरे से बोला 'मर रहा है।'

नाहर की ओर आंखफेरी। धीरे–धीरे उसके निकट गया। निन्नी और लाखी ने अपने–अपने तीर कमान उठा लिये। पेड से सटकर आ खड़ी हुईं। अरना दूसरी तरफ था।

मानसिह ने नाहर का बारीकी के साथ निरीक्षण किया। नाहर ने केवल एक तीर खाया था। आश्चर्य के साथ उन दोनो के पास लौटा। उनके सामने खड़ा हो गया।

निन्नी उसकी ओर अच्छी तरह देखकर दूसरी ओर देखने लगी। लाखी की दृष्टि कभी अरने पर और कभी जंगल की दिशा मे जाने लगी। अभी हाका समाप्त नही हुआ था।

राजा ने पूछा 'नाहर की गर्दन पर किसका तीर बैठा ?'

निन्नी ने सिर झुका लिया। लाखी ने तुरन्त सामने होकर उत्तर दिया, 'निन्नी–मृगनयनी का।'

राजा ने दूसरा प्रश्न किया, 'अरने के माथे पर बर्छी किसकी खोसी हुई है ?'

लाखी बोली, 'मृगनयनी की ।'

'वाह ! धन्य हो !! तुम दोनों धन्य हो !!! मानसिह के मुह से निकला और उसने अपने गले से सोने का रत्नजटित हार निकालकर निन्नी के गले मे डाल दिया। निन्नी मुह फेरकर पेड की छाल को उङ्गलियो से कुरेदने लगी।

मानसिंह ने कापते हुए स्वर में धीरे-धीरे कहा 'सुन्दरी मृगनयनी, साहस नही होता, संकोच लगता है परन्तु कहे बिना नही रहा जाता। क्या तुमको ब्याह मे पा सकता हूँ ? क्या अपनी जन्म सगिनी बना सकता हूँ ?'

लाखी अत्यन्त कठिनाई से अपने हृदय की धडकन को दबाकर सामने आई। निन्नी पेड़ की छाल को और भी जल्दी-जल्दी खरोचने-कुरेदने लगी।

लाखी बोली 'यह तो इसके भाई बतला सकते है।'

'उनसे भी पूछूंगा। पहले इनके मन की भी जान लूं।' राजा ने कहा।

निन्नो खासी। लाखी इशारे को समझ गई। उससे सटकर खड़ी हो गई।

निन्नी ने धीरे से कहा, 'गरीबो और बडो का जन्म स ग कैसा ?'

मानसिह ने सुन लिया। उसको सुनाने के लिये ही कहा गया था।

मानसिह बोला, 'आदि काल मे सबके पुरखे गरीब ही थे, अपने शौर्य से बढे। शौर्य मे तुम मुझसे कम नही हो।'

'बडे लोग कहते कुछ और करते कुछ और है, ऐसा सुना है कथा कहानियो मे, 'उसी ओट से निन्नी ने कहा। मानसिह ने सोचा इसने शकुन्तला की कहानी कही सुनी है।

बोला, 'तुम्हारे दिये हुये उस फूल को पगड़ी मे खोस लिया था। अब भी वही बाधे हू और सदा वही रहेगा—गङ्गा—यमुना की सौगन्ध खाता हूँ कि जन्म—सङ्गिनी होगी।' मानसिह का स्वर कांप-कांप जा रहा था।

निन्नी ने क्षीण स्वर मे प्रतिवाद किया, 'सौगन्ध मत खाइये।'

'तो कहो, क्या कहती हो सुन्दरी ?' राजा ने हठ किया।

'मै राजाओ की भाषा नही जानती।' निन्नी ने उत्तर दिया।

लाखी यकायक बोली, उस झाडी के पीछे मेरे तीर चले गये थे। ढूंढ़ लाऊँ-' और झाडी की ओर भागी।

'ठहर जा, कहा जाती है लाखी ? तीर तो सब यही है !' निन्नी ने कोमल स्वर मे रोका। लाखी नही मानी।

राजा ने अपना हाथ बढाया, कहा,—'इस भाषा को संसार भर समझता है। अपना हाथ मेरे हाथ मे दो।' गर्दन मोड़े हुये, कनखियों देखते हुये, धड़कते कलेजे और अर्द्ध स्मित के साथ निन्नी ने अपना काँपता हुआ धूल भरा हाथ उसके हाथ मे दे दिया।

बोली, 'मै नही जानती क्या कर रही हूँ। मेरी पत रखना।'

मानसिंह ने तुरन्त कहा, 'परमात्मा मेरा साक्षी है, तुम सदा मेरे हृदय की रानी और जीवन की शोभा रहोगी। समझ गई ?'

'समझ गई।' बहुत धीरे से उसके मुह से निकला।

'क्या कहा ?'

'आज्ञा का पालन करूँगी।'

'मेरी तरफ देखो।'

'लाखी उस झाड़ी के पीछे से झाक रही होगी।'

निन्नी ने अपना हाथ उसके हाथ से छुटा लिया। छुटाते समय गीली आँखो उसकी ओर देखा। मानसिंह के नेत्रो से आभा-सी बिखर रही थी। वह आभा उन गीली आखो मे समा गई।

मानसिंह चिल्लाया,—'लाखी रानीजी, इधर आ जाओ। तीर मिल गये होगे अब तक तो।'

वह झाडी के पीछे से हँसती हुई बोली, 'सब मिल गये। व्याज समेत मिल गये।' और हँसी को गदेली से ढापे हुये आ गई।

मानसिह ने कहा, 'कहाँ है तीर? हाथ मे तो एक भी नही।'

'जहां रहते है वहां है।' उसने निन्नी की ओर देखते हुये व्यङ्ग किया।

'तुम्हारी सखी विकट है।' मानसिंह हँसते हुये बोला।

लाखी ने मुह फेरे हुये पूछा, 'महाराज कब तक ठहरेंगे इस गाव मे?'

'जब चाहो तब चला जाऊँ।'

'वाह! अभी तो इस जङ्गल मे बहुत शिकार है।'

'जीवन का सब सुख पा लिया। तुम सब मेरे साथ ग्वालियर चलो।'

'ऐसे?'

निन्नी मुँह फेरे हुये बोली, 'सुना है ग्वालियर मे जल का बडा कष्ट है।'

'अब तो कुये स्वच्छ हो गये है। कोई कष्ट नही है।' मानसिंह ने कहा।

अरने ने टागे पसारी और समाप्त हो गया। मानसिंह ने उसके पास जाकर देखा।

'तुमने अपने हाथों इसके सीग मोडे और गिरा दिया। अरना बहुत भारी है।।' उसने आश्चर्य प्रकट किया।

कोमल धीमे स्वर मे निन्नी बोली, 'मुझको स्मरण ही नही क्या हुआ और कैसे हुआ।'

राजा ने मुस्कराकर पूछा, 'इतना बल तुम मे कहाँ से आया?'

नीचा सिर किये हुये मुस्कान के साथ उसने कहा, 'राई की नदी के पानी से। हम लोगो की गाँठ मे और है ही क्या?'

'राई गाँव तुमको बहुत प्यारा है ?'

'बहुत। आँखों मे बसा रहता है।'

'ग्वालियर के किले मे तालाब है उसके पानी को देखना।,

'मै अपनी नदी के बिना नही रह सकती।'

'तो ग्वालियर के किले को यहाँ उठा ले आना।'

'सांक को ही ले चलिये यहा।'

'कैसे ?'

'राजा को क्या गाँव के लोग यह भी बतलावे ?'

'गाँव के लोगो को नही, राजा की रानीं को बतलाना होगा।'

'तो नहर काटकर ले जाइये किले तक। मै तो इसी का पानी पियूँगी।'

'ले जाऊँगा। बचन देता हूँ।'

'कब तक ?'

'काम का आरम्भ तुरन्त करवा दूंगा। बस, या कुछ और ?'

'मै ग्वालियर मे जाकर पर्दा नही करूँगी।'

'मत करना। कुछ और ?'

'और कुछ नही।'

हाके वाले पास आ गये। उनसे पहले पेड से उतरकर मार्ग-दर्शक डरता-डरता आ गया।

उसने क्षमा प्रार्थना की,—'महाराज अन्नदाता, मुझको क्षमा मिले मैंने बहुत कहा कि मचान पर चली जाओ, पर ये नहीं मानी।

निन्नी ने समर्थन किया, 'हाँ हम लोगो ने हठ किया मचान पर नही बैठी।'

मानसिह हँसकर बोला, 'और उस हठ का फल यह सामने है और वह नाहर उधर पड़ा हुआ है।'

हाके वाले आ गये। उन लोगो ने अरने और नाहर को देखा। निन्नी के गले मे रत्न–जटित स्वर्ण माला को देखकर समझ गये कि किसके पराक्रम का परिणाम है।

राजा ने पगड़ी मे से मोतियों की माला खोली और लाखी के गले मे डाल दी।

कहा, 'तुम भी बहुत वीर हो।'

थोडी सी ही देर बाद और शिकारी भी आ गये।

जिस जिसने जो कुछ किया और जो नही कर पाया उसकी चर्चा होने लगी। राजा ने एक खिसारे सुअर को मारा था।

अटल भी आ गया। उसके हाथ कुछ नही लगा था। अरने, नाहर और दोनो के गले मे मालाओ को देखकर वह फूल नही समा रहा था।

[२५]

मन्दिर तक पहुंचते-पहुंचते सबको मालूम हो गया कि सुन्दरी मृगनयनी राजा मानसिह की विशेष स्नेह-भाजन हो गई है। वे दोनों मन्दिर का किनारा काटकर घर जाने को थी पुजारी ने बुला लिया। पुजारी को शिकार के परिणाम का समाचार पहले ही मिल चुका था।

बोला, 'आज हमारा गाव कृतार्थ हो गया। मूर्ति के दर्शन करो; फिर घर जाओ।'

निन्नी ने आक्षेप किया,–'स्नान नही किया है, दर्शन कैसे करूँगी?

लाखी ने समर्थन किया,–'नहाकर कल आवेगी सवेरे और कुछ अनाज लावेगी चढाने के लिये।'

पुजारी की हँसी मे से निकला,—'बाहर से ही दर्शन कर लो। अब अनाज लूँगा चढ़ोत्तरी मे तुम से? गॉव लूँगा मन्दिर के लिये जागीर मे।'

किससे ?' लाखी ने पूछा। निन्नी ने नीचा सिर किये हुए आँखें ऊँची की।

'ग्वालियर की रानी से।' पुजारी ने सिर को नचाते हुए उत्तर दिया। दूसरी दिशा से मानसिंह और निहालसिंह मन्दिर की ओर आते दिखलाई दिये।

'गरीब किसान कन्या।' लाखी ने मुस्कराकर कहा और निन्नी का हाथ पकडकर घर चली आई।

पुजारी को प्रणाम करके राजा बोला, 'शास्त्री जी आशीर्वाद दीजिये।'

'आशीर्वाद तो सदा राजा के साथ है।'

'मानसिंह तोमर और मृगनयनी को आशीर्वाद दीजिये।'

'इससे बढकर अभिमान की बात इस गाँव और गाँव के मन्दिर के पुजारी के लिए क्या हो सकती है। महाराज ?'

'चाहता हूं कि वैदिक मन्त्रों और होम के साथ विवाह ग्वालियर मे सम्पन्न हो। आप चलने की तैयारी करिये।'

'महाराज यह कैसे हो सकता है। विवाह की विधि लडकी के घर पर ही होगी। अपने यहां यही रीति चली आई है। लड़की का पुरोहित मैं रहूँगा, आप अपना ग्वालियर से बुला लीजिये। हम कुछ नही दे सकते केवल, कुछ फूल चढा देंगे। यज्ञ-होम के लिये अञ्जलि भर घी अटल के घर मे ही निकल आवेगा।'

अटल भी प्रफुल्लता के साथ वही आ गया। पुजारी ने उससे कहा 'महाराज के साथ मृगनयनी की भावर यही पडनी चाहिये या ग्वालियर मे ?

उसने गर्व की छाती फुलाकर उत्तर दिया, 'यही। हमारे वंश की परम्परा यही है।'

'देने को है कुछ राजा के लिये ?' हँसकर पुजारी ने प्रश्न किया।
बिना किसी झिझक के अटल ने बतलाया, 'कन्या और एक गाय। बैलो की जोडी अपने लिये रक्खूँगा।

वे सब हँस पडे। अटल सोचने लगा, क्या मै कोई मूर्खता की बात कह गया ?

'यज्ञ–होम के लिए कुछ है ? पुजारी ने हँसी को गम्भीरता के भीतर छिपाकर कहा।

वह झेपता हुआ–सा बोला,'थोड़ा-सा होगा। कुछ उधार ले लूंगा।'

मानसिह ने उसको कन्धे से लगा लिया। कहा, चिन्ता मत करो, सब हो जायगा।

अटल धीरे से बोला, 'पर मै आपका कुछ नही लेना चाहता।'

राजा ने आश्वासन दिया, 'घबराओ नही। यह विवाह तुम्हारी ही सामग्री से निभाया जायगा।

पुजारी से कहा, 'मुहूर्त शोधिये, शास्त्री जी।'

वह हँसकर बोला 'ज्योतिष को जो जितना अधिक जानता है वह उतने ही निकट का मुहूर्त शोध सकता है महाराज !

मुहूर्त सोधा जाने लगा।

निन्नी और लाखी गाव मे पहुँची नही कि चर्चा हो उठी।

'निन्नी का ब्याह दो-तीन दिन के भीतर होने वाला है।'

'अब वह महारानी कहलावेगी ! अपने-अपने भाग्य की बात।'

अभी तक खाने को नही जुडता था, अब गुड दूध से नहावेगी !'

और अटल की भी पट पड़ेगी। राजा का साला कहलावेगा ! राजधानी की सडको पर ऊँचा मुड़ासा बाधे डोला करेगा !!'

लाखी चेरी बनकर रहेगी। निन्नी के पैर दाबेगी और राजा की सेज सजोवेगी।'

'लाखी को अटल का गर्भ है। राजा की कृपा से सब छिप जावेगा।'

'अरी चुप ! चुप !! राजा सुन लेगा तो मरवा डालेगा।'

'दोनो यहाँ से चले जाये तो फिर कोई डाकू लूटने न आवेगा। टले तो यहाँ से।'

निन्नी और लाखी घर मे थी। निन्नी गम्भीर दिखलाई पडने का प्रयास कर रही थी। लाखी चुहल पर थी। वह मुह छिपाना चाहती थी वह बार बार उसके सामने आ खडी होती। लाखी ने एक बार उसकी ठोडी को पकड कर ऊँचा किया।

बोली, 'देखो, मेरी तरफ।'

'क्यो ? क्या मैं डरती हू ?'

'तो मिलाओ मेरी आखो से आँखे।

'लो। क्या कर लोगी अब ?'

'उनसे मिलाई थी।'

'छोड़ दो मुझको बडी वैसी हो।'

'अच्छा बतलाओ क्या बातचीत हुई थी, वहाँ ? पेड के नीचे ?'

'छिपी तो थी वही कही चिपकी हुई।

'देखा तो था जब हथलेवा हुआ, पर बातचीत नही सुन पाई। बड़ी देर तक तो हुई थी, क्या हुई थी ?'

'कहाँ बड़ी देर हुई थी ?' कुछ ही क्षण।'

'ओ भगवान ! बहुत छोटे क्षण थे वे !! मै तो तीर ढूँढते-ढूँढते थक गई। बतलाओ क्या कहा था ?'

'मैने कहा मेरी पत रखना, सदा आज्ञा का पालन करूँगी। बस लो पीछा छोडो।'

'देखे व्याह कहा होकर होता है।

उसी समय पडोस की एक स्त्री आई। वही से शोर मचाती हुई बोली, अहाहा ! कैसा भाग जागा !! भगवान सब का भला करे !!! गाव का नाम अमर कर दिया। जैसा रूप पाया, वैसा ही राजा मिला।

राजा को ढूँढने पर भी ऐसा रूप संसार भर में नही मिलता।' स्त्री घर मे घुस आई। निन्नी की माला पर उसने प्यार बरसाया।

'बड़े मोल की होगी यह! कैसी दिपती है गोरे गले मे।' उसने कहा।

निन्नी की समझ मे नहीं आया कि क्या कहूँ।

लाखी बोली, 'इन्होने नाहर को तीर से मारा और अरने भैंसे के सीग मोड़ दिये। इसलिये राजा ने इनाम मे माला दे दी।'

'अरी बनावे मत,'—उसी स्त्री ने कहा,–'व्याह होने वाला है राजा के साथ।'

'अच्छा!' लाखी ने बनावट प्रकट की।

उस स्त्री की आँखे सजल हो गईं और कण्ठ गद्गद्। बोली, 'हमारे लिए तो वही खेती पाती, ढोरो की देखभाल, एक जून का खाना। तुम सुखी रहो। हमको इसी मे सुख है।'

लाखी ने पिघलकर कहा, 'अभी कोई बात ऐसी तैं तो नही हुई है, काकी। हो जावे तो क्या कहना है।'

स्त्री ने आसू पोछकर गला साफ किया। बोली, 'अरी गाव के मानस जल उठे है सो कहने आई हूँ।'

निन्नी ने ताड लिया कि यही सबसे अधिक जली होगी और अब अपनापन समेटने आ गई है।

वह स्त्री कहती गई,—'एक कहती थी कि निपूती कि निन्नी रानी बन कर पान चबायेगी और लाखी चेरी बनकर निन्नी की पीक को गदेली पर लेगी और राजा की सेज को बिछाया उठाया करेगी, सुन्दर सलौनी है न।'

निन्नी का चेहरा लाल हो गया और लाखी का फक।

निन्नी ने तमक कर पूछा, 'किसने कहा?'

वह स्त्री पाव पडती हुई बोली, 'बता दूंगी कभी। अभी नही। गांव मे रहना जो है। वे सुन लेगी तो मेरा मुह काला कर दिया जावेगा और जात मे से निकाल दी जाऊँगी। हा हा खाती हूँ, अभी न पूछो ! वे सब आने वाली ही होगी। उन्हे मालूम न होने पावे कि मैने कुछ बतलाया है। राम ! राम !! मेरी जीभ कट जाय, कैसे निकल गई मुँह से यह बात।'

वे दोनो ठण्डी पड़कर सोचने लगी।

लाखी ने कहा, 'काकी तुम बडी भली हो। हमको क्या पडी जो ऐसी बुरी बात को फैलाती फिरें इसमे तो हमारी ही नाक कटेगी।'

उसी समय कुछ और स्त्रियाँ आईं जिनके चेहरों पर मुस्कान थी और आखो मे छिपी हुई ईर्षा। उनके पीछे से आल्हाद मग्न अटल आ गया।

आते ही बोला, 'ब्याह का मुहूर्त—निन्नी के साथ महाराज के ब्याह का मुहूर्त—परसो के लिये शोधा है पुजारी बाबा ने। हमारी गांठ मे तो कुछ नही है, पर गाव वालो की कृपा से पार लग जायेगे।'

स्त्रियो मे एक बुढ़िया भी आई थी वह सबसे अधिक प्रसन्न थी।

बुढ़िया ने कहा, 'राजा पंगत देंगे। मङ्गल साज सजाओ री। इनके घर मे कोई बडी-बूढी नही है। हमी लोगो को नेगचार करने पड़ेगे अभी मे गाओ कुछ।'

इस बुढिया के स्वर मे निन्नी को सचाई का आभास मिला। स्त्रियाँ मगलाचार गाने लगी। थोडी देर बाद अधीर अटल ने टोका,—'यह सब पीछे करती रहना। पहले यह सब बतलाओ कि करना क्या क्या है। एक ही दिन तो बीच मे है।'

बुढिया समेत कुछ स्त्रियों ने जो योजना बतलाई उसके लिये अटल के घर मे धन का सौवा भाग भी नहीं था।

परन्तु उसने दृढ़ता के साथ कहा, हमारी डांग मे हरे पत्ते, मन्दिर में कुछ फूल और घर मे थोड़ी सी हल्दी है। हल्दी से निन्नी के हाथ

पीले कर दूँगा, फूल राजा पर चढा दूँगा और डॉग के पत्तो से मण्डप बन्दनवार और द्वार की शोभा सजा दूँगा। राजा से कुछ नही लूँगा, अपने पुरखो की नाक रक्खूँगा।'

एक स्त्री बोली, 'तोमरो और गूजरो मे व्याह-सम्बन्ध होता है ?'

अटल ने उत्तर दिया, हा।होता है—हुआ है। पुजारी बाबा ने बतलाया है। उन्ही ने तो शोधा है मुहूर्त और वेही व्याह को पढेगे।'

'हाँ राजा हैं। सब कर सकते है। ठीक है।' स्त्री कहकर चुप हो गई और तुरन्त ब्याह का एक गीत गाने लगी।

निन्नी और लाखी को वे स्त्रियाँ थोडी देर बाद भार स्वरूप जान पडी। पर वे वहाँ से नही टली। गाने मे जैसे जैसे स्त्रियो का मन लगा विशेषकर अश्लील गीतो मे—वैसे—वैसे उनकी जलन और उन दोनों की कटुता कही दबकर जा बैठी।

अटल जङ्गल के उपादानों से अपने घर और आस पास के अग-वाडो को सजाने के लिये कुल्हाडी लेकर बाहर चला गया। गाँव की स्त्रिया प्राप्त सामग्री से आने वाले विवाह दिवस की तैयारी करने लगी।

निन्नी के पान की पीक अपनी गदेली पर लूँगी ! राजा की सेज की चेरी बनूँगी !! लाखी के मन मे दब दबकर उठ-उठ रहा था। फिर भी वह निन्नी के भविष्य से सुखी थी।

[२६]

राजा ने ग्वालियर से विजय जङ्गम को बुलाकर अपना पुरोहित बनाया—उसका मौरूसी पुरोहित भी आया। लड़की के पक्ष का पुरोहित बोधन पुजारी बना। अटल ने अपनी डाग के पत्तो से घर द्वार को सजाया। गाव वालो ने भी साज सजाये। राजा की ओर से काफी धूम-धाम की गई लाखी के हट पर अटल ने अपनी एक मात्र गाय बंध छोडने के नेग में दान की। राजा ने दान लेते समय कहा, 'इस गाय का ससार मे मूल्य ही नही आँका जा सकता।'

निन्नी—आगे से मृगनयनी—को इतने बहुमूल्य वस्त्रालङ्कारों का चढाव-चढाया गया कि उसका शरीर दुखने लगा।

विदा के समय मृगनयनी लाखी से लिपट कर इतना रोई कि गला बैठ गया और लाखी तो अचेत हो जाने पर ही आ गई।

'मै तुम्हे ग्वालियर बुला लूँगी,' निन्नी ने कहा।

हिलकियाँ लेती हुई लाखी बोली, 'देखा जायगा।' एक क्षीण धुँधला चित्र, हाथ पर पीक लेने वाली दासी का—आखो के भीतर कौधकर तुरन्त तिरोहित हो गया।

मृगनयनी राजसी सवारी मे बैठी हुई जा रही थी। जब तक साँक नदी और सुपरिचित डाँग-डूँगर दिखलाई पडे वह आंसू पोछ-पोछ कर देखती रही। राजा ने गाव छोडने के पहले गाँव भर का एक साल का लगान त्याग करने की घोषणा की और साक नदी से ग्वालियर तक नहर काटकर ले आने का काम जारी करवा दिया इसको मृगनयनी ने देखा। बहुत सन्तुष्ट हुई।

ग्वालियर पहुँचते ही उसको स्वागत के प्रदर्शनो का तूफान चकित करने लगा। बाजे, गायन नगर की सजधज, फूलो और धानो की बरसा, तोरण वन्दनवारो की झुरमुटें, आरतियाँ, जयजयकार के हल्ले ने तो उसको हैरान ही कर दिया। सोचती थी, राजा क्या सचमुच भगवान का अवतार होता है? या क्या वह पूर्व-जन्म का योगी होता है। योग करने से राज मिलता है? योगी कौन होता है? क्या करता है? किसी समय राजा से पूछूँगी? लाखी साथ मे होती तो यह सब देखकर क्या कहती? मुझको बार-बार तङ्ग करती। कितनी अच्छी है वह! अब उसका ब्याह भैया के साथ हो जायगा। अब गाँव वाले ची-चपाड नही करेंगे। किसी समय उसको बुलाऊँगी। मृगनयनी सोच रही थी।

राजा का जुलूस रुकते-रुकते धीरे-धीरे किले मे पहुँचा फाटकों से होकर ऊपर का मार्ग सीढ़ियो पर से गया था, इसलिये सवारी ऊपरी परकोटे के भीतर वाले भवन मे देर से पहुँच पाई ऊपर पहुँचकर

मृगनयनी ने किले की पहाडी के तटवर्ती फैले हुए मैदान को लालसा के साथ देखा। सूर्यास्त होने में थोड़ा सा विलम्ब था। विस्तृत क्षेत्र की ऊँचाई-नीचाई पर सन्ध्या की सुनहरी किरणे छहर रही थी। एक पहाडी की उपत्यका से धुये की ऊंची-पतली रेखाये छा रही थी। वहा कोई छोटी सी नदी होगी। किनारे पर कोई छोटा-सा गाँव मे रोटी बनाने की तैयारी हो रही होगी। गाय के लिये बच्छा रँभा रहा होगा। गाय हीसती हुई घर की ओर दौडी चली आ रही होगी। अरे नही ! वह तो दान मे बच्छे समेत मेरे साथ आई है। कहा है वह ? वह तो नीचे ही रह गई होगी। किसने बांधी होगी ? किसने उसकी गर्दन पर हाथ फेरा होगा ! क्या मै उस प्यारी गाय को नही देख पाऊँगी ?

मृगनयनी भवन के भीतर पहुँची। दास दासियो की मनुहारो पर मनुहारे बरस उठी। अरे तो क्या मै थोडी देर के लिये भी अकेली न रह पाऊँगी ?

नेगचार के बाद पान—इलायची इत्र इत्यादि सत्कार की सामग्री, नाना प्रकार के भोजन, सिर झुकाये हुये दासिया, स्वच्छ वायु केलिये भवन मे खिडकिया। बैठने के लिये कालीन, मसनद तकिये लेटने के लिये मखमली गद्दे का, चादी की पत्तियों जडा पलग।

वह मचान, वह चादनी-रात जिसमे लहराते हुये अनाज का खेत जैसे किसी ललक के साथ बात करना चाहता हो, सागर चीतल की बोलिया, बगल मे रक्खा हुआ धनुषवाण, लाखी की ठठोली क्या सब सदा के लिये हाथ से छुटक गये ? क्या मैं जा नही सकूँगी ? क्या यही बन्द होकर रहना पडेगा ? महाराज ने वचन दिया था कि पर्दे मे नही रहोगी। वह निभायेगे, अवश्य निभायेगे। नहर की खुदाई का आरम्भ उन्होने कितनी जल्दी कर दिया ! पर बाहर भी निकलूँगी तो सवेरे कहां जाऊँगी ?

निन्नी ने झरोखे के बाहर दृष्टि डाली। मन चाहा कि उठे और झांक कर देखे। येलोग क्या कहेगी? मन मे कहेगी गॉव की गवार है। ये

सब पढी लिखी होगी। मैं अपढ हूँ। मै कुछ गा लेती हूँ। पर इन सबने बरसो अभ्यास किया होगा। जब रात मे, सबेरे और सन्ध्या समय चिड़ियाँ बोलेंगी और मै गाना चाहूँगी तो क्या कोई रोक लेगी ? नही भी रोकेगी तो मन मे क्या कहेगी ? इन सबसे अच्छा गा सकूँगी, तब कुछ नही कह सकेंगी। और ये निशाने बाजी कैसी करती होंगी ?' इसमे तो सबको पछाड़ दूँगी। महाराज को भी। अपने पति को ? वह पति है, परन्तु लक्ष्यवेध तो विद्या है, इसमे हारजीत की क्या बात ?

भवन की दीवारो पर चित्रकारी थी। मृगनयनी का ध्यान उस पर गया। बहुत चाव के साथ देखने लगी। कैसे इनको बनाया होगा। चित्रो मे केवल प्राण नही है और सब कुछ है ! बहुत विलक्षण है !! ऐसा तो कभी नही देखा कही पहले !!! गांव जङ्गलो मे कहाँ रक्खा है यह सब ? मै अपने गांव मे फिर जाऊँगी तब पढ लिखकर यह सब सीखकर आऊँगी। लाखी को भी सिखाऊँगी। कहूँगी भौजी, सीख मुझसे। क्या कर रही होगी इस समय मेरी बहुत प्यारी लाखी ? कितनी रोई थी वह ! मैने कभी-कभी उसके साथ ओछा व्योहार किया है। अब कभी नही करूँगी। मृगनयनी की आँखो मे से एक आँसू आ गया। दासियो ने नीची निगाहो ही देख लिया। सोचा देर तक देखते रहने के कारण आँखे गीली हो गई होंगी।

मृगनयनी सोचती रही—यह सब सीखने मे न जाने कितने दिन लग जायेंगे, घर जल्दी जाऊँगी, जल्दी न जा पाई तो लाखी और भाई को बुलवा लूंगी, उनके लिए गाव मे अब ऐसा क्या रक्खा है ?

बगल के कमरे से वीणा बजाने की ध्वनि सुनाई पड़ी। मृगनयनी को वह विचित्र जान पड़ी। समझ तो गई कि कोई बाजा बजा रहा है। ध्वनि बहुत मीठी लगी। मन को जैसे अपनी गाठ मे बांधती जा रही हो ! एक घडी पीछे गायन भी सुनाई पड़ा। ऐसा गायन ! ऐसा स्वर !! पहले कभी नही सुना था। था किसी पुरुष का ही, परन्तु कितना मधुर !

बीच-बीच मे किसी स्त्री का भी कण्ठ स्वर सुनाई पडा-वाद्य की झकारो को बढाने वाला सा।

मृगनयनी ने एक दासी की ओर प्रश्नसूचक दृष्टि की। दासी ने बतलाया-'प्रसिद्ध गायक बैजू गा रहे है।' साथ मे उनकी चेली कला है।'

[२७]

गाव से राजा और मृगनयनी के दलबल सहित चले जाने के उपरांत चहल पहल एकदम ठण्डी पड़ गई। लाखी और अटल को घर सूना-सूना प्रतीत होने लगा। लाखी की आखे सूज गई थी और अटल की लाल हो गई थी। वह लाखी को खलिहान मे ले गया। संध्या तक खलिहान मे काम करते-करते समय काटा। घर आने पर व्यालू के उपरान्त नीद आ गई।

दूसरे दिन हाथ—मुह धोकर खलियान मे काम करने के लिये दोनो गये और छाया मे बैठ गये।

अटल ने चर्चा चलाई,—'अब हमारा तुम्हारा ब्याह भी हो जाना चाहिये।'

लाखी उदास तो थी ही, उसका चेहरा और भी गिर गया। बोली, 'निन्नी के बिना कैसे होगा ?'

'उसको बुलायेगे। वह अवश्य आयेगी। रानो हो गई तो क्या हो गया, बहिन तो मिट नही गई।'

'कव बुलाओगे ?'

'कल ही सोचता हू। अभी मण्डप हरा है। इसी के नीचे भॉवर पडवा लूंगा, कल ही।'

'क्या हो गया है तुमको ? कल गई है यहा से और कल के दिन लौट आयेगी वहा से ? ऐसा तो गाँवो मे कभी नही होता।'

'तो कव तक विदा करा लेने की रीति है ?'

'वह स्यात ही कभी आवे यहा। इतने वडे राज की महारानी को हमारी झोपड़ी मे राजा और उनके सामन्त नही आने देगे।'

'कैसे नही आने देगे ? कोई नही रोक सकता । मै लिवा लाऊँगा । पुजारी से मुहूर्त सुधवा लूँगा और ग्वालियर को चल दूँगा । वह आयगी और उसके सामने इसी मण्डप के नीचे भॉवर पडेगी ।'

'ग्वालियर जाओ, तव मोतियो की उस माला को लेते जाना । सुना है हजारो टंके की है । उसमे से कुछ मोती बेच आना । थोडे से कपड़े वपडे ले आना । गाँव वालो को खाना देना पडेगा, पुजारी बाबा को दक्षिणा । उससे बहुत काम चलेगा ।'

'हाँ यह ठीक है । उसकी याद ही नही रही । कहाँ है माला ?'

'घर मे छिपाकर रखदी है । पहिनती तो गाँव वाले देखकर जलते, बाहर के चोर चपाटे भी ताक लगाते ।'

'तो मैं पहले पुजारी के पास मुहूर्त सुधवाने के लिये हो आऊँ । घड़ी भर मे लौटकर आता हूँ ।'

'ऐसी कौन-सी जल्दी पडी है ?'

'हम दोनो पति-पत्नी की तरह रहना चाहते है, यह जल्दी पडी है ।'

अटल पुजारी के पास चला गया । अटल को आशा थी कि राजा का साला होने के कारण पुजारी अविलम्ब मुहूर्त शोध देगा—

पुजारी ने अटल के अनुरोध पर तुरन्त नाही की—

'मै राज्य को छोडकर परदेश चला जा सकता हूँ परन्तु वर्णाश्रम को लात नही मार सकता ।'

अटल उसके लोभी स्वभाव को जानता था । उसने धैर्य और सहिष्णुता को हाथ मे रखने का प्रयास किया । बोला, 'महाराज मन्दिर वनवाने के लिये तो कह ही गये, मै भी आपको मनमानी दक्षिणा दूँगा ।'

'मैं ऐसा नही कर सकता । कोई भी ब्राह्मण नही कर सकता ।'

'तो हमारे छोटे घराने की लडकी को छत्तीस कुरी वाले के साथ क्यो ब्याह दिया ?'

'वह राजा है । राजा किसी देवता का अवतार होता है, वह कर सकता है उसको सुहाता है । तुम लोग राजा नही हो । तुम्हारे लिये मना है ।

'पर हल दोनो ने निश्चय कर लिया है कि ब्याह करेगे।'

'लाखी को तुम्हारा गर्भ है ?'

'झूठ, बिलकुल झूठ। हम लोग गंगाजल की तरह पवित्र है।'

'गंगालज की बराबरी करके गंगाजी का अपमान मत करो। तुम यदि हठ करोगे और लाखी को रख लोगे तो जाति बाहर कर दिये जाओगे।'

'हमारी और उसकी जाति का गाँव मे है ही नही कोई दूसरा घर।

'गाँव का कोई भी नर-नारी तुम्हारे हाथ का भरा हुआ पानी नही पियेगा, तुमको छुयेगा तक नही, बोल-चाल काम-काज सब बन्द हो जायेगा।'

'परवाह नही, मै ग्वालियर चला जाऊँगा।'

'जिसमे राजा को भी थुकवाओ, सारी प्रजा कहे कि राजा का साला अधर्मी है।'

'कही और चला जाऊँगा, पर इस घोर अन्याय को नही सहूँगा। पहले राजा के पास जाकर इस अन्याय की बात सुनाऊँगा।'

'मै ब्राह्मण हूँ। राजा मेरा कुछ नही कर सकते। रूठ जावेगे तो इस राज्य को छोडकर कही और चला जाऊँगा। मै तुम्हारी धमकी में नही आ सकता। शास्त्रो को मैने यो ही नही पढा है। जाओ कह दो राजा से।'

अटल धैर्य को थोडी-सी ही देर धारण कर सका था भनभनाता हुआ चला आया।

खलियान मे पहुँचते ही उसने कहा, 'पानी लाओ। लुटिया को माज कर जल भर लाओ।

लुटिया खलियान मे रक्खी हुई थी। उसमे कई छोटे-छोटे गड्ढों की दोचियाँ थी। लाखी लुटिया को माँजकर जलभर लाई। बारीकी के साथ उसके चेहरे को परखा। सहम गई।

अटल ने थोडे से जल से अपने हाथ धोये और लुटिया को दोनों हाथो मे ले लिया।

बोला, 'मेरी वगल मे बैठ जाओ।

लाखी को आश्चर्य था यह सब क्या हो रहा है। अटल ने ऊपर की ओर आखे उठाई। और कहा, 'हे भगवान मै कुआरा हूँ और लाखी कुआरी है। मै गङ्गाजी की सौगन्ध खाकर कहता हू कि यह जन्म भर मेरी होकर रहेगी।' उसने आखे बन्द कर ली। हिल उठा। आँखों से आँसू टपक पडे।

'यह क्या कर रहे हो ?' गद्‌गद् कण्ठ से लाखी ने कहा और अटल के आँसू अपनी उङ्गलियों से पोछे। अटल ने लुटिया एक ओर रख दी।

बोला, 'अपना बाँया हाथ मेरे हाथ मे दो।' लाखी ने हाथ बढा दिया, अटल ने अपने हाथ मे पकड लिया।

कहा, 'अब सदा के लिये तुम मेरी हुई, चाहे जाति मुझको रक्खे चाहे निकाले चाहे गाव मुझको पत्थर मार कर गाव से भगा दे, मेरा तुम्हारा सम्बन्ध कभी नही टूटेगा। बोलो, तुम मेरी हुई ?'

लाखी के उदास चेहरे पर लाली दौड आई, होठो पर मुस्कान आ गई और रेखाओ मे सारे मुख पर आंखो तक बिखर गई।

बोली, 'हाँ।'

'मै आज ही गांव भर मे कह दूँगा कि हम दोनो का व्याह हो गया।'

'वे लोग मान जायेगे ?'

'न माने तब।' हम लोग अपना सामान लेकर ग्वालियर चल देगे।

'ग्वालियर नही जायेगे।'

'क्यो ?'

'अपना निज का कुछ करतब दिखलायेगे तभी ग्वालियर जायेगे।'

'मैं समझा नही।'

लाखी ने आद्योपान्त के निन्दाचार को सुनाया। अन्त मे कहा, 'कोई मुझको यदि किसी की चेरी कहे, चाहे वह मेरी निज ननद ही क्यों न हो तो मैं नही सह सकूंगी और न यह कह सकूंगी कि तुमको राजा का दास या रोटियारा कहे। हम लोगों को भगवान ने भुजाओं मे बल दिया है और काम करने की लगन : कुछ करके ही ग्वालियर चलेगे।'

'मै तो गॉव वालों से आज ही कह दूंगा। वे लोग खुल्लम-खुल्ला हमारा अपमान नही कर सकते वह ब्राह्मण तो भूल गया जब हम लोग अपने प्राणो की होड़ लगाकर उसकी और उसके पोथी-पत्रो की रख-वाली करते थे परन्तु गांव वाले नही भूल सकेगे।'

'जैसा ठीक समझो।'

'मैं पीछे नही रहूँगी।'

'सो तो पूरा भरोसा है।'

[२८]

अटल ने अविलम्ब अपनी उमङ्ग के प्रवाह को गॉव मे बहाया और तुरन्त उसका फल पाया।

'यह नही होने पावेगा हमारे गांव मे।' एक ने कहा। दूसरे ने हामी भरी,—'ऐसा अधर्म। हायरे दुष्ट कलिकाल!!'

'अहीर की लड़की गूजर के घर मे!'

'गांव मे अहीर होते तो दोनो को मार डालते!!'

'पुजारी बाबा ने क्या कहा?'

'उन्होने सच ही तो कहा है यह अधर्म है।'

'अटल का बहनोई राजा है।'

'सो क्या हुआ? राजा चाहे जिस जाति की लडकी के साथ ब्याह करे, चाहे जितनी स्त्रियो को घर मे डाल ले, वह कर सकता है। बड़े

बड़े लोग कर सकते है। करते है, पर यह अटल ? राम ! राम !! राम !!!'

'उसकी ऐंठ तो देखो। ऐसे कहता फिरता है जैसे काशी रामेश्वर नहा आया हो !'

'राजा न उपद्रव कर बैठे कोई ? निन्नी उसको न भड़काये कही ?'

'धर्म के खिलाफ कोई कुछ नही कर सकता। राजा अधर्मी हो जायेगा तो राजा टिकेगा कितने दिन ?'

'और यदि कुछ किया तो ?'

'तो बुन्देलखण्ड पास ही लगा हुआ है। ओरछा के राजा के राज्य मे जा बसेगे। यहाँ हमारा कौनसा सोना गडा है जिसके पीछे धरम को खो दे ? सोच लेगे तुर्क फिर से आ गये।'

'पुजारी बाबा कितने सच्चे है। उन्होने कह दिया कि राजा यदि अपना आधा राज भी हमको दे दे तो अटल की भाँवर नही पढ़ूँगा।'

'हां, कही गाय-भैंस का व्याह हुआ है जग मे कभी ?'

'हमने पहले ही कहा था कि लाखी को अटल का गर्भ रह गया है। उसने सोचा चार छः महीने मे बात अपने आप फूट पड़ेगी अभी से कह दो और गाव वालो को उल्लू बनाकर सीधा कर लो !'

'भावर डालना चाहता है ! हम लोगो की असीस चाहता है !!'

अरी, 'वैसे चाहे जो करना ! पर कितना निर्लज्य है ? ढोल वजा कर कहता फिर रहा है जैसे गांव की पंचायत कोई चीज ही न हो ! जैसे हम लोग किसी गिनती मे ही न हो !! गरीब हुये तो क्या ? हम सब कुजात तो नही है !!!'

'खाने-पीने की लालच देता है। कि लड्डुओ की पङ्गत दूंगा। भाड मे जाये ऐसे लड्डू !!

'खाना-पीना, छूना उठना-बैठना, बोल चाल, यहाँ तक कि उसकी तरफ हेरना तक बन्द करदो !'

'वह यहाँ से लगे हाथ ग्वालियर चला जायगा।'

'बहुत अच्छा होगा। वहाँ जाकर लाखी चेरी बनेगी तो उसके पीछे उर्क-तुर्क तो न आयेगे गांव को लूटने लाटने।'

'कितने बुरे चलन की निकली यह छोकरी !'

'पास के गाँव के अहीरो को खबर दे दो न। वे बात की बात में निबटा देगे सारा किस्सा।'

'यह ठीक रहेगा। गाॅव भर करदे इनके साथ ब्योहार बन्द और अहीरो को दे दो खबर। राजा सबको तो मार नही देगा।'

'जब वैसा दिखलाई पडने लगेगा तो ओरछा के राज मे चल देगे।

अन्त मे उसी दिन मन्दिर के निकटवर्ती बरगद के पेड के नीचे पंचायत हुई और उन दोनो के बहिष्कार का निश्चय हो गया। पुजारी ने इस निश्चय पर पहुँचने मे पचायत को पूरी सहायता की।

पोटा नट ने अटल के पास आकर बड़े स्नेह के साथ कहा,'अटलसिंह जी तुम अब गाँव मे मत रहो, नही तो आस-पास के अहीर आकर तुम दोनो को मार डालेगे। सब जानते है कि लाखी और तुम, हम गरीबो पर दया करते हो, इसलिये हम लोग भी आफत मे पड़ जायेगे. जो कुछ करना हो जल्दी सोचो और कर डालो।'

अटल सोचने लगा।

'अहीर जरूर आयेगे। शायद अनेक गांवों के आयेगे। राजा धर्म के मामले मे हाथ नही डाल पावेगे। 'नट बोला।'

'तुम ठीक कहते हो।' अटल के मुह से निकला।

'क्या सोचा ?' उसने पूछा।

क्षीण स्वर मे अटल ने उत्तर दिया, 'अभी तो ऐसा कुछ नही सोच पाया।'

नट ने कहा, 'दो ही उपाय है—या तो यहां से भाग चलो, या लाखी का साथ छोडो।'

'क्या !' अटल के कण्ठ से दबी हुई गरज सी फूटी।

पोटा ने अनुनय की, 'मैने रावजी आपके हित की बात कही। माफी देना। लेकिन कही मैंने सच्ची बात।'

अटल फिर सोचने लगा।

पोटा ने धीरे से कहा, 'यह ससार बहुत लम्बा-चौडा है। किसी अच्छी जगह चलकर अपना काम देखो। और आराम के साथ रहो। क्या ग्वालियर जाने का विचार है? पर ग्वालियर पास है और अहीरो के जत्थे राजा को घेरेगे, तुमको चैन नही लेने देगे।'

लाखी भीतर से बोली, 'ग्वालियर जायेगे।'

'मैने इसलिये कहा, पोटा ने लाखी की बात को अपनाया—'ग्वालियर मे नाक नीची पड जायगी, मुह दिखलाने का ठौर नही रहेगा।'

'लाखी को गर्भ तो है नही? धीरे से नट ने पूछा -

'अरे हिष्ट!' तीखे स्वर मे अटल ने प्रतिवाद किया।

नट ने क्षमा प्रार्थना की 'रावजी, माफ करना। हम लोग जङ्गल के आदमी हैं। गाँव वाले कह रहे थे, इसलिये मुह से निकल गया। अब जल्दी तय करो क्या करना है हम लोग सोचते है कि बखेडा उठने वाला है इसलिये अपने डेरे को यहां से उखाडकर किसी दूसरी जगह चल दे।'

'कहाँ जाओगे?'

'हमारा अभी तो कुछ नही। वैसे नरवर किले के पास मगरोनी नाम के गाँव मे हमारी कुछ जान पहचान है। बहुत दिन हुये जब गये थे। खेल दिखलाये थे। इनाम पाया था। बहुत अच्छे लोग है वहाँ के। खेतीपाती के लिये वहाँ जमीन बहुत पडी है। वहाँ रह जाना। मन न लगे तो मालवा को चल देना। मालवे मे तो माल ही माल है?'

'मगरोनी किन लोगो की बस्ती है?'

'लुहारो और कसेरो की बनिये ब्राह्मण भी थोडे से है। पर वहाँ इस कहानी के फैलाने की अटक ही क्यो पडेगी? क्या सोचा?'

'सोचता हूँ तुम्हारे ही साथ चलूँ। तुम लोगो मे लाखी का मन भी लगता रहेगा। मगरौनी चलकर तै करेगे कि वहा रह जाये या मालवा मे चल दे। उनसे पूछता हूँ।'

लाखी ने तुरन्त कहा, 'अपने पास थोडा–सा सामान है बोझ नही आंसेगा।'

नट बोला, 'हमारे पास—गधे काहे के लिये है? उन पर हमारा सामान रहेगा और तुम्हारा भी। कुछ पर सवारी रहेगी।'

गधे पर सवार होकर अपने और लाखी के चित्र ने अटल के भीतर गुदगुदी उत्पन्न की और वह हँस दिया। पोटा सहमा। अटल शीघ्र गम्भीर हो गया।

'भाग्य मे जो कुछ लिखा होता है वह होकर रहता है, फिर रास्ते की थकावट से बचने के लिये जो भी सवारी मिल जाय सो ठीक ही है!' अटल ने कहा।

पोटा तुरन्त बोला, 'रावजी, हमारी नायकिन ने तुम्हारी बहिन का और लाखी का हाथ देखा था। उस दिन कोई भी चर्चा ग्वालियर के राजा के साथ ब्याह-सम्बन्ध की न थी। नायकिन को ज्योतिप कितनी जल्दी और कैसा सच्चा निकला! लाखी के सम्बन्ध मे जो बात उसने कही है वह भी राई-रत्ती सच्ची निकलेगी। आपको नही दिखलाई पड़ रही है परन्तु बहुत जल्दी दिखलाई। पड़ेगी! नायकिन की बात कभी झूठी नही निकलती उसको न जाने कितने देवता सिद्ध है।'

लाखी ने वही से कहा, 'इस गाव को छोडकर कही भी चलना है। तब जहाँ की यह कह रहे है वही ठीक है।'

अटल ने भी अपना निश्चय प्रकट किया, 'अच्छा भाई पोटा तुम्हारे साथ चल देगे। हमारे दो बैल है। ये हमारे-इनकी सवारी के लिये ठीक रहेगे और तुम्हारे गधो पर सामन आ जायेगा ज्वार की दाये हमने कर ही ली है कल सवेरे उसको उडाकर गाह लूँगा। गधों पर लाद लेगे। कुछ अपने बैलो पर लाद ले चलेगे। है भी कितनी?'

'ठीक है, ठीक है,'—प्रसन्न होकर पोटा बोला, 'गाँव मे किसी को बात मालूम न होने पावे। कल रात मे किसी समय चुपचाप चल देवेगे। गाँव वालो को हमारे जाने का पता तब लगेगा जब हम लोग कोसो की दूरी पार कर जायेंगे।'

'यहाँ से कितनी दूर है मगरौनी ! कब तक पहुँच जायेंगे वहाँ ?' अटल ने पूछा।

पोटा ने चाव के साथ बतलाया—'बहुत दूर नही है, यहाँ से कुल बीस-बाईस कोस होगी। मगरौनी के दक्षिण मे नरवर केवल दो कोस पर है। वहाँ कोई नही जान पायगा कि क्या से क्या हुआ। सब अपने अपने काम मे लगे रहते बहुत है अच्छा ठौर है।'

अटल ने दूसरे दिन अन्न का सग्रह कर लिया। दिन भर उससे और लाखी से गाँव का कोई भी नर-नारी नही बोला। कुछ स्त्रियो ने तो लाखी को देखते ही धरती पर बार बार थूका। गाँव की पचायत का निर्णय सुनाने के लिये कुछ पुरुप आस-पास के गाँवो को चले गये।

रात मे चुपचाप, अपना सामान लादकर, वे लोग चल दिये लाखी ने केवल यह जानने के लिये लौट-लौटकर गाँव की ओर देखा कि पीछे से कोई आ तो नही रहा है।

जङ्गल की ओर दृष्टि गई तो उसने एक साँस भरी-इसमे मेरा कोई शत्रु नही रहता, 'जङ्गल के पशु गाव के इन पशुओ से अच्छे।'

अँधियारी रात के तारो की धुधली-सी झिलमिल मे दूर एक ऊँची पहाडी पर आँख गई—इसी पर ग्वालियर का किला है, इसी मे निन्नी कही होगी मेरी निन्नी ! आज यदि वह मेरे साथ होती !! कितनी हँसती खेलती चली जाती हम दोनो इस मार्ग पर !!!

लाखी रो पड़ी। मार्ग की खडबड़ मे किसी ने उसके रुदन को नही सुना। तारो की धुधली झिलमिल मे किसी ने उसके आँसुओ को नही देखा।

(२६)

गियासुद्दीन के आदेशानुसार ख्वाजा मटरू ने नटो से सम्पर्क स्थापित करने के लिये जासूस भेजे। जासूस अपने प्राणो की खैर मनाते-मनाते राई गाँव तक आ गये और पता लगाकर वहाँ से चले गये कि मृगनयनी का विवाह राजा मानसिह के साथ हो गया और वह कई दिन हुये जब ग्वालियर चली गई, दूसरी भाग गई है, नट भी कही चले गये है। जासूस जैसे आये थे वैसे ही माडू को लौट पडे।

नरवर पर चढाई करने की तैयारी हो चुकी थी परन्तु गियासुद्दीन ने कूच नही किया। उसको खबर लगी कि बघर्रा माँडू पर हमला करने के लिये अहमदाबाद को छोडने वाला है।

'मरदूद कही का' गियासुद्दीन ने मन ही मन उसको गालियाँ दी।

थोडे दिनो बाद समाचार मिला कि बघर्रा दक्षिण मे खानदेश के सुल्तान का दमन करने के लिये निकल पड़ा है, क्योकि खानदेश का सुल्तान गुजरात की अधीनता मे नही रहना चाहता था। गुलबर्गा और बीदर की बहमनी हुकूमत की कमर टूट चुकी थी और उसकी जगह चार पाँच सल्तनते बनकर उभर रही थी। खानदेश भी गर्दन पर से गुजरात के जुये को फेक देने का प्रयत्न रच उठा था। बघर्रा के दक्षिण की ओर आने का कारण यही हुआ।

गियासुद्दीन बघर्रा से चिन्तित रहता था। ऐसा न हो कि मुह तो किये जा रहा हो खानदेश की दिशा मे और यकायक पैरो को पलट दे माँडू की ओर! जब तक माँडू की सीध से दक्षिण मे काफी दूर न चला जाय तब तक माडू को शाहजादा के अनुभव-शून्य हाथो मे छोड देना बुद्धिमानी न होगी इसीलिये गियासुद्दीन को कुण्ठित होना पडा।

मटरू मौका निकालकर शहजादे से एकान्त मे मिला।

शहजाद नसीर ने बगले झाँकते हुये मटरू से पूछा, 'शराब तो बहुत बुरी चीज कही जाती है फिर लोग क्यो पीते है ?'

'जानआलम'—मटरू ने फूँककर कदम रक्खा—'बुजुर्गो ने जमाने से इसको बुरा कहा है, मगर लोग नही मानते है इसलिये पी लेते है।'

'बुरी कहते हैं तो पीने मे भी बुरी होती होगी।'

'जानआलम बुरी चीजे जब बादशाहो के हाथ छू लेती है तब उतनी बुरी नही रहती ! बन्दा तो गुलाम है कह ही क्या सकता है ? लेकिन हाँ सुना है कि बाज लोग दवा के तौर पर कभी-कभी पी लेते है।'

'तुमने कभी पी ?'

'जानआलम के सामने बयान करने मे गुस्ताखी होगी।

'तुम कैसे आये ?'

'जानआलम बादशाह सलामत की गैर मौजूदगी मे माँडू का बन्दोबस्त करेंगे। मुझ गुलाम की याद बनी रहे और घरबार की परवरिश होती रहे यही अर्ज करने आया था। जानआलम का कभी हुक्म बन्दे के लिये हो तो आजमा ले और सिर कटवाकर फिकवा दे।'

'जी चाहता है कि मै भी कुछ दुनिया को देखूं। किताब तो बहुत सी पढ ली, मगर दुनियाँ समझ में नही आ रही है।'

'जानआलम जिन्दाबाद ! मैं कुरबान जाऊँ हुजूर तो इतना देखेगे कि न खुद अघायेगे न दुनियाँ अघायेगी।

देखूं कब वक्त आता है।'

'आयगा वक्त हुजूर और अभी क्या हो गया है हुक्म होने की देर है कि बजा लाया जायगा। सिर्फ फिकर गर्दन की है क्यो मुल्ला-मौलवी गुलाम से कुछ यो ही फिरे रहते हैं।'

'मुल्ला-मौलवियो को खबर न होगी। अकेला ही रहता हूँ, रात में कभी-कभी हो जाया करो।'

'बडी इनायत है जानआलम की गुलाम के ऊपर। वेहतर यह होगा कि हुजूर के इत्मीनान का कोई खिदमतदार हो और वह दिन-रात के आठ पहर में से किसी पल भी किसी बात की फरमाइश करे पूरी होने मे देर न लगेगी, वरना अगर बडे हुजूर को किसी तरह खबर लग गई तो बन्दे का धढ तो कुत्तों के खाने को दे यिया जायगा और जानआलम के साथ सख्ती का बर्ताव और भी बढ़ा दिया जायगा।'

'सख्ती अभी क्या कम है? मर जाने को जी चाहता है। मगर ख़ैर तुम ठीक कहते हो। यही तै रहा। तो फिर अव सच-सच वतलाओ कि वुरी कही जाने वाली उस चीज मे कुछ मजा भी है या वाकई वुरी है?'

'जानआलम अगर उसमे मजा न होता तो वादशाहो के मुह ही क्यो लगती?'

'तब फिर एक तो वह। पर थोड़ी-सी ही, बहुत ही थोड़ी, वरना पकड मे आ जाने का अन्देशा है और दूसरी-तुम खुद समझ लो।'

'कुछ भी मुश्किल नही जानआलम।'

'अभी तक तो मेरे पास ऐसा कुछ नही है, लेकिन वक्त आने पर इनाम दूंगा तुमको।'

'हुजूर वह वक्त भी बिना आये न रहेगा, खुदा खैर करे। जान-आलम को तो रोशन ही होगा नरवर पर क्यो चढाई हो रही है।'

'ग्वालियर का राजा सरकशी कर रहा है।'

'और जहाँपनाह ग्वालियर राज मे दो वहुत खूबसूरत परियाँ भी है। मगर इधर-उधर खबर न फैले हुजूर, नही तो गुलाम कीडो-मकोड़ों की मौत मारा जायगा।'

'नही, मैं क्यो किसी से कहने लगा? मगर मटरू, यह सब इतनी कैद मेरे लिये और अपने लिये शराव, शीरी, लैला वगैरह—वगैरह सव जायज! खैर, फिलहाल हमको क्या पड़ी, देखा जायगा। फिर

भी सवाल उठता है ऐश-आराम बुरा या उससे ज्यादा बुरा यो ही इन्सान का खून बहाते फिरना ? अच्छा, याद रखना।'

'हुजूर की इनायत पाकर गुलाम अपने को बहिश्त मे पा रहा है।'

(३०)

महमूद बघर्रा माँडू की सीध से बाहर निकलकर दक्षिण मे खानदेश की ओर बढ़ गया। ग्यासुद्दीन ने सपाटे के साथ नरवर पर चढ़ाई कर दी। माडू का प्रबन्ध नाम-मात्र के लिये नसीर के हाथ मे सौप दिया वास्तविक प्रबन्ध वजीर के पास रहा।

नरवर माडू के उत्तर–पश्चिम मे है। मालवा के मैदान को पार करके पहाडो और जङ्गलो को लाँघता हुआ गियास एक बडी सेना के साथ नरवर के निकटवर्ती जङ्गल मे पहुँच गया।

यह विशाल जङ्गल नरवर के दक्षिण और दक्षिण-पश्चित में था। सिन्ध नदी सर्प की सी लीक बनाती हुई दक्षिण-पश्चिम से आकर नरवर को पश्चिम की ओर से घेर कर उत्तर पूर्व की तरफ चली गई। नरवर मानो उसकी पश्चिमी कुण्डली के भीतर स्थित है।

जङ्गल इतना विशाल, सघन और भयङ्कर था कि हाथियो के बडे-बडे झुण्ड इसमे मौज के साथ विचरते थे। नाहरो, अरनो, और गेडो तक की, तो कोई बात ही न थी। उत्तर से दक्षिण खण्ड को मार्ग नरवर के पश्चिम-दक्षिण होता हुआ सिन्ध नदी की कुण्ललियो को कई घाटो पर काट कर गया था। जङ्गल का लम्बा-चौडा विस्तार नरवर के पूर्व मे था, परन्तु कुछ दूर तक क्षीण।

उस सीध से पूर्व-दक्षिण मे फिर बहुत सघन हो गया था, पहाडियों पर पहाडियो के सिलसिले। छोटी-बडी नदिया, झीले खेती और जंगल के मैदान बीच-बीच मे सुदूर पूर्व तक। चन्देरी तक, लगभग चालीस कोस तक, यही क्रम चला गया था। गियास ने चन्देरी के सूबेदार को

माडू से ही आदेश भेज दिया था। चन्देरी का सूबेदार चन्देरी के पश्चिम दक्षिणवर्ती पहाडी के काटने मे लगा हुआ था। उसको काट कर वह चन्देरी का मालवे के लिये मार्ग सीधा कर देना चाहता था। सूबेदार ने उस काम को चालू रक्खा और नरवर के लिये चल दिया। इधर-उधर के छोटे-छोटे से हिन्दू राव और राय अपनी वफादारी प्रकट करने के लिये सहायक हुये। गियासुद्दीन के मार्ग मे जो छोटे-छोटे राव और राय पडे थे उन्होने उसकी निभाई। प्रजा—जनता—अपनी जात-पांत, पचायत, खेती-किसानी और जीवन की अन्य कठिनाइयो मे उलझी हुई थी। उसने अपने नित्य के कार्य-क्रम को जारी रक्खा। जब गियासुद्दीन एक तरफ से और चन्देरी का सूबेदार दूसरी तरफ से नरवर पर चढाई के लिये ग्वालियर राज्य की सीमा के भीतर आ गये तब भी गांवो मे लड पडने की दम नही जागी, चिन्ता अवश्य बहुत बढ गई—कब क्या होता है। गियास या चन्देरी के सूबेदार ने गॉव नही उजाड़े और खेती भी उतनी ही नष्ट की जितनी उनके घोडो को चरने के लिये चाहिये थी।

गियास नरवर से अभी कुछ दूर था। पश्चिम-दक्षिण मे कुञ्जर वन का सघन, ऊबड खाबड और बडा क्षेत्र उसके और नरवर के के बीच मे था। वह अपने सूबेदार के ससैन्य आ मिलने की प्रतिक्षा मे जङ्गल से घिरी हुई, एक खुली जगह मे ठहर कर विश्राम करने लगा।

नरवर के किलेदार को गियास के आने की उस समय सूचना मिली, जब उसने नरवर के चारो ओर, आने-जाने वालो को, बिलकुल रोक देने के लिये चौकियो की जकड लगा दी। किलेदार ग्वालियर समय पर समाचार न भेज सका। किले के फाटक बन्द कर दिये और जूझ जाने की तैयारी मे लग गया।

नरवर के उत्तर मे दो कोस पर मगरौनी नाम का गाँव है वहाँ के बने हुये लोहे ताम्बे इत्यादि के बर्तन भारत मे दूर-दूर तक टॉडो पर लद कर बिक्री के लिये जाते थे। मगरौनी घेरे के भीतर कर लिया

गया। जो गाँव घेरे की परिधि मे न लाये गये थे उनके निवासी भागकर दूर के गाँवो या पास के जङ्गलों मे अपनी-अपनी सुविधा के अनुसार चले गये।

उतरते अगहन की आधे पाख वाली चाँदनी पश्चिम के क्षितिज की गोद मे लीन होने वाली थी। गियासुद्दीन की सेना का प्रधान शिविर सजग था। जगह-जगह लक्कड़ो के अलाव जल रहे थे। शिविर के चारो ओर आड़-ओटे, पहरे चहल-पहल। बीच मे गियासुद्दीन की आलीशान रावटी। रावटी के एक भाग मे हरम दूसरे भाग मे दरबार-भवन और उससे लगा हुआ गियास का बैठक--खाना।

सेना के शोर-गुल और जङ्गल के काटे जाने के कारण हाथी गेड़े, अरने कुछ दूर गहरे मे हट गये थे। परन्तु हाथियो की चिंघाड़ हवा के झोको के साथ कभी-कभी शिविर मे सुनाई पड़-पड़ जाती थी। बीच-बीच मे नाहर की गरज भी।

शिविर के जो सिपाही सिरे पर थे उनको ये आवाजे अधिक स्पष्ट सुनाई पड रही थी। अलावो मे लक्कड पर लक्कड़ डालकर प्रज्वलित अग्नि-शिखाओ मे वे अपने डर को मिटाने का प्रयत्न कर रहे थे। दूर के पहाड धूमरे धुँधले बादलो की आडी-तिरछी रेखाओ से दिख-दिख जाते थे। दूर के पेड़ धोखे की टट्टियो जैसे, और पास के ऊँचे मोटे पेड़ों की झुरमुट मे हवा से हिल जाने वाले पत्ते कुछ धमकी-सी दिखलाने वाले। जब लौ बहुत तेज हो जाती तब वे चचल चमक मे लुकते-छिपते से दिखते। लौ धीमी पडती तो उसके टेडे-मेड़े विकृत आकार खड़े मुर्दो के जैसे। फिर लौ तेज हुई और तुरन्त मन्द, तो जैसे मुर्दो के प्रेत बन गये हो। दूर से हाथी की चिघाड या नाहर की गरज-सुनाई दी तो सिपाही अलाव के और नजदीक आ गये और हथियारो पर बार-बार निगाह डालने लगे। इनके सिर पर केवल आकाश का तम्बू था।

गियास की रावटी के बैठक-खाने वाले खण्ड मे एक पीढे पर अँगीठी जल रही थी दूसरे पर अधभरी सुराही और रत्न-जटित स्वर्ण

प्याले। खवासिनें विदा कर दी गई थी। गियास के मसनदी तख्त के नीचे मोटे कीमती कालीन पर ख्वाजा मटरू बैठा था। हाथी की चिघाड़ और नाहर की गरज़ वहुत क्षीण होकर कभी-कभी सुनाई पड जाती थी। कुछ देर पहले से बातचीत हो रही थी। राई गॉव को भेजे गये जासूसो ने रास्ते में ही समाचार दे दिया था कि उस भागी हुई लडकी और नटो की तलाश की जा रही है, जासूसो ने समाचार मे इतना अन्य समाचारो के साथ अपनी तरफ से मिला दिया।

सुल्तान को विश्वास था कि वह भागी हुई सुन्दरी नटो के बीच मे है और नटो को जासूस ढूंढ पावे, या न ढूंढ पावे नटो को नरवर की चढाई का हाल, जहां भी होगे, मालूम हो जायगा और वे शिविर मे स्वय आ जायेगे। इसके सिवाय माडू से इतनी दूर निकल आने के बाद अब लौटना असम्भव था।

मटरू बोला, 'जहापनाह अगर मुनासिब समझे तो चन्देरी के सूबे-दार नरवर को घेरा डाले रहने के लिए छोड़ दे और ग्वालियर को जा घेरे। शायद मृगनयनी के पास वह भी वह पहुँच गई हो।'

सुल्तान ने उबटा सा खाये हुए स्वर मे कहा, 'गांव से उसको ग्वा-लियर जाना होता तो जासूस यह खबर क्यो लाते कि वह और नट लापता है।? मगर यह कुछ ठीक मालूम होता है कि नरवर का घेरा सूबेदार डाले रहे और हम लोग यहा से चलकर ग्वालियर का घेरा डाल दे। मेवाड़ का राना इस लडाई मे किसी तरह से शामिल न होगा। जौनपुर का कोई डर नही है क्योकि सुल्तान भागकर बङ्गाल चला गया है। मुझे एक ख्याल आ रहा है' मटरू। वाह! क्या कहना है।।'

'जहांपनाह।'

'ओ म्या ग्वालियर को खतम करके कालपी और फिर कालपी से दिल्ली। वालिद मरहूम जो नही कर पाये वह बन्दा कर गुजरे तो नाम हो जायगा! क्या कहते हो?'

'कितना बड़ा ख्याल है, जहॉपना। बेशक!!'

हाथियो की एक पतली सी चिंघाड़ सुनाई पडी। गियास के मन मे गुदगुदी उठी।

बोला, 'कितनी सुहावनी मालूम होती है यह बोली रात के समय मे। घना जगल, जाडो की डूबती चादनी, सुनसान वियावान मे हाथी बोल रहा है! थोडी देर पहले शेर की गरज भी सुनाई पडी थी। मौका मिले तो शिकार खेल डालूँ। घेरा डालकर सौ–पचास हाथी तो यहाँ से पकड ही ले चले। अबकी बार नरवर के इलाके को मालवे की सल्तनत से ही मिला ही लेना चाहिये।'

'चन्देरी तक तो सल्तनत है ही, नरवर का इलाका शामिल कर लेने से बडी तरक्की हो जायगी जहापनाह। एक सूबेदार नरवर मे और दूसरा ग्वालियर मे।'

'तुम अहमक ही रहे। ग्वालियर को जीत लेने पर राजा मानसिंह को ही सूबेदारी बख्श दूँगा, मुझको मतलब मृगनयनी से है न कि ग्वालियर की जब्ती से। जमीन और वैर भंजाने के लिये राजपूत अपना सिर तक दे देने को तैयार रहता है।'

मटरू के मन मे उठा, और स्त्री के पीछे सारी दुनियाँ मे आग लगा सकता है।

परन्तु उसने कहा, 'जहापनह बिलकुल सही है। नरवर की सूबेदारी राजसिंह कछवाहा को दे दी जाय। खिराज हर साल देता रहेगा।'

'जो काम वालिद मरहूम नही कर पाये वह शायद मेरे हाथो हो जायगा। मगर इस वक्त सवाल यह नही है। सवाल है नट अगर आना भी चाहेगे हमारे हजूर मे तो पहरों के डर और खतरे की वजह से बिचक जावेगे।'

'जहांपनाह का हुकुम हो तो उन्ही जासूसो को तलाश के लिए छोड़ दिया जाय।'

'सोच रहा था नटो को अपना खेल दिखलाने की आम इजाजत दे दी जाय अपने आप आ जायेगे।'

'बिलकुल बजा है।'

'लेकिन दूसरा ख्याल कहता है कि कुछ पागल राजपूत नट बनकर छावनी मे आ गये और उन्होने कोई बडी शरारत कर डाली तो फौज पर बुरा असर पड़ेगा। इसके अलावा, चन्देरी से दस्ता आता ही होगा फिर शायद ग्वालियर की तरफ चल देना पडे।'

'राजपूत नट बनकर शायद न आवें, जहापनाह।'

'क्या तुम तो बुद्धू हो! बुजुर्ग अलाउद्दीन खिल्जी को चित्तोड के राजपूतो ने कितना बडा धोखा दिया था जो डोलियों मे बैठकर आ गये थे।'

मटरू ने सहमकर समर्थन किया। गियास के सकेत पर उसने अधभरी सुराही मे से एक प्याले मे कुछ डाली। उसने पी और सरूर का मजा लेने लगा।

हाथी की चिघाड फिर सुनाई पडी।

फिसलते रिपटते स्वर मे गियास बोला, 'कितनी प्यारी बोली है।'

[१३]

लाखी और अटल नटो के साथ मगरौनी चार-पाच दिन मे आ गये। ग्वालियर और मगरौनी मे अन्तर बाईस-तेईस कोस का ही था परन्तु उनको पहाडो, जंगलो, नदियो को पार करने मे समय लगा और नटो की मर्जी पर इनकी यात्रा निर्भर थी।

मगरौनी मे नटो ने गाव के बाहर अपने अभ्यास के अनुसार डेरा डाल लिया। वहा अटल और लाखी को आश्रय लेना पडा।

लाखी सोचती थी इससे तो ग्वालियर ही अच्छा था, कहाँ आ गई? मर गई तो कउये राई तक हाड भी नही ले जायेंगे!!

अटल के मन मे उठा, मैने व्यर्थ ही यह जजाल बिसाया!

जब लाखी के सूखे चेहरे, थँमे हुये से नेत्र और कराहते हुये से स्वर को सुना, तो उसने अपने को धिक्कारा—इसका वहां या कही भी कौन है ? गङ्गाजल की शपथ लेकर मैने कोई वचन हारा था ? भगवान को साक्षी करके इसका हाथ पकड़ा था !! अब क्या मै अपने वचन से मुह मोड़ूँगा ? कभी नही।

परन्तु क्या नटो के बीच मे रह कर नट बन जावे ? जैसा यह पोटा है और जैसी उससे बढकर पिल्ली है ! पर जाये तो कहा जायें ?

यहाँ लोहे और ताम्बे का काम बहुत चलता है और मजदूरो की सदा अटक बनी रहती होगी, पेट भरने लायक मजदूरी अवश्य मिल जायगी ढूढूँगा ?

दूसरे दिन अटल मजदूरी और निवास—स्थान की खोज मे गाँव मे निकल गया।

पिल्ली लाखी के पास आ बैठी।

बोली, 'हाय ! हाय !! कितना दु ख हुआ तुमको इस यात्रा मे !!! हम लोग तो इस तरह चलते-फिरते ही रहते है, तुम्हारे लिये नई बात थी। हमे तो एक दिन मिल गया आराम के लिये सो सुस्ता लिये,पर तुम तो वैसी ही दिख रही हो जैसे थकी कल दिखलाई पड रही थी। आगे दिन बहुत अच्छे आ रहे है, चिन्ता मत करो। नायकिन की बात कभी झूठी नही पड़ी।'

लाखी ने सास भरके कहा, 'जैसे भी दिन आयेगे, भुगतूँगी। किसान मजदूर के अच्छे बुरे दिन क्या।'

'तुम्हारी सखा निन्नी से मृगनयनी हो गई। हाथ देखने की बात सच्ची निकली न ?' पिल्ली ने स्मरण कराया।

पिल्ली और नायकिन अपने जादू टोने के बल और हाथ की रेखाओ को, देखकर भविष्य की बात बावन तोले पाव रत्ती बतलाने की शक्ति का, यात्रा मे भी कई बार जिकर कर चुकी थी। लाखी को कुछ विश्वास था।

लाखी ने प्रतिवाद नही किया,—'सो तो जानती हूँ। परदेश में तुम्ही सब का भरोसा है।'

'नायकिन कहती है कि एक महीने के भीतर तुम किलेदारिन या ठिकानेदारिन तो क्या कही की रावरानी बनोगी।'

'अच्छी मजदूरी मिल जाय और जात-पात वाले तङ्ग न करे, तो हमारे लिये यही सब कुछ है।'

'माडू चलकर देखना तुमको दिन रात कितना सुख चैन मिलेगा।'

'मांडू कितनी दूर है यहां से ?'

'अरी यो ही थोडी दूर। पहाड, जङ्गल कुछ कोस और मिलेगे, फिर हरा-भरा मालवा जहाँ माडू के सुल्तान का राज है। बड़ा अच्छा देश है। वहाँ ऐसी भुखमरी थोड़े ही है जैसी यहां छाई है। मेरे पास वहाँ का कुछ है, देखोगी ? मै तुम्हे कुछ दिखलाऊँ ? पर यहाँ किसी को मालूम न होने पावे।'

'ऐसी क्या चीज है ?'

'अरी अभी दिखलाती हू। पहले मेरे सिर की सौगन्ध खाओ कि किसी को जाहिर नही करोगी।'

लाखी के रूखे होठों पर मुस्कान आई जैसी गर्मियो के सूखे नाले में पहली छिछली वर्षा की पतली धार आई हो। कहा, 'खाती हूँ सौगन्ध बतलाओ, क्या कोई खेल है ?'

पिल्ली ने अपने वस्त्रो मे से सोने और मोतियो के गहने निकाल कर उसके सामने रख दिये। उसने अपने मोतियो के हार से मन मे उनकी तुलना की। यह उनकी अपेक्षा अधिक दमक वाले थे। अपने मोतियों को वह सयत्न सुरक्षित रक्खे हुये थी।

पिल्ली बोली,'एक छोटे से रजवाडे के बराबर है मोल इनका। ये तुमको मिल जाये तो एक रजवाडे की मालिक तो यो ही हो गई।'

'कैसे ?' लाखी को कुतूहल हुआ।

पिल्ली ने लाखी के कुतूहल को और भी जगाया, 'अरी यह क्या उनसे कई गुने और मिल जायेंगे, मोल भी उनका इतना कि नरवर का किला खरीद लो।'

नरवर का किला मगरोनी से दो कोस था। सिन्ध नदी के बीच में। ग्वालियर को न देख पाया तो इसी को देखूगी किसी दिन। लाखी के मन मे एक लहर दौड़ी।

'कैसे मिल जायेंगे ?' उसने फिर पूछा।

'माँडू चलकर।' पिल्ली ने उत्तर दिया।

लाखी के नारी हृदय का सन्देह चौका।

उसने उसी प्रश्न को तिहराया, 'कैसे ? किससे ?'

परन्तु पिल्ली नट-नारी थी। उसने लाखी की आँख के कोने मे सन्देह की कोंध को परख लिया।

बोली, 'नायकिन ने अभी इतना ही बतलाया है। चार छ: दिन मे वही बतलायेगी। अभी इतना तो मैं कह सकती हूँ कि इनको तुम ले लो और समझ लो कि ऐसे मिले और मुझसे मिले।'

पिल्ली ने मुस्कानो के साथ गहनो को उठाकर उसकी ओर बढाया सुलभ अलङ्कार-मोह लाखी के भीतर उठ खडा हुआ और वह गहनो को ग्रहण करने के लिए हाथ बढ़ाना ही चाहती थी कि नारी-सहज शंका फिर आडे आ गई। यदि ये गहने पीतल और काँच के नही है तो नट सरीखे लोगो के पास कहा से आये ? और ये इतनी लरज लरजकर क्यो यो ही दिये डाल रही है ? बदले मे मुझसे क्या चाहेगी ? अटल की ओर बांकी तिरछी निगाहो से मुस्का-मुस्काकर देखा करती है, तो क्या मेरी सौत बनना चाहती है ? अटल से बात करके तब इन गहनो को लूँगी, वैसे है बढिया।

कहा, 'अभी रक्खे रहो। उनके आने पर ले लूँगी। तुम मुझे बहुत चाहती हो।'

पिल्ली ने सोचा पानी बिलमा। बोली, 'जब बढ़िया लहंगे पर सुन्दर चुन्हरी ओढोगी और उसमे से ये गहने दिखलाई पड़ेगे तब मालूम पडेगा कि कही की रानी या बेगम हो। मांडू के बड़े-बड़े लोग आह भर कर रह जायेंगे।'

पिल्ली नखरे के साथ हँस पड़ी। लाखी उसकी उथली छिछली प्रकृति को पहिचान गई थी, इसलिये बात बुरी नही लगी परन्तु उसको लगा इस तरह की चून्हरी को पहिनने से अङ्गो का एक-एक रोम दिखलाई पडेगा और देखने वाले समझेंगे कि मैं भी कोई नट बेड़िनी हूँ। छि!! परन्तु ये गहने यदि सच्चे हो? मझोले मोटे कपड़े के नीचे पहिने जाये और स्त्रिया देखे तो जल तो जरूर उठेंगी ईर्षा के मारे और पुरुष देखेंगे, तो अपना मन मारकर अपनी गैल पकड़े चले जायेंगे कल्पना मे अपने को विजयी पाना उसे अच्छा मालूम हुआ।

परन्तु अटल का चित्र! आँखो के सामने घूम गया।

'चुन्हरी तो हमारे यहा जैसी पहिनी जाती है वैसी ही पहिनूंगी।' लाखी ने कहा।

पिल्ली ने एक चोट की—'रानी मृगनयनी क्या ग्वालियर मे वैसी ही कपडे पहिने होगी जैसे गाव मे पहनती थी? और तुम यदि ग्वा-लियर उनके साथ जाती तो आज जैसे पहिने हो वैसे ही पहने फिरती?'

लाखी को कटुता के साथ अपने गांव की स्त्री की बात याद आ गई। निन्नी की पीक हाथ पर लेनी पडेगी और राजा की...। उसके विचार को आगे नही बढने दिया।

बोली, 'यही यदि बनी रही या माडू चली, जैसा तुम कहती हो, तब देखा जायगा। अभी तो ये ही अच्छे।'

'माडू तो चलना ही है। बड़ा नगर है। यहा क्या धरा है?'

'चलेंगे। यहां तो हमारे यहा से भी बडे पहाड और जङ्गल है। सुनते हैं हाथी तक हैं यहा के जङ्गलो मे!'

'हा है। बुरा देश है यह। पर रास्ता माडू के लिये सीधा यही हो कर पड़ता है। तुम्हारी और कुवर जी के जात के लोग तो होंगे ही यहा पर उनको कुछ मालूम न होने पावेगा।'

लाखी सोचने लगी—मालूम भी हो जायगा तो भुगतूँगी।

'माडू मे स्यात् जाति के लोग न हो ?' उसने पूछा।

पिल्ली ने उत्तर दिया, 'हो या न हो, मालूम नही। पर इतना वडा सुल्तान तो है। अरी उसको देखोगी तो अचरज करोगी।'

'देखूँगी किसी दिन माडू के सारे खेल-तमाशे देखूँगी।'

'खेल-तमाशे तो वहाँ ढेरो है। हाथियो की कुश्ती, आदमियो की कुश्ती औरतो की कुश्ती, गाना, बजाना, नाचना, भालुओं के नाच और न जाने क्या क्या।'

'हाथियो की कुश्ती! कैसी होगी वह ?'

'लड़ते है, चिघाडते है, महावत उनकी गर्दन पर बैठकर लडाते हैं और सुल्तान एक बडे हाथी पर बैठकर सब देखता रहता है। प्रजा एक तरफ खड़ी आनन्द मे झूमती रहती है।'

'बडा विचित्र होगा वह तमाशा। जरूर देखूँगी।'

'तुम बढ़िया-बढिया गहने और रेशम के रङ्ग-बिरगे कपड़े पहिनकर जब वहा तमाशा देखने जाओगी तब भीड की भीड औरते तुम्हे देख कर जल-जल उठेगे। कहेगी, हे भगवान यह अप्सरा कहा से आ गई यहां!'

'ह! ह!! ह!!! हा, हो तो सकता है ऐसा। दूसरो के गहने कपड़े बहुतेरो को अच्छे नही लगते।'

लाखी हँस-हँसकर बात कर रही थी उसकी कल्पना हाथियो की कुश्ती से उलझ रही थी।

पिल्ली ने अवसर आया हुआ समझकर कहा, 'एक बार इन गहनो को पहिनकर देखो तो कैसी खिलती हो। मन को न भावे तो लौटा देना। सच्चे और अनमोल हैं, इतना तो मैं कह सकती हूँ।'

पिल्ली ने गहने बढाये और लाखी ने ले लिये। पहिनने शुरू कर दिये।

पिल्ली उत्साह के साथ बोली, 'इनके ऊपर रेशमी लँहगा और चून्हरी भी पहिनकर देख लो। देखो तो। फिर उतार डालना।

जरा देख भी लूँ कैसी जचती हूँ लाखी ने सोचा। गहने पहिन लिये। उनकी आभा से वह दमक उठी। उसी दमक को उसने अपनी आखो मे अवगत किया। पिल्ली दौडकर गई और लँहगा—चून्हरी उठा लाई। लाखी ने उनको भी पहिन लिया। अब माडू की भीड मे स्त्री—पुरुप देखेगे तो नटनी नही कहेगे, क्योकि मै पायजामा नही पहिने हूँ और नटनियाँ ऐसे जेबर नही पहिनती होगी। तमाशे की भीड मे स्त्री-पुरुप मुझको देखते रहेगे और मै हाथियो की लड़ाई को देखती रहूँगी। कोई भी देखे तो क्या, गहने-कपडे तो देखने के लिये ही बनाये गये हैं। वह मन ही मन प्रसन्न होकर सोच रही थी।

पिल्ली ने नृत्य का एक चक्कर काटकर ओज के साथ कहा।

'रानी सी लग रही हो बिलकुल महारानी—सी। कोई कह सकता है किसान मजूर हो। अरी, अपना काम तो करना ही चाहिये, पर ऐसे गहने कपडे कही से मिल जाये तो उन्हे न पहिनो ?'

लाखी के मन मे आया अब उतार कर रख दूँ परन्तु अपने सौदर्य और उसकी आभा का मेल थोडी देर और देखना चाहती थी।

उसने पूछा, 'मांडू मे क्या बहुत स्त्रियो के पास होगे ऐसे गहने कपडे ?'

पिल्ली ने बतलाया, 'बहुत लोगो के पास कहा रक्खे है ? प्रजा में किसान, कारीगर, मजदूर ज्यादा है। मोटे-झोटे कपडे पहिनते है। उन्ही को मेलो—ठेलो मे रग बिरगा कर लेते है। थोडे से सेठ-साहूकार और सरदार हैं, उनके यहा भी ऐसे न निकलेगे। तुमको भीड मे देखते ही सुल्तान हाथियो की लडाई पर से आंख हटाकर तुमको देखने लगेगा।

'हो सकता है।'

'हो सकता है नही, ऐसा ही होगा। वह तो इतना लट्टू हो जावेगा।

तुम्हारे ऊपर कि हाथी पर से उतर पडेगा और पास आकर पूछने लगेगा कि कहाँ से आई हो ?'

पिल्ली हँस पड़ी। लाखी को भी हँसी आ गई। हाथ और गले के दमकते हुये अलकारो पर आँख बार-बार गई। वे उसको अच्छे लगे। उनकी आभा को वह आत्मसात-सा कर रही थी।

पिल्ली ने सोचा अब समय आ गया।

बोली, 'सुल्तान तो तुमको पास से देखकर बेहोश हो जावेगा।'

'क्यो ?'

'अरी तुम अपने रूप और गुन को क्या जानो। यह तो देखने वाले ही जान सकते है।'

'हू—ऊँ हुँ !'

'मैं कहती हू ये सोना मोती है कितने ? वह तो बरसा देगा तुम्हारे रूप-गुण के ऊपर ढेरो के ढेर। तुम्हारे हाथ चूम लेगा और कहेगा महलों मे रहो। वहां उसकी रानी बनकर रहोगी, हुक्म करोगी और वहीं कुवक जी उसके दीवान बन कर रहेगे। हम गरीबो को न भूल जाना।'

'क्या !'

'अरी मेरी रानी, झूठ थोड़े ही कहती हू। उसकी महारानी बन कर रहोगी। वह तुमको नर्मदा जी का पानी पीने के लिये मँगवाया करेगा, धरम थोड़े ही लेगा तुम्हारा। अपने साथ हाथी पर बिठलाकर जङ्गलो मे शिकार खिलवायेगा और तुम्हारे पैरो की धूल को अपने माथे पर चढावेगा। यहा से माडू चलो तो दो दिन में हो जावेगा यह सब। न हो जाय तो मेरा सिर काटकर फेक देना।'

लाखी के दिमाग मे एक तूफान सा उठा। राई गाव साँक नदी राई के पहाड, खोहे, जङ्गल, शिकार निन्नी मानसिह और हाथियो की लडाई एक साथ चक्कर खा गये। ये सब और चमक दमक वाले गहने और तडक-भडक दार कपडे आधी के बवण्डर मे जङ्गल के सूखे पत्तो की तरह एक दूसरे के साथ लिपटकर उड़ने लगे। निन्नी और मानसिह कुछ अधिक स्पष्ट हुये तो पहिने हुये गहने-कपडे की आभा पर आख के जाते ही फिर उसी बवण्डर मे पड़ गये।

पिल्ली ने सोचा लाखी निश्चय मे है।

वोली, 'मन मे रक्खे रहो। किसी से कहने की जरूरत नही है। जब जैसा मौका आवे तब तैसा करना।'

लाखी के दिमाग की आधी कुछ हल्की पडी। परन्तु उसके मुह से कुछ नही निकला।

पिल्ली ने कहा, 'अरी रानी तुमको थोडे ही कुछ करना पडेगा अपनी तरफ से। किसी तमाशे मे जाने की तुमको जरूरत नही पडेगी। जैसे ही सुल्तान को खबर लगी कि तुम सरीखा हीरा किसी कुटिया मे छिपा पडा है कि वह खुद हाथ जोडता हुआ आयेगा, हाथी पर बिठलाकर महल मे ले जावेगा और छाती से लगाकर अपने भाग्य को धन्य समझेगा।'

लाखी के मन के भीतर की आँधी झटका खाकर यकायक बन्द हो गई और उसको कुछ साफ सा दिखलाई पड़ा। उसने यकायक प्रश्न किया, 'ये गहने कपड़े तुम्हारे पास कहाँ से आये क्या सुल्तान ने दिये थे।'

'मेरे कहा ऐसे भाग?' उसने सावधानी के साथ उत्तर दिया, 'मुझको तो तुम सरीखे लोगो का सहारा है आसरा है। कपडे चोरी के नही है, इस बात की वडी से वडी सौगन्ध खा सकती हूँ।'

'कहा से आये?' उसने फिर पूछा।

पिल्ली ने बारीकी के साथ लाखी के चेहरे को भाँपने की चेष्टा की।

'अच्छा वतला दूं, पर मेरे सिर पर हाथ रखकर सौगन्ध खाओ कि किसी से कहोगी नही।'

'सौगन्ध खाती हूँ।'

'जैसे आगी और सुगन्धि नही छिपती, वैसे ही तुम्हारे रूप का नाम नही छिप सका। सुल्तान ने ही तुम्हारे लिये भेजे हैं।'

'किसके हाथो ?'

'हमारे ही नट के हाथो।'

'या उन सवारों के हाथो जिनमें से दो को हमने मार गिराया था ?' उसने अपने मन मे प्रश्न किया।

लाखी चुप रही। कई क्षण। पिल्ली ने सोचा तीर जा बैठा। बोली, 'और अधिक मत पूछो। सुल्तान जब तुमको गले लगाकर अपनी बीती घड़ियो को बखानेगा तब सब मालूम हो जायगा। उसने निन्नी के बारे मे भी सुना था, चाहता होगा दोनो सखियाँ साथ ही रहे। अब अकेली ही राज करना।'

लाखी ने कनखियो देखा—कही से अटल न आ जाय। फिर गहनो कपड़ो पर ध्यान गया। वह सबको एक एक करके उतारने लगी।

पिल्ली बोली, 'पहिने रहो। तुम्हारे ही तो है। कुँवर साहब भी देख लें कैसी फब रही हो।'

'नही,' दृढ़ स्वर मे लाखी ने कहा। उसने सब उतार दिये और अपने मोटे-झोटे कपड़े पहिन लिये। अन्तर पर ध्यान गया। कहा वे कहाँ ये ? उनमे कितनी तड़क–भड़क थी !! देखा जायगा फिर कभी पहिनूँगी पर उनसे कहकर। क्या सब बतला दूँ ? आज नही पर एक दिन अवश्य और यही मगरौनी मे। उसने निश्चय किया।

थोडी देर मे अटल घबराया हुआ आ गया। आते ही उसने सबसे कहा, 'माँडू का सुल्तान नरवर पर चढ आया है। चौकियाँ पड़ती जा रही है।'

'माँडू का सुल्तान ! हमारा राजा !!' पोटा के मुह से निकल पडा,—'तुम्हे कैसे मालूम ? किसने कहा ? कहाँ है ? कितनी दूर ?'

अटल ने उसी घबराहट मे सूचना दी,—'गाँव मे सुन आया हूँ। हड़वडी मच गई है लोग नरवर नगर मे भाग जाने की तैयारी मे जुट पडे है। चलो, हम सब नरवर चल दे।'

नट एक दूसरे की तरफ देखने लगे।

नायकिन बोली, 'अपुन लोगो का लडाई वाले क्या करेगे। नरवर के कोट मे घिर जाने से तो बडी मुश्किल पड जायगी। यहाँ से निकल चलो। सुल्तान की छावनी मे खेल तमाशे दिखलायेगे और टके कमायेगे। नरवर के भीतर क्या रक्खा ?'

नटो ने उसका समर्थन किया। लाखी ने प्रतिवाद,—'नही। हमतो नरवर के कोट के भीतर जायेगे।' अटल चुप रहा।

पिल्ली लाखी का हाथ पकड़कर एक ओर ले गई।

उसने लाखी को मनाया,—'मेरी रानी मौके को मत छोडो। मुझको दिखता है सुल्तान यहाँ तक तुम्हारी खोज मे आया है। यहाँ से माँडू गधो या बैलो पर बैठकर नही जाओगी, हाथी पर बैठकर झूमती हुई जाओगी।'

'नही।' लाखी ने धीमे स्वर मे कहा और वह हाथ छुटाकर सामान इकट्ठा करने मे लग गई। अटल उसकी सहायता करने लगा। नट एक जगह सिमटकर कुछ क्षण परस्पर सलाह करते रहे। अन्त में उन्होंने भी कोट के भीतर जाना तै किया। उनमे से पोटा और पिल्ली को लाखी ने थोड़ी देर बाद वहाँ नही देखा। शेप नट अपना सामान बाँध रहे थे, परन्तु ढिलाई के साथ, धीरे धीरे।

लाखी और अटल उन लोगो की ढिलाई पर कुढ रहे थे। अटल ने कहा, 'नायकिन देर मत करो। यदि तुर्क आ गये तो फिर कही के न रहे।'

वह इत्मीनान के साथ बोली, 'फिकर मत करो। अभी तो थोड़े से गाँव वाले ही चले है गाव से।'

इतने मे कुछ गांव वाले गठरी-पोटरी बाधे भागते हुए आये और नरवर की दिशा मे चले गये।'

अटल ने कहा, 'देखो न, लोग सिर पर पैर रखकर भागे जा रहे हैं।

वह इतराई,—'ओ हो हो! ये तो डरपोक किसान मजदूर है। सेठ लोगो को तो आने दो जिनके साथ हथियार बन्द सिपाही भी होगे। इतना नही सोचते कि यह इतनी रूपवाली लाखी साथ मे है, अकेले-दुकेले नही जाना चाहिये, कोई रास्ते मे आ घेरे तो क्या होगा? पिल्ली और पोटा को आ जाने दो वे किसी खोज मे ही तो गये है।

व्याकुलता के साथ इधर-उधर देखकर अटल बोला, 'सेठो का क्या तुर्कों को कुछ दे लेकर वही के वही पडे रहेगे। बर्तन बेचेंगे और टके सीधे करेगे। उनको कोई नही मारेगा। आफत तो हम सरीखे लोगो पर रहेगी।'

'अरे तो प्राण क्यो दिये देते हो मरद होकर? और अपने पास ऐसा क्या रक्खा है जिसके लिये तुर्क आवेगे?' नायकिन ने उपेक्षा के साथ कहा। अटल की आंख लाखी पर गई!

लाखी ने नायकिन को संकेत किया, 'है तो। हमारे पास नही है पर तुम्हारे पास तो है गहना कपडा। सोना, मोती।'

'सोना, मोती!' अटल के मुह से आश्चर्य के साथ निकला।

'हाँ!' लाखी ने दुहराया।

नायकिन ने उपेक्षा की 'मै कहनी हमारी चिन्ता मत करो। है जरूर हमारे पास, पर वह ऐसा छिपाकर रख लिया है कि कोई भांप तक नही सकता।'

'मगर सोना और मोती!' अटल के मुह से फिर निकला।

गाँव का ठिगने कद का अधेड़ अवस्था वाला, मोटा भारी भरकम पेट को हाँफो के साथ हिलाता हुआ, एक पुरुष निकला। उसके साथ कुछ व्यक्ति, घूँघट डाले हुये, स्त्रियां रोते किलपते बच्चे और कई गधों की पीठ पर लदा हुआ सामान, पीछे बर्तनो की भरी बैलगाडी आती हुई दिखलाई दी।

लाखी ने कहा, 'इन्ही के साथ चल दो ; यह कोई सेठ है।'

नायकिन बोली, 'पोटा और पिल्ली को तो आ जाने दो।'

उस मोटे पुरुष के काफिले के पीछे से एक भीड का प्रवाह सा फूट पड़ा। भीड़ भागकर उस पुरुष के आगे निकल आई।

मोटा घिघियाया,—'भाइयो, हमारे साथ चले चलो।'

भीड़ मे से एक कहता गया, 'तुम्हारी गिरस्ती की रखवाली मे अपनी जान दे देवें हुँ !!'

अटल ने लाखी से कहा,—'हम तुम इसी के साथ चले। न जाने इनके पोटा पिल्ली कब तक आवेंगे।'

वे दोनो चल पडे बैल चरने के लिये कही भटक गये थे इसलिए घबराये हुये अटल ने उनकी खोज नही की। नायकिन ने भी विलम्ब नही किया। जल्दी-जल्दी सामान बाँधा और अपने पशुओ सहित नरवर की ओर सब नट पीछे-पीछे चल पड़े। सिंध नदी को पार करके थोड़ी दूर गये होगे कि ये नट उन दोनो से जा मिले। नरवर नगर मे पहले ही समाचार पहुँच गया था। फाटक बन्द कर लिये गये थे परन्तु इस भीड की विनय-प्रार्थना पर फाटक खोल दिये और इन सबको भीतर ले लिया गया। संध्या के पहले पहले जितने लोग आये उन सबको इसी प्रकार भीतर ले लिया गया। परन्तु सूर्यास्त होते ही फाटक बन्द कर लिये गये और फिर किसी को भीतर नही आने दिया। सूर्यास्त तक पिल्ली और पोटा नही आये।

[३२]

उस दिन सवेरे से ही यकायक ठण्डी हवा चली और तीसरे पहर तक चलती रही। चौथे पहर झंझावात तो रुका, परन्तु ठण्ड बढ गई। पश्चिमी की पहाड़ियो के ऊपर सूर्य दमदमाती हुई बड़ी विन्दी की तरह लग रहा था। किरणो का तीखापन मानो ठण्डी हवा के साथ कही उड़कर चला गया था। ग्वालियर के उत्तर-पूर्व और उत्तर पश्चिम की पहाडियाँ धूमरे कुहासे में रहस्यमयी हो रही थी। पूर्व की दिशा की आडी पहाडियो तक मैदान मे किरणो ने मानो सुनहरी रज छिडक दी हो।

मृगनयनी और मानसिंह महल की छत पर थे। ऊँची मुड़ेरी की खिडकियो और झिझरियो मे होकर किरणो के चौक से पुर रहे थे। एक मञ्च पर दोनो बैठे हुये थे। कोई और वहा न था।

'वीणा का वजाना वहुत दिनो मे आ पावेगा मुझको ऐसा लगने लगा है।' मृगनयनी झिझरी से झरने वाली किरणो की ओर मुह करके वोली।

मानसिंह ने धीरे से उसकी ठोडी को ऊँगलियों से अपनी ओर किया और उसकी मुस्कान मे अपनी मुस्कान को घोलते हुये कहा, 'मैने पूछा था तुम्हारी मुस्कानो के साथ सूर्य की किरणे क्यो खेलने लगती है, सो तुमने उसका यह उत्तर दिया।'

'मुझको तो किरणे कही खेलती नही दिखलाई पड़ती। आपको जो कुछ भी दिखलाई पड जाय सो थोडा है।' मृगनयनी बोली। एक वार वरोनियो को भोह तक झुलाकर फिर आखे नीची कर ली।

मानसिह ने उसको अङ्क मे भर लिया।

'अब कहो क्या कह रही थी।'

'मैं कभी कुछ कहने भी पाती हूँ, आप सदा इस तरह मेरा मुह वन्द कर देते है।' मुस्कराई।

'हा कर देता हूँ और करता रहूँगा !'

'तो अब मै क्या कहूं ?'

'वही जो कह रही थी। अब अच्छी तरह सुनूँगा।'

'जब मैने वीणा का बाजा सुना तो अचम्भे मे पड गई। सोचा थोडे से तारो का बाजा है, चार-पाँच दिन मे बजा लूँगी, पर दिखता है कि बरसो मे सीख पाऊँगी। लगता है कि गाना स्यात् जल्दी सीख लूँ।'

'मैने सुन लिया, अब मेरे प्रश्न का उत्तर दो।'

'कौन से प्रश्न का ?'

'किरण की ओर मुह करो।'

'कर लिया। पूछिये।'

'किरणे तुम्हारी मुस्कानो के साथ क्यो खेलने लगती है ?'

'आप खेलते है किरणो के साथ। लिजिये हो गया उत्तर। अब आप बतलाइये मैं गायक बैजनाथ-सा कितने समय मे गाने लगूँगी ?'

'समय के साथ तुमको मै बाध नही सकता। बैजनाथ कहते थे कि जिन तानों को और लोग एक महीने मे सीख पाते है, उनको तुम एक दिन मे सीख लेती हो। उनकी चेली कला की कारीगरी को तो तुम एक महीने मे ही पीछे छोड़ दोगी।'

'नही, वह बहुत चतुर है, परन्तु जब तक मैने उससे बढ़कर और कम से कम गायक बैजनाथ के बराबर नही सीख लिया है, मेरे मन को चैन नही मिलने का। मै सङ्गीत को अधिक समय देना चाहती हू। कला यदि यही मेरे पास रहने लगे तो बडा सुभीता रहेगा। नगर में रहती है। आने-जाने मे बहुत समय लगता है। फिर कभी कभी मै घण्टों उसके निकट नही पहुँच पाती हू।'

'क्यो ? क्या करती रहती हो ?'

'हू। आप अपने से पूछिये। न जाने क्यों इतना पास बिठलाये रहते है मुझको।'

किरणों के साथ मुस्कानो के खेल की बात पूछने समझने के लिये।'

'फिर गाना-बजाना कैसे सीखूंगी। और चित्रकारी भी।'

'तुम्हारा कण्ठ स्वर ही मुझको वीणा की झंकारो से बढकर मधुर लगा करता है।'

'तो मैं गवार की गंवार ही बनी रहूगी। मै पढ़ूंगी, चित्रकारी सीखूंगी और गाना-बजाना तो इतना अपनाऊँगी, इतना अपनाऊँगी कि जब कभी आप सुनें तो ध्यान-मग्न हो जाये।'

'अभी क्या कम मस्त रहता हू ?'

'मैं अभी जानती ही क्या हूं ?'

'मेरे लिए सब कुछ हो। मेरी जीवन सर्वस्व, मेरी प्राणेश्वरी, मेरी जन्म सगिनी।

मानसिंह के आठ रानिया थी, नवी मृगनयनी। ग्वालियर आकर मृगनयनी को मालूम हुआ। परन्तु परिपाटी थी, उसको बात असाधारण नही लगी और न अखरी ही। तो भी उसके मन मे प्रश्न उठा जब इन्होने पहली स्त्री से ब्याह किया होगा तब उससे भी इसी तरह का प्रेमालाप करते होगे, फिर दूसरा तीसरा और आठवाँ ब्याह किया हर एक रानी के साथ आरम्भ मे इसी प्रकार की चिकनी और मीठी बाते करते होगे, क्या मेरे साथ सदा ऐसा ही बर्ताव करेगे या किसी दसवी के साथ विवाह करेगे और मुझसे ऐसे बर्तेंगे जैसे इन आठ के साथ आज-कल बर्त रहे हैं।

'भगवान मुझको इस योग्य बनावे कि मै सदा इसी तरह आपकी कृपा पाये रहूं।' मृगनयनी ने कहा।

प्रेम के उस उफान मे भी मानसिंह को शका हुई जैसे वे आठो किसी झिझरी मे से, छिपे-छिपे ताक रही हो। मानसिंह दृढ स्वर मे बोला—'जङ्गल मे शिकार के समय जो बचन दिया था वह अखण्ड और अमर है।'

'क्या फिर कभी नाहर, अरने इत्यादि का शिकार खेलने को मिलेगा ?'

'अवश्य। जब चाहे तब। कहो तो कल प्रबन्ध कर दूँ वही राई के पीछे की खोहों और पठारो में ?'

'नही। अभी नही वैसे ही कहा। पहले कुछ सीख लूँ तब जाऊँगी राई की ओर। मैंने प्रण किया है कि सीखकर लाखी को सिखलाऊँगी।'

'यही बुला लो न। कला को अपने से मिलती-जुलती पाकर उसको अचरज होगा।'

'वह अभी नही आवेगी। लाऊँगी कभी उसको। मै चाहती हू पढ़ना-लिखना, गाना बजाना और चित्रकारी बहुत शीघ्र सीख लूँ पर आपके मारे जब सीख पाऊँ तब तो।'

'अरी महारानी; मै बिचारा करता ही क्या हू ?'

'बिचारे ? बड़े बिचारे है न आप !! अब मुझको अलग बैठ जाने दीजिये।'

'मैंने तुम्हारा बोलना तो बन्द किया नही।'

'एक बात कहू।'

'एक नही दस।'

से लेकर आई हूँ, जिसके भरोसे मरे हुये सुअर को पीठ पर लादकर गांव तक लाई थी, जिसके बूते अरने भैसे को—'

मानसिंह ने उसको आगे बात नही कहने दी। गले से लगाकर उसके होंठो को अपने कपोल से सटा लिया।

बोला, 'मैं वचन देता हूँ प्राणप्यारी मृगनयनी। समझ गया कि बल मे तुमको जीवन पर्यन्त बसाये रखने के लिये नियम-सयम ही बल दे सकेगा। तुमको कलाओ के सीखने के लिये पूरा पूरा समय दिया करूँगा, और तुमको सदा अपने निकट समझता हुआ इतना काम करूँगा, इतना कि काम को पूरा करते करते घनी उमङ्ग बनी रहे तुम्हारे दर्शन प्राप्त करने की।'

'आप मेरे स्वामी है।'

'बस ! स्वामी ही !!'

'प्राणनाथ, मेरे प्राणनाथ।' बहुत धीमे, रिपटते हुये स्वर में मृगनयनी ने कहा।

मानसिंह बोला, 'मुझको सदा ध्यान रहेगा—जैसा तुम बहुत दूर रहते भी मेरे कान मे कह रही हो, मानसिह सावधान !'

'हूं ऊँ ऐसा तो मैने कभी नही कहा।'

'अरी महारानी जी, मेरे हृदय के भीतर इसी तरह बोलोगी।'

'आप कलाओ के जानकार है सो न जाने बात को कैसा उमेठ उमाठ कर कह लेते है !'

'तुम थोड़े ही समय मे सारी कलाओ को अपने आञ्चल के छोर में बाँध लोगी, मुझको विश्वास है। फिर कैसी कैसी बाते करोगी उसकी कुछ कल्पना ही कर सकता हूँ। अच्छा, यह तो बतलाओ कि यह बात तुमको किसने सिखलाई ? नियम-सयम इत्यादि वाली बात ?'

'किसी ने नही सिखलाई। सब स्त्रियाँ जानती होगी। कहती न हों, या कह न पाती हो, यह और बात है।'

'तुमने बहुत बडी बात कही। आज की संध्या से ही तुम्हारी शिक्षा का पक्का प्रबन्ध करता हूँ। कला और बैजनाथ गायन-वादन चित्रकारी सिखलायेगे। विजयजङ्गम से कहे देता हूँ पढाने के लिये। वह कल से आरम्भ कर देगे।'

'मेरे प्राणनाथ !!'

'तो अब उस सवाल का जवाब दो।'

'हूँ—किसका ?'

'किरणे अब तुम्हारे मुख पर और भी छा गई है। तुम्हारी मुस्कान मे जो चमत्कार है उसमे से कितनो को ये किरणे ले-लेकर भागती जा रही है ?'

'मेरे प्राणनाथ !!'

संध्या के उपरान्त कला और गायक बैजू आ गये। उनको प्रतीक्षा नहीं करनी पडी। मृगनयनी ने दत्तचित्त होकर सीखना शुरू कर दिया।

कला और लाखी के थोडे से सादृश्य मृगनयनी को बहुत अचम्भा नही हुआ था। वह वही है,—मृगनयनी की भावना थी।

उसी दिन तै हो गया कि कला अधिकाश समय उसके निकट रहा करेगी। विजयजङ्गम को लिखाने-पढाने का काम सौप दिया गया और उसकी पाठ्यक्रम मे वीणा-वाद्य के अभ्यास को और भी बढाने का। वह जुट पडी

मृगनयनी के शिक्षण समय मे मानसिह बडी रानी के पास गया। नाम उसका सुमनमोहनी था। जैसा नाम उससे उल्टा स्वभाव-प्रचण्ड।

उसके भवन खण्ड मे जैसे ही मानसिह सूचना देकर, पहुँचा रानी ने रीति के अनुसार आरती उतारी, आसन दिया और हाथ जोड़कर खड़ी हो गई।

धीरे से बोली, 'बड़ी कृपा की। महाराज कुछ भूल से पडे इस दिशा मे !'

'नहीं तो एक प्रार्थना करने आया हूं।'

'आज्ञा ?'

'नई रानी—मृगनयनी-का मन नहीं लगता होगा, सो मैंने संगीत इत्यादि कलाओ के सीखने का प्रबन्ध कर दिया है। आप का समर्थन है न इसमे ?'

—'मेरा बड़ा भाग्य जो महाराज मुझको इतना आदर दे रहे है। मन उनका कैसे यहां इतनी जल्दी लगेगा ? कहां राई के जङ्गलो का मुक्त पवन, अरने, भैसे, सुअर, नाहर, तीरकमान, घर की गाय और कहा ग्वालियर के किले का एकान्त ! यहाँ न नदी है, न गाँव के किसान !! न गाय, न गोबर !!!'

व्यङ्ग स्पष्ट था। मानसिंह कुढकर कुछ कहना चाहता था परन्तु उसने सोचा इससे कटुता ही और बढेगी।

कहा, 'आप ठीक कहती है। वह लक्ष्यबेध ऐसा अच्छा करती है कि बडे-बड़े धनुर्धारी लज्जित हो जाये।'

सुमनमोहिनी ने व्यङ्ग को जारी रक्खा, 'हां महाराज आप सरीखे पुरुपो को जो नारी पराजित करदे उसके सामने संसार भर के पुरुपो को सिर झुकाना पडेगा।'

'महारानी, आप भी किसी दिन उसका लक्ष्यबेध देखियेगा'

'जब से आई है, नित्य, प्रतिक्षण अपना और हम सबका, लक्ष्य-बेधती रहती है। और कुछ देखना पड़ेगा, देखूँगी।'

'महारानी, उन्होने एक ही बाण से एक बड़े नाहर को मारा और अपने भुजवल से अरने भैसे को मोड दिया।'

'सुना है महाराज, और यह भी सुना है कि एक दिन जब घर मे खाने को कुछ नहीं था तब सुअर के एक घिटल्ले को मारकर अपनी पीठ पर बाध लाई थी। उसमे बहुत वल है, वहुत शक्ति है।'

'वह क्षत्रिय कन्या है। सब को एक दिन कठिनाइयो का सामना करना पड़ता है। आप देखना वह पढ-लिखकर और विविध कलाओ

मे पारङ्गत होकर, हमारी, आपकी सबकी, कीर्ति—ध्वजा को ऊँचे फहरावेंगी।'

'महाराज ने बिलकुल ठीक कहा, अभी जो नये—नये बहुमूल्य रेशमी वस्त्र पहनने को मिले है, उन्ही की ध्वजा को अपने इस छोटे से कर्ण—महल के कँगूरे-कँगूरे और शिखर—शिखर पर कूदती-फुदकती फहराती फिरती है।'

यह व्यङ्ग मानसिह को गड गया सौतिया डाह ने बिचारी सीधी-सादी मृगनयनी को, जिसका प्रमोद-क्षेत्र अभी तक जङ्गल और खेत खलियान था और अब संकुचित सीमाओ से घिरा हुआ छोटा-सा कर्ण-महल रह गया था, बन्दर बनाया है।। इतना अधिक न उछले कूँदे तो कोई हानि होगी ? उसको प्यार के साथ सावधान कर दूंगा। जिसमे सुमनमोहिनी इस प्रकार का आक्षेप न करें। मानसिंह ने सोचा। उसकी शेष सात रानियां आज्ञाकारिणी पतिव्रताये थीं। उन्होने अपना दमन—शमन कर लिया था। परन्तु सौतियाँ डाह एक दूसरे के प्रति उन सब मे था। मृगनयनी के आते ही उन आठ का परस्पर डाह एक धारा मे प्रवाहित होकर मृगनयनी से जा टकराया। डाह का नेतृत्व सुमनमोहिनी के प्रचण्ड स्वभाव को अपने आप प्राप्त हो गया। मानसिंह को समझने मे जरा भी देर नही लगी। उसका अभिमान कहता था-इतने बड़े राज्य की व्यवस्था करने वाला क्या आठ स्त्रियो का भी शासन नही कर सकेगा ? उसके विवेक ने बतलाया, एक स्त्री का शासन ही पुरुष के लिये कठिन काम है आठ तो, आठ ग्वालियर-राज्य की समस्या के समान है ? फिर क्या करूँ ? करू क्या, विनय, शील और मृदुलता से काम लो—व्यङ्ग गाली, कटूक्तिया सब हँसी के साथ सहो। इसी मे कल्याण है, मानसिह ने सोचा।

एक दो क्षण चुप रहने के उपरात मानसिह बोला, 'आप सबके शिक्षण, अनुशासन और आदर्श से वह भी अपने को ढालती रहेगी,

जैसा मैंने अपने को ढाल लिया है।' मानसिंह हँस पड़ा। सुमन-मोहिनी को भी हलकी सी हँसी आ गई।

'वह मन ही मन प्रसन्न थी—यह मेरा लोहा तो मानते है।

'अब मुझको अनुमति मिले, जाकर बैजनाथ से कुछ बाते कर लूँ। मन्त्री आने वाले होगे। दिन मे उनसे राज-काज की चर्चा नही हो पाई थी।' मानसिंह ने कहा।

यह अनुमति मांगना नही था, आदेश देने का अर्थ रखता था।

सुमनमोहिनी ने फिर व्यङ्ग किया, 'महाराज को आजकल अवकाश ही कहाँ मिल पाता है। बिचारा मन्त्री राज्य की चिन्ताओ के मारे सिर घूमता रहता होगा। यहाँ तक आने का आपने अवकाश न जाने कैसे निकाल लिया।'

राजा ने परवाह नही की। हँसकर बोला, 'अवकाश मिल जाया करेगा, बहुत मिलेगा। मुजरा करने आया करूगा।'

समाचार पाकर बाकी सातों रानियो ने आकर आरती उतारी। एक-दो चलतू बाते करके मानसिंह उस अन्तःपुर से चला आया।

मृगनयनी को उस दिन की शिक्षा देकर बैजनाथ अलग बैठा हुआ था। कला मृगनयनी के पास दूसरे कक्ष मे थी।

मानसिंह ने आते ही पूछा, 'कहिये आचार्य आपके नये शिष्य की प्रगति का क्या हाल है?'

बैजू ने उत्तर दिया, 'महाराज, वह पूर्व जन्म मे सङ्गीत का अवतार रही होगी। मुझको अपना आचार्य-पद बनाये रखने के लिये विशेष अभ्यास करना पड़ेगा।'

बैजू के होठ पर मुस्कान थी, परन्तु उस मुस्कान के भीतर सच्चाई की छाप थी, आँखो में उसका समर्थन था।

वीणा वादन पर अधिकार करने मे समय कुछ अधिक लगेगा?' मानसिंह ने पूछा।

'बहुत कम। इतना कम कि मुझको आश्चर्य होगा। महारानी ने आज ही कहा कि गाने और बजाने की ऐसी कोई परिपाटी निकालो जिसमे समय कम लगे।' बैजू ने बतलाया।

मानसिंह हर्ष—मग्न होकर भीतर गया। मृगनयनी कला से वीणा के सम्बन्ध मे बड़े उत्साह के साथ बात—चीत कर रही थी।

उसको देखते ही मानसिंह के मन मे उमड़ा—क्या यह कँगूरो और शिखरो पर बन्दर की तरह कूदती-फुदकती होगी? यह! कितनी सरल, सुन्दर और दिव्य है यह!! मैं इसकी स्वतन्त्रता को हथकड़ी—बेड़ी नहीं पहनाऊँगा।

मानसिंह के आते ही उन दोनो की चर्चा बन्द हो गई। कला की आखो पर पट्टी नही थी, लगभग अच्छी हो गई थी। डोरे कुछ लाल थे। मृगनयनी के होठो पर मुस्कान आई और गई।

'कला'—मानसिंह ने कहा—'महारानी का अभ्यास लगातार चालू रहे। देखूँ यह थकती है या तुम। तुम्हारी बराबरी पर आ जायेगी तभी इनको कुछ चैन मिलेगा। कब तक इतना अभ्यास कर लेगी?'

कला विनय के साथ बोली,—नम्रता मे काफी बनावट थी,—'मेरी बराबरी पर तो महीने दो महीने मे ही आ जायेगी। फिर आचार्य जो कुछ बतलाते रहेगे उसको मैं कितना सीख पाऊँगी या नही इसमे सन्देह है। क्योकि महारानी जी तो बहुत जल्दी-जल्दी सीख लेगी, मै पिछड जाऊँगी। स्वर भी मुझसे बहुत अच्छा है। मुझको सेवा करने का पुण्य मिल जायगा यही बहुत है फिर चित्रकारी का क्रम आवेगा।'

मानसिंह को अच्छा लगा।

'और चित्रकारी का श्रीगणेश कब कराओगी?' मानसिंह ने पूछा।

'बहुत शीघ्र' कला ने उत्तर दिया।

दासी द्वार की ओट से खांसी। मानसिंह ने बुला लिया।

'क्या है?' उसने पूछा।

दासी ने उत्तर दिया,—'श्री मन्तमहाराज, मन्त्री जी और आचार्य विजयजङ्गम आये है। मन्त्री जी ने तुरन्त दर्शन की प्रार्थना की है। वहुत आवश्यक कार्य है।'

'अभी आता हूं कह दो।' मानसिंह ने कहा।

दासी चली गई।

मृगनयनी वोली, 'काम इकट्ठा हो गया है निपट आइये।'

मानसिंह हँसा, तुम्हारा समय पढने, सङ्गीत और चित्रकारी सीखने मे लगेगा, इसलिये मेरा समय मन्त्री जी वाटेगे ही। थोडी देर में विजयजङ्गम वीणा वजायेगे उसको भी सुनना।'

'सुनूँगी,'—मृगनयनी वोली—'आज जो कुछ सीखा है उसे मैं भी आपको सुनाऊँगी। पहले मन्त्री जी की बात सुन आइये।'

मानसिंह उल्लास के साथ उस खण्ड मे गया जहाँ मन्त्री, विजयजङ्गम और वैजू वैठे थे।

आते ही मानसिंह ने विजयजङ्गम से कहा 'आचार्य, आपको नई महारानी के पढाने-लिखाने और शास्त्रो का ज्ञान कराने का काम सौंपता हू। महारानी वहुत उत्सुक है। कल से आरम्भ कर दीजिये। आज थोड़ा सा वीणा वादन हो जाये।'

वे तीनो मुह लटकाये वैठे थे। मन्त्री व्यग्र था।

विजय पहले वोला, 'महाराज वीणा की झङ्कार का नही, धनुष की टकार का समय आ गया है—'

'क्यो?' मानसिंह के मुँह से निकला।

मन्त्री ने वात पूरी की; माडू के सुलतान गियासुद्दीन ने नरवर पर आक्रमण किया है।'

'यह समाचार कव आया?' मानसिंह ने धैर्य के साथ प्रश्न किया है।

मन्त्री ने उत्तर दिया, 'अभी घड़ी भर पहले। आस-पास के गाँव उजड गये हैं। मगरौनी नष्ट कर दिया गया है। नरवर के चारों ओर घेरा पड गया है।'

सिकन्दर लोदी किधर है ? किस दिशा मे ? कहा ?

'सिकन्दर लोदी दिल्ली मे अपने सरदारो से उलझा हुआ है।'

'गुजरात का बघर्रा ?'

'बघर्रा सौराष्ट्र के ठाकुरो और पुर्तगालियो मे व्यस्त है।'

'चित्तौण के महाराज रायमल की सन्धि माँडू के सुल्तान से है। इधर महाराणा को हम अपना अगुआ मानते है। महाराणा जी सुल्तान का निवारण नही कर सके सो कोई बात नही, क्योकि सुल्तान जब स्वय सन्धि-पत्र को मान्यता नही देता, तब कोई उससे निर्वाह भी कैसे करा सकता है ? मै कल कूच कर देना चाहता हू। तुम महाराणा जी को समाचार भेजो। यह भी लिख दो कि दिल्ली के बादशाह सिकदर से सावधान रहे। यदि इस बीच मे वह सिकन्दर से लड जाये तो हमारा उद्योग शीघ्र सफलता की ओर बढ़ेगा। चम्बल की सीमाओ को सतर्क रखना। मैं नरवर का उद्धार करके शीघ्र लौटूंगा।'

मन्त्री की व्यग्रता चली गई। चेहरे पर उत्साह छा गया ! बोला, 'सेना की तैयारी का इसी समय ढिढोरा पिटवाता हू। रात भर मे तैयारी हो जायगी।'

राजा ने स्वस्ति की।

बैजू निगाहे सी चुरा रहा था। राजा ने देखा।

कहा, 'आचार्य बैजू, तुम कुछ कहना चाहते हो।'

बोलने की इच्छा न रखते हुये भी उसके मुह से निकला, 'महाराज चन्देरी से सुल्तान का सूबेदार शेरखा भी दलबल लायगा। मालूम नही नरवर पर ही जा टूटेगा या ग्वालियर की ओर आयगा।'

राजा बोला, 'मैं जानता हू। चन्देरी के राजसिह का लोभ नरवर पर है। परन्तु मै सावधान हूं। ग्वालियर की पूरी रक्षा का प्रबन्ध करके ही कूँच करूँगा।'

'कल से मैं अपने कार्य का आरम्भ कर दूंगा। युद्ध मे कोई बाधा नही डाल सकेगा।' विजय ने कहा।

'नही डाल सकेगा।' राजा ने समर्थन किया।

'तो कुछ क्षण आपकी वीणा और आचार्य बैजनाथ के गले का साथ हो जाय।' मानसिंह ने अनुरोध किया।

मन्त्री ने उन दोनो की ओर निहोरे के साथ आँख फेरी, जैसे विनती कर रहा हो कि टाल दो।

विजय बोला, 'महाराज, धनुष की प्रत्यंचा का निरीक्षण करिये, बाणो की नोकें टटोलिये कही मोथरी तो नही पड गई। वीणा के वाद्य की ध्वनि और आचार्य बैजनाथ की तानो की झाई सैनिको के कानो मे भी पड़ेगी फिर वे कल कूच करने की तैयारी न करके किसी न किसी बाजे को लेकर अपने राजा का अनुकरण करेंगे।'

मानसिंह ने हठ नही किया, तुरन्त मान लिया वे तीनो चले गये। मानसिंह मृगनयनी के पास पहुँचा। मन्त्री के आने का कारण बतलाया। युद्ध की बात को सुनकर मृगनयनी को अपना तीर कमान और बर्छे का स्मरण हो आया।

बोली, 'महाराज की आज्ञा मिल जाय तो मै भी युद्ध मे अपने लक्ष्यवेध की परीक्षा वैरियो पर करूँ।'

मानसिंह ने उल्लास के साथ कहा, 'अभी नही। युद्ध तो आये दिन होते रहते है। माँडू के सुल्तानो को नरवर की ही घाटियों मे तोमरो ने कई बार हराया है, सो आशा है अबकी बार भी सुल्तान का मुह मोडकर आऊँगा। तुम्हारी स्मृति मुझको जितनी शक्ति देगी उतना तुम्हारा साथ न देगा।'

मृगनयनी को शङ्का हुई—राजपूत स्त्रियाँ युद्ध लडने नही जाती वरन् जौहर करने के लिये घर तैयार रहना पड़ता है। मुंह नीचा कर लिया।

'मेरी एक प्रार्थना है'—राजा ने विनय की—'तुम अपने कार्यक्रम को जारी रक्खो। गायन-वादन इत्यादि सब, अच्छी तरह चलता रहे। चाहता हूँ जब लौटूँ तुमको खूब मोद मग्न पाऊँ। कला तुम्हारे सङ्ग

साथ के लिए है ही। काम मे लगी रहोगी तो उदासी नही आयेगी। आचार्य विजय काम को ही सबसे ऊपर मानते है।'

मृगनयनी को लाखी का स्मरण हुआ। उत्कट कामना हुई, कही आज लाखी यहाँ होती।

आह को न दबा सकी, भरकर बोली, 'लाखी को और भाई को राई से बुलवा लीजिये।'

मानसिह ने तुरन्त हामी भरी, 'अभी लो साँडिनी सवार और उनके साथ तेज ऊँट भेजे देता हूँ। रात मे ही दोनो आ जावेगे।'

मानसिह ने अविलम्ब साँडिनी सवार और ऊँटो को भेजने का आयोजन कर दिया। फिर कूच की तैयारी मे लग गया। रात भर तैयारी करके सूर्योदय के उपरान्त सेना चल पड़ने के आदेश की प्रतीक्षा करने लगी।

एक घडी दिन चढे राई से साँडिनी सवार लौट आये। एक ऊँट पर उनके साथ केवल बोधन पुजारी आया। उसने मानसिह को उन दोनो के विवाह, गाँव के जाति-वहिष्कार और नटो के साथ कही भाग निकल जाने की कथा सुनाई।

अन्त मे कहा, 'महाराज, वे दोनो अनहोनी कर गये। गाँव वाले नही सह सके। कुशल हुई कि वे चले गये नही तो गाँव मे उनकी बड़ी दुर्गति होती।'

'आपके रहते!' बड़े कष्ट के साथ मानसिह बोला।

बोधन कुछ विचलित हुआ, 'महाराज, मैं क्या कर सकता था? शास्त्र वचन के सामने मैं छोटा-सा पुजारी असमर्थ था।'

'आचार्य विजयजङ्गम भी शास्त्रो मे पारङ्गत है। वह तो बिल्कुल दूसरी बात कहते है। जाँतपात की इस कठोरता की वह बहुत निन्दा करते हैं।'

'वह भ्रम मे है। मै उनसे शास्त्रार्थ कर सकता हूँ।'

'कब?'

'अभी। बुला लीजिये उनको। मैं बिना पुस्तको की सहायता के ही उनसे अभी शास्त्रार्थ मे दो-दो हाथ करने को तैयार हूँ।'

'हूँ! मौलवियो और मुल्लाओ से कभी शास्त्रार्थ करने की कामना हुई तुम्हारे या तुम सरीखे पुरातन-पंथियो के मन मे?'

'हुई दीनबन्धु, और कभी अवसर मिला तो पैर पीछे नही डालूँगा।'

'तुम्हारे पैरो को ही सब कुछ दिखलाई पडता है या आँखो को भी?'

'महाराज क्षमा करे, हिन्दू मात्र की आँख ब्राह्मण ही है। वह न देखे तो सब अन्धे है।'

तुम्हारी आँखो ही राई गाँव के किसान-मजदूरो ने अटल और लाखी रानी के व्याह—सम्बन्ध को परखा होगा।

'और किसकी आँखो देखते, महाराज वे?'

'तुम सरीखे मूढ ही मिले राई के उन अन्धो को।'

'महाराज क्रोध करे तो, और न करे तो भी, सच्चा ब्राह्मण और प्राचीनकाल के शास्त्र-पुराण अटल है और रहेगे?'

'हे भगवान् क्या हमारे समाज के इन अन्धे-बहिरों को कभी सूझता सुनता करोगे? या हम सबको डुबोकर ही रहोगे।'

'मैं जानता हूँ, महाराज को यह सब भ्रम उस अधर्मी विजयजङ्गम ने दिया है। बुला लीजिये उसको और करा लीजिये अपने सामने मेरा और उसका शास्त्रार्थ।'

'कितना समय लगेगा शास्त्रार्थ मे?'

'एक दिन दो दिन, चार दिन जितना समय लग जाय यह उसके हठ और हम दोनो के शास्त्रज्ञान पर निर्भर है।'

'तो ये तुरही, रम्मट, धोसे और घोडो की हीशे जो नरवर पर आये हुये वैरी का सामना करने के लिये पुकारो पर पुकारे लगा रही हैं उनको बन्द कर दूँ?'

'शास्त्र तो महाराज शास्त्र ही है। प्राण चाहे चले जाये परन्तु शास्त्र की बात नही जा सकती।'

'तुम्हारे अन्धविश्वास ने उन दो सुन्दर प्राणियों का विध्वंस किया उनकी हत्या तुम्हारे ऊपर है !!'

'महाराज की जय हो। धर्म के लिये यह निरीह ब्राह्मण अपना प्राण देने को तैयार है। दीजिये दण्ड।'

'मूर्खों को ब्रह्मा भी नही समझा सकते। मै सीधी बात कर रहा हूँ, तुम उल्टे बोले जा रहे हो। अभी तो में जा रहा हूँ। नरवर से लौटकर तुमको और तुम्हारी बात को समझूँगा।'

बोधन पुजारी के रुष्ट विचलित मन मे समाया. राजा ने दण्ड को स्थगित कर दिया है, पर देगा दण्ड अपने साले और सलहिज का पक्षपात करके।

त्याग-तपस्या की वृत्ति से प्रेरित होकर बोला, 'तो मै रहूँ क्यो राई मे ? चला जाऊँगा कही विदेश।'

राजा क्षुब्ध हो गया। तीव्र स्वर मे कहा, 'चले जाओ जहा जाना हो एक मूर्ख तो कम हो जायगा इस राज्य मे।' फिर कुछ धीमा पड़ कर बोला—'तुम रहो या जाओ राई का मन्दिर तो मै बनवाऊँगा ही।'

बोधन के दिमाग की बढ़ती हुई सनसनी कुछ उतरी। चुप रहा। राजा को जाने की जल्दी थी। बोधन आशीर्वाद का हाथ उठाकर चला गया। राजा को उसके जाते ही अपने क्रोध पर परिताप हुआ। साथ ही लाखी का चित्र आखो मे घूम गया—गले मे मोतियो का हार डाला था, मृगनयनी के प्रथम-मिलन के समय मुक्त और निसङ्कोच भाव से सामने आई थी, और अटल कितना सीधा अल्हड़ युवक था ! मरवा दिया इसी पुजारी की करतूत ने !! कितना हठी मूर्ख है यह !!!

पुजारी आख से ओझल हो गया और परिताप चला गया।

मानसिह मृगनयनी के पास विदा लेने के लिये गया। अटल और लाखी का वृतांत सुनाया। मृगनयनी की उन बडी आँखो मे से दो

बड़े-बड़े आसू उमडकर टपक गये। मानसिंह की विदाई ने उसको संभाल दिया।

गद्गद् कण्ठ से मृगनयनी ने याचना की, 'यदि उस ओर उनका पता लग जाय तो आप अपने साथ लिवा लायेंगे ?'

मानसिंह ने दृढता-पूर्वक उत्तर दिया, 'अवश्य। उस समय युद्ध के बाद ही जातपात के इस युद्ध से भी लडूंगा।'

सजल-नयन मृगनयनी ने आरतियो के साथ मानसिंह को विदा किया।

सबकी आरतियो और असीसो मे मानसिंह ग्वालियर से उसी दिन मोर्चों की योजना बनाकर नरवर की दिशा मे चल दिया।

[३३]

ग्यासुद्दीन खिलजी ने नरवर के पश्चिमी और दक्षिण बाजुओ पर चौकिया बिठला दी और अपनी सेना के बहुतांश को उत्तर और पूर्व की ओर फैला दिया। पश्चिमी और दक्षिणी दिशाओ मे लम्बे और ऊँचे पहाड, विशाल जङ्गल और बड़ी बडी घाटिया थी। नरवर गढ का एक ही फाटक—जङ्गलपोल-दक्षिण की दिशा मे था। नरवर की बस्ती परकोटे से घिरी हुई, किले के नीचे, पूर्व से जङ्गलपोल नामक दक्षिणी फाटक तक फैली हुई थी। किले का ले लेना टेढी खीर था परन्तु नगर के मिटाने मे कम बाधा थी।

नरवर के दक्षिण-पश्चिम से बहती हुई सिन्ध नदी उत्तर को करवट लेती हुई पूर्व की ओर चली गई। नगर और किले को सिन्ध ने जैसे तीन ओर से घेर रक्खा हो नदी की पूर्व वाली मोड पर गियास का शिविर था। चन्देरी से सूबेदार एक बडा दस्ता लेकर उसी दिन आ मिला था। एक ही दो दिन बाद गियास ग्वालियर पर आक्रमण करने के लिए जाने को था। नरवर का घेरा चन्देरी का सूबेदार डाले रहता जहां

ग्वालियर अधिकार मे आया कि नरवर तो वैसे ही हाथ जोड़कर सामने आ खड़ा होगा। गियास, उसका बडा मुल्ला, चन्देरी का सूबेदार और मटरू सहज ही इस निष्कर्ष पर पहुँच गये। उस समय तक सुराही और प्याले गियास के सामने नही आये थे। अभी सन्ध्या होने मे कुछ देर भी थी।

मुल्ला ने सुझाव पेश किया, 'जहाँपनाह शहर को कब्जे में करके यहा के मन्दिर और बुतो को तोड दे। इसके बाद सूबेदार के हाथ मे घेरे को सौपकर ग्वालियर की तरफ कूच करें तो बहुत अच्छा होगा।'

गियास को यह बात नही रुचि। बोला, 'शहर के मन्दिर और बुत तो हमारे बुजुर्ग पहले ही तोड़ चुके है।'

'लेकिन नये तामीर हो गये हैं, जहापनाह।'

'क्या फायदा इस बेकार के काम से? हम तोडने जावे वे बनाते जाये अच्छा धन्धा रहा!'

'जहांपनाह हिन्दुओं को अपनी रखवाली का यकीन बुतो पर है। बुतो को तोड दीजिये, उनका यकीन टूट जायगा, फिर कीड़े-मकोडो की तरह बिलबिलाते फिरने लगेगे।'

'यही सही है कि हिन्दुओ का दीन ईमान और यकीन सैकड़ों हजारो देवताओ मे बटा हुआ है, इसलिये पेडो-पत्थरो को पूजते है, मगर बुतो के मिटा देने से उस यकीन को कैसे खतम किया जा सकेगा?'

'इसका असर पडेगा, जहापनाह किसी भी आफ्त के सिर आने पर बुतो की पनाह पकड़ते है - बुते टूटी यकीन उजडा और पनाह गई।'

'और मौका पाते ही चिपट पडे मन्दिर बनाने पर। मुल्लाजी यों ही आम हिन्दुओ को चिढाने से क्या फायद?'

'जहाँपनाह से मैने अर्ज कर दिया है। दिल्ली के मुल्लाओ का यही फतवा है।'

गियास कुछ कुढ कर रह गया-दिल्ली के मुल्ला मुझ से भी बढकर है। कम बने चाहे बिगड़े इनके फतवे के सामने सिर को झुकाना पडेगा !! कटमुल्ला के साम्ने !!!

गियास ने कहा, मै रात मे गौर करूँगा। सवेरे हुकुम दूँगा। इतना अभी तै किये हूँ कि शहर पर जोरदार हमला किया जायगा शहर को काबू मे कर लेने के बाद किले की फतह या घेरा ज्यादा आसान हो जायगा। अगर शहर को जल्दी हाथ मे न कर सके तो सूबेदार को यहा छोडकर ग्वालियर चल देगे।

चन्देरी का सूबेदार ठण्डी प्रकृति का आदमी था। बोला, 'जहाँपनाह शहर के हमले को कल रात के लिये तै कर दे ताकि मै अभी से उसकी जुगत मे लग जाऊँ। राजसिंह के पास एक दस्ता राजपूतो का है। वह हमले के लिए तडप सा रहा है।'

'उनका यकीन किया जा सकता है।'

'जहापनाह, पूरा। उसका भाट उसे चैन न लेने देगा।'

'भाट !'

'जहाँपनाह, भाट दिन रात उसके कान मे भरता रहता है कि दुश्मन से बापदादो के बैर का बदला न चुकाया और बापदादो से छीनी हुई जमीन को दुश्मन से वापिस न लिया तो राजपूत ही नही कुछ और है।'

ख्वाजा मटरू अर्थ भरी दृष्टि से सुल्तान की ओर कई बार देख चुका था। सुल्तान की निगाह गई।

बोला, 'ख्वाजा तुम कुछ कहना चाहते हो ?'

'जहांपनाह, ऐसी तो कोई खास बात नही है,'—मटरू ने कहा,—'एक छोटा सा ख्याल उठा था, उसको हजूर कल तै ही कर देगे। गुलाम की समझ से मन्दिर और मूरतो को तोडना बेवक्त होगा, यो ही आम हिन्दुओ का दिल दुखाना फिजूल है।'

गियास बोला, 'यही मै सोचता हू।'

मुल्ला ने बेधडक उज्र किया, 'जहाँपनाह, आम हिन्दुओ की हिम्मत को पस्त करने की यही तरकीब सबसे अच्छी है।'

मटरू ने फिर अर्थ भरी आँख घुमाई।

'कुछ और कहना चाहते हो ?' गियास ने पूछा।

मटरू ने उत्तर दिया,–'कुछ नही जहाँपनाह, बाते करीब–करीब सभी तै हो चुकी है नमाज का वक्त आ रहा है।'

गियास समझ गया कि एकान्त मे ही कुछ कहेगा। मजलिस खतम कर दी गई।

दो घण्टे के बाद सुराही और प्याले के एक दो दौर होते ही मटरू और गियास रावटी के उस खण्ड मे अकेले रह गये।

'कुछ कहना चाहते थे तुम ?' गियास ने मस्ती के स्वर मे पूछा।

'हा जहाँपनाह'—मटरू ने उत्तर दिया—'मर्द औरत—दो नट—उस गिरोह के आये है। लाखी नरवर मे है।'

'ऐ ! क्या सच ?, इतने नजदीक ! यहाँ से आधे कोस पर ही !! कमाल की खबर दी तुमने मिया मटरू !!!'

'खबर सही है जहाँपनाह ! लाखी आने के लिए करीब-करीब तैयार हो गई है। वे गहने और कपडे उसने बड़े शौक और चाव से पहिने थे।'

'भाई वाह ! भाई वाह !! इसी घडी हमला कर दो नरवर पर। जल्दी न की जाव गरीबपरवर। दोनो नट कल शाम तक नरवर शहर मे किसी तरकीब से स भुजायेगे। वहा उनके बाकी साथियो के बीच मे होगी वह। ये नट वहाँ पहुँचकर कल रात एक बधा हुआ इशारा करेगे। समझ लिया जायगा कि लाखी के साथ उस मुकाम पर है, फिर शहर पर कब्जा करने की उसी पल पूरी कोशिश का जावे।

'शावाश मेरे मटरू मजलिस मे जाहिर करने लायक न थी यह बात।'

'शहर को ले लेने के बाद मन्दिर मूर्तियों को हाथ न लगाया जावे जहाँपनाह। हिन्दुओं को फुसलाने का यही तरीका, शायद, सबसे अच्छा रहेगा। लाखी आखिर हिन्दू ही है। मगर मुल्लाजी की समझ में यह बात नही आवेगी।'

'गधा है। बेवकूफ है !! नालायक है !!! जाहिल है वह मुल्ला !!!! मुल्ला नही कठमुल्ला है। निकाल दो उसको छावनी मे से। माँडू से भी कर दो उसका काला मुह। सल्तनतो की बरबादी की जड मे मुल्ले ही तो रहे है।'

'जहापनाह कसूर माफ करे और गुलाम के सिर को बख्शें। यह मौका मुल्लाजी के निकालने का नही है। सिपाही नाराज और बेदिल हो जायेंगे। माँडू चलकर जरूर हुजूर कुछ अमल करे।'

'मैं कसम खाता हू, ख्वाजा, कि माँडू लौटने पर इन सरकश काँजी मुल्लाओ को निकालकर ही दम लूँगा।'

मटरू मन ही मन बहुत प्रसन्न था। सिर नीचा करके प्रसन्नता को छिपाने का प्रयास करने लगा।

गियास ने कहा, 'तो फिर कल की रही।'

मटरू ने बडी नम्रता के साथ विनय की, 'जहापनाह ने जो तै किया है वही होगा। नटो से सारी तरकीब फितरत को ब्यौरेवार तै करके चौथे पहर के करीब अर्ज कर दूँगा।'

गियास बोला, 'ठीक है। फौज तैयार रहेगी। शाम के पहले ही मोर्चो की बात तै हो जायेगी। फौरन नक्शा बनाकर काम शुरू कर दिया जायेगा।'

'हुजूर।'

'अच्छा ये नट कैसे आ गये यहाँ तक !'

'उसको समझा बुझाकर माँडू लिये आ रहे थे कि हमले की खबर पाकर रुक गये। उसमे से दो खबर देने और मदद लेने के लिये दस्ते की

तलाश मे इधर आये, उधर लाखी बाकी नटो के साथ शहर मे चली गई।'

'क्यों ?'

'जहाँपनाह, इस बात का पूरा पता तो उन लोगों के मिलने पर ही लग सकेगा।'

'सब बेवकूफ है। काम करने का ढङ्ग नही जानते।'

'जहाँपनाह।'

'तुम भी बददिमाग हो मगर खैर।'

मटरू ने सिर नीचा किये हुये दाँत भीचे।

गियास एक क्षण बाद बोला, 'खैर कल का काम बहुत होशियारी के साथ किया जाय।'

मटरू ने कहा, 'जहापनाह।'

(६४)

नरबर के नगर-कोट मे तीन फाटक थे, एक उत्तर की ओर और दो पूर्व दक्षिण मे। दीवारे ऊँची थी और फाटक मजबूत। हाथियो के कवच—रक्षित माथे को फोडने के लिये फाटको के बाहरी ओर बड़े मोटे नुकीले लोहे के कीले जडे हुये थे। खाद्य–सामग्री नगर और किले के भीतर कम से कम एक वर्ष के लिये पर्याप्त थी। स्वच्छ मीठे पानी के बहुत से अच्छे कुये नगर मे और अनेक तालाब किले के भीतर। रक्षा के लिये लडने वाले और आक्रमणकारियो का भुर्ता कर देने के लिये फाटको की बुर्जो और कोट मीनारो पर भारी भारी चट्टाने जिनको नीचे ढकेल दिया जाय तो गाज सी टूटे। नरवर वालो को विश्वास था कि साल भर तक तो शत्रु उनका कुछ बिगाड नही सकता, फिर राजा मानसिह सहायता के लिये न आ पहुँचेगे क्या ?

सुल्तान की सेना को अपने अनुभवो के आधार पर विश्वास था कि हिन्दुओ मे लड़ने वाले दस प्रतिशत से भी कुछ कम होते है। ये

दस भी आपसी लडाई झगडो के कारण एक दूसरे की गर्दन काटने मे व्यस्त।

पर उन दस मे से प्रत्येक को गर्व था, मै अकेले ही शत्रु को मार भगाऊँगा, अपने सगोत्री की सहायता क्यो लूँ जिससे अपने पुरखो की बापौती वापिस लेनी है और ऊपर की किसी अठारहवी पीढी वाले पुरखे के अपमान का जिससे प्रतिशोध करना है ?

नरवर के इस दशाश मे लडाई की उमङ्ग थी, शत्रु का आवाहन करने, उस पर टूट पडने, मारकर मर मिटने का ओज और उत्साह था। वह अपने पुराने करतब और नई तेजस्वी लहर की भाषा मे बाकी के नव्वे को स्फूर्ति, साहस और धैर्य देने का प्रयास पर प्रयास कर रहा था। रम्पट, धौसो और तुरहियो के पहर-पहर पर होने वाले नादो द्वारा जनता की स्नायुओं को प्रबलता और स्पन्दन दिया जा रहा था चम-चमाते हथियारो, मूगिया रङ्ग के कपडे पहिने दमकते हुये घोड़ो पर सवारो और हट्टे-कट्टे ऊँचे पूरे जवानो को देख-देखकर स्फुरण मिल रहा था।

परन्तु साधारण जनता के मनमे छिपा बैठा हुआ कोई कभी-कभी,कह देता था पहले भी तुर्क आये है यहा जिनका सामना इसी तरह के योधाओ ने किया और कट मरे, नगर लुटा, पिटा और मिटा, अब की बार भी वैसा ही हो सकता है। पर हमारा राजा मानसिह तो दूर नही है, वह आयगा हां यदि नये व्याह की मस्ती मे न झूम गया तो।

फाटक बन्द कर लिये गये थे, बाहर भीतर से लोगो का आना निषिद्ध कर दिया गया था। नगर की जनसख्या थोड़ी सी बढ़ गई परन्तु इतनी नही कि अन्न के लिये कोई विशेष चिन्ता करनी पडे। फिर भी दो दिन के भीतर ही अन्न का भाव चढ गया। दुगने मोल बिकने लगा व्यापारी माथे को ठोक-ठोक कर, गर्दन हिला-हिला कर कहते थे सब व्योपार चौपट हो गया! उनका मन-भीतर ही भीतर खुस फुसाता था, चलता रहे घेरा दो चार महीने तो एक-एक के सौ-सौ डूँढ

पर डले हैं ! और अगर शत्रु ही जीत गया तो अन्न वस्त्र इत्यादि उनको भी चाहिये, वहुत सस्ता भी खरीदेगा तो दुगुने मे तो कसर लगने की नही ।

नगरपाल और किलेदार के पास शिकायत पहुँची । उन्होने समाधान किया. लडाई के युग मे ऐसा हो ही जाता है धीरज से काम लो, ज्यादा मजदूरी करके कमाओ खाओ । वे दोनो और शासक वर्ग सोचते थे, सेठ साहूकारो को नाराज किया नही कि भूखो मरने की नौवत आई ।

लाखी, अटल और नटो के पास अपने निज का अन्न वस्त्र था इसकी चिन्ता नही थी । कम से कम कुछ दिन । जव चुक जायगा तव क्या होगा ? कब तक इस अनजानी जगह घिरे रहना पडेगा । यह समस्या अटल और लाखी को असमंजस मे डाले हुये थी । परन्तु उस समय प्रश्न वर्तमान का था ।

वे दोनो नटो के साथ ही नगर के एक खुले स्थान मे पेड़ो के नीचे जा ठहरे थे । उनके आस-पास इधर-उधर से आये हुये कुछ और लोग ठहरे हुये थे । यह ठौर दक्षिणी फाटक के निकट था । भद्र लोगो की वस्ती मे इन लोगो को स्थान नही मिल सका । अटल और लाखी नटो के समूह मे होते हुये भी उनसे कुछ अलग, एक अलग और इकाई वनाये थे ।

पास के ठहरे हुये लोगो ने जान लिया था कि यह समूह नटो का है परन्तु अटल और लाखी की अलग इकाई ने उनके मन मे सन्देह उत्पन्न किया ये कोई और है । प्रचलन और अभ्यास के अनुसार एक ने इन दोनो की जातपाँत पूछी ।

अटल ने वतलाया, 'गूजर ठाकुर है ।'

नायकिन के होठो पर वरवस मुस्कराहट कोंध गई और आखो की पुतलियाँ घूम गई । पूछने वाले का जातपात-विवेक सशंक हुआ ।

वह वडी दीनता के साथ बोला, 'दोनो, जने गूजर ठाकुर हो । नट नही हो, यह तो मै पहले ही समझ गया था ।'

नटनी ने पीठ फेर ली मानो असहमति प्रकट कर रही हो।

बोली, 'कोई सही,नट नही ऊँची जात के है। क्या करोगे पूछकर ?

कुछ न बतलाकर वह बहुत कुछ कह गई।

प्रश्नकर्ता ने नम्रता के साथ कहा, 'माई री, मुझको क्या करना है। पर यह तो पूछा ही जाता है। सब पूछते है। कठिन समय मे जान लेना पड़ता है कि किसके हाथ का छुआ पानी पिये और किसके हाथ का न पिये। मुझे और करना ही क्या है। मैने पूछ लिया तो कौन कुछ बुरा किया, दूसरे लोग पूछेगे।'

नायकिन पीठ फेरे ही बोली, 'वह गूजर ठाकुर है, और जनी भी ऊँची जात की है। जाओ अपना काम देखो।'

वह अपना काम देखने लगा—अर्थात् उसने अपने सहवर्गियो से कह दिया कि दोनो भिन्न-भिन्न जातियो के है और कुछ दाल मे काला है। युद्ध का काल था। लोगो को अपनी-अपनी कठिनाइयो की गुत्थियाँ पहले सुलझानी थी। 'देखा जायगा।' कहकर वे अपनी चिन्ताओं मे डूबने उतराने लगे—

नगर की धनी बस्ती की तरफ से कुछ रोने की आवाज आई लाखी और अटल ने कान लगाये। कुछ लोग भागते हुये आये।

'लुट गये। मर गये !!'

'भागो। छिप जाओ!!'

'तुर्कों ने मार डाला !!!'

'घायल कर दिया। खून की नदी बहादी!!'

नटो ने जल्दी-जल्दी एक दूसरे की ओर देखा और इत्मीनान के साथ अपने खुले सामान को ढकने लगे। नायकिन ने धीरे से एक नट के कान मे कहा, 'इन दोनो को देखे रहना कही लुक छिप न जाये।'

नट, ने सतर्कता का सिर हिलाया।

अटल का चेहरा विकृत हुआ। लाखी ने होंठ सटाये और कमर मे पड़ी हुई छुरी पर हाथ डाला। सोचा, 'पहले भी बहुत सी राजपूतानी चिता पर भस्म हो चुकी है-भगवान की दया से मै छुरी का पकड़ना और चलाना भी जानती हू। तुर्क मुझको नही छू सकेंगे।' अटल के विकृत चेहरे पर उसका ध्यान नही गया।

चीख पुकार करने वाले जैसे ही निकट आये उनसे अटल ने और कइयो ने प्रश्न किये।

'तुर्क किस फाटक से घुस आये हैं ?'
'कहाँ लूटमार कर रहे है ?'
'कितनी दूर है यहाँ से ?'
'तुम कहाँ जा रहे हो ?'
'अब कहां छिपे ?'

परन्तु वे किसी भी प्रश्न का उत्तर नही दे पा रहे थे। उसी क्षण दो राजपूत सवार दौडते हुये आये।

एक चिल्लाया, 'घबराओ मत ! तुर्क नही आये है। तुर्क दूर है।'

लोगो के जी मे जी आया। सबों ने उन सवारो को घेर लिया। अटल आगे था।

अटल ने पूछा, क्या बात हुई है ? किसने किसको घायल किया।

सवारो ने उत्तर दिया 'कुछ भी नही हुआ। यो ही जरा-सी बात का ववण्डर हो गया। कितने निकम्मे है ये लोग ! व्यर्थ को भाग दौड़ चिल्ल पुकार मचा दी !!'

'फिर भी ? क्या बात थी ?' अटल ने प्रश्न किया।

सवार ने बतलाया, 'बात यह हुई कि बीच वाले फाटक पर जंगल की ओर से एक स्त्री और दूसरा पुरुष रोते चिल्लाते आये उनको तुर्कों ने पीटा पाटा होगा। घायल है। फाटक खुलवाने के लिये हा हा-हा दैया की। विचारे निहत्थे है। हम लोगो ने फाटक खोलकर उनको भीतर कर लिया और फाटक ज्यों के त्यों वन्द कर दिये। वे भीतर आने पर भी रो रहे है। कहते हैं नट है। यहाँ कोई नट ठहरे हैं ?'

अटल ने संकेत से दिखलाया। नायकिन भीड–चीर कर आगे आई। आँखो से काँइयापन चला गया था। चेहरे पर मुर्दनी सी छा गई थी। पुतलियाँ निकल पडने को।

'कहा है वे दोनो ?' नायकिन ने भर्राये हुये गले से पूछा।

'उस घर की ओट मे तिगलिये पर बैठे है। उनको पानी पिला दिया गया है।' सवार ने उत्तर दिया।

नायकिन और नट उसी दिशा मे दौड गये।

सवार ने अटल से प्रश्न किया, 'तुम नट नही हो क्या ?'

अटल बोला, 'नही मैं गुजर ठाकुर हूँ।' उसके स्वर मे अभिमान था।

'कहा से आये हो ?'

'मगरौनी से।'

'मगरौनी से! मैने तो पहले कभी नही देखा। मै भी गूजर ठाकुर हूँ। यहाँ गूजरो की वडी वस्ती है किले के भीतर दक्षिण भाग मे तो गूजर रहते है। तुम मगरौनी मे कहाँ से आये ?'

'ग्वालियर से आये थे मगरौनी।'

'फिर नटो मे कैसे ?'

'साथ पड गये।'

सवार ने अपनी नातेदारियो का वखान शुरू किया, और अटल की भी पूछता, परन्तु उधर से नट दो घायलो को अपने बीच मे साधे हुये ले आये।

अटल का सन्देह उन दोनो के निकट आने पर पुष्ट हो गया–वे पिल्ली और पोटा थे। खून मे तर।

जब वे सब अपने डेरे के पास आ गये पिल्ली ने नीची निगाहो, एक आँख की कनखी को मिचका कर सकेत किया। नायकिन का चेहरा खिल गया, परन्तु उसने अपने हर्ष को तुरन्त दवा लिया। उन्हे आस-पास के लोगो की भीड घेरे चली आ रही थी।

नायकिन ने दृढ स्वर मे प्रतिवाद किया, 'हम लोगो के पास दवाइया है और जन्त्र–मन्त्र। जल्दी ठीक कर लूंगी। अपने-अपने डेरे पर जाओ।' लोग हट गये। घावो को देखना चाहते थे, परन्तु न देख पाये। सोचा दूर से ही देख लेगे।'

नायकिन ने एक ओर पोटा को लिटा दिया और पिल्ली को। 'फटे पुराने कपडो की छाया और आड कर ली।'

अटल पोटा के पास जा बैठा और लाखी पिल्ली के पास। नायकिन और अन्य नटो ने उन दोनो के रक्त को धोया पोछा। घावो का कही कोई निशान न था। दूर से देखने वाले आड और छाया के कारण अपना कुतूहल शान्त न कर सके।

एकान्त पाकर लाखी ने पिल्ली से स्नेह से पूछा, 'किसने मारा? चोटें कहाँ लगी है? कहा थी तुम? कहां रह गई थी।'

पिल्ली जरा सी मुस्कराई। उत्तर दिया, 'चोट पोटा को लगी है मुझको नही लगी है। उनका खून मेरे कपडो मे भिड गया।'

'पोटा को चोट कैसे लगी!'

'एक पत्थर से फिसल पडा। जाघ मे पेड़ का सूखा ठूंठ घुस गया। बस इतनी ही चोट है लेकिन खून बहुत निकला है।'

'फिर तुर्को के हाथ घायल हो जाने की कहानी! वह सब क्या है?'

'वैसे फाटक खुलते नही, इसलिये मकर बनाना पड़ा।'

लाखी हँसने को हुई। पिल्ली ने हाथ के सकेत से बरज दिया।

लाखी ने पूछा, 'तुम दोनो रह कहां गये थे?'

'अरी रानी, सब बतलाऊँगी! थोड़ी देर मे बतलाये देती हू। जरा सबर पकड़ो।'

कोई और काम था नही। लाखी सुनने के लिये अधीर हो गई, पिल्ली स्थगित कर रही थी। उसने विपयान्तर किया।

बोली, 'यहाँ कोई कष्ट तो नही है?'

लाखी ने कहा, 'खुली जगह, ठण्ड के दिन । वैसे कोई बात नही । रास्ते मे सही, अब तो नगर मे ही है ।'

'यहाँ जात-पांत तो नही पूछी किसी ने ?'

'पूछी थी । उन्होने कह दिया गूजर है ।'

'और तुम्हारी जात ?'

'मेरी किसी ने नही पूछी । पर कुछ लोगो को सन्देह हो गया । डर की कोई बात नही । यहां गूजर बहुत है ।'

'कैसे मालूम हुआ । क्या तुमसे पूछताछ की थी ?'

'नही । उनको एक सवार से बातचीत करते हुये मालूम पड़ा । मैंने सुन लिया ।'

'तुम्हारी जाति के भी होगे लोग यहाँ ?'

'हो सकते है ।'

'चिन्ता मत करो । मैंने पक्का प्रबन्ध कर लिया है ।'

'कैसा ?'

'बतलाऊँगी । अपुन को यहाँ नही रहना है ।'

'न जाने क्या कह रही हो । खोलकर सब बतलाओ ।'

'किसी से कहोगी तो नही ?'

'नही कहूँगी ।'

'कुवर साहब से भी ?'

'हाँ—कहो भी, मैं तो सुनने को अकुला रही हूँ ।'

'तुम अगर जाहिर कर दोगी तो तुम्ही को नुकसान होगा ।'

'कैसा ? मैं तो किसी से नही कहूँगी ।'

'कह दोगी तो यह बात फैल जायगी कि तुम और कुवरजी अलग अलग जाति के हो । घर से भाग निकले हो । पाप किया है, इसलिये दड के भागी हो । लडाई के दिन है । किलेदार और नगरपाल किसी अँधेरी कोठरी मे डाल देगे । फिर आगे की सब आशाये सूनी पड़ जायेगी ।'

'कह दिया कि नही कहूँगी। वैसे ही डरवा रही हो ?' उसी समय उसकी आँखों मे मानसिह और निन्नी का चित्र घूमा। अटल राजा के नातेदार है फिर भी हम लोगों के साथ अत्याचार किया जावेगा राजा ने भी इसी तरह का बाहर-जात व्याह किया है। पर वह राजा है और हम लोग गरीब ! राजा ने किया तो पाप नही हुआ हमने किया तो पाप बन गया इस विकट पहाड़ी किले की किसी अन्धी कोठरी मे डाले जावेंगे। क्या पिल्ली सच कह रही है ! जात पांत के नियम कठोर होते है, सच कहती होगी लाखी ने सोचा, मन मे फिर कुतूहल उठा। कहाँ रहे ये दोनो इस बीच मे ? कौन सा पक्का प्रबन्ध किया है जिसका अभी अभी इसने संकेत किया था।

पिल्ली चुप थी। उसका मुह निहार रही थी।

'जरा दम ले लूं फिर बताऊँगी।' पिल्ली ने कहा और आँखें बन्द कर ली।

(३५)

थोड़ी देर के बाद अटल भी पिल्ली को देखने के लिये आया। शिष्टाचार बर्तने के उपरान्त वह शीघ्र ही लौट जाना चाहता था। पिल्ली एक चादर ओढ़े बैठ गई। उसके चेहरे पर थकावट थी परन्तु पीडा का कोई चिन्ह न था।

'बोली, मैंने लाखी को सारी कहानी बतलादी है। वैसे नगर भीतर आ नही पाते। पोटा को गिरने से चोट लगी है मुझको कोई चोट नही आई है। किसी से कहना मत।'

'मुझे क्या पड़ी है। अटल ने कहा।'

'सारी बात अभी कहाँ बतलाई है, लाखी बोली, 'कहती थी बतलाऊँगी। यह बाहर कुछ कर धर आई है, पर अभी बतलाया नही है।'

अटल रुक गया। सुनने के लिये उत्सुक था।

पिल्ली ने लाखी की ओर मुह करके कहा, 'नायकिन को किसी बहाने से चुपचाप बुला लाओ।'

लाखी के पीठ फेरते ही पिल्ली ने वक्ष से चादर को नीचे खिसकाया और अटल पर आँख चलाई। अटल ने ग्लानि के मारे सिर नीचा कर लिया। लाखी की आँख मे कपड़े खिसकने की झाईं पडी और उसने गर्दन को जरा-सा मोडकर कनखियो देखा—सब देख लिया। चली गई।

पिल्ली ने कपडे को जहां का तहा कर लिया। मुस्कराकर बोली, 'यहाँ से चल देना चाहिए, कुँवरजी। बहुत बडी आफत आने वाली है।'

'सो तो दिखलाई ही पड रही है।'

'नही जो दिखलाई नही पड़ रही है वह।'

'कौन-सी ? कैसी ?'

'तुम हमेशा रूखे-रूखे ही बोलते हो।'

'नही तो विपद-काल है न।'

'अच्छा, अच्छा। यहा से निकल चले तब कभी बात करूँगी।'

'सुल्तान खुद आया है। हम लोग पता लगा आये है। बहुत बड़ी फौज साथ मे है हाथी, घोडे, आदमी अनगिनते। आज नही तो कल शहर और किले पर चारो तरफ से चढाई होगी और हम सब कतर डाले जायंगे। इसी बीच मे जात-पाँत के किस्से की उखाड-पछाड़ हो गई तो न इधर के रहे न उधर के। यहा से निकल चलो।'

लाखी नायकिन को लेकर आ गई।

'कैसा जी है बेटी' उसने दुलार के साथ पूछा।

पिल्ली ने अपने छल की कथा सुनाई और नगर बाहर हो जाने की योजना बतलाई,—'दक्षिण फाटक के पास दीवार से लगे हुये ऊँचे-ऊँचे पेड चले गये है। इन्ही पर होकर बाहर निकल चलना चाहिये।' दक्षिण की तरफ पहरे चौकी नही है। रात मे चलकर सवेरे तक साफ जगह पर पहुच जायेंगे।'

अटल ने पूछा, 'तुम्हारे इन जानवरो का, अपने अनाज का क्या होगा ?'

उसने उत्तर दिया, 'अपने पास गहने और टके है, बहुत मे खरीद लेगे। दो दिन के खाने भर के लिये अन्न ले लेगे। बहुत है। प्राण तो बच जायेगे। नरवर मे अपना क्या रक्खा है जिसके लिये अपने को बलि कर दे ?'

अटल के मुह से निकला 'अरी यदि हम लोग न जाये तो ?'

नायकिन अविलम्ब बोली, 'तो हम लोग चले जायेगे।'

'तुमको यहाँ छोड जाने मे दुख होगा। और कोई बात नही। किसी से कहना नही कुवरजी, नही तो हम लोगो को यहा के सिपाही मार डालेगे।'

अटल ने कहा, 'नही हम नही कहेगे। सोचता हूँ हम ही यहाँ क्यो पडे रहे? पर निकल कैसे जायेगे सो समझ मे नही आया। दूसरे पोटा इतना घायल है कि वह कैसे जायगा ? उसको क्या यही छोड जाओगी?'

'नही,' नायकिन ने उत्तर दिया,—'मेरे पास ऐसी जडी-बूटिया और मन्त्र है कि सांझ-साझ तक उसको चगा कर दूगी। हमारे पास रस्से है। कोट के कंगुरो से एक छोर बांधकर पास वाले किसी पेड पर दूसरे छोर का फन्दा डाल दिया जायगा और उसके सहारे उतर जायेगे। भीतर-वाहर कोई भी न लख पायगा। कोट के नीचे यदि नाहर घूम रहे होगे तो पेड पर पहुँच जाने के कारण वे छेड-छाड नही कर पायेगे। दूसरे ऊपर से इधर-उधर की टटोल करके फिर उतर कर आगे बढ जायेगे। ये दोनो जगहो को और रास्ते को अच्छी तरह देख आये है।'

अटल सोचने लगा।

एक क्षण बाद बोला, 'बडी जोखिम का काम है। रात मे होगा। सोचकर साँझ तक बतलाऊँगा।'

पिल्ली ने कहा, 'तब तक जरूरी सामान की पोटलियाँ बाँध लो। नायकिन, 'जिसमें रात मे खडबड न करनी पड़े।'

अटल ने पूछा, 'रात मे कब चलना है?'

पिल्ली ने उत्तर दिया, 'सन्नाटे मे, आधी रात के लगभग। आज ठण्ड है नायकिन, ईंधन कुछ ज्यादा इकट्ठा कर लेना। इतना कि एकदम बहुत उजेला हो जाय और घन्टे-आध घन्टे मे जलकर अन्धेरा छा जाय लोग सो जायेंगे, चाँदनी डूब जायगी और हम लोग चुपचाप चल देंगे।

'कही वैसे मे पहरे वाले आ गये तो?' अटल बोला।

'पहरे वाले बुर्जों और मीनारो पर रहुते है। देख तो रहे है। आ जायेंगे तो कह देंगे कि हम लोग बाहर वालो की आहट लेने के लिये कोट पर गये थे। जब चले जायेंगे, तब हम लोग खिसक देंगे।'

नायकिन और अटल वहा से चले आये। पिल्ली ने लाखी को रोक लिया,—'थोडी देर यही बैठो। बाते करूँगी।'

वह थम गई। चेहरे पर बहुत उदासी थी।

पिल्ली बोली, 'घबराओ मत और न मन को गिराओ। अच्छे दिन आ रहे है।'

लाखी का चेहरा तमतमा गया। 'आग लगे इस जात पात मे। जानती नही थी मे।' उसने कहा।

'मान लो कुवर जी हम लोगो के साथ न गये और तुमको यही रह जाना पडा, फिर आ पडी अहीर-गूजरो की लडाई, तब क्या करोगी?'

'मर जाऊँगी और क्या करूँगी? जात वालो या तुर्कों के हाथो मारी जाने से तो अपनी छुरी से मर जाना अच्छा।'

'राम ! राम !! कैसी बात करती हो !!! ये दिन तुम्हारे मरने के है !!!! मर जाये तुम्हारे वैरी । जियो, मौजे करो और किसी बडे राज की रानी बनो ।'

'रानी बनना जिसके भाग मे लिखा था सो बन गई ।'

'तुम्हारे भाग मे और साफ लिखा है । ऐसी रानी बनोगी कि जात-पात वाले पैरो की धूल चाटते-चाटते निहोरे करेगे ।'

लाखी के नथने फूल गये । श्वास-प्रश्वास के वेगों के बीच मे छाती उठने गिरने लगी । गले की नसे उभर आई । आंखो मे आंसू आगये ।

पिल्ली ने बडे प्यार के स्वर मे कहा, 'कैसी चम्पा चमेली सी हो मेरी लाखी ! तुम्हारे रोने से मेरा कलेजा फटा जा रहा है ।'

लाखी के आँसू भरे नेत्रो के भीतर पुतलियो मे से चिनगारियां सी छूटकर वही विलीन हो गई ।

पिल्ली कहती हुई 'यहाँ से चल ही देना चाहिये आज ही रात मे । न तो यहां बात छिपेगी और न ही जान बच पायेगी । हम लोगो को कसम धराई जावेगी तो हमे भी सच बोलना पड़ेगा । फिर जात वाले पीस डालेंगे । उधर तुर्क सिपाही घुस पडे तो कुगति हो जावेगी । सुलतान बडा अच्छा है, पर धावे के समय वह हर एक सिपाही के साथ तो रहेगा नही ।'

पिल्ली ने उसकी ओर देखा । कुछ क्षण चुप रही । लाखी धीरे-धीरे शान्त हो रही थी ।

पिल्ली यकायक बोली, 'तुम्हारे रानी बनने मे दो-तीन दिन से अधिक की देर नही है ।'

लाखी ने आँसू पोछे । सहज प्रश्नसूचक दृष्टि से पिल्ली की ओर देखा ।

पिल्ली ने अबाधगति मे कहा 'तुम इतनी सुन्दर सलोनी हो कि माडू का सुलतान तुमको अपनी गोद मे बिठलाने के लिये पलक-पावडे बिछा देवेगा । वह तो तुम्हारे ऊपर प्यार बरसाने के लिये मानताये मना रहा होगा ।'

लाखी के कानो मे सनसनाहट छा गई। आंखें विस्फारित हो गई। देह हिल गई। पिल्ली ने सोचा वार घर कर गया। बोली 'मै, झूठ नही कह रही हू। यही बात तो बतलानी थी जिसको अभी तक मै अपने मन मे रक्खे हुई थी।'

लाखी के बैठे गले से निकला, 'क्या ?'

पिल्ली ने उमङ्ग के साथ कहा, 'खबरदार तब तक किसी से न कहना जब तक कि काम पूरा न हो जाय। कह दोगी तो हमारा कुछ भी नही बिगडेगा। कुवर जी तुमसे नाराज हो जायेंगे। जाति मे यो ही न रह पाओगी। मरना तुमको चाहिये नही। निन्नी मौज के साथ ग्वालियर की रानी बनी रहे और तुम मारी-मारी फिरो।'

लाखी ने अनुरोध किया, 'पूरी बात कहो। अभी तो कुछ समझ मे नही आया।'

'पूरी भी सुनाती हूँ,—'पिल्ली बोली—'पूरी सुन लो। मैं और पोटा जब तुमसे बिछडे तो एक चौकी पर पकड लिये गये। चौकी वाले सुल्तान के सामने ले गये। उसको हम लोगो ने सारी कथा सुनाई। तुम्हारा हाल सुनकर सुल्तान को बडी दया आई। जब तुम्हारे रूप का बखान सुना तो वह उछल पडा। बोला, मै ऐसी रूप वाली को छाती से लगा लूँगा और अपनी रानी बनाकर रखूँगा। हम कह आये है कि दो तीन दिन मे लिये आते है। रात को यहा से बाहर होते ही जङ्गल मे सवारी के लिये हाथी मिलेगा और बात की बात मे सुल्तान के सामने पहुँच जाओगी, जहा सोने मोतियो के ढेर और मखमली पलङ्ग तुम्हारी बाट जोह रहे है। हम लोगो को तो अब यहाँ रहना नही है न भी जा पाये तो सुल्तान के सिपाही हमको नही सता पायेंगे। जैसे ही उनको बतलाया कि हम कौन हैं हमको छुयेंगे भी नही। तुम्हारी तुम जानो। सारी बात बतला दी। जल्दी तै कर लो जो कुछ करना हो।'

लाखी ने पीठ फेर ली और कुछ क्षण तक नाक और गले को साफ करती रही। जब उसने पिल्ली के प्रति मुह फेरा आंख लाल थी और चेहरा फीका।

लाखी ने कहा, 'उनका क्या होगा? कुँवर जी का?'

पिल्ली ने उत्तर दिया, 'सुल्तान के दीवान बनेंगे और क्या होगा?'

लाखी ने चेहरा नीचा कर लिया। होंठ हिल रहे थे और भौंहे फडक रही थी। पिल्ली ने इतना ही देख पाया। थोडी देर बाद जब सिर उठाया चेहरा लाल था और आखे झुकी हुई।

इधर-उधर देखकर लाखी ने धीरे से कहा 'चलूंगी तुम्हारे साथ। और उनको भी ले चलूंगी। आज ही चल दो। एक बात पूछू तो बतलाओगी?'

'पूछो।'

'वह तुमको चाहते है।'

'ठीक नही कह सकती। शायद चाहते है।'

'तो तुम उनके पास बनी रहना, उनको सुख पहुँचाना।'

'मै तो यही चाहती हूँ। उनसे इस समय की कोई बात अभी मत कहना। बाहर निकल चलने पर सब अपने आप खुल जायगा। यहा से रस्से के सहारे जैसे ही पेड पर पहुँचे, मुह की सीटी दी कि हाथी सवारी के लिये आ गये। उधर हम लोग सुल्तान के पास पहुँचेंगे उसी पेड और रस्से के सहारे सुल्तान की सेना का एक बडा भाग नगर मे घुस आवेगा। सुन लेगे कि सुल्तान नरवर का भी राजा हो गया और तुम माडू और नरवर की महारानी।' पिल्ली का उत्साह जोर पर था।

लाखी के होठो के एक कोने ने मुरकी ली। आधे क्षण मे वह मुरकी हल्की मुस्कान मे पलट गई।

लाखी ने बहुत धीरे से कहा,—'मै उनको चलने के लिये तैयार कर लूंगी। अभी भेद की कोई बात नही बतलाऊँगी पक्की रही?'

'बिलकुल पक्की।' पिल्ली ने लाखी का हाथ ठोका।

लाखी ने गर्दन मोडी। खुसफुसाते हुये स्वर मे बोली, 'यदि सब बाते ठीक–ठीक होती चली गई तो नरवर का आधा राज तुमको।'

हर्ष की हिलोर को बडी कठिनाई से दबाकर पिल्ली ने कहा, 'हम गरीब नरवर का क्या करेगे ? भाग मे राज कहा बदा है। पर हां दो चार गॉव जागीर मे मिल गये और कुँवर जी, तो राज ही मिला समझेगे हम सब।'

लाखी ने पीठ फेर ली। पिल्ली को लगा न केवल सुन्दर और सलौनी है वरन लाजवाली भी–कहाँ वह निन्नी उतनी ढीठ !

बडे चाव के साथ बोली, 'जब वहाँ चलो तब हाथी पर सवार होने के पहिले वे सब गहने पहिनकर चलना, अच्छी से अच्छी चून्हरी ओढ़–कर नई दुलहिन सी बनकर।'

'सब साज सिंगार–बाहर, अब और बात मत करो।।' लाखी ने पीठ फेरे हुये ही कहा।

[३६]

अटल अनिश्चय मे था। लाखी निश्चय कर चुकी थी। सध्या के उपरान्त नट बटोरे हुये ईंधन का चुन–चुनकर ऊंचा ढेर करने लगे जैसे होली जलाने को हो। लाखी अटल को हटा ले गई।

'अब ढील-ढाल का काम नही है।' लाखी ने कहा।

अटल बोला, 'इधर कूदता हू तो बावडी है, उधर फाँदता हूँ तो कुआ है। मॉडू मे पहुँचने पर जात-पॉत के बाघ क्या पीछा छोड देंगे ?'

'जो कुछ होना होगा, देखा जायगा। चिन्ता मत करो। जब स्त्री कुये मे कूदकर या चिता पर बैठकर प्राण देने का निश्चय कर लेती है तब वह कोई आगा पीछा नही सोचती। तुम तो पुरुष हो। जो कुछ होने वाला है उसके लिये मन पक्का कर लो।'

'क्या होने वाला है ?'

'सब कुछ पॉच छ, घण्टे के भीतर हो जायगा। हाथ पैर काँप गये तो हाथ मे थाम्या हुआ रस्सा छूट जायगा।'

'नही हाथ पैर नही कॉपेगे। मै डरपोक नही हू।'

'तो मन मे से ढील को निकाल दो। अब जो कुछ होगा सब अच्छा ही होगा। आगे सामने जो कुछ भी आवे उसको कर्री आंखों और कलेजा पक्का करके देखने मे ही कुशल है।'

'रस्से को मैं मजबूती के साथ पकडकर कोट के ऊपर जाऊँगा। फिर क्या होगा कुछ नही कह सकता। पर यह ठीक है कि यहां अधिक ठहरना उचित नही है। बात देर-सबेर उघरे बिना न रहेगी। लोगो को मालूम हो जायगा कि मै राजा का कौन हू और तुम कौन हो। हँसी होगी और बुराई होगी, न जाने क्या क्या न होगा। परदेश मे निकल जाने पर फिर उतनी आफत न रहेगी।'

'अब जो कुछ होगा सो सामने आवेगा। चिन्ता मत करो। जब ओढली लोई तो क्या करेगा कोई?'

'ये नट चले जाये और हम दोनो यहाँ बने रहे तो?'

'उन लोगो ने विचार बदल दिया है। कहते है कि वे बिना हम दोनो के यहा से नही टलेगे। इस तरह बने रहने मे अब सिवाय बुराई के और कुछ नहीं दिखलाई पडता।

'हॉ हॉ मै जानती हूँ! लो अब हँसी खुशी के साथ उन लोगो से बात-चीत करो। मै रोटी बनाकर सामान बाधूंगी।'

अटल नटो के पास चला गया।

कुछ रात गये नटो ने चने हुये ईधन मे आग लगाई। हवा नही चल रही थी। धुये का ऊँचा खम्बा सा आकाश की ओर गया। फिर आग चेती। उसकी लौ धुये को चीर-चीर कर आकाश को चूमने लगी। इतना उजेला हुआ कि मुहल्ले के मकान के खपरे गिन लिये जायँ। बहुत से लोग तापने के लिये आ गये और ताप-तापकर आच के कारण पीचे हटने लगे। ईधन सूखा और पतला था, इसलिये घडी दो घडी का प्रकाश देकर यकायक कम होने लगा। थोडी देर मे हल्की--हल्की लपटे, ढेरो राख और ढेर के बीच मे अङ्गारे रह गये। तापने वाली भीड़ धीरे—धीरे कम हो गई। नट, लाखी और अटल अपने

बिस्तरो मे जा लेटे। एक पहर रात बीते ईंधन के स्थान पर राख मे ढँकी हुई कुछ चिनगारियां ही रह गईं। लोग ऊँघने और सोने लगे—नट वर्ग जाग रहा था।

आधी रात के पहले ही सन्नाटा छा गया। केवल गश्त लगाने वाले सिपाहियों की आवाजे नगर की सडको और कोट की बुर्जो मीनारों पर से सुनाई पड़ रही थी। कोट ऊँची दीवारी का था और पहाड़ी की टेकड़ियो पर। नरवर वालों का विश्वास था कि शत्रु फाटको को तोड़ कर ही प्रवेश कर सकता है, दीवार को लाघ कर नही। दीवार के चारों ओर गहरी खाई थी।

कुछ नट ताकते-झांकते उठे और एक नसेनी को कोट से जा टिकाया। नसेनी खेल वाले बासो के योग से बना ली गई थी। नसेनी के डण्डो का काम रस्सियो के बँधो से लिया गया था। नट अपना ले जाने लायक सामान ऊपर चढा आये फिर बड़े रस्से को ले गये। एक-एक करके सब कोट पर पहुँच गये।

पोटा की चोट अच्छी हो गई-कभी लगी ही न थी। रस्से के सिरे को कोट के एक कगूंरे से बांध दिया और दूसरे पर सरकफूंद का बड़ा फन्दा बनाया। निकटवर्ती ऊँचे पेड पर, जो गहरी सकरी खाई के पार की ढी पर था, कई बार डाला। एक घडी के प्रयास के बाद फन्दा पेड की डाल पर जा फंसा। उसको खीचकर देख लिया। जकड पक्की थी।

पहले कौन जाये इसका निर्णय तुरन्त हो गया।

नायकिन ने खुसफुस की,—मै जाती हूँ, पहुँच जाने पर रस्से को हिलाऊंगी, तब पोटा आवे।'

अटल ने पूछा, 'दो-दो नही जा सकते ?'

लाखी ने कहा, 'एक-एक करके ही जाना चाहिये। रस्सा—मोटा नही है।'

पिल्ली ने अनुरोध किया, 'ठीक है ठीक है। पोटा के पहुंच जाने पर लाखी जावे फिर हम सब अन्त मे कुवर जी और मैं। बहुत हल्की हूँ मैं। इनको रस्सी का काम मालूम नही। अपने साथ लिवा जाऊँगी।'

'मै तो जानती हूँ रस्सी काम, लेती आऊँगी साथ। साखी दृढ़ता के साथ बोली,—'पर रस्सी इतनी मजबूत नही हैं कि उस पर दो-दो जा सके। न होगा तो मैं और पिल्ली अन्त मे काम को बांट लेंगी।'

नायकिन चली गई। वे सब एकाग्रता के साथ उसकी क्रिया को देखते रहे। थोड़े से समय उपरान्त रस्सी उस छोर से हिलती मालूम पड़ी।

पोटा गया। पेड़ पर पहुँच जाने के बाद रस्सी फिर हिली। क्रम से अन्य नट भी गये।

उनके उस पार पहुँच जाने पर पिल्ली बोली, 'तुम जाओ लाखी अब।'

'मैं नही तुम।' लाखी ने कहा।

वह बोली, अच्छा मैं ही जाती हूं। वहाँ पहुँचकर जैसे ही रस्सी हिलाऊं तुरन्त आ जाना, फिर कुंवरजी।'

लाखी बोली, 'चिन्ता न करो कुवर जी की।' वाक्य के अन्तिम शब्द इतने धीरे से कहे गये थे कि पिल्ली ने नही सुन पाये।

पिल्ली ने स्मरण दिलाया, आगे की बात याद रखना। सब तैयार मिलेगा।' और चलने को हुई।

लाखी ने कहा, 'नही भूलूंगी, जाओ।' पिल्ली चल पड़ी।

लाखी आँखे गड़ाकर देखने लगी। पिल्ली जल्दी-जल्ली जा रही थी।

लाखी ने तुरन्त छुरी निकाली।

अटल ने विना कुछ सोचे ही निवारण के लिये हाथ वढाता हुआ एक कदम आगे वढा। 'क्या कर रही हो?' धीरे से उसके मुह से प्रश्न छूटा।

लाखी ने दबे धीमे स्वर मे डाँटा, 'पीछे हटो !' और कंगूरो पर से झुककर, सधकर, भरपूर वल के साथ रस्सी पर छुरी को छोडा। अटल ने तारो के धुधले प्रकाश मे छुरी की चमक भर देख पाई थी।

रस्सी खस्स से कट गई। दीवार के नीचे खाई मे किसी के गिरने का धम्म से शब्द हुआ। एक तीव्र आह निकली। खाई पर पेड से 'ओह ! हाय !!' आवाजे आई। पेड की डालियाँ खडखडा उठी। पेड के पीछे की झुरमुटो मे चलने फिरने की आहटे आईं और एकदम बढ़ी। खाई मे थोडी सी छटपटाहट सुनाई पडी और फिर पिल्ली समाप्त।

'यह क्या किया तुमने ?' घबराये हुये स्वर मे अटल बोला।

लाखी के मुँह से निकला, 'डायन ! चुडेल !!' सुल्तान की गोद मे बिठलाना चाहती थी !!! अब ले ले ले नरवर का आधा राज ! ! !

'क्या कह रही हो ?' अटल ने घबराहट के साथ पूछा। पास की बुर्ज पर जङ्गल की झुरमुटो से आने वाली आवाजे पहुँची। पहरे वालो ने ललकारा और मशाले हाथ मे ली।

'चलो नीचे सब बतलाती हू। उतरपडो समर मे कमर कसकर और सिर उठाकर निन्दाचार का सामना करो !' वह बोली।

वे दोनो नसेनी पर से नीचे उतर गये। इतने मे मशाले लिये पहरे वाले आ गये।

'क्या है ? क्या है ?' उन लोगो ने प्रश्न किया।

लाखी ने उत्तर दिया जैसे किले की रानी हो, 'कोट के नीचे तक बैरी फौज फाटा लेकर आ जाय और तुम्हे पता न लगे ! वाजे वजाओ और तैयार हो जाओ !! तुर्क हमला करने वाले है ! ! !'

पहरुओ ने नसेनी की तरफ देखा और नटों के उजड़े हुये डेरे को जिसमे बकरे, और गधे बन्द मशालो की झूमती लौ के कारण फड़-फड़ा रहे थे।

लाखी ने कहा; 'भोर होते ही सब प्रकट कर दूंगी। अभी काम देखो।'

बाजे बज पड़े। दौड़ धूप हुई। सारा नरवर जाग गया। किले की सेना सावधान हो गई। नगर के योद्धा जूझ पड़ने के लिये तैयार हो गये।

लाखी और अटल को एक बुर्ज के भाग मे स्थान दे दिया गया। वे ठण्ठ के मारे ठिठुर गये थे।

लाखी ने थके हुये स्वर मे कहा, 'ये लोग फाटक खोलकर क्यो नही लड जाते ?'

'तुम क्या जानो,—अन्धेरे मे कही छापा मारा जा सकता है ? किले मे बैठकर लनसा अच्छा रहता है !'

लाखी को यह बात नही जची। परन्तु उसने वाद-विवाद नही किया। रात भर चहल-पहल मची रही। लाखी और अटल भी नही सोये।

अटल के मन मे कुतूहल की बाढ सी आ गई थी। उसने कहा 'मेरी समझ मे नही आता कि यह सब क्या हुआ ? सुल्तान की गोद मे बिठलाने की बात क्या थी ?'

'भूल गये क्या ? राई मे पेड़ के नीचे ललियान के पास किसके हाथ को अपने हाथ मे पकडकर क्या कहा था ?'

'कभी नही भूल सकता।'

'उसी को भुलाने और मिटाने के लिये इस चुडैल और उन भूतो ने यह सब जाल रचा था। तुम्हारी गोदी मे अङ्गारे बनकर पिल्ली आती और मुझको राख बनाकर सुल्तान के पैरो मे डाल दिया जाता !, लाखी हिलकियो रोने लगी।

'ओफ ! यह बा थीत !!' अटल ने कहा।

शान्त होने पर लाखी ने पूरी कहानी सुनाई।

अन्त मे बोली, 'इससे तो जांत-पांत का अपमान भला।'

[३७]

प्रात काल के उपरान्त चहल–पहल और भी बढ गई। किले मे, किले के नीचे नरवर नगर मे और बाहर सुल्तान की छावनी मे। पिल्ली की लाश, रस्सी के टुकडे को जो कंगूरे से बधा हुआ था और नसेनी को नगर वालो ने देखा। नट सुल्तान के जासूस थे और उसके दस्ते को किले के भीतर लाना चाहते थे, कथा का यही भाग उन्होने जान पाया। लाखी के प्रति उनके मन मे आदर का भाव उत्पन्न हुआ। केवल कुछ स्त्रियो ने सोचा ही नही बल्कि कहा भी 'चण्डी है, चण्डी।'

सुल्तान की छावनी मे चहल–पहल आक्रमण करने की तैयारी की थी। चन्देरी का सूबेदार फाटको के तोडने के प्रयत्न करे और गियासुद्दीन ग्वालियर की ओर प्रयाण। नट बेघर द्वार से, छावनी मे, रो–पीट रहे थे।

सुल्तान कुढा हुआ था।

मटरू से कहा, 'नटो ने सारी तरकीब चौपट कर दी। बिलकुल गधे हैं।'

'जहापनाह उन लोगो को शक है कि किसी ने रस्सी काट दी।' मटरू डरते–डरते बोला।

'बिलकुल गलत,'—गियास ने भर्त्सना की,—'वह आने को तैयार हो गई, सब बाते मान ली, मशालो की रोशनी बहुत देर बाद हुई, इस पर भी कहते हो किसी ने रस्सी काट दी। अहमक हो! उन नालायको ने सडी रस्सी से काम लिया। कमबख्त कही के। भगा दो छावनी मे से उनको।'

आज्ञा पालन के संकेत मे मटरू ने जमीन तक सिर नीचे झुका दिया।

'राव राजसिह को हुक्म दो कि जोर शोर के साथ शहर के दक्षिणी फाटक पर हमला करे। बाकी के सालारो लडाई की तरकीब समझाये देता हूँ।' गियास ने कहा।

'जो हुक्म जहाँपनाह। मटरू बोला।

गियास ने आज्ञा दी,—'मै ग्वालियर की तरफ आज कूच नही करूँगा, शायद यही मेरी जरूरत पड जाय। फौज यही तैयार रहे।'

मटरू आज्ञाओ को लेकर छावनी मे चला गया। राजसिह के साथी बहुत नही थे, परन्तु उन सबो ने अपना एक अलग शिविर बना रक्खा था। जैसे ही मटरू ने सुल्तान का आदेश सुनाया राजपूत जूझ जाने के लिये फडक उठे।

भाट ने राजसिह से कहा, 'वीरसिह देव तोमर ने आपके पुरखो से नरवर को छीना था अभी सौ ही बरस हुए है जैसे कल की बात हो। पुरखो के अपमान का बदला चुकाओ और नरवर को वापिस लो, नरवर कछवाहो का है, तोमरो का नही है।'

'आज तोमरो के छक्के छुटा दूंगा, राजसिह ने आश्वासन दिया।

भाट ने उत्तेजित किया, 'या तो सिर को फाटक पर कटवा कर पुरखो मे जा मिलिये या नरवर के किले पर अपना झण्डा फहराइये।'

राजसिह और उसके साथियो ने अमल—नशा—किया और सुल्तान की सेना के आगे हो गये।

नरवर के तीनो फाटको पर एक साथ ही आक्रमण किया गया।

राजसिह उत्तरीय फाटक पर था।

नगर के मकानो मे जलती हुई मशालो के तीर छोडे गये। कवच रक्षित हाथियो ने चिघाड-चिघाड कर फाटको पर सिर दे दे मारा। भीतर से तीरो, जलती हुई मशालो और चट्टानो की वर्षा की गई।

हाथी, घोडे पैदल मरे और घायल हुये, परन्तु एक भी फाटक न टूट सका तीसरा पहर होने को आया।

सिन्ध उस पार उत्तर मे मगरौनी और पूर्व की ओर धूल के बादल उडते हुये दिखलाई पडे।

चौकी वालो ने सुल्तान को रण क्षेत्र मे समाचार दिया, ग्वालियर से राजा मानसिंह एक बडी फौज लिये चला आ रहा है।'

सुल्तान ने घेरे को हटाकर पीछे चल पडने की आज्ञा दी। राजसिह ने नही माना।

'आज या तो अपना सिर दूँगा या नरवर को लूँगा।'

और वह फाटक पर अन्धाधुन्ध लडता रहा। घायल हो गया। परन्तु अभी सिर धड से अलग तो नही हुआ था। तीरों से तीर खन-खना रहे थे और मशालो से मशाले लड रही थी। राजसिह का हाथी उसी रणोन्माद मे जान पडता था। लोहूलुहान हो जाने पर भी फाटक को टक्करो पर टक्कर दे रहा था।

सुल्तान ने फिर कहलाया, 'मानसिंह तोमर आ गया है, परन्तु आकर उसको ललकारो और सामना करो।

तब फाटक को जलती हुई आखो देखता हुआ राजसिह लौटा।

ग्वालियर की सेना सिन्ध पार आ गई और तीरो का युद्ध शुरू हो गया। राजसिह मानसिह के निकट पहुँचने के लिये पागल हो उठा था, पर मानसिह को न पा सका।

दोनो सेनाये उलझ गईं। मानसिह की तेजी सेना की ठोकर को मांडू की सेना पी पी जा रही थी।

नरवर वालो को मालूम हो गया कि उनका राजा आ गया है और लडाई के पलडे मे विजय अपनी ओर झुकाई जा सकती है। फाटक खोलकर चुने हुये पांच हजार सवार नरवर से निकल पडे और उन्होने मांडू की सेना के पिछले बाजू पर प्रचण्ड वेग के साथ आक्रमण कर दिया। उत्तर और पूर्व से ग्वालियर की सेना दबाव पर दबाव डाल ही रही थी। सुल्तान ने देखा केवल दक्षिण-पूर्व के कोने से निकल जाने का मार्ग है। सध-सध कर, लड़ते-लडते वह पीछे हटने लगा।

राजसिंह के मन की मन में ही रह गई। सुल्तान के साथ उसको भी लौटना पड़ा।

'फिर देखूंगा, बहुत जल्दी देखूंगा, दांत भीचकर सुल्तान ने अपने आप कहा।

सूर्यास्त के पहले ही माडू की सेना अपनी छावनी मे काफी सामान छोडकर कोसों पीछे हट गई।

किले के एक मुख्य फाटक से मानसिंह और सेना का बडा भाग भीतर आ गया। काफी सेना बाहर छोड दी गई, यदि मांडू की सेना लौट पडे तो युद्ध में किसी प्रकार की असुविधा न हो।

निवास स्थान तक पहुँचते पहुँचते मानसिंह को संध्या हो गई।

हतोहतों की देखभाल,—शैन्य—शिविर की व्ययस्था वैरी की छावनी से पाये गये माल की गिनती और सँभाल तथा आक्रमण से रक्षा की योजना संगठित करते करते काफी रात चली गई। तब निहालसिंह मानसिंह के पास आया।

निहालसिंह थका हुआ था, परन्तु उत्साह में कोई कमी नही आई थी।

आते ही बोला, 'महाराज नरवर नष्ट होने से बाल-बाल ही बचा है।

'हा, हम लोग ठीक समय पर आ गये। संभव है सुल्तान कल लौट पडे। रात भर विश्राम किये लेते है सैनिक। कल फिर भिड़ जायेंगे। कोई चिन्ता नही।'

'नही महाराज, मै आज के युद्ध की बात नही कर रहा हूं। नगर के भीतर आकर मालूम हुआ कि एक स्त्री ने अपनी वीरता से नगर को महासंकट से कल रात बचाया।

'स्त्री ने कैसे ?'

'नगर मे सुल्तान के भेजे हुये कुछ नट आ गये थे। उन्होने कोट के कगूरो से रस्सी बाधकर मांडू की सेना को भीतर चढाने का प्रयत्न

किया। उस स्त्री ने नटो को मार गिराया और रस्सी को तलवार से काट दिया।

'कौन है वह स्त्री ? कहाँ है ?

'यही कही नगर मे है। भोर पता लग जायगा।'

'कौन है वह ? उसने बहुत बडा काम किया है।'

'लोगो ने बतलाया कि गूजर है। पति-पत्नी मगरौनी से आये है। यहाँ कहते है कि ग्वालियर के रहने वाले है।'

'ओह ! अच्छा !! वे ही दोनो होगे, वे ही दोनो होगे। धन्य भगवान यहाँ है वे दोनों !

'कौन महाराज ?'

'लाखी रानी और अटलसिंह। इतना साहस लाखी मे ही हो सकता है।'

'परन्तु लाखी तो महाराज अहीर है।'

'तो क्या हुआ ? किसी ठाकुर से कम है ? भोर होते ही ढूँढो उन दोनो को। मै भेट करूँगा।'

लाखी और अटल बुर्ज के खण्ड से हटकर एक निकटवर्ती मन्दिर की दालान मे आ गये। उन पर जनता को श्रद्धा चू पडी। गूजर की नारी तक कितनी दिलेर होती है। यह निष्ठा साधारण जन के मन मे छा गई। दिन भर फाटको पर धावे होते रहे। सैनिको का विश्वास था कि फाटकों के तोड़ने वाले ने अभी जन्म नही लिया है—नगर निवासी और किले वाले भूखो मरकर ही आत्मसमर्पण कर सकते है। साधारण जनता के मन मे उतनी आस्था नही थी। भाग्य मे बदा होगा वही होगा इसी कुटे पिसे आसरे मे सन्तोष था।

जब उत्तरीय फाटक पर राजसिंह कछवाहा ने पागलो की तरह बार पर बार किये, तब उसके साहस और शौर्य को देखकर नरवर रक्षकों का हृदय धुक-धुक कर उठता था। परन्तु मानसिंह की सेना के आ जाने से वे सुस्थिर हो गये और शत्रु की पराजय मे सन्देह न रहा।

फाटक के खुलते ही लाखी और अटल को मानसिंह के प्रवेश का हाल मालूम हो गया।

हर्ष को उदासी के साचे मे ढालने का प्रयत्न करते हुये लाखी बोली अब क्या होगा?'

अटल ने कहा, 'होगा क्या? जो होना था वह हो चुका। नरवर को बचा लेने का पुण्य तुम्हे मिलना चाहिये। पर हम उनसे माँगने नही जायेगे और न बतलायेगे कि हम लोग यहाँ है। बुलाया तो सामने जा खडे होगे बस।'

'राजा हम लोगो को चाहते होगे। अब कोई वाधा भी नही रही नट सब समाप्त हो चुके है।' लाखी बोली।

लाखी जानती थी कि नायकिन ने कुटिलता के साथ कहा था कि अटल गूजर है और यह भी ऊँची जाति की है, परन्तु जिनसे कहा था वे छोटे-छोटे से किसान मजदूर है, बात उनसे आगे न गई होगी और न जा सकेगी।

जो बात उसके मन मे उखड-उखड़ पड रही थी पूछ डाली 'क्या उस पिल्ली पर कुछ मन चला गया था?'

अटल की गर्दन झटके के साथ ऊपर उठ गई और आखे निकल-सी पडी।

'ऐसी वेसमझी की बात क्यो कही?'

'अरे तो बुरा क्यो मान गये? ऐसा तो होता ही रहता है। पुरुप तो चूक ही जाते है।'

'क्या वकती हो? याद आया तुमने रात मे कहा था। पिल्ली मेरी गोद मे अङ्गारे बनकर आती। उस समय समझ मे नही आया था। तुमने क्यो कहा? मेरी सौगन्ध है बतलाओ।'

'यो ही सौगन्ध धरा दी! क्या कोई स्त्री बिना सांठ-गाठ के अपनी छाती किसी पर पुरुष के सामने उघाड़ेगी? मैने कल देख लिया था।'

'वह स्त्री थी ! घूरे पर मड़लाने वाली तितली को स्त्री कहा जाता है ? बहुत से मन्दिरो के द्वारो पर जवान स्त्रियो की जो बेहूदी मूर्तियाँ बनाकर खड़ी कर दी गई है, वे क्या किसी देवता के हुकुम से गडकर खड़ी की गई है ! मै क्या कोई मक्खी हूँ जो मैल पर जा गिरूँगा ? मै क्या—'

'अरे यो ही बरस पड़े । मै कभी सोच भी नहीं सकती थी कि स्त्री इतनी निर्लज्ज, ऐसी चुड़ैल हो सकती है ?'

'और मैं क्या कोई भूत हूं या पलीत हूँ ?'

'अरे तो मुझको माफ करो कुवर जी। भ्रम मे पड़ गई। पर उसको मार दिया तो अच्छा किया न मैंने ?'

'अच्छा नही बहुत ही अच्छा किया। मुझको सब बाते मालूम हो जाती तो मै दिन मे ही उन सबो को मार डालता।'

उनके भाग मे मरने के लिये दिन नही बदा था, रात ही बदी थी। दिन मे कुछ कर डालने से सब काम बिगड जाता। अच्छा तो तुमने क्षमा कर दिया न मुझ बेसमझ को ?'

'बेसमझ तो नही हो—समझ तो तुम मे मुझसे अधिक है। नो वचन दो कि ऐसी बात आगे कभी नही कहोगी।'

'कभी नही कहूँगी बस। या कुछ और ?'

वे दोनो एक दूसरे से लिपट गये—और रोये। दिन चढ़े निस्तार के उपरान्त दोनो उसी दालान के एक कोने मे आ बैठे।

'अब क्या होगा ?' मन मे यह प्रश्न था।

पड़ोस की एक अधेड स्त्री मन्दिर मे जल चढाने के लिये आई। देवार्चना करने के उपरान्त उन दोनो से कुछ अन्तर पर आ बैठी। मुस्कान और घूँघट की सम्भाल के साथ उसने कहा, 'तुम्ही हो न वह गूजर ठाकुर जिन्होने रात मे तुर्कों को कोट पर से मार भगाया ?

अटल ने उत्तर दिया, 'वे गूजर ठाकुर हमी लोग है तुर्क आ नही पाये थे, आने को ही थे, नटो ने उनको बुलाया था। नटो को मार भगाया सो वे भी भाग गये।'

'सुनते है इन्होने बहुत से तुर्क मार दिये। नटो को मारा होगा, कौन जाने। नट-बेडिये तुर्को से कुछ कम थोडे ही होते है। तलवार चलाई थी इन्होने ?'

'हाँ—आँ छुरी।'

'देखने मे तो दुबली छरेरी है, पर बडी विकट है। राजा इनाम देगा।'

'देगा तो ले लेगे।'

'वाह ! वाह !! माग न लो जाकर। घर बैठे थोड़े ही कोई जागीर लगाने आता है। कहाँ के रहने वाले हो ?'

'दूर के।'

'यहाँ नातेदारी होगी ?'

'नही तो।'

'गूजर तो बहुत है यहा। अहीर भी है।'

'होगे।'

'इनकी जाति के अहीर तो यहाँ पडोस मे ही रहते है।'

'किनकी जाति के ?'

उस स्त्री ने दात निकाल कर लाखी की ओर सकेत किया। लाखी ने उसको तिरछी करारी दृष्टि से देखा वह सहमी नही।

अटल के मुह से प्रश्न निकला, तुम्हे कैसे मालूम ?'

उसने कहा, 'हमे कैसे मालूम ! सच्ची बात क़ही छिपती है भैया !! अपना वरन क्यो छिपाते हो ? बस्ती भर मे खबर है कि तुम गूजर हो और—

'मै अहीर हू लाखी ने कडवे स्वर मे कहा, 'किसी अहीर के यहाँ या तुम्हारे यहाँ नातेदारी करने नही आये है हम यहा।'

स्त्री उठ खडी हुई। बोली, 'राम ! राम ! ! मुझको क्या करना है। मैंने तो बस्ती की बात सुनाई। तुम्हे यह ठाकुर रक्खे है सो रक्खे रहे, हमको क्या पड़ी।'

'रक्खे नही है, बाई व्याहता है यह मेरी ! भावर फेरे वाली व्याहता।' अटल ने कहा।

स्त्री चलने को हुई। बिरबिराई—'भगवान, कैसा घोर कलजुग आ गया है ! गूजर अहीर का व्याह ! !'

मोड से टापो का शब्द सुनाई पडा। स्त्री रुक गई और वे दोनो आहट की दिशा मे देखने लगे एक क्षण उपरान्त आगे—आगे मानसिह पीछे—पीछे निहालसिंह और कुछ सवार आ रहे थे। उसके पीछे नगर निवासियो की भीड। उन दोनों पर निगाह पडते ही लाखी और अटल उठ खडे हुये। सिर नीचे कर लिया। सोचा मानसिंह बाहर जा रहे है। एक क्षण मे निकल जायेगे।

मानसिंह मन्दिर के सामने आते ही घोड़े से नीचे कूद पडा। निहाल भी कूद पडा। सवारो ने दोनो के घोडे थाम लिये। मानसिंह दालान के सामने आकर खडा हो गया।

मुस्करा कर लाखी से बोला, ऐसा छिपाया अपने को जैसे किसी की चोरी की हो।'

लाखी ने गर्दन नीची करली।

'नरवर को बचाने वाली तुम्ही हो या कोई देवी यहा आ गई थी?'

लाखी ने ऊँची साँस को धीरे-धीरे दबाया। मन्दिर के सामने भीड इकट्ठी हो गई !

'तुम वेसे थोड़े ही सिर उठाने की हो'

लाखी ने नीचा सिर किये हुए ही आखे ऊपर उठाकर नीची करली। कुछ गीली हो गई थी।

मानसिंह ने अपने गले से सोने के मोतियो का कण्ठा निकाला, दोनो हाथो से पकड़ा और बोला, सिर ऊँचा करो।

लाखी ने धीरे-धीरे सिर ऊँचा किया। होट कांप रहे थे। आँखें आसुओ से भर गई थी। राजा ने उसके गले मे हार डाल दिया। आँखों से आँसू बहकर गले मे पड़े हुये हार के मोतियो पर ढलकने लगे। मुह को गदेलियो से ढककर लाखी सिसकने लगी। अटल अपने सूखे हुये होठो पर जीभ फेर रहा था।

'लाखी रानी घोडे पर चढना जानती हो ?'

लाखी ने कोई उत्तर नही दिया! नाही का सिर हिला दिया।

हाथी पर बैठकर ग्वालियर जाओगी। कहकर मानसिंह अटल के सम्मुख हुआ।

हँसकर बोला, श्रीमान कुँवर जी, आपको यह सब क्या सूझा? बिना किसी से कुछ कहे सुने ही चल दिये और यो ही भटकते फिरे ! !'

अटल कुछ उत्तर देने के लिये गले को सम्भालने लगा और सूखे होठो को गीला करने मे और प्रयत्नशील हुआ।

उस समय बोधन पुजारी का चित्र मानसिह की आँखो के सामने फिर गया, अटल की आँखो मे तो था ही।

मानसिह गम्भीर हो गया। निहाल से कहा,'हाथी को मंगवाओ।' कापते हुये टूटे धीमे स्वर मे लाखी ने प्रतिवाद किया, ऐसे ही चली जाऊँगी।'

उसका प्रतिवाद नही सुना गया।

थोडी देर मे हाथी आ गया। चढने के लिये महावत ने हाथी को बिठला दिया। सीढी लगा दी गई। लाखी नीचे इधर-उधर देखने लगी, जैसे बगले झाँक रही हो।

राजाने कहा वह नसेनी कहा है जिस पर होकर नट तुर्को को नरवर के भीतर लाना चाहते थे ?

लोगो ने बतलाया, 'तोड-फोड डाली गई है।'

राजा बोला, 'बैठो लाखारानी हाथी पर और चलो मेरे डेरे पर। तुम भी बैठो कुवरजी। नरवर को निस्सकट करके फिर ग्वालियर चलेगे।'

लाखी ने अपने मैले कुचैले मोटे कपडो को देखा। एक क्षण के लिये ध्यान उन रङ्ग-बिरङ्गे कपडो की ओर गया जो उसने मगरौनी मे कुछ समय के लिये पहिने थे। बढने के लिये उसका पैर नही उठ पा रहा था।

मानसिंह ने हँसकर अटल से कहा, 'उठालो और बिठला दो हाथी पर। व्याह किस दिन के लिये किया था।

अटल ने आई हुई हँसी को रोका। चलने के लिये लाखी को हाथ का हलका सकेत किया।

लाखी का चेहरा लाज के मारे लाल हो गया। काँपते हुये होठों पर मुस्कान आई। एक आँख से मानसिंह को देखा—कृतज्ञता टपक गई उस चितवन मे—और हाथी पर जा बैठी। अटल भी।

उपस्थित-जनता ने मानसिंह का जय जयकार किया। वे सब मानसिंह के साथ उसके डेरे पर चले गये।

तमाशा देखने वाली स्त्रियो मे से एक ने दूसरी से कहा।

अपना राजा है बहुत अच्छा। बडा रसिया है। है न ?'

'रसिया न होता तो उसको हाथी पर कैसे चढा देता ? सलहज है उसकी। साले को भी हाथी पर चढा दिया! अच्छा तो रहा।'

'बाई! रूप-सरूप ने बिठला दिया हाथी पर। क्या सचमुच तुर्कों की सेना को रस्सी और नसेनी पर से नट उतार लाते नगर मे ?'

'की तो लाखी ने बहादुरी। इतना तो कहना पडेगा।

'इतनी कि राजा घोडे पर और वह छोकरी हाथी पर! पर हाँ रूप लुनाई है उसमे। तुमने लखा या नही, जब हाथी पर चढने को जाने लगी, तब कैसी आँख उठाई थी। राजा पर ?'

'राजा उसको ग्वालियर ले जाकर महलों मे डाल देगा'

'राजा जो ठहरा, चाहे जो करे। पर है अच्छा। ठीक समय पर आ गया, नही तो नरवर राख हो जाता। उसी ने बचाया।

हाथी पर चढा अटल सोचता जाता था, मेरे बैल कहाँ होगे। सुभीते मे चुपचाप खोज करवाई परन्तु पता नही चला।

मानसिह कई दिन तक नरवर मे रहा। जब मालूम हो गया कि गियासुद्दीन माँडू पहुँच गया तब ग्वालियर की ओर चला। ग्वालियर जाने के पहले उसने नरवर नगर के कोट बाहर जयतिखम्भ की शिला पर माँडू के सुल्तान की पराजय की बात खुदवा दी। वह स्थान वही था जहाँ से माँडू की सेना के पैर उखडे थे, और हारकर पीछे हटी थी।

नरवर से ग्वालियर जाने के पहले मानसिह आदेश दे गया,-'नरवर का किला और नगर कुअर अटलसिह की जागीर मे समझा जायेगा। किलेदार, सेनानायक सब वे ही रहेगे, प्रबन्ध भी वही रहेगा। कागजों मे जागीर पर नाम कुअर अटलसिह का लिखा जायेगा। यह मेरे साथ ग्वालियर मे रहेगे।

ग्वालियर पहुँचने पर लाखी को मृगनयनी से जो प्यार स्वागत, और आल्हाद मिला उससे वह अपनी सब व्यथाओ को भूल गई। कला को अपने से मिलता-जुलता पाकर आश्चर्य तो कम हुआ, कुढन अधिक हुई।

अटल से अकेले मे कहा, 'फिर कही वैसे न बौखला जाना जैसे कला को मेले मे देखकर हो गये थे।'

अटल हँस पड़ा—'मै—क्या मूर्ख हू जो तुम्हारे उसके अन्तर को न पहचान पाऊँगा ?'

लाखी की कुढन विलीन हो गई।

अटल ने अपने मन मे कुछ पहचाने बना ली और फूँक-फूँक के पैर रखता हुआ सा चलने लगा।

कुछ दिनों यह सादृश्य मृगनयनी के विनोद का कारण रहा। इस विनोद मे कला उसके निकटतर सम्पर्क मे आ गई।

[३९]

मांडू पहुँचने के बाद गियासुद्दीन ने नायकिन के वर्ग को अपनी सल्तनत से बाहर निकलवा दिया ! मटरू को कोडों से पिटवा दिया !! और अपने अखबार–नवीस–दैनिकी या इतिहास–लेखक को लिखने की आज्ञा दी—सुल्तान गियासुद्दीन खिलजी ने मानसिंह तोमर को नरवर के मैदान मे हराया और उसे ग्वालियर की ओर खदेडकर खुद माडू चला आया। किसी किसी गुप्पे-चत्पे ने लिखकर रख लिया कि सुल्तान गियासुद्दीन नरवर को जीत नही सका और थक कर लौट आया। नरवर के जयतिखम्भ मे जो कुछ खुदवाया गया, वह कुछ और था।

राजसिंह कछवाहा घायल होकर चन्देरी लौटा। स्वस्थ होने मे उस को बहुत दिन लगे। बैर–प्रतिशोध और नरवर के पुन. प्राप्त करने का हट और भी पक्का हो गया। उसको मालूम हो गया था कि कला और गायक बैजू ग्वालियर से नही लौटे। वह उनकी प्रतीक्षा मे था।

मटरू के शरीर ने कोड़ो की मार चुपचाप सह ली। क्रोध चले जाने पर गियासुद्दीन ने अपने हुजूर मे उसके आने की खुलासी कर दी और मटरू फिर उसी हँसी–खुशी के साथ गियास के पास आने–जाने लगा, जैसे पहले आता-जाता था। लुक-छिपकर वह गियास के बेटे नसीरउद्दीन के पास हो आता था।

'जानआलम के लिये न मालूम कितनी परियाँ तरसती-तड़पती है। समझ मे नही आता कैसे यहाँ तक आ पावे।' मटरू ने एक रात लम्बी आह भरके नसीरुद्दीन से कहा।

'भाई ख्वाजा, इन मौलवियो के मारे तो बेहद परेशान हो गया हूं। कमबख्त दिन–रात पीछे पडे रहते है। मुश्किल से आज तुमको अकेले मे बुला पाया।' नसीर बोला।

'मुल्ला, मौलवी, काजी जहाँपनाह से भी कुढ़े हुये से है।'

'इन सबको मरवा दे तो अच्छा रहेगा।'

'जानआलम ने तो ठीक फरमाया, मगर मुनासिब नही है। आम सिपाही तो इन्ही लोगो का मुह ताकते है।

'फिर क्या हो ? कैसे हो ? अब्बाजान को पूरे तीस बरस हो गये है राज करते और इन मुल्लो की खुशामद करते-करते।'

'जो कोई भी हिन्दुस्तान मे सल्तनत कायक करना चाहे या कायम रखना चाहे उसको मुल्लो की दुआ अपने साथ रखनी होगी, मगर जहाँपनाह ने हमेशा मुल्लो को गालिया दी।'

नसीर उखड पडा।

'गालियां तो मै भी देना चाहता हू। मेरी जान साँसत मे दबोच रक्खी है।'

'बिचारे मुल्लो का क्या कसूर है ? किसी के हुकुम पर ही तो चलते है।'

'तो अब तो बरदाश्त की हद हो गई।'

मटरू ने नीची गर्दन और भी नीची कर ली।

'जानआलम, बन्दा ठहरा गुलाम, क्या अर्ज कर सकता है! सुनते हैं घूरे के भी कभी न कभी दिन फरते है।'

मटरू ने नीचे ही नीचे कनखियो आखे चलाई नसीर के तमतमाये चेहरे को देखा।

जमीन पर माथे को टेककर बोला, 'जानआलम, कभी-कभी तकदीर से तदबीर बडी हो जाती है।'

नसीर तकिये मे टिककर कुछ सोचने लगा। मटरू माथा टेके हुये था।

नसीर बोला, 'अच्छी तरह बैठ जाओ मटरू। तुम अच्छे आदमी हो।'

मटरू फिर ज्यो का त्यो बैठ गया।

नसीर ने कहा, 'तकदीर और तदबीर की बहस को मैने भी पढा है। मगर लिखी हुई बहसो से तो दिमाग सडने लगा है।'

'बहस नही, जहाँपनाह तवारीख देख ले। तदबीर की मिसालो पर मिसाले मिलेगी दिल्ली की बदशाहत की, गुजरात की सल्तनत की, बहमनी खानदान की।'

'मुझको कमबख्तो ने यह सब कभी नही पढाया। तुम एकाध सुनाओ।'

'जानआलम गुलाम तो जाहिल है और जबान कटकर गिर जाय अगर कोई बेजा बात मुँह से निकल जाय।'

'तुम बेखटके कहो मैं गौर से सुनूँगा।'

'जान आलम ने गुजरात के पहिले सुल्तान मुजफ्फरशाह का हाल तो सुना ही होगा।'

'सुना है, पढा नही है। मुजफ्फरशाह को उसके पोते अहमदशाह ने जहर देकर खतम कर दिया था।'

'कुछ ऐसा ही गुलाम ने भी सुना है। और जूना खां मुहम्मद तुगलक बादशाह दिल्ली का भी हाल आनआलम ने सुना होगा।'

'सुना है कुछ ऐसा ही उसने किया था।'

'तवारीख भरी पडी है जानआलम, मगर झूठी भी हो सकती है।

नसीर तकिया पर से सिर उठाकर बैठ गया।

'अगर तवारीख गलत हो सकती है तो मुल्ला ने मुझको जो कुछ पढाया है, वह सब दिमाग पच्ची ही रही।'

दोनों थोड़ी देर चुप रहे।

नसीर बोला, 'परियो वाली बात जो तुमने सुनाई थी वे कहा है? कैसे आवे यहा तक?'

'जानआलम, '—मटरू ने बतलाया,—'सोना चाँदी और हुकूमत अख्तियार हाथ मे हो तो चाहे जितनी परिया हाथ जोडकर सामने आ खडी होगी। यही है बहुत सी तो। एक से एक बढ़कर और मालवे की सल्तनत मे बहुत जगह। बाहर भी है। सोना चांदी और जवाहिरात उनको बात की बात मे हुजूर के कदमो मे ला सकते है।'

'मेरी सलाह मे शामिल होने को तैयार हो?'

'जानआलम गुलाम की बोटी बोटी को अपना समझे।'

'देखो अगर भेद खुल गया तो तुम्हारे टुकडे-टुकड़े कुत्तो को खिला दिये जायेगे और मै—मारा तो नही जाऊंगा, मगर तकलीफ भुगतनी पडेगी। लेकिन, जितनी भुगत रहा हूँ उससे शायद ही ज्यादा हो।'

'मेरा दिल ही जानता है जैसा कुछ बर्दाश्त किया है, जानआलम।'

मटरू रोने लगा। नसीर ने शान्त किया।

'तुम्हारे दिन भी फिरने को है, मटरू। अब्बा जबसे नरवर को जीत कर आये है तबसे जशन मनाये जा रहे है। मैं भी जशन करूंगा।'

'हा जानआलम, जीत तो जरूर आये है मगर नरवर के शहर मे दाखिल नही हो सके। तवारीख मे वाकया जरूर दर्ज कर लिया गया है।'

'असलियत क्या है?'

'असलियत तो, हुजूर, मानसिह के साथ रही और बाकया अखबार नवीस के कागजो मे आ गया है। यानी वह परी हाथ नही लगी।'

'मै ही महरूम रक्खा जा रहा हू, अकेला मै ही, दुनिया के आराम से! मैने कसम खाई है कि जब मे सुल्तान हो जाऊगा तब—'

नसीर चुप रह गया। मटरू उसकी तरफ नीची निगाहो ताकने लगा।

'एक पख़वारे मे कितने दिन होते है मटरू?' नसीर ने पूछा।

अचकचाहट के साथ उसने उत्तर दिया, 'जानआलम कभी चौदह कभी पन्द्रह।'

'मेरे पखवारे मे पन्द्रह दिन होगे। एक-एक दिन के लिये एक-एक हजार परियाँ। तब चैन लूँगा जब पूरी पन्द्रह हजार हो जायेगी। कसम खा ली है माडू को आलीशान परिस्तान बनाने की। क्या कहते हो ?'

'जानआलम सब कुछ कर सकते है और करेगे। मॉडू का तख्त मिलने भर की देर है। सब आसान हो जायगा।'

'तुम मेरी मदद करोगे न ?'

'जानआलम से पहले ही गुजारिश कर चुका हूँ कि बोटी—बोटी हाजिर रहेगी।'

मुट्ठी को कसकर नसीर ने कहा, 'एक आदमी के लिये तीस बरस के राज का जमाना बहुत होता है। तख्त मुझको बुला रहा है और अब्बाजान को बहिश्त। मैने तै कर लिया है।'

मटरू ने अपने हर्ष को पी लिया।

बोला, 'जानआलम, होशियारी से काम ले। मुल्लो को नाराज न करे।'

'हर्गिज नाराज नही करूंगा। वे घड़ियाँ गिन रहे होगे। उनके मन की सी करता जाऊँगा और मौके को हाथ से न जाने दूँगा।'

'मुल्ले परेशान है, हुजूर का साथ देगे।'

'मैं तुमको कभी-कभी सलाह के लिये बुला लिया करूँगा।'

'जानआलम की खिदमत मे जान हाजिर रहेगी, मगर गुलाम को ठीक मौके पर ही बुलाया जाय तो मिहरबानी होगी।'

'मौके की तलाश जगन मे ही करूँगा।'

'हथियार न चलाया जावे, जानआलम।'

'तुमने अभी—अभी कहा था कि गुजराज के मुजफ्फरशाह पर उसके पोते ने हथियार नही चलाया था, कुछ और चलाया था। वही बेहतर

रहेगा। और फिर जैसे अहमदशाह ने अहमदबाद बसाना, इमारतें बनवाईं, मैं भी कर लूंगा और तवारीख मे नाम करा लूंगा।

[४०]

लाखी और अटल को ग्वालियर के किले के भीतर कर्णमहल के जिसको कर्ण–मन्दिर भी कहते थे–एक भाग मे निवास दे दिया गया। मानसिंह ने एक महल का निर्माण आरम्भ कर दिया था, परन्तु अभी भूमि के नीचे का केवल एक खण्ड कुछ आकार-प्रकार पा सका था।

सुमनमोहनी सोचती थी, मृगनयनी भी रहेगी इस नये महल में और साथ मे उसकी लाखीरानी!

मृगनयनी सङ्गीत सीखती है, लिखना पढना, चित्रकारी और न जाने क्या-क्या, सो क्यो? राजा उसके पास अधिक नही बैठते-उठते। तब अच्छा लगता है। परन्तु उस बीच मे कहाँ रहते है, क्या करते है, यह नही मालूम हो पाता है। मृगनयनी के अन्त पुर मे कम जाते है तो मेरे मे और भी कम आते है। एक नही कई लडाइयाँ जीत चुके है, इससे महल की शोभा कितनी बढी है? जब जाते है तब लगता है मेरे सिवाय वह और किसी के नही। तभी दो चार कड़खे सुना देती हूँ। न सुनाऊँ तो राजा किसी गाव से एकाध सुन्दरी का संग्रह और कर लाये।' क्या ठीक है इनका। व्याह के बाद जब मै आई तो कितना प्रेम दर्शाते थे। अस्तु अब तो इस तगड़ी गाँव वाली को छकाना है। एक से दो हो गई। तो क्या हुआ, हम आठ है। नया महल इतना बड़ा और ऐसा बनवाना चाहते है कि हम सब उसमे रह सके। कैसे निभाव होगा? मृगनयनी और लाखी की चबड चबड़ चलेगी कहाँ तक सहूँगी? कितना बड़ा बनेगा यह आखिर? क्या मेरे अन्त-पुर से दूर रहेगा मृगनयनी का अन्त-पुर? कितना भी दूर रहे, रहेगा तो आखो

और कानो के निकट ही । राजा से इसकी क्या बातें होती है ? मेरी दूती मृगनयनी के पास ठहर नही सकती । समाचार देने वाला कोई तो होना चाहिये । इस लडकी-कला को साधू साटू तो कैसा रहेगा ? वह मृगनयनी की चेरी या दूती नही है, कलाये सिखलाती है, मैं भी क्यो न सीखने लगूँ ? और यदि राजा ने किसी और सिखाने वाली को मेरे लिए लगाया तो ? तो मै कदापि नही मानने की । राजा को मेरी हठ रखना पड़ेगी । लाखी को भी सिखाने लगी है, तब मैं क्या उससे भी गई बीती हूँ । आने दो आज रात को, देखूँगी । परन्तु वे आते भी तो जब तब ही है । कभी तो आयेगे । नही आयेंगे । तो मै बुलबाऊँगी । कला मेरे निकट भी उतने समय तक रहेगी, जितने समय तक वह मृगनयनी के पास रहती है । लाखी और वे सङ्ग मे सीखती है । परन्तु मै तो उनके आवास में जाकर नही सीख सकती । कला मुझको सिखलाने के लिये अकेली ही आयगी । सुमनमोहिनी ने निश्चय किया ।

राजा मानसिंह ने हर्ष के साथ स्वीकार कर लिया । कला सुमन-मोहिनी को भी सङ्गीत की शिक्षा देने लगी ।

मानसिंह ने एक दिन प्रस्ताव किया, 'बैजनाथ सङ्गीत का आचार्य है । उससे सीखो ।'

'मैं सीखूँगी पुरुष से सङ्गीत ? क्या हो गया है, महाराज, आपको ! रानी मृगनयनी की और बात है, गाँव की ठहरी । कुछ दिन पहले तक गाँव और जङ्गल मे सबके सामने निकलती थी, पर मेरे घराने की रीति यह नही रही है ।'

राजा ने चिउँटी लगी परन्तु उसने उपेक्षा की ।

'बोला, आपकी जैसी इच्छा हो । आप खूब परिश्रम करिये वीणा के तारो पर और गले के स्वरो पर । कुछ समय के लिये कला ही काफी है फिर देखा जायगा । कई घण्टे नित्य परिश्रम करेगी तो आप भी आगे निकल जायेगी ।'

सुमनमोहिनी ने चुटकी काटी, 'कई घण्टे परिश्रम करूँ, आपको इधर आने की उतने समय तक चिन्ता न रहे ! आज कितने दिन उपरान्त पधारे है आप यहां !!'

'महारानी जी, मै आजकल व्यस्त रहता हूँ ।'

'हा सो तो मै जानती हू । महल जल्दी-जल्सी तो बन रहा है । दिन भर उसी की देखभाल रहती होगी ?'

'महल नही, उसका नाम मान-मन्दिर होगा ।'

'बहुत बडा बनेगा क्या ?'

'बहुत वडा वने या न बने बहुत सुन्दर अवश्य वनाना चाहता हूँ । आपको उसका मानचित्र दिखलाऊँगा, तैयार हो रहा है ।'

'भूल गये क्या ? आपने दिखलाया तो था ! परन्तु यह व्याह के पहले की बात थी ! अब कोई नया बन रहा है ?'

'हाँ उसमे, बहुत परिवर्तन कर दिये है ।'

'क्यो न करे परिवर्तन ? युग का ही परिवर्तन हो गया ! नाम बदल दीजिये उसका । नाम रखिये मृगेन्द्र मन्दिर ।'

'या सुमनेन्द्र मन्दिर ?' मानसिंह हँस पड़ा ।

सुमनमोहिनी ने आई मुस्कान को होठो की सिकुडन मे समेट लिया । कहा, 'इसी उल्टा-पुल्टी मे बहुत समय लगा रहता है आपका ! समझ गई मैं !'

मानसिह बोला, 'केवल यही नही है महारानी जी । दिल्ली का सिकन्दर लोदी ग्वालियर पर फिर चढाई करने वाला है । उसका सामना करने की तैयारी मे अधिक समय लगा रहता हूं ।'

'ऊँह ! उसके बाप को हराया, उसको भी हरा चुके है, और हाल मे माँडू के मुल्तान को ठोक पीटकर आये ही है । आपके लिये यह सहज है । अव तो महल वनाने मे लगे रहिये जैसा नई रानी कहे ।'

(४१)

सर्दी अपने यौवन पर थी। अस्ताचाल की ओर जाने वाले सूर्य की किरणे क्षीणता पर। उन किरणो से गरमी पाने की वाञ्छा करने वाले को ठिठुरन और भी अधिक मिल रही थी। अपने कक्ष की छत पर झरीखे के सहारे मृगनयनी खडी हो गई। साथ मे लाखी। सूर्य के डूबने मे अभी दो घडी का विलम्ब था। मृगननी की दृष्टि पश्चिमी पहाडियो के पीछे की किसी पहाडी, किसी नदी और किसी गाव की तरफ गई। राई मे क्या हो रहा होगा—वह सोच रही थी। फिर महल के उत्तर वर्ती बगीचे पर आख जा पडी। केले के बडे–बडे पत्तो की गहरी हरियाली पर किरणे कलोले सी कर रही थी। उसको लगा पत्तो की वीणा सी बज रही है।

हुलास के साथ बोली, 'चलो न लाखी बगीके मे घूम आवें। वहां से पहाड़ियो के पीछे का कुछ दिखलाई पडेगा। उस कोने से देख लेते हैं, वडी महारानी या कोई और नही है वहा।'

'मै देखे आती हूँ।' लाखी ने कहा और जाने लगी। मृगनयनी ने उसका हाथ हकड़ लिया।

निषेध किया,'जो काम मै स्वयं कर सकती हूँ तुमसे नही कराया जायगा।'

'यह तो कोई बात नही, पैर घिस थोडे ही जायेगें मेरे।'

'मेरे तो मन्द- पड जायेगे।'

मृगनयदी लपक कर चली गई। देख लिया। बगीचे मे कोई नहीं था।

वे दोनो बगीचे में चली गईं और घूमने लगी।

मृगनयनी ने राई के जङ्गल मे विशाल वृक्ष देखे थे, परन्तु केले के छोटे से पेड़ का गोल-मटोल, सुडौल, चिकना तना और वड़े-वड़े गहरे

हरे झूमते पत्ते वहाँ कहाँ ? ये उसको सदा आकर्षक और विलक्षण लगते थे। वह उनको अवसर पाते ही देखती और कभी न अघाती।

केले की कतारे उसको सखी सहेलियो सी लगी। मुस्कराई उल्लासित हुई, नसो मे लहर दौडी और मन चाहा कि पत्तो की हिलडुल की ताल मे नाच उठूँ।

सूर्य धीरे–धीरे क्षितिज मे समाने को जा रहा था।

एक पहाडी को ओर इङ्गित करके मृगनयनी बोली, 'यह होगा राई का पहाड़ ?'

'कह नही सकती। नदी दिखलाई पडती है?'

'नही तो'

'तो समझ लो होगा वह राई का पहाड और वही कही साँक नदी होगी। जङ्गल मे अरने, नाहर, सुअर, साँभर इत्यादि जानवर भी होगे। पर जब तक वही जाकर न देख ले तो कैसे मान ले ?'

'जी तो चाहता है अपने उन ठौरो को देखने का, पर जब किसी योग्य हो जाऊँगी तभी जाऊँगी वहा। है न ठीक ? तभी तो तुम भी जाओगी।'

'मै तो कभी नही जाऊँगी। जब चली थी तब लौट कर भी नही देखा था।'

'अब कोई कुछ नही कहेगा।'

'मुह से न कहे। उन लोगो की आँख तो कहेगी। धरा भी क्या है वहा ? नरवर की घाटियो मे चलना, हाथियो और नाहरो के झुण्ड के झुण्ड है।'

'नरवर तुम्हारी जागीर है न, इसलिये।'

'जागीर तो मेरी निन्नी और—'

'निन्नी के भैया है।'

वे दोनो हँस पड़ी। दोनो के दाँत मोती जैसे। हँसी जैसे शरद–कालीन नदी की निर्मल धारा। आखो मे अल्हड़पन। अङ्गो की थिरकन

जैसे किसी राग की सीधी सच्ची तान हो। धीमी झूम वाले, कदली-पल्लवों पर मृगनयनी की आंख लाखी के वस्त्रालंकारो पर गई। रेशम के वस्त्र, सोने और मोती के गहने। लाखी खिल रही थी।

'कैसी भली-सलोनी लगती है मेरी भाभी। भैया न जाने मन मे कितनी कविता बनाते रहते होगे।'

लाखी ने चुटकी ली-'कविता तो नन्देऊ राजा बनाते होगे, जो कवि हैं। सच बतलाओ उन्होने बनाई है न कविता? गायक बैजू से कभी करायेगे तुम्हारी लुनाई का गुणगान।'

'अरी हिष्ट! मैने जो गाने सुने है उनमे ऐसा लगा कि राधा और गोपियो पर ढाल-ढालकर सब कुछ खडा कर लिया गया है। उन गीतों को सुनकर कभी-कभी मन नाचने को चाह उठता है। कला जानती है नाचना भी। उससे हम दोनो सीखेगी।'

'सीखूंगी।'। लाखी बोली और उसकी दृष्टि अपने पैरो पर गई। वह पैरो मे चादी के गहने पहिने थी।

मृगनयनी के पैरो मे सोने के गहने थे। वह रानी थी। पैरो मे सोना रानिया पहन सकती थी, या राजा जिसको वरदान स्वरूप, अनुमति दे दी। वह नरवर का किला और नगर नाम मात्र के लिये अटल को जागीर मे मिला था। असल मे नरवर नगर की आय का एक अंश उसको दिया गया था। स्त्री को जागीर नही मिल सकती थी। इसलिये अटल के नाम रही। लाखी को पैर मे सोना पहनने का वरदान अभी इसलिये भी नही मिला था कि वह अहीर जाति की थी और सार्वजनिक मत की सम्पूर्ण अवहेलना, भले ही वह प्रकट नही थी, मानसिंह के वस की नही थी।

लाखी की दृष्टि मृगनयनी के पैरो के स्वर्णालकार पर भी गई और फिर तुरन्त गले पर। उसको कुछ भी नही आँसा। मृगनयनी गले मे चादी की पतली हँसुली पहने थी जिसको व्याह के पहले एक दिन अटल मोल ले आया था।

मृगनयनी तुरन्त गम्भीर हो गई।

बोली, 'मै चाहे नगे पैर रहूँ, कल से सोने के गहने नही पहनूँगी। तुम चादी के पहनो और मै सोने के ! यह नही हो सकता।'

'पागल हो गई हो क्या ?'—उसने कहा—'यह सोना निन्नी के पैरो मे नही है, राजा की रानी के पैरो मे है।'

'मै महाराज से कहूँगी। उनको सोना प्रदान करना पड़ेगा।'

'रानियो का जैसा बर्ताव तुमको इतना तो सिखाया गया, पर आया कुछ नही। विरथा हठ कर रही हो।' बडी महारानी और वे सात ठौ जो और है, उनकी दीठ खराद पर चढ जायगी।'

'मै नही जानती थी कि महल मे आठ पहले से है, नही तो—'

'यह बात तुम्हारे मुँह के लायक नही है ननद महारानी। अब कहा कहा सो कहा आगे कभी मुह से न निकले।'

'नही कहूँगी, कभी नही कहूँगी। यह सब होते हुये भी महाराज का अटूट और पूरा प्रेम है। परन्तु बडी महारानी ! क्या तो नाम है और कैसा स्वभाव है !!'

'अरी तो जङ्गल मे करधई, करोदी, झरबेरी और खैर के काटो से अङ्ग नुचवाये—खरोचवाये है सो वह अभ्यास कभी काम आवेगा या नही ?'

उपमा पर मृगनयनी हँस पडी।

बोली 'भैया का मन कविता करता हो, या न करता हो, तुम तो भौजी सचमुच कवि हो।'

लाखी के मन मे कुछ और गडा हुआ था।

'तो देखो मेरी भली निन्नी, मेरी महारानी मृगनयनी जी मेरी ननन जी, तुम्हारे हाथ जोडती हूँ, पैर पडती हूँ, हा हा खाती हू—'

मृगनयनी ने तुरन्त टोका,—'चुप, चुप।'

'बात तो सुनो पूरी,' वह कहती गई—'पैरो के चाँदी सोने के गहनो के बारे मे कोई छेडछाड मत करना। इतना सब जो मान लिया गया है, वही बहुत है। जल्दी मत करो। फिर कभी देखा जायगा।'

मृगनयनी बोली, 'मुझको बुरा लगता है बहुत खटकता है। मै नही कहूँगी, तुमसे विना पूछे नही कहूगी, परन्तु एक दिन तुम्हारे पैर मे सोना देखना चाहती हू।'

'तुम्हारे गले मे चाँदी की हँसली है, क्यो है ?'

'मै अपनी राई को अपने उन दिनो को जब स्वतन्त्र थी, अपनी उस साँझ को जब भैया यहा से लौटकर इसे ले आये,कभी नही भूल सकती। महाराज ने उतार डालने के लिए कहा, पर मैने नही माना।

'तो मेरे पैरो मे जो चाँदी है वह भी अनुचित नही है। वह इस बात की याद दिलाती है कि जातपात के भूत के साथ बहुत अधिक छेडछाड नही करनी चाहिए।'

'चाचार्य विजयजङ्गम जातपात के बिलकुल विरुद्ध है। महाराज बतलाते थे। आचार्य को बहुत मानते है।'

'यह सब ठीक है, परन्तु विजय महाराज भी जातपाँत को कुछ न कुछ तो मानते ही है। और एक विजय महाराज के दबा देने के लिये न जाने और कितने विजय फट पडेगे।'

चार-पाच दासियाँ दूर एक पेड के पास आकर खडी हो गई। मृगनयनी ने देख लिया। नाक भौ सिकोडी।

लाखी से कहा, 'ओढने के लिये मोटा कपडा इतनी दासिया लाई है! मुझको तुमको सर्दी लग रही होती तो क्या साथ न ले आ पाती ? या ठिठुरने लगी होती तो कमरे को लौट न पडती। इनकी भीड-भाड को देखते ही मेरे तो कांटे उठ आते है।'

लाखी बोली, 'उनका काम है, क्या किया जाय ?'

'मुझको तो विजय जी की बात अच्छी लगती है। वह कहते है सबको अपना आवश्यक का काम अपने हाथ से ही करना चाहिये'

वह स्वयं ऐसा ही करते है उनका कहना है कि इस देश को भिखमङ्गों और निकम्मो ने डुबाया है।'

'तो इन विचारियो को वही खडी रहने दे ?'

'खडी रहे किसने बुलाया था ?'

'स्यात कुछ बात कहने आई हो।'

'बात आधी होगी, कपडे लाई है गाड़ी भर। मुझको डूबते हुये सूर्य की आभा अच्छी लगती है, पश्चिम की पहाडी पर लाली की छिटकी। उसको देखती हूँ पीठ फेर कर। खडी रहे तब तक वे। मुझको नही ओढने है कपड़े !'

दासी कुछ जोर के साथ खाँसी।

लाखी ने कहा, 'अभी ऐसा योग तो तुमने साध नही पाया है कि वे पीठ पर सवार रहे और तुम आनन्द के साथ डूबते सूर्य का दर्शन करती रहो।'

'तो बुलाये लेती हू भौजी रानी कौन जीते तुमसे !'

मृगनयनी ने दासियो को संकेत से बुला लिया।

उन्होने कपडे दिये। एक ने हाथ जोडकर कहा, 'एक पहर पीछे सभा में आचार्य बैजू का गायन और आचार्य विजय का वीणा-वादन महाराज करवा रहे है। बडी महारानी और सब रानियो को भी निमन्त्रण है। आपको भी पधारना है।'

मृगनयनी बोली, 'अच्छी बात है।'

दासियाँ नीचा सिर किये खडी रही।

'और कुछ ?' मृगनयनी ने पूछा।

दासी ने उत्तर दिया, 'ठिठुराने वाली वायु चल रही है। भीतर सिगड़ी मे कोयले जला दिये है। वहीं चलकर तापना होवे।

'सुन लिया। जाओ सूर्यास्त के उपरान्त आवेगी।' मृगनयनी ने कहा।

दासियां चली गईं। हँसी रोकने के लिये मृगनयनी ने होंठ को दांत से दबाया और लाखी ने दूसरी ओर मुंह फेरकर आंचल मुँह पर रख लिया, मानो ठण्ड से अपनी रक्षा कर रही हो।

दासियों के चले जाने पर वे दोनों खिलखिलाकर हँस पड़ीं। मृगनयनी बोली, 'इनकी बोली कैसी मजी-पुती है! इनके भी सिखलाने वाले होंगे कहीं।' सूर्य की ओर देखने लगी।

लाखी ने सूर्य की ओर मुंह करके कहा, 'न कहीं सीखी होती तो काम ने सिखला दी।'

कुछ क्षण बाद लाखी ने खिन्नता प्रकट की—'मन नहीं लगता चलो न।'

'मेरा भी नहीं लगता। चलो। फिर कभी सही।'

[४२]

एक पहर रात जाने के पहले ही कर्ण मन्दिर के सभा भवन में गायन-वादन का आरम्भ होने वाला था। ऊपर के खण्ड की झिझरियों के पीछे मृगनयनी और लाखी आ बैठीं। जगमगाती हुई वेशभूषा में। मृगनयनी को लग रहा था जैसे उसके वस्त्रालङ्कारों पर कोई आक्षेप प्रकट करने वाला हो और वह अपनी परिस्थिति का पक्ष समर्थन करने पर आरूढ़ हो, जैसे कोई उसके सौन्दर्य की स्तुति भी करने वाला हो और वह उस स्तुति को अपना सहज अधिकार समझकर एक मुस्कान द्वारा उपेक्षा की उँह' कहकर टालने वाली हो। चेहरे पर गुलाबी रङ्ग नहीं था। लाखी मोद-मग्न थी।

उन दोनों के आने के बाद सुमनमोहिनी और अन्य सात रानियां आईं। मृगनयनी ने रीति के अनुसार सुमनमोहिनी का पद स्पर्श किया। उसके सिर पर आशीर्वाद का हाथ फेरते हुये बड़ी रानी ने बारीकी के साथ उसकी वेशभूषा को निरखा। चांदी की हँसुली दृष्टि से न चूकी। वे आठों एक ओर बैठ गईं। मृगनयनी और लाखी कुछ अन्तर पर दासियों का ठठ इन सबके पीछे खड़ा था।

नीचे सभा भवन मे मानसिंह एक थोड़े ऊँचे मञ्च पर था। जरा नीचे एक ओर निहालसिंह और दूसरी ओर अटल। सामने बैजू, विजय, कला और पखावजी इत्यादि।

बैजू ने प्रबन्ध की गायकी शुरू की। विजय ने वीणा बजाई और कला ने तम्बूरे और अपने स्वर से साथ दिया। मानसिंह पहले ही आलाप और वीणा की झकार पर मुग्ध होने लगा—उसने मुग्ध होने के लिये ही उस रात जमाव किया था।

गायन के आरम्भ होते ही सुमनमोहिनी की इच्छा कुछ बात करने की हुई। परन्तु अन्य रानियाँ सङ्गीत के प्रारम्भिक उत्साहदान को मन मे भर रही थी, इसलिये बडी रानी कुछ समय तक मौन रही फिर उससे न रहा गया।

पास बैठी हुई एक रानी से कहा, 'इतने सोने और मणिमुक्ताओ से तृप्ति नही है नई दुलहिन को।'

छोटी रानियो ने कनखियो देखा, जरा-सा मुस्कराई, बड़ी रानी से आँखे मिलाकर डाह की हँसी हँसी और नीचे सभा भवन में होने वाले सङ्गीत के प्रति उन्मुख हो गई।

मृगनयनी और लाखी ने नही देखा।

सुमनमोहिनी ने निकटवर्ती छोटी रानी के चुटकी काटी। वह जरा सी बिदकी।

बड़ी रानी बोली, 'अरी यह गीत तो आधी रात तक चलता रहेगा। उधर देखो, नई दुलहिन गले मे चाँदी की पतली खङ्गोरिया किस तपाक के साथ डाले है। मणिमुक्ताओ वाले हार उस खङ्गोरिया को निरन्तर हाथ जोडे बिलबिला रहे है।'

छोटी रानी ने देखा। कुछ क्षण देखते रहने के उपरान्त चांदी का वह गहना आख की पकड मे आ गया। मुह दबाकर हसी।

लाखी ने देखा, मृगनयनी ने भी।

वड़ी रानी ने छोटी की हँसी को उत्तेजित किया, 'हँसुली को विचारी छोडे भी कैसे ! जब मिट्टी के घड़ो मे पानी भर कर नदी से सिर पर धर कर लाती होगी, तब वह हँसुली गले मे हिलती डोलती होगी, गाय भैस दोहने के समय और मट्ठा भावने के समय हँसली नाचती होगी, उपले पाथने के समय गले से टन्नाती खन्नाती होगी और खेतो को रखाने के लिये मचान पर से जब लम्बी भारी भुजाओं से गुथने घुमा-घुमाकर, चिडियो को भगाने के लिये 'हरिया ! हरिया !!' कहती होगी, तब हँसुली खट से कभी ठोडी की और पट से कभी गले की नसो को गाँव के गीत सुनाती होगी।'

बड़ी रानी अपनी कल्पना पर हँस पड़ी। छोटी रानी कपड़े को और भी अधिक मुँह पर रगड़-रगड कर हँसने लगी। दूसरी रानियो को कुतूहल हुआ। वड़ी के परिहास को सुना। मृगनयनी की ओर देखा और हंस पडी।

मृगनयनी और लाखी ने यह सब देखा, बात का कोई भी अंश सुनाई नही पडा।

हमारे ऊपर फबती कसी जा रही है, हम ही है इस हँसी का कारण उन दोनो ने तुरन्त समझ लिया। ठठोली का विषय मैं हूँ। जात पात के बन्धन की उपेक्षा करके मै ब्याही गई हूँ, निन्नी के ब्याह सम्बन्ध के कारण राजा के साले-मेरे-पति-को जागीर मिली है, पहले भूखो मरती थी, ढोर चराती थी, अब सोना-चाँदी पहिनने को मिल गया है, पहले गाढ़े के कपडे थे अब रेशमी वस्त्र है, और पहले गांव के गीत सुनती और भौड़े रसिये गाती थी अब बैजू और विजय सरीखे आचार्यों का सङ्गीत सुनने को मिल रहा है ! पहले—और आगे लाखी नही सोच सकी। शरीर मे दाह हुआ। कान तक जल उठी। मृगनयनी की ओर आँख फेरी। उसका चेहरा तमतमा गया था, परन्तु वह सभा-भवन के दृश्य को झिझरी मे से देखती जान पड़ी।

मृगनयनी देखकर भी कुछ नही देख पा रही थी। मेरी दिल्लगी की जा रही है। मैंने ऐसा क्या किया ? पूरा शिष्टाचार किया था, फिर भी यह सब क्यो ? क्या मै इनसे कम सुन्दर हूँ ? क्या मैंने कोई गहना दिखावटी तरह पर पहिन रक्खा है ? नही तो। क्या किसी वस्त्र की समेट लपेट मे होकर मेरा कोई अङ्ग भोड़ेपन से झाक रहा है ? मृगनयनी ने अपने पहनावे का निरीक्षण किया। एक पैर थोडा सा खुला हुआ था, जैसे किसी सरोवर के नीले जल पर एक वडा कमल खिला हो और उस पर ओस की बूंदे प्रातःकाल की रवि-रश्मियो के साथ मन्द-मन्द झूल रही हों। मृगनयनी ने रत्नजटित स्वर्ण नूपुरो को ओढनी से ढक लिया। हँसी का कारण शायद ये है। सौभाग्य-चिन्हो को छोड़कर वाकी सवको उतारकर रख दूँगी-फिर जब लाखी पहनेगी तब पहनूँगी और तब ये सब हँसेगी नही। अपने को तुच्छ समझकर चुप रह जायेगी। उसने निश्चय किया।

गले मे पड़ी हुई चाँदी की हँसुली पर यकायक उङ्गली गई और फिसल आई। मेरी वह पतली हँसुली इनके सब आभूपणो की अपेक्षा अधिक मूल्यवान है। उस समय इसी को पहिने थी जब नाहर को एक तीर से मार गिराया, जब अरने को सीग पकडकर मोडने का प्रयास किया, जब राजा ने पहली बार देखा, जब उन्होने इसी हँसुली के ऊपर हीरे सोने का जडाऊ हार गले मे डाला, जब वह प्यार के साथ गले में बाँहे डालकर मुझसे न जाने किस कविता मे वोलने लगते है। सोचते ही ध्यान सभा भवन मे मँच पर बैठे हुये प्रसन्न मानसिंह की ओर गया। अब उसको सब कुछ स्पष्ट दिखलाई पड़ने लगा। यह हैं मेरे राजा, मेरे !

मृगनयनी ने कनखियों उन रानियो को देखा। उनकी हँसी अभी समाप्त नही हुई थी।

मृगनयनी ने होठ जरा से सिकोड़े और मन मे कहा, 'ऊंह ! रानी हुई तो क्या, गवारो से भी गई वीती है ! अरे !! मै इनको गवार

क्यो कहूँ ? गाँव की तो मैं हूँ हँसे जाओ, हँसे जाओ किसी दिन मै तुमसे कही अधिक हँसूँगी। और अकेली नही हँसूँगी तुमको भी हसाऊँगी। अपनी गाय का दूध अकेले-अकेले नही पिऊँगी, तुमको भी पिलाऊँगी। शायद ये मेरे ऊपर न हस रही हो। संगीत की किसी बात पर हस पड़ी हो। मै तल्लीन होकर सुन रही थी मेरे समझ मे कोई बारीक बात नही आई, इनकी समझ मे आ गई, आपस मे कुछ चर्चा की और मुझको गढी मूर्ति की जैसी देखकर हंस पड़ी। ओह! यही हो सकता है। परन्तु मेरी ओर सैन कर-करके क्यो मुह को इतना दाब-दाबकर हंस रही थी ? ऊँह ! थोडी हल्की है न।

सभा भवन मे मानसिह के कण्ठ से निकला, सुनाई पड़ा, 'वाह ! वाह !! वाह !!! वाह !!!!'

मृगनयनी ने देखा, गायक बैजू वीणा-वादक विजय को ओर देख-देखकर मुस्करा रहा है; उस मुस्कराहट मे विजय का तीखापन और चुनौती है ! विजयजङ्गम को भी देखा—उसके चेहरे पर क्षोभ और आँख मे बैजू की विजय की प्रतिक्रिया और चुनौती के स्वीकार करने की दृढता थी।

कला बैजू के उस विजय-प्रदर्शन पर प्रसन्न थी और विजय की मुस्कराहट को अपनी मुस्कान का सहयोग दे रही थी।

सगीत के दावपेच पर यह हर्ष और क्षोभ हुआ ? मैं ध्यान दिये होती तो क्या समझ मे वह दावपेच आ जाता ? क्या इसके पहले कोई एकाध ऐसा ही हो चुका है ? क्या ये रानिया उसी पर हँसी थी ? परन्तु कोई वाह वाह तो नही हुई थी। और अब भी उस पहले ही प्रसग को लिये हुये हस रही होगी। ऊँह। होगा। सगीत के दावपेच सब के सब न समझ डाले, तो मेरा नाम पलट दिया जाय। चाहे जितना भी समय क्यो न लग जाय। तब मै हसा करूँगी और ये रानिया झेपा करेगी !

थोडी देर बाद बैजू की फिर जीत हुई। फिर बैजू के चेहरे पर विजय की मुस्कराहट और कला के होठो पर सहयोग की मुस्कान ' विजयजङ्गम की आकृति फिर क्षोभमयी और मानसिंह की फिर वही 'वाह ! वाह !!

मृगनयनी की समझ मे नही आया। अन्य रानियाँ नही हँस रही थी। लाखी की दृष्टि मे प्रश्न का लक्षण था।

अब ये रानिया क्यो नही हँस रही है कदाचित उस समय मैं ही इनकी चर्चा और हँसी का प्रसङ्ग थी। कोई बात नही, देखा जायगा।

उसी एक प्रबन्ध का गायन दो ढाई घण्टा चलता रहा। मृगनयनी उकताने लगी परन्तु अपने को समझाने लगी, अवश्य इस गायन-वादन मे कोई विशेष बात है तब राजा इतने सजग और हर्षमग्न हैं। मैं भी ध्यान के साथ सुनती रहूँगी और किसी दिन इससे बढकर गाऊँ बजाऊँगी।

लाखी झीमे लेने लगी थी। बडी रानी सो गई और अपनी पडोसिन के कन्धे पर सिर लटकाये हुई थी। पड़ोसिन रानी भी सोना चाहती थी, पर बड़ी रानी के सिर-भार के कारण मन को पीसपास कर सङ्गीत की भनभनाहट को सुन रही थी और मुद मुद जाने वाली आँखो को खोल खोल दे रही थी। शेष रानियाँ तकियो के सहारे खर्राटे और धीमी निश्वासो के बीच मे स्वप्न की सैर कर उठी थी। दासिया बैठ गई थी और कुछ सो गई थी।

मृगनयनी ने लाखी के कन्धे को जरा हिलाकर और कुछ ऊँचे स्वर मै जैसे अन्य रानियो को फटकार देना चाहती हो, कहा, 'अरी देखो कैसा अच्छा चल रहा है !

लाखी उचट कर देखने–सुनने लगी।

मृगनयवी बोली, 'कितनी बारीक काम हो रहा है नीचे ! बड़ी–बडी सुन्दर ताने झड़ी सी लगाकर वरस रही है !! दोनो आचार्यों के वीच मे संगीत विद्या का द्वन्द चल रहा है। जरा देखो भेड़-बकरियों की तरह मत सोओ।'

वाक्य का अन्तिम अंग उन रानियो की ओर आंख फेरते हुये मृगनयनी ने पूरा किया। लाखी को अच्छा लगा। वह हँसी।

'तुम बहुत–जल्दी समझने लगी हो,' लाखी ने कहा-'अभ्यास करते-करते मुझको भी कुछ न कुछ आ जायगा। कान को अच्छा लग रहा है। ध्यान के साथ सुन रही हूँ।'

बडी रानी की नीद नही उचटी, परन्तु जिस रानी के कन्धे से टिकी हुई वह सो रही थी उसने इस वार्तालाप को सुन लिया और कुढ गई।

सभा भवन मे बैजू का गायन और विजयजङ्गम का वादन एक घण्टे और चला। इस बीच मे जीतहार के कुछ अवसर और आये। विजयजङ्गम खीज उठा। वीणा को नीचे रख दिया।

बोला, अब मैं गाऊँगा। गायक बैजू वीणा बजावे।'

मानसिंह ने कहा, 'अवश्य। अभी समय ही कितना हुआ है ? विहाग के गाने का समय तो अब आया है।'

'आचार्य जङ्गम गावे,'—बैजू बोला,-'परन्तु आज एक होड है।'

'क्या ?' राजा ने पूछा।

बैजू ने उत्तर दिया, 'मैंने इनको अभी-अभी वीणा-वादन मे कईबार चुकाया है। यदि इनके गाने के समय मैंने इनको अपनी वीणा के बजाने मे हरा दिया तो इनकी वीणा को छीन लूँगा। सडियल– सी ही है, फोड कर रख लूँगा।'

'क्या बैजू पागल है ?' मृगनयनी ने सोचा।

उस रानी ने अपना बोझ दूर करने के लिये बडी रानी को झटका दिया। बडी ने जोर के साथ पैर फटकारा। पैर का एक स्वर्णजटित आभूषण मृगनयनी की बैठक की दिशा मे जा गिरा परन्तु किसी ने देखा नही।

छोटी रानी ने बडी से कहा, 'महारानी जी देखिये, बडा मल्लयुद्ध होने वाला है।'

वडी रानी ने हड़बड़ाहट के साथ आँखें मलीं। सोचा मृगनयनी अपनी लम्बी पुष्ट, सशक्त भुजाओ से किसी को पीस डालने के लिये टूट पड़ी है ! उत्सुकता के साथ उसकी ओर देखा। वह ध्यान पूर्वक सभा-भवन की ओर देख रही थी।

वडी रानी ने निराश होकर छोटी से पूछा, 'क्या बात है ?' छोटी ने प्रसङ्ग को बतलाया।

वडी अँगडाई लेकर बोली, 'मैं थोड़ी देर के लिये सोई थी। अब जागती रहूगी।'

छोटी ने सोचा, 'थोड़ी देर के लिये सोई थी ! दो घण्टे तो मेरे ही कन्धे तोडती रही !!'

सङ्गीत का पुनरारम्भ हुआ। एक घडी के उपरान्त ही बैजू को विश्वास हो गया कि विजयजङ्गम को अब मारा, अब पछाड़ा। राजा ने भी समझ लिया। सोचा ऐसे दो बड़े कलाकारो का परस्पर सिर-फुटौअल वरकाया जाना चाहिये।

वोला, 'थोडा ठहरिये।' विजयजङ्गम रुक गया बैजू गाता रहा। कुछ क्षण उपरान्त पखावज बन्द हो गई। कला ने भी अपने सहयोग को स्थगित कर दिया। परन्तु वैजू आखे मीचे गाता रहा।

मृगनयनी ने देख लिया था कि बडी रानी जाग पडी है। उसको सुनाते हुये लाखी से कहा, 'वाह ! क्या बात है !! कैसा गला है ! और कैसी गायकी है !! कितना तन्मय होकर गा रहे है आचार्य !!! उनको अपने आस-पास की विलकुल ही सुध नही। कला और कलाकार इसको कहते हैं।'

'ओहो, यह वडी जानकार है !' वडी रानी ने सोचा चेहरे की रेखाओ को घटाया वढाया, परन्तु चुप रही।

राजा कुछ क्षण चुप रहने के वाद जरा ऊँचे स्वर मे बोला, 'वाह ! वाह !! वाह !!! वाह !!!!'

दासियां जाग पड़ी और सावधान हो गईं।

वैजू के चेहरे पर विजय की मुस्कराहट आई और होठों पर अपना छोटा सा अवशेष छोड़कर छा गई। आँखे खोलकर चुनौती भरी दृष्टि से विजयजङ्गम को देखा। वह मुस्करा रहा था और वीणा नीचे रक्खी थी।

तो क्या वह वीणा को बजा नही रहा था? कब बन्द कर दिया और कला का तम्बूरा नीचे रक्खा था। उसने कब रख दिया? पखावज भी रुकी पड़ी है! कब रुक गई? विजय मुस्करा क्यो रहा है? क्या वह हारा नही? और मैं क्या गा नही रहा था? तो क्या कर रहा था!

वैजू ने गाना बन्द कर दिया।

मानसिंह ने उमङ्ग भरे स्वर में कहा, 'आचार्य बैजनाथ धन्य हो। कितने तन्मय हो गये थे तुम अपने रस मे!! हम सब भी तल्लीन हो गये। इन्होने तुम्हारे रस का पूरा स्वाद लेने के लिये अपनी वीणा ही रख दी। कला ने तम्बूरा और उन्होने पखावज! हम सब डूब डूब गये तुम्हारी रस धार मे!! मैं तुमको नमस्कार करता हू।'

वैजू असली कारण ढूंढ़ने की चिन्ता मे नही पड़ा।

बोला, 'महाराज आज मैं सब पा गया। जीवन का सब कुछ पा गया। कलावन्त को और चाहिये ही क्या?'

'परन्तु हमको तो तुमसे अभी बहुत कुछ चाहिये।'

'मेरे पास है ही क्या। जो कुछ है महाराज का है।'

'तुम अभी जिस ध्यान मे मग्न थे उनमे से कुछ लोगो को भी दो।'

'ह! ह!! ह!!! सो कैसे? और मैं तो गा रहा था, ध्यान तो सवेरे के समय करता हूँ। अभी क्या मै सो गया था?'

'सोये तुम नही थे हम लोगो के भीतर वाले को जगा रहे थे।'

वैजू कुछ गुनगुनाता हुआ झूमने लगा। एक क्षण बाद बोला, 'आरम्भ करता हूँ आज होड जीनकर ही रहूँगा।

विजयजङ्गम ने वीणा को उठा लिया, कला ने तम्बूरे को। पखावजी ने थाप दी।

मानसिंह ने कहा, 'मेरा एक अनुरोध है।'

सब स्थिर हो गये।

मानसिंह ने अनुरोध सुनाया, 'प्रबन्ध और छन्द की गायकी को जो पसारा बहुत दिनो से मिलता रहा है, उसको थोड़ा सा समेट लिया जावे और साज माँजकर और भी अधिक सुन्दर बना लिया जावे तो कैसा रहे ?'

'ध्रुवपद तो है।' विजयजङ्गम ने अपनी जानकारी प्रकट की।

मानसिंह बोला, 'हाँ है। पसर काफी वह भी गया है। सुन्दर है परन्तु उसकी सुन्दरता को और भी अधिक बढाने और निखारने की आवश्यकता है।'

विजय ने कहा, 'महाराज जो कुछ नाद-वाद पहले से चला आया है वही दुर्गम है, उसमे घटा बढी कौन कर सकता है ?।

चुनौती के स्वर मे दृढता के साथ बैजू बोला, 'हो सकता है, हुआ है और होगा। भगवान शङ्कर की दया से मै करूँगा।'

विजय को भगवान शंकर का नाम अच्छा लगा, परन्तु बात बुरी लगी। खटकी।

'देखा जायगा।' विजय के मुह से उपेक्षा के साथ निकला।

'हाँ, हाँ देख लेना, करके दिखला दूँगा।'

बैजू ने अपने हठ का समर्थन किया।

विजय ने सोचा, 'बैजू पागल है।'

राजा ने कहा, 'समय 'समय अतीत हो गया है। इस विषय का गहरा चितन हम सबको करना होगा।'

बैजू ने तुरन्त कामना प्रकट की,—'मेरा और आचार्य विजय का अखाडा तो इसी समय हो जाय।'

'अभी नही,—राजा ने टाला—'फिर कभी।'

दांत पीसते हुये बैजू ने विजय पर दृष्टिपात किया। राजा ने सोचा उत्पात वरक गया।

बोला, 'तो मैं यह चाहता हूं कि गायन की कोई नवीन, मधुर और चमत्कार पूर्ण परिपाटी निकाली जाय।'

उपेक्षा और प्रतिवाद में होठ सिकोडकर विजय ने सिर नीचा किया। कला मुस्कराई। जमुहाई आने को थी, कि उसको छोटी-सी अङ्गड़ाई मे परिवर्तित कर लिया, कन्धे हिल गये। निहालसिंह ने देखा और कला ने भी निहालसिंह की निरख को।

बैजू ने कहा, 'मैं समझ गया। निकालूंगा परिपार्टी। ऐसी कि जिसके द्वारा ध्रुवपद मन को आरम्भ से अन्त तक अपनी कोमल फासों मे पकड़े रहे और समय इतना ही लगे कि मन चाहता रहे कुछ और भी होता।'

'कर चुके!' धीरे से विजय के मुह से निकला। कला ने बैजू के तमतमाये चेहरे को देखा। आँख मानसिंह पर से फिसलती हुई निहाल-सिंह पर जा अटकी। वह नीचे ही नीचे उसको कुछ अधिक गडाकर देख रहा था। कला ने क्षण खण्ड के अवान्तर से फिर निहालसिंह को देखा। फिर दोनो की दृष्टि मिली।

बैजू के सटे हुये होठ फडके और गरम निश्वाश के साथ धीरे से शब्द निकले, 'किसी दिन तुम्हारी वीणा को न फोडा तो मेरा नाम नही।'

राजा ने नही सुन पाया परन्तु विजय ने सुन लिया। राजा की इच्छा सभा विसर्जित करने की थी, परन्तु कलावन्त अखाडे को नही छोडना चाहते थे।

मानसिंह ने समस्या का समाधान निकाला,—'कला का एक छोटा सा नृत्य हो जाय और उसके उपरान्त सभा विसर्जित हो।'

कला ने बैजू के गाये हुये प्रबन्ध को सार्थक करने वाला नृत्य किया। बीच-बीच मे कला और निहालसिंह ने एक दूसरे को कई बार छिपे लुके देखा।

नृत्य के समय तक अन्य कई रानियां भी जाग चुकी थी।

उन सबको सुनाने के लिये मृगनयनी ने लाखी से कहा, 'महाराज ठीक कहते है। बडी बात थोड़े मे कहना ही तो चतुराई है। बैजू का कहना सही है कि ऐसा हुआ है और आगे भी होगा। बडी चट्टान के ढोंके से नाहर को कुचलने की अपेक्षा छोटे चोखे तीर से सुला देना ज्यादा अच्छा। अभ्यास किया जाय तो सब हो सकता है।'

बडी रानी ने हंसकर मुह फेरा। दूसरी रानियो ने दोनो की ओर देखा। हंसने की चेष्टा की, परन्तु हसी क्षीण मुस्कान का रूप लेकर ही रह गई। वे सब नृत्य को देखती रही।

'मै नृत्य भी सीखूंगी,' मृगनयनी ने लाखी के कान मे कहा।

उसने भी उसी तरह कान मे फूंका-'हॉं, हॉं, सब हो सकता है।'

एक घडी पीछे नृत्य समाप्त हो गया और सभा विसर्जित। मृगनयनी और लाखी ठिठकी रही। उन दोनो का नमस्कार लेकर वे सब चली गईं। उनकी दासिया भी साथ। ये दोनो अकेली रह गईं। मृगनयनी की निगाह सुमनमोहिनी के उस गहने पर गई जो उनके पैर से उतर कर गिर गया था और जिसको वह भूल गई थी। मृगनयनी ने उसको उठाकर परखा औप जोर के साथ फेक देने की इच्छा हुई। सभा विसर्जन के उपरात मानसिंह की दृष्टि ऊपर झिझरी की ओर गई। दिखलाई तो वहॉं से कुछ नहीं पड़ता था, परन्तु उसने नमस्कार किया और चला गया। था शिष्टाचार ही परन्तु मृगनयनी को वह बहुत कुछ लगा। उसने समझा कि अकेला मुझको ही राजा ने नमस्कार किया है। उस गहने को लिए हुये वह अपने कक्ष मे चली गई। जब हाथ मे गहने कां देखा तो क्षुब्ध हो गई। एक ऊपर के गहरे आले मे फेक कर डाल दिया और पलङ्ग पर जा लेटी।

बडी रानी क्या है ! एक विडम्बना है !! कदाचित वह मेरा उपहास करने के लिये ही हँसी थी। और वे सातों अपना कोई निजत्व ही नही रखती। हर बात मे उसकी अनुहार करती हैं ! परन्तु महाराज मेरे और अकेले मेरी सम्पदा है। मैं उनकी, वह मेरे। कितने गहरे है। मैं भी ऐसी ही बनूंगी और इतना हँसूंगी इन आठो के ऊपर कि हाँ ! नाहरो और अरनो की परवाह नही की, तो ये किस खेत की मूली है !! कैसे हरे-भरे खेत थे वे, और कैसा बडा और हरा जंगल !!! मचान धान का खेत और खलियान। तोते, मोरे और नीलकण्ठ। यह आया, वह गया। न वे थकते और न मैं थकती। मचान पर कैसी हिलोडे लेती हुई हवा आती थी और मैं कितना गाती थी ! बैजू सरीखा ही गाने लगूंगी, अरे उससे भी कुछ अधिक मिठास भरा, तब लाखी भी कहेगी तुमने ठीक ही कहा था सब हो सकता है, सब हो सकता है। वह सो गई।

[४३]

स्वर्ण संचय की कामना, मारकाट की आकाक्षा, स्त्रियो के अपहरण की वासना, राज्य स्थापित करने के लोभ किसी भी प्रकार अपने मजहब के विस्तार के मोह को लेकर पठान और तुर्क आक्रमक भारत मे घुसे थे। इन सबका . एक सामूहिक, नाम था उनका बहिश्त। इस बहिश्त की तलाश मे शेरशाह के पहले भारत ने जगह जगह सल्तनते कायम हुई— दिल्ली, मालवा, गुजरात, जौनपुर, गोलकुण्डा, बगाल इत्यादि मे। सल्तनते कायम होने पर, बाप ने बेटे को और बेटे ने बाप को, सल्तनत के तख्त और मुकुट का मार्ग—कटक समझ का जहर के जरिये या किसी और सुलभ उपाय से अलग किया। उस बहिश्त की प्राप्ति ने सुल्तानो को और उनके सरदारो तथा सिपाहियो को निर्बल और निकम्मा बना दिया। हिन्दू यदि परलोक भय, निराशा—वाद, और आपसी लडाइयो के कारण दुबले न पड गये होते तो या तो, वह

स्वर्ग उनको मिलता ही नही,और यदि मिल ही जाता, तो धर्मराज उनको बहुत समय तक उसमे रहने न देते।

परन्तु उस बहिश्त को भी बहुत ज्यादा मुफ्तखोरी बरदाश्त न थी। मौलबी और मुल्ले लगातार चेतावनी देते रहते थे। मुल्लेमौलवियों ने इस्लाम को जैसा और जितना समझा था, उसके अनुसार वे अपने इन चेले चाटों को जगाया, उकसाया और भडकाया करते थे। सुल्तान न सुनता तो सरदारों को, सरदार न सुनते तो सिपाहियों को ये मुल्ले—मौलवी, धर्म-युद्ध जिहाद के लिये भड़काया करते, षड़यन्त्रों में भाग लेते और जब तक कुछ कर न गुजरते तब तक दम न मारते। परन्तु इस जिहाद का अनिवार्य परिणाम वही स्वर्ग ही हो जाता था, जिसको पा-पाकर सुल्तान, सरदार और सिपाही अनवरत गति से चलते चले जाते थे। यही उनका सबसे बड़ा सम्मोहक जोर और सबसे बड़ी कमजोरी थी।

मालवा सल्तनत के मुल्लो ने गियासुद्दीन के लड़के को अपना कृपापात्र और भविष्य की आशाओ का केन्द्र बनाया, क्योंकि गियासुद्दीन अपने स्वर्ग की तलाश मे इन मुल्लों-मौलवियो के बतलावे हुये स्वर्ग की परवाह नही करता था।

नरवर से लौटे हुये गियास, को छः महीने हौ गये। जाड़े आये, बसन्त ऋतु आई, गई और अब गर्मिया समाप्त होकर बरसात लगने वाली थी परन्तु गियास न मरा, न मरा।

नसीर ने मुल्लो की हिदायतो पर अमल किया,—जशन मनाये, षड़यन्त्र किये, सभी तरह के अभ्यास किये—परन्तु चूक चूक गया:

उसके लिये भला इतना ही हुआ कि गियास को उसके किसी भी अभ्यास का पता न चला। मटरू उसका सहयोगी था इसलिए शायद नसीर बार-बार बचा फिर एक दिन घड़ी आ ही गई।

गियास की एक खवासिन मटरू की कोशिशो से नसीर के फेर मे आगई और काम बन गया। दो दिन से यकायक बादल और शीतल समीर। सन्ध्या के उपरात का समय। महल के झरोखे से ठण्डी हवा

के झोंके आये हल्की बूंदें भी। खवासिन जाम ले आई। मटरू तख्त के नीचे बैठा था।

सुल्तान सिकन्दर लोदी ने ग्वालियर पर चढाई करने की जो ठानी है वह मेवाड के राना के जरिये वही की वही क्यो न ठप कर दी जाय? गियास ने चुटकी लेते हुए कहा।'

नीची गर्दन को और भी नीचा करके मटरू बोला, 'जहांपनाह, दो मूजी आपस मे उलझ जाये तो इससे बिहतर और कुछ नही।'

'मैंने राना रायमल को सन्देश भेज दिया है कि सिकन्दर ग्वालियर का बहाना करके असल मे मेवाड की तरफ कतराता हुआ पहुँचेगा, इसलिये वह उसको आगे बढ़कर रोक ले।'

'अपने लड़के सांगा को भेज दें तो वह सिकन्दर को वही के वही मोड़ देगा।'

'तुम तो हो गधे! राणा अपने ढङ्ग से लडेगे, तुम्हारे बतलाये ढङ्ग से थोड़े ही लड़ेंगे। मैंने उनके एक भाट को हुक्का दिया है, वह उतरवा देगा बात को ठीक घाट पर।'

'जहांपनाह यह बहुत सही रहा।'

और उधर सिकन्दर और राणा जूझे कि इधर मैंने कालपी के रास्ते से ग्वालियर पर धावा बोल दिया। अबकी बार नरवर होकर नही जाऊंगा। मैं पहुँचूगा ग्वालियर उत्तर की राह से और चंदेरी का सूबे-दार आवेगा ग्वालियर पर दक्खिन से। क्या समझे?'

'सही फरमाया जहापनाह ने उत्तर से जहापनाह और दक्खिन से चन्देरी का सूबेदार शेर खा।'

'बस फिर बन गया काम। वे दोनो ग्वालियर मे ही है, जानते हो न?'

मटरू ने क्षण-खण्ड के लिये आख ऊँची करके नीची कर ली। उसने देखा गियास की पुतलियां कुछ अधिक फैल गई है।

कहा 'कौन जहाँपनाह ?

प्याले को ढालकर वह बोला—सुराही में से प्याले को भरता रहा अबे अहमक, इतनी जल्दी भूल गया ! मृगनयनी और लाखी इन दोनों को अबकी बार मॉडू लाये बिना चैन नही लेने का।'

गियास की आँखें फैलकर कुछ और भारी हुई।

'आज मेरा हाथ इतना क्यो कांप रहा है ?'

'जहापनाह, हवा मे कुछ सर्दी है।'

'तो अब राना रायमल या उसके लड़के सांगा को सिकन्दर से उ ल झ ने मे कितनी दे·· र है ?'

'बहुत थोडी–सी जहांपनाह।'

'दोनो लड जाये क म ब · ख्त।'

गियास के हाथ से प्याला छूट पड़ा। खवासिन किवाड़ की ओट खडी हुई थी। जरा और ओझल हो गई। गियास तकिये के सहारे पड गया। मटरू खडा हो गया।

धीरे से बोला, 'जहाँपनाह।'

गियास ने कोई जबाब नही दिया। मुह से झाग आने लगे। मटरू ने ताली बजाई। खवासिन तुरन्त आई।

मटरू ने धीरे से कहा, 'शहजादे के पास इत्तिला भेजो कि जहांपनाह की तबियत यकायक खराब हो गई है, किसी और को खबर न होने पावे।'

खवासिन चली गई। थोडी देर मे गियासुद्दीन तड़पने लगा और नसीर के आने के पहले ही उसका प्राणान्त हो गया।

नसीर के आते ही डरते-डरते गियास की तरफ दृष्टि फेरी, फिर मटरू की तरफ देखा। मटरू ने सिर और हाथ के हलके सकेत द्वारा सब कुछ बतला दिया मानो, कह रहा हो, योजना सफल हो गई, समाप्त हो गया।

कांपते हुये स्वर मे नसीर वोला, 'वाहर खवर फैलाई जाय कि सुल्तान सलामत बहुत बीमार है। असल वात किसी को न मालूम होने पावे।'

स्थिर-कण्ठ से मटरू ने कहा, 'जहापनाह सुल्तान नसीरुद्दीन जिन्दावाद! सिवाय मुल्ले—मौलवियो के और किसी को नही मालूम होने पावेगा। हुजूर सुल्जान मरहूम के जानशीन है, हुकूमत करे। दरवार का अखवारनवीस इन्तकाल की वात को महीनो वाद दर्ज कर सकेगा।'

'खवासिन कहाँ है?' नसीर ने पूछा।

खवासिन पीछे ही खडी थी। इनाम के लोभ मे आगे आ गई। नसीर ने तुरन्त तलवार निकालकर उसका सिर काट डाला। मटरू अचेत होने को हुआ। नसीर ने तलवार म्यान मे डाल ली।

वोला, 'होशियार ख्वाजा मटरू! होशियार!!'

'मैंने इस कमबख्त खवासिन को इसलिये खतम कर दिया, कि कही इधर-उधर वकती न फिरे। अगर राज खुल गया कि सुल्तान अब जिन्दा नही है तो मुझे और तुमको कहने को तो होगा कि इस बदकार, औरत ने सुल्तान को किसी रंजिश की वजह से जहर दिया, इसलिये मैने इसको सजा दे दी। इसके मार दिये जाने से हमारा तुम्हारा दोनो का रास्ता साफ हो गया। महल मे चर्चा इस औरत को सजा दिये जाने की होगी तो अच्छा होगा। सब चुपचाप अपना-अपना काम देखेगी। क्या समझे?'

'सब समझ गया, जहाँपनाह सव समझ गया।'

'अभी जहाँपनाह नही, वेबकूफ, सिर्फ जानआलम, जैसे पहले कहता था।'

'हाँ जानआलम, जानआलम।

थोड़ी देर वाद मुल्ला-मौलवियो और सरदारो को भी मालूम हो गया। हठ के साथ गियास की वीमारी का समाचार साधारण जनता और सिपाहियो मे फैल गया! लाश तेल मे रखदी गई। नसीर के हाथ

मे हुकूमत मे आ गई। अखबार नबीस ने गियास के प्राणान्त के वृत्तान्त को कागजो मे बहुत दिनो दर्ज नही किया।

नसीर अपनी प्रचण्ड भूख, स्त्रियो की भूख—कामवासना—की तृप्ति मे जुट पडा। ख्वाजा मटरू और न जाने कितने मटरू उसकी सहायता के लिये फट पडे।

[४४]

सिकन्दर लोदी मेवाड नरेश राणा रायमल के राजकुमार सागा संग्रामसिंह-की एक छोटी-सी मुठभेड ओढकर ग्वालियर की ओर मुड आया। धौलपुर पर हमला किया और घेरे के लिए अपनी विशाल सेना का एक भाग छोड़ कर चम्बल को पार करके ग्वालियर की दिशा मे उन्मुख हुआ। धौलपुर उस समय एक तोमर वंशी राजा के आधिपत्य मे था, जो राजा मानसिंह का सहायक था। परन्तु सिकन्दर मेवाड की ओर से धौलपुर पर इतनी तेजी के साथ चढ दौडा कि ग्वालियर से सहायता न आ सकी। आक्रमण की छोटी छोटी टुकड़ियाँ आगे-आगे चलती थी जो समाचार देने के साधनों को नष्ट करती जाती थी। समाचार देने के साधन इतने ढीले और स्वल्प हो गये थे कि प्राय: विलम्ब के साथ पहुँच पाते थे। ग्वालियर जो समाचार आया उसका सार यह था कि सिकन्दर लोदी धौलपुर पर एक छोटा-सा बगटार करके मेवाड की दिशा मे लौट गया। सिकन्दर चम्बल की घाटियो और भरको मे होकर ग्वालियर पर आ रहा था।

मानसिंह अपने नये महल के नीचे वाले दो खण्ड बनवा चुका था। सुमनमोहिनी की डाह के कारण वह नये महल को बहुत जल्दी बनवा रहा था। जानता था कि कर्णमहल मे अल्प स्थान होने के कारण नवी रानी के साथ सुमनमोहिनी और सात रानियो की बढती हुई खटपट अधिकाधिक होती चली जावेगी, नये महल के बन जाने के बाद उनके सम्पर्क कम हो जावेगे और अधिक शान्ति स्थापित हो जावेगी।

ऊपर के खण्ड किस प्रकार के बने यह बहस थी।

विजयजङ्गम ने सुझाया, 'तैलङ्ग शैली के बनवाइये। ऊपर के दोनो खण्डो मे वन-उपवन की भिन्नतापूर्ण, विपुल शालीनता, छोटी-छोटी पहाड़ियो की प्रतिमारूप मडियाँ, बडे पहाडो सरीखे आड़े शिखिर और आड़े शिखरो पर पहाड़ो के अनेक तुङ्गो के प्रतीक, मन्दिर के चारो पार्श्व-त्रिभुजाकार, इन कमल गुजित त्रिभुजो के शिखर पर सूर्य का गोल मण्डल।'

मानसिंह स्पष्ट नही समझा।

विजय ने व्याख्या की, 'ऊपर के पहले खण्ड से दूसरे खण्ड के समोने के लिये पहले खण्ड से ही चारो दिशाओ से विशाल त्रिभुज बनते जाये जो ऊपर जाकर दो समानान्तर पटरियो को बनाते हुए मिल जायेगे। अपने किले के भीतर तैल-मन्दिर मे जैसा समन्वय पहाड़, शिखर, तुङ्ग, मण्डप, मडिया, आम के पेड़ का गोल गुम्मट और नदी नालो की लहर तथा शिव के त्रिशूल का हुआ है वैसा ही बडे पैमाने पर जब बन चुके, तब नाम उसका रक्खा जाय, मान मन्दिर।

'यहाँ, उत्तर के शिल्पियो की समझ मे यह नही आवेगा, क्योकि इनकी परम्परा कुछ भिन्न है।'

'तैल-मन्दिर को इन्ही लोगो के पुरखो ने ही बनाया होगा ?'

'छै: सौ वर्ष से ऊपर हो गये जब ग्वालियर के राजा ने एक तैलङ्ग राजकुमारी के साथ ब्याह किया। दक्षिण के कुछ शिल्पी उस राजकुमारी की प्रेरणा से आये। उनके और उत्तर के शिल्पियो के सहयोग से वह मन्दिर बना। तैल मन्दिर का शिखर तैलङ्ग राजकुमारी की वाच्छा का प्रतीक है और शिखर के नीचे का सारा खण्ड उत्तर की परम्परा की मूर्ति है। अब वे कारीगर नही है।'

'हाँ तैल-मन्दिर विष्णु के शख, चक्र, गदा, पद्म के सौन्दर्य और शिव के ऊँचे, लम्बे, तीक्ष्ण त्रिशूल तथा नन्दी की महत्ता का समन्वय है।'

'ठीक कहते हो आचार्य, मन्दिर के चारो ओर गणेश और मयूर गामी कार्तिकेय की मूर्तियाँ भी है।'

'महाराज यह वैष्णवो का अत्याचार है।'

'परन्तु मन्दिर को उत्तर के वैष्णव और दक्षिण के शैवों ने मिलकर बनाया होगा।'

'आप भी क्या कुछ इसी प्रकार का मिश्रण अपने भवन निर्माण मे करेंगे ?'

'मै तो टाँकी और हथौडे की कविता तथा सङ्गीत के ताल और तान को मूर्त करना चाहता हूं इस भवन मे। किन उपादानो और साधनो से हो, वह आप सरीखे विद्वान बतलावे. मैं भी कुछ सोच रहा हू, परन्तु निर्णय नही कर पाया हूँ।'

'शिल्पी और कारीगर बतलावेगे यहाँ के।'

'शिल्पी और कारीगर निर्माण कला के शव्द और व्याकरण हैं। उनकी योजना, शब्दान्यास, पदलालित्य और अनुपात को कविता तथा मजुल-मगल की फुरफुरी देना आपका हमारा काम है।'

'सोचूंगा। आप क्या किसी काव्य को पत्थरो मे साकार करने जा रहे है ?'

'आप ही तो बतलाते रहते है कि जीवन को कल्याणमय और सुन्दर बनाने से ही मृत्यु भी शुभ बन सकती है, मै जीवन के उसी भाव को पत्थरो मे उतार देना चाहता हूँ।'

'मै महाराज, गुरू वचन को ही दुहराता हूँ। परन्तु-गुरूवचन मे कायक-श्रम-पर अधिक बल दिया गया है। उसको भवन निर्माण मे कैसे व्यक्त किया जायगा ?'

'उसकी विशालता से कायक धर्म का मर्म प्रकट हो जावेगा।'

'उसकी विशालता देखने वालो को आतङ्कित न करेगी ?'

'सौन्दर्य की विशालता सीधे लम्बे ताड़ वृक्ष की जैसी विशालता नही।'

'देखने वाले को जीवन मे श्रम को गौरव का पद देने की प्रेरणा भी मिलेगी क्या उसके सौन्दर्य से ?'

'चाहता तो हूँ कि हम सब और आगे आने वाले लोग भी उसको देख-देखकर आल्हादित हो, गाने के लिये लहरा उठे और उस लहर से कर्मठ बनने की स्फूर्ति और शक्ति को पाकर जीवन को अपने श्रम से भर दे ।'

'सोचूंगा किस प्रकार यह कल्पना पत्थरो की योजना द्वारा प्रकट हो सकेगी, आप तो सोच ही रहे है ।

[४५]

साझ से ही बादल घिर आये । बिजली की कडक-तडक हुई और गरगराहट के साथ पानी बरसने लगा । चन्द्रमा ऐसा छिपा कि घोर अमावस्या की रात प्रतीत होने लगी ! मृगनयनी और मानसिह कर्ण महल के एक ऊपरी कक्ष की खिडकी के सामने मच पर बैठे थे । मानसिह कुछ चिंतित-सा था, मृगनयनी हर्षमग्न और प्रफुल्ल ।

मानसिंह ने कहा, 'इस वर्ष बरसात नाम ही नही ले रही है अन्त होने का ।'

'खेती-पाती के बिगड़ जाने का डर लग रहा है क्या ? मृगनयनी हँसते हुई बोली ।

उसके दाँतो मे बिजली का कुछ साम्य देखकर मानसिह की चिन्ता छूट गई ।

'राज्य के किसानो की खेती–पाती अपनी खेती–पाती के ही समान तो है । परन्तु इस समय चिन्ता भवन–निर्माण के काम मे बाधा होने के कारण हुई ।'

'जब राई गाँव मे थी एक रात कुछ मैंने भी सोचा था ।'

'तुमने अवश्य कोई कविता या तान सोची होगी, मुझको बतलाओ क्या सोचा था ।'

'न कविता थी और न तान। मै उन दिनो जानती ही क्या थी ? पर सोचा अवश्य था कुछ।'

'बतलाओ न मै सुनने के लिये बहुत उत्सुक हूँ।'

मृगनयनी ने बडी-बडी आखो लजाते हुये देखा। मुस्काई। एक क्षण चुप रही।

'तुम ऐसे नही बतलाओगी। करूँ बुलवाने का कोई उपचार ? मुझ को अनेक आते है।'

मृगनयनी हँस पडी।

'वैसे ही बतलाये देती हू,'—उसने कहा,—'एक रात मेरे मन मे चाह उठी थी कि चाँदनी मे चमकती नदी की दमक को समेट कर अंचल मे बाध लूँ,खेत की ऊँघती हुई बालो और पहाड़ की उस ऊँचाई को एक ही ठौर पर इकट्ठा कर लूँ; बडे-बडे पेडो के बन्दनवार बनाऊं और डालियो पत्तो के झरोखे सजाऊँ, उन जरोखो मे होकर मोतियो के हार सी पहिने हुये नदी की लहरो को गीत सुनाऊँ और फिर एक ऐसा घर बनाऊँ जिसमे यह सब आ जाय। मैने और लाखी ने मिलकर घरोदा बनाने का प्रयत्न किया। वह आधी घडी मे कुछ न बनकर बिगड़ गया। आपने तो बहुत बना लिया है और बहुत बडा। एक दिन पूरा हो जावेगा।'

'वह गीत कौन सा है जिसे नदी की लहरो को सुनाती थी।

'अरे यो ही सा कुछ—भूल गई।'

बतलाओ जल्दी, नही तो फिर हा।'

'गीत था, जाग परी मै पिया के जगाये।'

'मुझको सुनाओ।'

'सुनाया तो था पहले।'

'आज फिर सुनाओ।' उसने हठ किया।

मृगनयनी ने सुनाया। उसने गीत को इतना सुरीला गाया कि वह स्वयं आनन्द-विभोर हो गई। अपनी ही तानें उसको कभी पहले ऐसी मीठी नही लगी थी।

मानसिंह बोला, 'भवन निर्माण के सम्बन्ध मे इसी समय मुझको कुछ कुछ नई सूझे मिली है।'

बादल फट गये और चादनी धुली-धुली छिटक आई। पानी कुछ पहले रुक गया था। प्रकाश में निकट की पर्वत-श्रेणी स्पष्ट दिख गई। दूर के पहाड़ धूमिल, ऊघते, सोते से।

मानसिंह ने कहा, 'भवन को सौन्दर्य, लालित्य और आस्था का मन्दिर बनाऊँगा। कोमल भावनाओ का सदन, तुम्हारी चाह, शक्ति और बडप्पन का प्रतीक! तुम्हारी कल्पना के वन्दनवार, ऊँचे वृक्ष, पल्लवो के झरोखे, नदी की दमकती हुई लहरें-सबो को, उसमे संजो दूंगा। उस मन्दिर की प्रबल मन्जुलता आधी रात की चादनी में आकाश से गाकर कहेगी 'जाग परी मे पिया के जगाये।'

'पत्थर गावेगे कैसे?'

'जैसे तुम्हाये गॉव के पेड, पहाड, खेत को ऊचती हुई बाले और चाँदनी मे चमकती नदी कि लहरे गाती है।'

मृगनयनी के मन मे उठा, 'मैं रहूगी उसमे, एक कक्ष मे लाखी रहेगी, सुमनमोहिनी भी आया करेगी और छीटे भी कसा करेगी! कसने दो। मै कान बहरे कर लूंगी, अनसुनी करती रहूँगी तब क्या करेगी वह? परन्तु उसकी आंखे? और वह उपहास! असह्य हो जाता है। सहूँगी। ऐसा सुन्दर मन्दिर बनेगा वह और हम सब उसमें ओछे बनकर रहेगे! मै खीझा नही करूँगी, वह अपने आप झुक जायगी। अरे! उस का वह अलंकार!! उसको एक आले मे फेंक कर मै बिलकुल ही भूल गई!!! क्यो भूल गई? इतने दिन क्यो भूली रही? अब उसको लौटा दूंगी। उसको उठाया ही क्यों था! हाथ में क्यो बना रहा? मैने उसको आले मे क्यो डाल दिया? वह सोचती

होगी मैने या मेरी किसी चाकरिन ने चोरी की ! ओफ !! बहुत बुरा हुआ । उसको कही फेक दूँ ? नही, कभी नही ।क्या वह उसी आले मे पड़ा होगा ? देखती हू, वही पड़ा होगा । अभी लौटा दूँगी ।

'क्या सोच रही हो ? ठीक कहा न कि पत्थर इसी प्रकार गावेंगे ?' मानसिह ने पूछा ।

मृगनयनी उठ खडी हुई बोली, 'मै अभी आती हू ।' मानसिह प्रश्न नही करने पाया, वह आतुरता के साथ चली गई । जिस आले मे उसने सुमनमोहिनी के गहने को फेक दिया था, वही मिल गया, वह उसको उठा लाई ।

उसने कहा, 'भूल से आले मे पडा रहा यह बड़ी महारानी का गहना ।'

'मैं समझा नही । यह क्या है ?' मानसिह बोला ।

मृगनयनी ने महीनो पहले की कहानी बतलाई ।

'कैसे स्मरण हो आया ? मानसिह ने पूछा ।

'यो ही ।' उसने उत्तर दिया ।

'एक क्षण चुप रहकर मानसिह ने कहा, 'अब क्या करोगी ?'

'मैं इसको लौटा देना चाहती हू ।'

'बडी भूल करोगी । अनर्थ हो जायगा ।'

'अब तक स्मरण नही आया, इसलिये कोई बात नही, परन्तु यदि रक्खे रहूँगी तो चोर समझी जाऊँगी ।'

'तो क्या तुम समझती हो कि वह उदारता बर्तेगी ?'

'कुछ भी हो मैं इसको नही रक्खूंगी ।'

'न रक्खो तो कही फेक दो, परन्तु लौटाओ मत ।'

'मेरे ऊपर छोड दीजिये । चिन्ता मत करिये ।'

'वह तुमको चोर कहेगी ।'

'मैं तो न कहूंगी अपने को चोर। वह कहेगी तो सह लूँगी।'

'तुम जानो, मैने सावधान कर दिया है।'

'जब पत्थर उस प्रकार गावेगे तो क्या हम कुछ भी न गा सकेगे ?'

[४६]

दूसरे दिन मानसिह को समाचार मिल गया कि सिकन्दर लोदी अपनी विशाल सेना सहित पश्चिम दक्षिण की दिशा से ग्वालियर पर आ रहा हैं। बरसात के कारण भवन निर्माण मे बाधा पड चुकी थी। सिकन्दर की चढ़ाई के समाचार ने उसको और भी विपन्न कर दिया। सङ्गीत चित्रकारी और निर्माण के काम को युद्ध के कारण न जाने कितने समय तक स्थगित किये रहना पड़ेगा, यह उसको बहुत गड रहा था। लडाई के साधनो को प्रचुर, प्रबल और प्रखर बनाने की अपेक्षा उसका ध्यान कलाओ के प्यार पर अधिक जा रहा था।

नगर मे खलबली मच गई। सम्पत्ति वाले लोग अपने सामान और बाल-बच्चों को लेकर किले मे आ गये। किसान और मजदूर कुछ नगर कोट के भीतर रह गये और कुछ भागकर पास और दूर के जङ्गल पहाडो मे छिपने लगे।

सिकन्दर इसके आठ-नौ वर्ष पहले एक करारा आक्रमण ग्वालियर पर कर चुका था। सिकन्दर के पहले उसका बाप बहलोल भी चढाई कर चुका था। मानसिह ने दोनो अवसरो पर आक्रमण को विफल कर दिया था। नगर के भागने वाले लोग अबकी बार निराश थे।

'राजा नाच-गान मे ज्यादा उलझ गया है। वह उतना सावधान नही रहा !' कुछ लोग कहते थे।

दूसरो की शिकायत थी, 'रात भर जागेगा, दिन दिन भर सोयेगा, तब तुर्कों को पीछे हटाने का समय कब और कहाँ से निकलेगा ?'

'ग्वालियर की सीमा को बिलकुल असावधान कर दिया ! चौकियाँ सब ढीली हो गईं।

'रहने के लिये एक महल क्या कम था जो दूसरे के बनवाने में इतना डूब गया ?'

'अच्छे अनुर्धारी नही रहे अब ग्वालियर मे !'

'तुर्कों का राज हो जायगा क्या अब ? वे गुलाम बनायेगे ।'

'तोमर राजपूत अभीम खाने लगे है ।'

'जब से यह नई रानी आई, तब से राजा का शौर्य चौपट हो गया। निहालमिह शायद कुछ कर सके ।'

'जब राजा ही ढीला है, तब सामन्त क्या कर सकेंगे ।'

'अब सिर पर आ गई है तब राजा कुछ अवश्य करेगा ।'

'तुर्क जैसे पहले मुह की खाकर लौट गये थे, वैसे ही अब भी लौट जायेंगे ।'

'राजा को सजग कैसे किया जाय ?'

किले के भीतर बढ़ती हुई भीड ने मानसिह की युद्ध भावना को उत्तेजित किया। किले में जहा-तहां अस्त्र-शस्त्रो की व्यवस्था की, सैनिको को सन्नद्ध किया। भाग जाने से जितने लोग नगर मे बचे थे उनको घर घर जाकर आश्वस्त किया। सिकन्दर की सेना को दूर ही अटकाये रखने के लिये निकटवर्ती पहाडो और घाटियो मे सैनिकों की टुकडियाँ लगा दी ।

सन्व्या समय मृगनयनी को तैयारी का सब समाचार जा सुनाया। थक गया था, तो भी उसके मन मे शिथिलता नही थी ।

'समय पड़ने पर मै भी लड़ूंगी,' मृगनयनी ने कहा ।

'तुमको लड़ना पडा तो हम पुरुप काहे के लिये है ?'

'और स्त्रियाँ काहे के लिये हैं ? क्या वे वाञ्छा और काम की शृङ्गार मात्र है ?'

'नहीं, जीवन की प्रेरणा, प्रात काल की ऊषा जैसी सजग करने वाली ।'

'मैं कविता नही जानती, परन्तु मै पूछती हू कि क्या यही ऊपा दोपहर की प्रचंड किरण नही बन जाती ? बडी रानियो ने एक समाचार भेजा था कि यदि बुरी से बुरी घड़ी आ गई तो हम जौहर करेगी। क्या ऊषा प्रचण्ड किरण न बनकर, गगन मे ऊपर न उठकर फिर नीचे धस जायगी ?'

'उन रानियो को यह सम्वाद नही भेजना था।'

'महल के उत्तर-पश्चिम मे जो जौहरताल है उसने यह सम्वाद भिजवाया है। रानियो को ऐसे समय मे वही याद आया, क्योंकि उनकी बाहो ने तीरकमान और तलवार को कभी अपनी सखी नही बनाया। पहले की सतियो ने आग और चिता को जितना प्यार किया उसके बराबर तीर और तलवार के साथ भी करना चाहिये था। आने दीजिये वैरी को किले के निकट फिर देखिये मेरा और लाखी का काम।'

'मुझको विश्वास है परन्तु मैं चाहता हूँ कि जब दिन भर की लड़ाई से थककर तुम्हारे कक्ष मे आऊँ तब तुम्हारी मृदुल–मुस्कान और मीठे स्वरो की ललित–तान को अपने भीतर भरकर फिर ज्यो का त्यों सबल हो जाऊँ।'

'और हमारे चलाये तीरो की सनसनाहट क्या आपकी भुजाओ को कम फड़कन देगी ? आपका भवन बनकर खड़ा हो गया होता तो क्या वह सोने के लिये ही आपको न्योता देता या यह भी कहता कि मेरे बाहर से लडो और भीतर बैठकर लडो ?'

'बन जायगा, तब वह यही सन्देश देगा परन्तु बन नही पा रहा है। कोई न कोई विघ्न बीच मे आ जाता है। चाहता हूँ कि तुर्कों की बला किसी तरह टल जाय तो विना विलम्ब के भवन को बनवा कर खड़ा कर लूँ, बैजू के द्वारा सङ्गीत मे नया प्राण फूँक दूँ, चित्रकारी साहित्य इत्यादि को पूरी ऊँचाई पर पहुँचा दूँ।'

'तुर्कों की बला किसी तरह टल जाय! कैसे टलेगी ? सोना चादी देकर टाल दीजिये।'

'मैं भी सोच रहा हूँ।

'क्या सचमुच आप यही सोच रहे है ?'

'क्यों ? राजनीति मे साम, दाम, दण्ड, भेद-चारोंको यथा को अवसर काम मे लाना पडता है। सोचने मे क्या बुराई है।'

'कलाओं की बहुत अधिक पूजा ने ही क्या आपके ध्यान को राजनीति के दाम वाले अङ्ग पर अधिक जा बिठलाया है ? दण्ड की बात आप क्यो नही सोच रहे है ?'

'सभी अङ्गो को सोचना पडता है।'

'मै राजनीति को नही जानती। किसान की लडकी ठहरी। केवल इतना जानती हूँ कि मचान पर जागते-सोते जैसे ही भोर की लाली को देखा कि मन मे लहर दौड़ी। चिड़ियो की चहक को सुना कि उमङ्ग छा गई और दिन के काम पर पिल पड़ी। जब भोर की लाली, चिड़ियों की चहक—नदी की धार की दमक, पहाड़ो की ऊँचाई और लम्बे—तडंगे पेडो की हरियाली और झरोखो, वन्दनवारो को मिट्टी के घरोदे मे नही उतार पाया तब उस पर से ध्यान को हटाकर अपने काम मे लग गई।'

'परन्तु मिट्टी के घरोदे और काटे तराशे पत्थरो से बनाये अधूरे भवन मे तो बड़ा भारी अन्तर है।'

'वीणा को बजाते-बजाते, काम पड़ने पर, यदि तुरन्त तलवार न उठा पाई, कोमल सेज पर सोते-सोते सकट आने पर, यदि तुरन्त ही उछलकर कमर न कसी, ध्रुवपद को गाते—गाते शत्रु के सामने आ खड़े होने पर, यदि तुरन्त गरज कर चुनौती न दे पाई, जिन कानो मे मीठे स्वरो की रस धार बह-बहकर जा रही थी, उन्ही कानो मे यदि रण वाद्यो और कडखो की धुन न समा पाई तो ऐसी वीणा, सेज और ध्रुवपद की तानो का काम ही क्या ?'

मृगनयनी उत्तेजित हो गई थी। मानसिंह को रोमाच हो आया। उसको अपने अङ्क मे भर लिया।

'छोड़िये मुझको,'—मृगनयनी ने कहा 'क्षत्रिय के लिये इस समय जो उचित है उसी के करने मे जुट जाइये। रनवास की रक्षा की चिन्ता को दूर कर लीजिये—मैं उसकी रक्षा का प्रबन्ध करूँगी।'

मानसिंह गद्‌गद् हो गया।

बोला, 'सचमुच अब मुझको अपने भीतर बहुत बल प्रतीत हो रहा है। विलक्षण और प्रचण्ड। शत्रु को सोना चांदी दे-दिवाकर टाल देने की बात मैने अपने मन से बिलकुल निकाल दी। सचमुच वह कला क्या जो कर्तव्य को लंगड़ा कर दे, और वह कर्तव्य भी क्या जो कला का अङ्ग—भङ्ग हो जाने दे?'

मृगेनयनी ने मानसिंह के ऊँचे भरे वक्ष पर पडी हुई मणिमाला को उङ्गलियों मे खिलाते हुये मुस्कान के साथ कहा, 'अभी केवल कर्त्तव्य की बात को सोचिये।'

'यही होगा, यही होगा, प्राणधन। पहले कर्त्तव्य, कला की बात पीछे।' मानसिंह के मुह से दृढता के साथ निकला।

[४७]

बड़ी रानी से मानसिंह को एक पुत्र था। नाम विक्रमादित्य। वह युवावस्था में पैर रखने वाला था। मानसिंह ने अपने हाथों उसकी कमर मे तलवार बाधकर सिकन्दर का मुकाबला करने के लिये किले से वाहर भेज दिया। निहालसिंह को दूसरी दिशा से आक्रमण करने का आदेश दिया और समझाया, 'मुझको आशा है सिकन्दर को लौटा दिया जायगा। जब वह लौट पडे तब तुम जैसे बने उसके सामने जाना और टिकाऊ सन्धि की चर्चा करना। कहना मालवे के सुल्तान का होश ठीक करने के लिये ग्वालियर ही है। यदि सिकन्दर अपने किसी सरदार से लडाई मे उलझा तो हम उसकी सहायता करेगे। केवल मेवाड़ अपवाद है। यदि मेवाड से उसका युद्ध हुआ तो हम उसकी कोई सहायता न करेगे।'

'कुछ देने-दिबाने की बात आई तो ?' निहाल ने पूछा।

मानसिंह ने उत्तर दिया,–'तो मुझसे बिना पूछे कुछ तै मत करना, फिर देखा जायगा।'

उसके सामने मृगनयनी की खिची हुई भोंहो का चित्र खिच गया। निहाल चला आया। मानसिह नगर और किले की रक्षा के लिये भीतर रह गया।

निहाल आदेश लेकर कर्णमहल से बाहर होने को ही था कि एक मोडदार गैल के एकान्त मे कला मिल गई। कला मुस्कराई। वह ठिठक गया। ठिठक कर खड़ी हो गई जैसे मार्ग न पा रही हो।

निहाल ने कहा, 'बहुत दिनो से कुछ कहने की सोच रहा था।'

कला ने जरा–सा कठाक्ष किया और बोली, 'अवसर ही नही मिला, अब कह लीजिये।'

'क्या करती रहती हो ?

'चित्रकारी और गायन वादन।'

'किसकी चित्रकारी ?'

'किले के मन्दिरो की और कोई बनवावे उसकी।'

'चित्रकारी से बढकर तुम्हारा सङ्गीत है।'

'आपकी कृपा।'

'उस रात तुम्हारा गायन और नृत्य न जाने मन मे क्या क्या छोड़ गया।'

'गाया तो नही था मैने।'

'बैजू के साथ मे तो गाया था।'

'मेरे नृत्य ने आपके मन मे क्या छोडा था ?'

'तुम्हारी मुस्कान, चितवन और गीत के अभिनय को जिसने कभी साथ नही छोडा, सपनो मे भी नही छोडा।'

'तो अब जाइये, भगवान फिर मिलायेगे।'

'तुमको एक वार हृदय से लगा लेता—बड़ी साध है।'

'मेरे दो–एक प्रण है, जब तक वे पूरे नही हुये, देह को नही छूने दूँगी, यदि छुआ तो आत्मघात कर लूँगी ।'

'ऐसे वे कौन से प्रण है ?'

'इस लडाई को आप निश्चय ही जीत कर आवेगे .'

'आशा तो है ।'

'जीतकर आने पर नरवर की जागीर आपको मिलनी चाहिये । हम सबने सुन लिया था कि नरवर को आपके पराक्रम ने ही जीता था। नरवर आपको मिलना चाहिये था ।'

'हा, खैर नरवर राजा के साले के हाथ मे है ।'

'बिलकुल अकारथ, आपको मिले नरवर मैं तो यह चाहती हूं ।'

'लौटकर देखूँगा । लडूँगा, विकट लडाई लडूँगा, सिकन्दर को पछाडूँगा, महाराल प्रसन्न होगे तब नरवर को जागीर मे मागूँगा ।'

'जैसी लडाई की वात आप कहते है, वैसी मुझको तो अच्छी नही लगी । डर के मारे कलेजा धसकने लगा है । राजकुमार और इतने सामन्त बाहर लड़ने के लिये जा रहे है । किले मे अकेले महाराज रहेगे। आप उनके साथ ही बने रहे तो अच्छा होगा ।'

'महाराज कहते थे कि नई महारानी भी किले के प्रवन्ध मे उनके साथ रहेगी ।'

'स्त्री ही तो है, कितना कर पायेगी ?'

'मेरे मन मे बात उठी थी, परन्तु अनुचित समझ कर मुंह से नही निकली । तुम नई महारानी से कह कर मुझको रुकवा लो, वडा अच्छा होगा । यदि मैं किसी प्रकार रुक जाऊँ तो आज रात को कही एकान्त मे मिल सकोगी ?'

'मैं पहले ही कह चुकी हू कि आप मेरी देह का स्पर्श उस समय तक नही कर सकेगे जब तक आपको नरवर की जागीर नही मिली ।'

'नरवर की न मिले और कोई जागीर मिले तो ?'

'और कोई जागीर मिले तो उसको नरवर की जागीर से बदलवा लेना।'

'नरवर से इतना मोह क्यों है?'

'क्योंकि उसको आपने जीता था और मेरा घर चन्देरी नरवर के निकट बैठता है। बस, यही मोह है।'

'तुम कैसे अवसर पर मिली? मन नहीं चाहता है कि किले को छोड़ूं। इच्छा है दिन-रात सामने रहो और तुमको देख-देखकर सब काम करता रहूं।'

'यह तो ब्याह हो जाने पर ही सम्भव होगा।'

'न हो ब्याह तो क्या! हमारी तुम्हारी जाति भिन्न-भिन्न है।'

'मैं तो आचार्य विजयजङ्गम के सिद्धान्त को मानती हूं। आपका उनका साथ तो और भी बहुत पहले से है, क्या आप नहीं मानते? राजा तो मानते है।'

'मैं भी मानूंगा।'

'तो अब किले मे रहकर ही युद्ध मे भाग लीजिये। मुझको कभी-कभी दर्शन मिल जाया करेंगे।'

'तुम तो महारानी मृगनयनी से कहोगी नही? कहोगी न?'

'नही कहूँगी। उनको सन्देह हो जायगा।'

'अच्छा तो, मै ही कुछ प्रयत्न करूँगा।

कला मार्ग छोडकर चली गई। निहालसिंह ने प्रयत्न किया, परन्तु मानसिंह ने अपनी योजना के किसी भी अंश मे हेर-फेर नही किया। निहालसिंह बाहर चला गया।

[४८]

सुमनमोहनी ने कला से जो कुछ भी सीखा हो, और न सीखा हो, कला उसके पास अकेले मे उठने-बैठने ज्यादा लगी।

'तुमको गूजरी रानी बहुत अधिक चाहती है ?' सुमनमोहनी ने पूछा।

कला जानती थी कि मृगनयनी को बड़ी रानी रत्ती भर भी नहीं चाहती।

सावधानी के साथ बोली, 'मेरे ऊपर तो आप सभी की कृपा है, आपकी विशेष कर।'

'उनका प्यार लाखी पर, जो अब लाखा रानी कहलाने लगी है, अधिक है। क्या तुमको उतना ही चाहती हैं ?' बड़ी रानी ने आँख गड़ाकर प्रश्न किया।

कला ने भोलेपन का नाट्य करते हुए कहा, 'लाखीरानी से बढ़कर तो गूजरी रानी किसी को भी नही चाहती।'

'तुम मुझको चाहती हो ?

'मै तो महारानी जी, आदर बहुत करती हूँ। सेविका के मुंह से इतनी बडी बात कैसे निकल सकती है ?'

'मैं तुमको अपनी सखी बनाना चाहती हूँ: इस ढङ्ग से बर्ताव करूँगी कि मृगनयनी को नही मालूम पड़ पावेगा।'

'आपकी इस कृपा को जन्म भर नही भूलूँगी।'

'अच्छा, तुम जो किले के भिन्न भिन्न भागो के इतने चित्र बनाया करती हो, उनसे तुमको क्या मिल जावेगा ?'

'कुछ नहीं, महारानी, जी, कुछ नही। मन्दिरो के भी बहुत से बनाये है।'

'उनके भी बनाये है ? मृगनयनी के ?'

'कई बनाये हैं। महाराज के भी बनाये है।'

'और मेरे ?'

'आपकी आज्ञा लेने की कामना बहुत बार मन मे उठी, परन्तु लाज के मारे नही कह सकी।'

'अब बनाना।'

'बहुत से बनाऊगी ।'

'कुछ और भी करना जानती हो या केवल चित्रकारी और गाना बजाना ?'

कला रानी का मुह ताकने लगी ।

बडी रानी ने गूढ मुस्कान के साथ कहा, 'मेरी आज्ञा का पालन करोगी ?'

'सिर के बल ।' कला ने उत्साह के साथ उत्तर दिया ।

'गगा जी की सौगन्ध खाकर कहोगी ?' रानी ने धीमे स्वर मे पूछा ।

कला ने आश्वासन दिया और सौगन्ध खाई ।

कला के मन ने अपने और शपथ के बीच मे एक आड़ पहले ही खडी करली थी—वह सिवाय राजसिह के और किसी के लिये शपथ का निर्वाह करने की अभ्यस्त न थी ।

रानी ने इधर उधर देखकर कहा,'काम बहुत टेढ़ा है, चतुराई के साथ करो तो बहुत पुरस्कार दूगी ।'

'करूगी', कला दृढता के स्वर मे बोली ।

'मै तुमको एक औषध दूंगी । उसको किसी प्रकार, चुपचाप मृग-नयनी को खिला दो । डरो मत, औषध से प्राणहानि नही होगी, उसके खिलाने से मृगनयनी के कोई संतान नही हो सकेगी ।' रानी ने कहा ।

कला बोली, 'यह तो मै कर लूंगी । गूजरी रानी को मालूम नही हो सकेगा ।'

सुमनमोहिनी ने एक सफेद चूर्ण कला को दिया । कला लेकर चली गई ।

निस्सन्तान करने की औषध नही हो सकती यह । बहुत करके विष होगा । मृगनयनी को मार देने से लाभ नही । यदि कही बात उघर गई तो व्यर्थ ही मारी जाऊँगी । मानसिह को क्यो न किसी तरह खिलादूं । यदि विष ही हुआ तो राजसिह का काम बन जायगा और न हुआ तो कोई बात ही नही । परन्तु यदि यह प्राणनाशक विष है ही

नहो तो व्यर्थ को जञ्जाल मे क्यो पड़ूँ ? किले के चित्रो को तैयार कर लिया है, राजसिंह के काम मे आ सकते है। देर-सवेर ग्वालियर का घेरा पड़ने वाला है, अब ग्वालियर मे और अधिक रुकना निरर्थक है। परन्तु यदि वह औषध विप ही हुई तो मानसिंह को समाप्त क्यों न कर दूँ। राजसिंह को वचन देकर आई थी। और यदि वह विप न हुआ तो ? कई वार प्रयत्न किया, सफल न हो पाई। अब की नार यदि किले के चित्रों से काम बन जावे, तो अब इस प्रयोग के लिये और अधिक न ठहरूँ। मानसिंह वैसे भी मारा जावेगा। मैं क्यो यहाँ और अधिक टिकी रहूँ ? निहालसिंह होता तो इन सबकी आपस मे, खटकवा देती। कौन जाने लौटेगा भी या नही। लौटा और घेरे के भीतर मैं भी पड़ गई तो अभी तक का किया-कराया, सब यो ही रह जायगा। कला सोच रही थी।

उसने एकांत मे जाकर सफेद चूर्ण फेक दिया।

[४९]

अन्तर्वेद मे लड़ाइयो पर लडाइया मची रहती थी, चम्बल के पश्चिमी उत्तरी किनारों का भी यही हाल था। जौनपुर की शर्की सल्तनत समात हुई तो छोटे-छोटे जागीरदार और बङ्गाल के सुल्तान दिल्ली युद्ध के लिये आवाहन देने लगे। बोधन पुजारी राई को छोड़ने का मुहूर्त न पा सका। सोचा था थोडी सी शान्ति स्थापित हो जाय तो अयोध्या या काशी पहुँच जाऊँ। इतने मे सिकन्दर लोदी ने चम्बल के उत्तरी किनारो और घाटियों को आ घेरा। सिकन्दर के ग्वालियर की दिशा में बढते ही राई और आस-पास के गाँव उजड गये। अनिच्छा होते हुए भी बोधन ग्वालियर नगर मे आत्म—रक्षा के लिये आ गया। राई के पड़ोस के पहाडो, पठारो और कन्दराओं को उसने अरक्षित समझकर यही निश्चय किया। राजा मानसिंह को जैसे ही मालूम पडा कि बोधन ग्वालियर नगर मे आ गया है: उसको आदर के साथ किले के भीतर

बुला लिया और शान्ति स्थापित होते ही राई में मन्दिर वनवाने के बचन को पूरा करने की बात कही। राई से ग्वालिनर को नहर बनती चली आ रही थी इसलिये बोधन को विश्वास था कि मन्दिर बन जायगा। राजा अपना ही है, वर्ण के मामलों मे उतनी समझ नहीं रखता किसी दिन सुमार्ग पर ले आऊँगा। कोई बात नही, बोधन ने सोचा। किले में उसको एक साफ सुथरा घर रहने को मिल गया। मृगनयनी का जीवन अब कैसा चलता होगा? रानी जैसा। ठीक भी है। और लाखी का? वह भी यही आगई है। यह बुरा हुआ। देखा जायगा। संसार मे न जाने कितने पापी भरे हुये है! किस-किस की चिन्ता की जाय? बोधन ने उपेक्षा की। यही वह विजयजङ्गम भी है जो राजा को नास्तिकता पर चढाता रहता है। बिजय से काफी खटकी तो अबकी बार उसकी अक्ल ठिकाने लगा दूँगा।

बैजू को भी राजा ने किले मे एक घर दे दिया। बैजू का युद्ध के समाचारो से कोई सरोकार न था। उसके लिये युद्ध खटमल और मच्छर के देश के समान था। काटा, खुजलाया और पीछा छुटा लिया। लड़ने वाले जान पर खेल जायेंगे और मानसिह रक्षा के लिये कुछ उठा नही रखेगा इसलिये वह ध्रुवपद की गायकी मे किसी मनोहर परिष्कार की उधेड़-बुन मे लगा हुआ था। यदि मेने किसी मीठी मजुल परिपाटी को चला दिया तो मानो सब पुरखे बैकुण्ठ मे पहुँच गये और मेरे लिये तो सुरपुरी के द्वार खुले ही रहेगे! बैजू इस धुन में था।

रात का समय। बादल दिन मे भी रहे थे अब तो बेभाव उमड आये और कडकडाकर वरसने लगा। घर के एक आले मे दीपक टिम-टिमा रहा था। बैजू एक मोटी दरी पर बार-बार वीणा को उठाकर बजाता और रख देता। एक ओर पखावज रक्खी हुई थी बीच-बीच मे उस पर, गुनगुनाते हुये, किसी ताल को जमाता। कला गोदी मे तम्बूरे को साधे चुप बैठी थी। वह कुछ कहने के लिये उत्सुक थी।

'धा किट किट धा धा किट धा किट धा' वैजू के मुँह और पखावज से एक साथ निकला। फिर वह ठहर कर कुछ सोचने लगा। गुनगुना नही रहा था।

कला बोली, 'अब समय आ गया है, महाराज।'

उसकी तरफ देखे बिना ही वैजू ने कहा, 'अभी नही आया। कसर है।'

'धकिट धकिट धा, धकिट धा किटधा,' उसके मुह से निकला और हाथ से ताल देने लगा। फिर कुछ क्षण चुप रहा। यकायक दात भीचे और मुट्ठियाँ कसीं।

बोला, 'लोग कहते है गाना रोना सभी जानते है। मूर्ख कहीं के! अभागे न तो ठीक ढङ्ग से रो सकते है और न गा सकते है। गाने को तो शङ्कर ने और भी दुरूह बना दिया है।'

'अब समय आ गया है।' कला ने दुहराया।

बैजू ने एक क्षण रीती दृष्टि से उसकी ओर देखा। मुस्कराकर बोला, 'वह आया! वह आया!! अबकी बार पकडकर ही रहूगा।'

कला ने भयभीत दृष्टि से उधर देखा। वहा कही कोई न था। उसने चैन की साँस ली।

बैजू ने जोर के साथ सिर हिलाया और गुनगुनाने लगा। 'अच्छा' कहकर उसने वीणा उठा ली और अलाप करने लगा। कला तम्बूरा छोड़कर उसके स्वर का साथ देने लगी।

'ठहरजा!' बैजू चिल्लाया। कला ने तम्बूरे को एक ओर रख दिया और टकटकी लगाकर उसकी ओर देखने लगी। बैजू वीणा को नीचे रखकर आखें मीचे हुये कुछ गुनगुनाने लगा साथ ही घुटने और हाथ का हलका ताल देने लगा। किसी गीत को राग और ताल मे बिठला रहे है, कला ने सोचा।

एक घड़ी गुनगुनाने और ताल देने के उपरान्त बैजू बिचककर यकायक खड़ा हो गया।

'अहाहा ? ओ हो हो !!' उसके मुह से निकला और वह खिल-खिलाकर हँस पडा।

आज वावलेपन की मात्रा कुछ अधिक है, कला ने निर्धार किया।

'धकिट धकिट थी कट, अहा हा ! हा !! अहा हा !! ह !!! क्या बात है। जय शङ्कर भगवान की, जय नटराज की।' बैजू ने कहा और वीणा पर गाया—'मान खेलै होरी राजा माना खेलै होरी ' उसके बाद उसने पखावज़ ली और गुनगुनाते हुये बजाने लगा। पखावज को रखकर फिर वीणा को हाथ मे लेने ही वाला था कि कला अकुलाहट के साथ बोली, 'गुरूजी महाराज, अब समय आ रहा है।'

उसने हर्षमग्न होकर कहा, 'आ रहा है नही, आ गया है, मूर्ख छोकरी ! ध्रुवपद से होरी की गायकी की रूपरेखा बनाली और ताल भी तैयार हो गया। धमार ताल मे गाई जायगी होरी। गीत के बोल भी बना लिये है। पानी रुक जाय तो राजा को अभी जाकर सुना दूं। पर उस रूपरेखा मे रङ्ग और भर दूं तब सही। हा यही ठीक है। ठीक रहेगा न कला ?'

'हाँ महाराज, बहुत ठीक रहेगा। मैं कुछ और कह रही थी।'

'फिर कभी कह लेना, मुझको अवकाश नही है अभी तो।'

'अभी ही सुनना पडेगा। बहुत महत्व की बात है।'

'ध्रुवपद और होरी से बढकर ! फिर तूने सीखा क्या इतने दिनो में ?'

'महाराज को स्मरण होगा जब चन्देरी से हम लोग चले।'

'हाँ, चन्देरी से चले थे, और अब ग्वालियर मे है। क्या मैं बच्चा हूँ जो इतनी सी बात भी न जानूंगा ?'

'चन्देरी फिर लौटना होगा।'

'काहे के लिये ? चन्देरी के पत्थरो से सिर मारने के लिये ?'

'चन्देरी से चलते समय रावराजा राजसिंह ने कुछ कहा था ?'

'हाँ कहा था कि ग्वालियर के मेले मे सब गवैयो बजैयो को परास्त करना और चन्देरी का नाम रखना, सो हो गया, अब ग्वालियर के नाम को बढाऊंगा।'

'उन्होने कुछ और भी कहा था।'

'क्या कहा था बतलाओ। मैं राव राजसिह की बात को मान्यता देता हू।'

'उन्होने बहुत कुछ कहा था और यह भी कि जब ग्वालियर को कोई घेरने के लिये आवे तब उसके सैन्यबल आदि का सही पता लगाकर तुरन्त चन्देरी लौट पडना और बतलाना। किले के चित्र मैंने बना लिये हैं।'

'होगे चित्र-वित्र, क्या करेगे राव राजसिह यह सब जानकर !'

'ठीक समय पर नरवर पर चढाई कर देगे। अपनी बपौती को ले लेगे। चित्र घेरा डालने वाले के हाथ पहुँच जायेगे।'

'और राजा मानसिह जो ध्रुवपद को इतना अच्छा समझता है और इतना अच्छा गा लेता है चुपचाप बैठा रहेगा !'

'यह अपने देखने की बात नही।'

'अच्छा, दो-चार दिन ठहर जाओ तब तक होरी की रूप रेखा में सलोने सुहावने रङ्ग भरे लेता हूँ। फिर पूरे साज-सिङ्गार के साथ इस होली का राजा मानसिह को सुनाऊगा। उसके बाद राजा से पूछूंगा कि तुम चन्देरी जाओ या यही बनी रहकर कुछ और सीखो-सिखलाओ।'

कला ने अपने को कोसा-किस घड़ी इस पागल के साथ चन्देरी से चली थी ! परन्तु इतना पागलपन इनको सदा नही रहा है; जब दिन मे कुछ अधिक सचेत दिखलाई पडेगे, तब सावधान करूँगी।

[५०]

निहालसिह और युवक विक्रमादित्य सिकन्दर की हरावल से जा भिडे। सिकन्दर की हरावल राई के पीछे की विस्तृत दूरी तक फैली हुई पठारो और जङ्गलो मे नही घुस पाई थी।

उन दोनों के दलो ने हाथियो की सहायता से हरावल को मार भगाया। वे और आगे बढते परन्तु सिकन्दर ने सन्धि का सन्देसा भेजा। युद्ध रुक गया।

पानी बरस–बरस जाता था। भूमि ऊँची हरियाली और गहरे कीचड से भर गई थी। सिकन्दर के लिये एक–एक पग बढ़ना दूभर हो रहा था। उसी समय दिल्ली से समाचार आया कि कुछ सरदार पंजाब मे गडबद मचा रहे है और पूर्व मे जोनपुर के निकट उसका भाई जलाल सिर उठा रहा है। ग्वालियर की अपेक्षा दिल्ली को अधिक महत्वपूर्ण समझकर सिकन्दर लौट पड़ा। सन्धि की चर्चा के लिये उसने उन दोनो तोमर नायको को दिल्ली बुलाया। निहालसिंह ने विक्रमादित्य को ग्वालियर लौटा दिया। उसकी वाञ्छा थी कि युद्ध और सन्धि की विजय का श्रेय अकेले उसको मिले। इसलिये ग्वालियर को समाचार भेजकर वह एक छोटे दल के साथ दिल्ली चला गया।

सिकन्दर को अपने पिता बहलोल की बात याद थी जब। बहलोल लाहौर के प्रदेश का सूबेदार था तब दिल्ली का सिंहासन सूना हुआ। बहलोल महत्वाकाँक्षाओ को लेकर दिल्ली की ओर चल पडा। दिल्ली के निकट उसको एक फकीर मिला।

फकीर ने बहलोल से कहा, 'दिल्ली की बादशाहत चाहते हो ?'

बहलोल ने सोचा अन्धा क्या चाहे दो आखे।

फकीर ने बतलाया, 'मै बेच सकता हूँ दिल्ली की बादशाहत को। खरीदोगे मुझसे ? जो कोई भी खरीदना चाहे, बेच दूंगा। जो कोई खरीदेगा वही तख्त पर जा बैठेगा।'

बहलोल ने बादशाहत के दाम पूछे।

फकीर बोला, 'दो हजार टङ्के। बस। खरीद लो और मौज करो। बहलोल ने फकीर को दो हजार टङ्के दिये। इधर उधर के बागी सरदारो से लड़ाई लड़ी और दिल्ली के तख्त पर जा बैठा।

सिकन्दर ने सोचा दिल्ली मे फकीरो की कमी नही है, अगर किसी मनचले सरदार ने किसी लालची फकीर से बादशाहत कुछ ज्यादा दामों पर खरीद ली तो सिपाही उसी से जा चिपकेंगे और मैं कही का न रहूँगा। इसलिये वह अविलम्ब दिल्ली पहुँचा और बागी सरदारो के मूलोच्छेदन मे लग गया। जलाल दूर था इसलिये उसकी अधिक चिंता न थी।

बागी सरदारो को उसने बहुत शीघ्र नष्ट कर दिया। इसके बाद ग्वालियर के दूत निहालसिंह से पूछा, 'तुमको अपने राजा की तरफ से सब सवालो के तै करने का अख्तयार है?'

'जी हाँ है,' उसने उत्तर दिया।

'तुम्हारे राजा पर हमारा अस्सी लाख टङ्का निकलता है।'

'कैसे?'

'अस्सी लाख टङ्का तो उसी वक्त का निकलता है जब पहले बादशाह ने ग्वालियर पर चढाई की। उसके बाद मैने चढाई की। चार साल पीछे रकम दुगनी हो गई। फिर अबकी बार वसूली के लिये मुझको खुद आना पडा। इसका खर्च अलग है।'

'पहली बार हमारे राजा के समय मे जब बादशाह बहलोल ने चढ़ाई की तब वह हार कर लौटे। दूसरी बार जब आपने हमला किया तब आप भी हारकर वापिस आये। अबकी बार कौन जीता कौन हारा इसका निर्णय होने को अवश्य बाकी है।'

'बेअदबी मत करो सरदार। हमारे कागजों मे सब लिखा-पढ़ा रक्खा है। याद रक्खो बादशाह अल्तमश ने ग्वालियर मे क्या किया था?'

'मुझको याद नही है।'

'दो सौ साल के करीब हो गये, मगर हमारी तवारीख मे अभी वाकया ताजा है अल्तमश ने ग्वालियर को फतेह किया। सिपाही सरदार राजा—सब मारे गये और राजपूतनियो ने जौहर किया। तुम्हारे किले

के एक तालाब का नाम जौहर-तालाव इसीलिये है। अब न भूलना।'

'कैसे भूल सकते है ? मगर अबकी बार—'

'हाँ अबकी बार ग्वालियर के किले के सारे तालाब जौहर-तालाब कहलायेगे।'

'अबकी बार सुल्तान जी, दिल्ली के तालाब और कुंओ को जौहर का नाम मिलेगा।'

राजदूत भूल गया कि मानसिंह ने क्या कहने और किस तरह बर्तने को कहा था। सिकन्दर लोदी का खून उबल पडा।

'जानता है सरदार किससे बात कर रहा है, किसके हुजूर मे खड़ा है ?'

'आपको भी जानना चाहिये कि आप किसी ऐरे—गैरे से बात नही कर रहे है। तोमर राजपूत से बात कर रहे है जिसके पुरखो ने इसी दिल्ली में लोहे की कील गाड़ी थी और जो फिर उसके भी बड़ी कील गाड़ने की दम रखता है। जिसके राजा ने कभी बैरी के सामने सिर नही झुकाया उसी का सामन्त सामने खड़ा है। दिल्ली को आपके पुरखे ने दो हजार टको में खरीद लिया होगा, क्योकि उसके दुर्दिन है, परन्तु ग्वालियर को समूचे विन्ध्याचल की सोने की तौल के बदले मे नही मोल ले सकोगे।

'चुप बदजबान।'

'सन्धि की चर्चा के लिये आप ने बुलाया था, मै अपने आप नहीं आया।'

'ले जाओ इसको। भेज दो ग्वालियर खबर कि मैं तोमरो का होश ठीक करने आता हूं। कहला दो कि एक बार दिल्ली के किसी भी बादशाह ने, किसी भी गुजरे जमाने मे जिस किसी जमीन को फतह किया वह उसकी और उसके जांनशीनो की हमेशा के लिये हो गई।'

दरवार के कुछ रक्षक निहालसिंह को पकड़कर ले गये। बादशाह ने नही कहा था तो भी वे जानते थे कि अब इसका क्या करना है।

राजपूत ने अपनी गर्दन उस समय भी नही नवाई जब धड से सिर अलग हो गया। तब भी उस तोमर का धड एक क्षण के लिये सीधा खडा रहा। वधिको को आश्चर्य था इस तरह तो किसी को मरते नही देखा। लोग मारे जाने के पहले घिघियाते—पतियाते और रोते—चिल्लाते देखे गये है पर यह ! यह तो मौत को दुलहिन समझ रहा है !!

वादशाह को जब निहालसिंह के निधन की बात मालूम हुई, तब उसने राजा मानसिंह के पास खिलत और कुछ घोडे भेज दिये, मानो पूरा प्रायश्चित हो गया !

(५१)

बैजू ने गायन की अपनी परिपाटी को दो-तीन दिन के भीतर साज संवार लिया। सिकन्दर को दिल्ली की दिशा में हटता हुआ सुनकर मानसिंह की व्यस्तता कुछ कम हो गई। परन्तु विश्वास नही था कि वह फिर न लौट पड़ेगा। कई दिन उपरान्त बैजू ने उसको अपनी नई परिपाटी के सुनाने और उस पर तर्क वितर्क करने का अवसर ढूँढ निकाला। उसी कक्ष मे गायन-वादन का आयोजन हुआ। सभा भवन मे और सब थे, केवल निहालसिंह वहां नही था। ऊपर के खण्ड मे झिझरियो के सामने रानिया यथास्थान आ बैठी। अपने स्थान पर मृगनयनी ओर लाखी भी। बैजू ने बडी लगन के साथ अपनी नई परिपाटी को व्यक्त करना शुरू किया। विजय ने वीणा रख दी।

बैजू ने कहा, 'बजाइये ! बजाइये।'

विजय बोला, 'बजाऊँगा नही, सुनूंगा। उठान बिलक्षण है। पहले कभी नहीं सुना।'

बैजू मानो बिना किसी प्रयास के जीत गया। स्वरो को मधुरता मे घोल घोलकर गाने लगा। गीत मे बोल थोड़े ही से थे—

मान होरी खेले री राजा मान होरी खेले री
प्रेम प्रीति की गाठ परी है जो मन भायो सो खेले री—
राजा मन होरी—

गीत की पूरी तानो को लगभग दो घडियां लगी। गीत ऊँचे स्वरो हुआ।

मानसिंह ने सुझाव दिया, 'बीच-बीच मे नीचे के स्वरों पर भी थोडी देर ठहर जाय तो जान पडेगा मानो रङ्ग की पिचकारी को फिर से भरने के लिये कोई ठहर गया हो।'

बैजू ने तुरन्त मान लिया और मानसिंह के सुझाव के अनुसार गा दिया।

समाप्ति पर बैजू बोला, 'इस परिपाटी को होरी की गायकी के नाम से विख्यात किया जायगा।'

'किस किस राग मे गाई जावेगी ?' विजय ने प्रश्न किया।

'किसी भी मधुर आकर्षक राग मे।' बैजू ने उत्तर दिया। और उसने उन्ही बोलो को कई रागो मे गाकर सुना दिया।

मानसिंह ने उत्साह के साथ कहा 'आज से आचार्य बैजनाथ को नायक बैजनाथ का पद दिया गया।

'नायक!' बोधन ने आश्चर्य प्रकट किया,—'नायक इस युग मे कोई भी नही हो सकता। नायक तो वह कहलाता है जो किसी नये राग का सर्जन करे।'

विजय ने विवाद उठाया, 'आपकी जान मे तो इस युग मे नया कुछ भी नही हो सकता। आपको क्या सङ्गीत पर भी अधिकार है जो बीच मे ही बोल उठे ?'

बोधन ने कहा, 'सङ्गीत एक शास्त्र है। गाना न आनने वाला भी सर्वमान्य सिद्धान्त की बात तो कह ही सकता है। प्राचीन ऋषियो ने जो कुछ किया उसको अब न तो कोई बदल सकता है और न उसमे किसी नई बात को उत्पन्न कर सकता है।'

'करके दिखला तो दी है।' बैजू ने टोका।

बोधन ने हठ किया, 'ऐसे नही माना जा सकता। भारत भर के संगीताचार्य इकट्ठे हों, उनके सामने यह परिपाटी प्रस्तुत की जाय और वे सब कह दे कि आचार्य बैजनाथ, पुराने ऋषियों के आगे निकल गये हैं तब माना जायगा।'

मानसिह को अखर गया। बोला तुम तो पुजारी संगीत का एक अक्षर भी नही जानते।'

विजय ने व्यंग किया, 'समय कुसमय कुतर्क तो कर सकते है।'

बोधन ने दृढता के साथ कहा, 'आपसे किसी दिन मुझको निबटना है। धर्म और शास्त्रों के सम्बन्ध मे आपने जितना भ्रम और असत्य फैला रखा है इतना कदाचित ही किसी ने फैलाया हो।'

'अभी विवाद बन्द रक्खो किसी दिन अवसर और समय दूँगा। कर लेना चाहे जितना व्यायाम तर्क और विवाद का। गायक और आचार्य बैजू नायक बैजू कहलायेगे।'

'शास्त्रो के किसी भी विषय पर राजा की आज्ञामात्र शिरोधार्य नही हो सकती, बोधन ने मन मे कहा, और धीरे से बोला, मै तो नहीं कहूँगा।'

राजा ने सुन लिया। क्रोध के मारे काँप गया। परिस्थिति को तीखे कडवेपन से बचाने के लिये उसने विजय से कहा 'आप वीणा पर निकालने का प्रयत्न करिये आचार्य।'

विजय प्रयत्न करने लगा। मानसिह क्रोध के शमन के प्रयास मे लग गया,

ऊपर के खण्ड मे अन्य रानियाँ सदा की भाँति ऊँघ रही थी। मृगनयनी और लाखी सजग थी।

मृगनयनी ने ज़रा सशक्त स्वर मे कहा, 'मै समझ गई गायन की इस रीति को। महाराज से कहूंगी कि इसको थोडा सा सक्षिप्त और करवा दे। दीर्घ काल तक गाते रहने में समय बहुत लग जाता है, रस का गाढापन चला जाता है और राग क्षीण हो जाता है।'

ऊँघती हुई रानियो की ओर आँख घुमाती हुई लाखी बोली, 'और सुनने वाले ऊँघकर सोने लगते है ।'

लाखी ने यह बात इतने ऊचे स्वर में कही थी कि बड़ी रानी के कान मे भनक पड गई । तन्द्रा टूट गई और वह जाग पडी । उसने उन दोनो को कुछ अपने ऊपर-सा हसते देख लिया । उतने ही परिहास मे बड़ी रानी का रोम-रोम जल गया । वह अपने निकट ऊघती हुई रानियो को जगाने का प्रयास करने लगी । उनको जाग पडने मे देर नही लगी ।

'सुनने को आई थी कि सोने को ? देखती नही यहाँ एक से एक बढकर जानकार बैठे हैं ?' बड़ी रानी ने व्यंग किया ।

सुनने वाली ने अंगड़ाई ली और हँस दी ।

बड़ी रानी ने एक तीर और छोडा, 'ऐसी सोया करोगी तो गहने बरानर खोयेगे । अबकी बार मिलेगे भी नही ।'

यह तीर मृगनयनी के कलेजे मे विध गया ।

मै क्या गहनो की चोर हूँ ? क्या मैने चोरी की थी ? कुतूहलवश उस निकृष्ट गहने को हाथ मे उठाया फिर वह हाथ मे ही रह गया । जब निरख मे आया मन में ग्लानि हुई और उसको आले मे फेंक दिया । फिर उसके विषय मे बिलकुल भूल गई ! क्या यह चोरी हुई ? सुमन-मोहनी ने ही चोरी का आरोप किया है । क्या मैं चोर हूँ ? हे भगवान! जब भूखो मरने की भी बारी कभी-कभी आई तब भी किसी की चीज पर आख तक नही पसारी तो अब क्या उस तुच्छ गहने की चोरी करती ? इसने कभी खेती किसानी की होती तो जानती । कितनी नीच प्रकृति की है यह ? महाराज ने ठीक कहा था इस गहने को लौटाना नही चाहिये था, किसी कुये मे फेक देना चाहिये था । क्यो ! तब तो मै अपनी ही आखो मे चोर बन जाती । छि ! छि !! मैने न तब खोटा किया था और न गहने को लौटाकर बुरा किया । पर अब और अधिक नही सुनूंगी ।

उसी समय सभा-भवन मे गायन बन्द हो गया ।

किसी ने सभा-भवन मे समाचार दिया था, 'निहालसिह को मार डाया गया ! सिकन्दर लोदी ने खिलत और घोड़े भेजे हैं, परन्तु वह ग्वालियर पर फिर चढाई करने वाला है ।'

सभा—भवन मे सन्नाटा छा गया ।

मानसिह भभक उठा : भर्राये स्वर मे बोला, 'दूत का वध कर दिया गया । सौगात जले पर नमक छिडकने के सामान है । इसका बदला लिया जायगा ।'

ऊपर के खण्ड मे से मृगनयनी ने धीरे से कहा, 'चलो लाखा रानी । आगे यहाँ कभी नही आऊँगी ।'

वे दोनो चली गई । सुमनमोहिनी सन्तुष्ट थी ।

बैजू ने यकायक प्रश्न किया, 'क्या ग्वालियर का घेरा पडेगा ?'

'नही पड पावेगा' मानसिह ने दृढता के साथ उत्तर दिया, 'हम लोग सिकन्दर से चम्बल की घाटियो मे लड़ेगे ।'

बैजू बोला, 'घेरा पड भी सकता है । ऐसी अवस्था मे कला यहाँ नही रहेगी । चन्देरी जाना चाहती है ।'

कला सकपका गई ।

मानसिह ने बिना किसी चाव से पूछा, 'क्यों ?

बैजू ने भोलेपन के साथ बतलाया, 'यह चन्देरी जाकर रावराजसिह से कह देगी कि ग्वालियर घिर गया है, आप चाहो तो नरवर पर चढाई कर दो और अपनी वापौती को वापिस ले लो । बस ।'

'क्या ?'

'क्यो ? इसमे अचरज की क्या बात है ?'

'ओह ! यह राव राजसिह की कौन है ?'

'कोई नही पडोस में रहती थी ।'

'अच्छा ! ओह !!'

कला पसीने-पसीने हो गई । मानसिह उसको आंख गडाकर देखने लगा ।

कला के कांपते हुये कण्ठ से निकला, 'झूठ बिलकुल झूठ। नायक जी पागल हैं।

मानसिंह की भभक हलकी हो गई। नीचा सिर करके कुछ सोचने लगा।

बैजू बोला, 'किसने कहा मुझसे पागल? इसने कहा! इस छोकरी ने!! राव राजसिंह का इतना घमण्ड है इसको!!!'

मानसिंह ने सिर उठाकर निष्कम्प स्वर मे कला से धीरे धीरे कहा, 'तुम अपने घर जाओ। कल ही तुमको रक्षको के साथ आराम की सवारी से भेज दिया जायगा। तुमको इतना द्रव्य दे दूंगा कि जीवन पर्यन्त बेखटके रहो। राव राजसिंह बड़ा सूरवीर है परन्तु सूरवीरी का उपयोग अनुचित करता है। कह देना।'

कला सिर झुकाये रही।

बैजू बोला—जैसे किसी सपने से जाग पडा हो—'यह मुझसे पागल कहती है! इतने दिनो की शिक्षा मे इसने यह सीखा!! जा सब भूल जायगी। पागल तू और तेरी सात पीढी!'

सभा विसर्जित हो गई।

ऊपर के खण्ड मे बडी रानी ने अपनी सगनियो से जाते-जाते कहा, 'अरी यह नीचे-नीचे देखने वाली वडी विकट निकली। समझ गई उस राजसिंह की यह कौन है?'

'कौन है सो स्पष्ट ही है। बडी षडयन्त्रिन अपने गुरू को पागल कहती थी! भरी सभा मे!!

'कितनी बकवादिन है राम!!!'

'असल मे पुरुषो के सामने इतना खुलकर गाने-नाचने वाली स्त्रियाँ फूहड हो ही जाती है। उन्ही को देखलो, उनको।'

'हूँ हूं।'

'कैसी विचक के गई यहाँ से! कितनी बडबड़ाती हुई!!'

वडी रानी ने सोचा, कला यहाँ से टली सो अच्छा ही हुआ।

दूसरे दिन कला को मानसिंह ने सम्मानपूर्मक चन्देरी भेज दिया। वह किले के चित्र अपने साथ नही ले जा पाई।

(५२)

निपट अंधेरी रात। संध्या के उपरान्त ग्वालियर का जाजार बन्द हो गया। सड़कों पर चहल-पहल शान्त हो गई। घरो के भीतर कलरव था, पर बाहर सुनसान सा। दो घण्टे रात गये ही अंधेरे में ऐसा लगता था जैसे आधी रात होने वाली हो। नगर के छोर पर एक झोपड़ी मे दिया टिमटिमा रहा था जिसका तेल समाप्त होने को था, फिर बत्ती घड़ी आधी घडी डिगमिगाते–भिगमिगाते सुन्न पड़ जाती। झोपड़ी के भीनर एक कोने मे आग दहक रही थी। ठण्ड के मारे सिकुडी हुई, फटी मैली-कुचैली कथरी मे ढ़ेर बनी हुई एक स्त्री आग के पास पडी-पड़ी कराह रही थी। कई बच्चे, उसके निकट बैठे पडे रो रहे थे और उतरती अवस्था का एक पुरुप दिये के टिसटिमाते हुये प्रकाश में सू१ मे रखे हुये अनाज को बीन रहा था।

एक लम्बा-तगड़ा मनुष्य झोपडी की टटिया की बगल मे आकर खड़ा हो गया। दाड़ी उसकी इतनी घनी और लम्बी थी कि सीधी नाक और बडी आंखे ही दिखलाई पडती थीं। माथा बडे साफे से इतना ढका हुआ था कि भौहों के कुछ ऊपर का भाग मात्र दिखता था। कपड़े मोटे कई जगह चिथड़े लगे हुये। हाथ मे बहुत मोटे पोले बॉस का डण्डा लिये था। जूते फटे हुये नहिने था।

भीतर अनाज का कूडा बीनने वाले पुरुष ने कराहती हुई स्त्री से कहा, 'अनाज तो बीन लिया, पर चक्की पर हाथ नही चलेगा। इतना थक गया हू कि कहते नही बनता। तुम थोड़ी हिम्मत बाँध कर पीस लो तो रोटी मैं बना दूंगा।'

स्त्री बोली, 'मुझे तो आज ऐसी ताप चढ़ी है कि उठकर बैठ भी नही सकती। पीसना मेरे बस का नही है।'

'भूखा हूँ और बच्चे बिलबिला रहे हैं। अब क्या होगा ?'

भगवान से पूछो मै क्या बतलाऊँ।'

'तो पीस तो मै सकता नही। ऐसे ही लेट जाऊँगा। सवेरे मजूरी किसके बिरते करूँगा ?'

'न खाओ, एक जून। साधू-सन्यासी कैसे उपास-त्रास करते-रहते है।'

'साधू सन्यासियों को क्या कुछ मजूरी-किसानी करनी पडती है ? उन्होने अपना यह लोक बना लिया, फिर लग गये दूसरे लोक के बनाने की चिन्ता मे। यहाँ तो इसी लोक मे नित्त-नई कसर लग जाती है। उठ बैठ। मेरा नही तो इन बच्चो का मुह देख।'

'मुझको दे दो बिस और देखते रहो बच्चो का मुंह।'

'अरी डायन, उठती है या नही ? अभागिन।'

'मार डालो मुझको। ताप घुला घुलाकर मारेगी, तुम वैसे ही गला घोट दो। दु.खो से पार पा जाऊँगी।'

बच्चे और अधिक रो पड़े। टटिया के पास से किसी के खांसने का शब्द भीतर आया।

पुरुप चिल्लाया, 'कौन है रे ?'

बाहर से उत्तर मिला, 'भैया नेक टटिया खोल दो, परदेशी हूँ। ठण्ड लग रही है. सिकुड गया हू। गैल भूल गया; थोड़ा सा तापकर और गैल पूंछकर चला जाऊँगा।'

'राजा के सदावर्त पर क्यो नही चले जाते ? वही अलाव भी जल रहा होगा तापने के लिये ?'

'भैया मुझे मालूम नही है। आधी घडी तापकर और तुमसे बात करके चला जाऊँगा। मजूर मै भी हूं।'

'राम ! अपनी आफत से पीछा नही छूटता तुम जाने कहाँ से आ गये।'

'भैया, भैया।'

भीतर वाले ने काँपते-कूँखते उठकर टटिया खोल दी। बाहर वाला भीतर आ गया। उसके लम्बे-तड़ंगे शरीर और भारी भरकम साफे को देखकर भीतर वाला डर गया। लम्बे-तड़गे ने टटिया के पास जूते खोल दिये और आग के पास आ बैठा। उमने झोपडी मे नजर पसारी। एक कोने मे चकिया, इधर-उधर मिट्टी और काठ के बर्तन, पीतल की एक थाली, एक लोटा और कुछ नही।

मजूर गिड़गिड़ा कर बोला, 'दाऊ मेरी गाठ मे कुछ नही है। गरीब हूं। किसी बड़े घर को ताक लो।'

'डरो मत। चोर उचक्का नही हूं।'

'कौन हो? कहाँ से आये हो?'

'राई-नागदा गाँव से आया हू।'

'नागदा तो उजड गया है। राई मे क्या करते हो?

'मजूरी-किसानी। गूजर हूं।

'गूजर ठाकुर तो हमारी रानी भी है। उन्ही के पास जा रहे हो क्या?'

'नौकरी ढूंढ़ने आया हू। रास्ता भूल गया हूं। किले मे कैसे जाऊँ?'

'बतलाये देता हू चलो बाहर, वही से दिखलाये देता हूं।'

'कुछ खाने को है?'

'अभी तो कुछ नही है। हमारे लिये ही नही है। इससे कहा कि पीस दे सो यह बहुत बीमार है। मै पीस नही पाऊँगा, क्योकि वहुत भूखा हू—'

कराहते-कराहते स्त्री ने कहा, 'तवे पर भून लो अनाज को। सब के लिये थोडा-थोड़ा हो जायगा।'

आगन्तुक वोला, 'राजा के सदावर्त से क्यो नही ले आते कुछ आटा-बाटा?'

'अरे हट्ट !' स्त्री के कण्ठ से निकला।

मजूर ने तिरस्कार के स्वर मे कहा, 'वाह ! हम क्या भिखमंगे है ! सदावर्त पर तो कोढी-अपाहज, साधू बैरागी जाते है। हम तो मजूर है'

आगन्तुक ने दिये की जाती हुई रोशनी की तरफ देखकर प्रस्ताव किया, 'अच्छा तो हम पीस देते है तुम्हारा अनाज। इसके बदले मे तुम हमको गैल बतला देना बस ठीक है न !'

उसने स्वीकार किया बोला, थोड़ा सा बना खा भी लेना। सदावर्त या तो बन्द हो गया होगा, या बन्द होने वाला होगा। खा–पीकर यही एक कोने मे लेट जाना।'

'अच्छा'—कहकर तडंगे ने चक्की पकड़ी और बिने अनाज को पीसने लगा ! स्त्री कुतूहल के साथ देखने लगी, ज्वर की कराह कम हो गई। स्त्री को प्रतीत हो गया कि अगान्तुक को चक्की पीसने का बिलकुल अभ्यास नही है क्योकि वह बार-बार इस हाथ से उस हाथ को चक्की की ड़ाँड़ी से बदल रहा था परन्तु चल रहा था हाथ उसका तेज। स्त्री धीरे से उठ बैठी।

बोली, 'मैं ही पीसे देती हूं।' अगान्तुक ने सिर हिलाया।

चक्की पीसने मे आगन्तुक का भारी-भरकम मुड़ासा बहुत बाधा पहुँचा रहा था। उसने झटके के साथ मुडासे को सिर पर से हटाया और एक ओर रखकर जैसे ही तेजी के साथ चक्की को चलाया कि लम्बी दाढी एक ओर से खिसक कर ठोड़ी के नीचे लटक आई। जैसे ही उसने दाढी के इस छोर को संभालने का प्रयत्न किया कि दूसरी ओर का छोर लटक कर हाथ मे आ गया।

मजदूर को पहिचानने मे देर नही लगी, अनेक बार उस चेहरे को देखा था, उछलकर खड़ा हो गया।

चिल्ला कर बोला, 'अपने महाराज ! अपने महाराज !!'

स्त्री की कूलकराह बिलकुल बन्द हो गई। कुछ बच्चो का रोना रुक गया, कुछ सिसकते रहे।

मानसिंह एक हाथ मे दाढी लिये हंसते हुये बोला, 'यह दाढी बड़ी अभागिन निकली। काम पूरा नही करने दिया।'

मजदूर पैरों पर गिरने को हुआ मानसिंह ने दृढता के साथ वर्जित किया।

मजदूर ने हाथ जोड़े हुये कहा, 'महाराज मुझको क्षमा मिले। आपने यह क्या किया ?'

'कुछ भी तो नही कर पाया। धिक्कार है मुझको जो मे तो भरे पेट सो जाऊँ और तुम भूखो–रोगो मरो ! मैं महलो मे रहूँ और तुम इस झोपडी मे भूखे ठण्डो मरो !!'

'हमारा भाग्य है, महाराज।'

'बिलकुल भ्रम की बात। हमारे भाग्य के आधार तुम्ही सब जन हो। तुम्हारा भाग्य बुरा रहा तो हमारा तो पहले ही खोटा हो चुका।'

स्त्री ने फटे वस्त्र का लम्बा घूंघट डाल लिया और पीठ देकर चक्की के पास आ बैठी।

'मैं पीस देता हूं बाई।,' मानसिंह ने अनुरोध किया।

स्त्री ने हाथ जोड़े और जुडे हुये हाथो निषेध का संकेत किया। दिया बुझने को आ रहा था।

मानसिंह ने कहा; 'मैं अभी तेल भिजवाता हूँ और ज्वर की औषधि भी। मजदूरो के लिये अच्छे मकान बनवाऊँगा, औषधालय खोलूँगा और देखूँगा, कोई भी मजूर भूखा न रहे।' स्त्री की ओर देखकर बोला, 'मैं आटा भिजवाये देता हू। बीमारी से पीसोगी बाई, तो ढेर हो जाओगी।'

धीरे से स्त्री ने प्रतिवाद किया, 'अब ज्वर नही रहा।'

पुरुष ने समर्थन किया, मेरी सारी थकावट चली गई। मै अभी पीसे डालता हूँ। उठ री लेट जा। महाराज की आज्ञा मान।'

स्त्री नहीं उठी। मानसिंह जाने को हुआ।

पुरुष ने अनुरोध किया 'मैं मार्ग दिखला दूँ महाराज।'

मानसिह हँस पडा। बोला, 'किले से आया हूँ राई से नही आया हूँ। अपने ग्वालियर को ही न पहिचानता तो फिर किसको पहिचानूँगा ?'

मजदूर हिल गया था। गद्‌गद् स्वर में बोला, 'सुना था कि महाराज ब्राह्मणों, पण्डितो और सेठो के है, आज जाना कि मजूरो-किसानो के भी है।'

मानसिह चला गया। एक घड़ी पीछे ही झोपड़ी के लिये दवा तेल आटा इत्यादि आ गये।

मानसिह ने दूसरे ही दिन ग्वालियर के दरिद्र मजदूर-किसान के लिये रहने योग्य घरो को बनाने की राज्य की ओर से व्यवस्था की। जगह-जगह औषधालय खुलवाने का प्रबन्ध किया।

[५३]

'एक बडा काम अभी करने को पड़ा है।' मृगनयनी ने भोलेपन के साथ मानसिह को स्मरण दिलाया।'

'किले की प्राचीन, मोती सागर झील, तालाब, कुयें इत्यादि सब ठीक हो गये है।' मानसिह ने आश्वासन देते हुये कहा।

मृगनयनी ने प्रश्न-सूचक दृष्टि की।

मानसिह बोला, 'राई की नहर आधे से ऊपर बन चुकी है। घुमाव-फिराव के साथ लाई जा रही है। नालो के साचो के ऊपर ढाँचे को बना बनाकर लाने के कारण ही विलम्ब हो रहा है। नहर को ढँककर लाना इसलिये आवश्यक है कि कोई उसको काट-कूट न सके—सो तुम जानती ही हो।'

मृगनयनी ने नीचे-नीचे मुस्कराकर फिर उसकी ओर प्रश्न-सूचक दृष्टि की।

उसके कन्धे पकडकर मानसिह ने पूछा 'कौन-सा है वह बड़ा काम तुम्ही बतलाओ ?'

लाखी का ब्याह। ईश्वर के सामने उसका ब्याह अटल के साथ हो गया है परन्तु अभी समाज के सामने नही हुआ है।' उसने बतलाया।

मानसिंह ने उत्साह के साथ कहा. 'हो जायगा।'

'कब?'

'जब कहो तब।'

'जैसे युद्धो के बीच-बीच दरिद्रों के लिये निवास गृह बनवाये जा रहे हैं, औषधालय खोले जा रहे है, वैसे ही एक काम यह सही। स्त्री तब तक अपने को दरिद्र समझती है जब तक उसके सम्बन्ध मे समाज मान्यता न दे। इसी अठवारे मे कोई मुहूर्त निकलवा लिया जावे।'

'अभी लो मुहूर्त शोधने वालो की अपने यहाँ कोई कमी नही है।'

मानसिंह ने विजयजङ्गम से मुहूर्त शोधन करवाया।

मृगनयनी ने बतलाया कि उसके कुल और गाँव का आचार्य पुरोहित बोधन है इसलिये ब्याह को वही पढ़े और भाँवर पढ़वावे!

राजा ने अपनी शक्ति की सीमा को ध्यान दिये बिना ही हामी भर दी। बोधन को बुलवाया। उन आठ रानियो ने जब सुना, तब उनके विनोद का ठिकाना न रहा।

'इतने दिनो क्या लाखारानी कुंआरी ही बनी रही?'

'गडे मुर्दे उखाडना इसी को कहते है।

'महाराज को क्या अब और कोई काम नही रहा?'

'मृगनयनी जो कुछ न करवाये सो थोडा है।

बोधन ने आते ही राजा के प्रस्ताव पर मौन साध लिया। राजा को अब भी अपनी समर्थता की सीमा नही दिखलाई दी।

दूसरी ओर देखते हुये बोला, 'तुम्हारे मन्दिर का जीर्णोद्धार इसी अठवारे मे करता हूं।'

'आपकी कृपा हो। धर्म ही है महाराज का।'

'आपके रहने के लिये भी अच्छा सा गृह बनवा दूंगा।'

'मै तो अयोध्या इत्यदि की तीर्थ यात्रा के लिये अटका हूँ। बहुत दिनो थे सकल्प है। न मालूम कब लौटूं, लौट भी पाऊं या नही। मेरे लिये महाराज कष्ट न उठाये।'

'अभी नही जाने दूँगा। इस धर्म–कार्य को पहले कर डालो।'

'महाराज क्षमा करे, यह धर्म कार्य नही है। पहले ही निवेदन कर चुका हूँ।'

'तुम अटलसिह के आचार्य पुरोहित हो। तुम्हे। करना चाहिये। अच्छी दक्षिणा मिलेगी।'

'महाराज एक दरिद्र परन्तु निर्लोभ ब्राह्मण से बात कर रहे है। धर्म बेचा नही जा सकता।'

'क्या तुम यह नही सोचते कि कितने हिन्दू तुम लोगो के इस कट्टरपन के कारण धर्म और समाज से जो दूर पड़े है?'

'शरीर मै फोड़ा या कोढ़ होने से फिर वह अंग काम का नही रहता।'

'तुमको कभी फोड़ा या कोढ हुआ?'

'कभी नही।'

'होगा तो क्या करोगे?'

'अग को काटकर फेक दूँगा।'

'विवेक से काम लो शास्त्री।'

'महाराज से मै क्या निवेदन करूँ! इतना तो भी कहना पड़ेगा कि क्षत्रिय ब्राह्मण को उपदेश देने के लिये नही बनाये गये है, धर्म और गौ ब्राह्मण की रक्षा के लिये बनाये गये है।'

'बनाये गये है और फिर बनाये जा सकेगे। जनक, महावीर, गौतम बुद्ध कौन थे। रामकृष्ण, अर्जुन इत्यादि कौन थे! परन्तु शास्त्री, मैं इस विवाद को अनुचित समझता हू। इस विवाद से परस्पर कलह फैलेगी। मै आर्यावर्त को अपने पुरखो की भाँति प्रबल बनाना चाहता हूं। मेरी सहायता करो।'

'महाराज, आर्यावर्त वर्णाश्रम धर्म को स्थिर रखने से ही बच सकता है। अन्यथा नही !'

'शास्त्री, सोचो, इस प्रकार का कट्टर वर्णाश्रम हिन्दुओ की कितनी रक्षा कर सका है। रक्षा के लिये ढाल और तलवार दोनो अनिवार्य रूप से आवश्यक है। जातपाँत ढाल का काम तो कर सकी है और कर रही है, परन्तु तलवार का काम न तो हाल के युग मे उसने कर पाया है और न कभी कर पावेगी।

'महाराज के श्री मुख से यह वाणी शोभा नही देती। इस प्रकार की व्यवस्था देना पण्डितो का काम है।'

'मैं यह नही कहता कि वर्णाश्रम को नष्ट कर दिया जाय परन्तु उसमे सुधार की आवश्यकता अवश्य है। इसको तो मानोगे न ?'

'मैं नही मानता। पण्डितो से पूछिये'

'विजयजङ्गम भी पण्डित है उससे शास्त्रार्थ करलो।'

'इसी समय तैयार हूँ और अनन्त काल तक तैयार रहूँगा। विजय जिस शास्त्र या पुराण को बांच-बांच कर अपमे सिद्धातो की दुहाई देता है, वह प्राचीन नही है। लगभग तीन सौ वर्ष हुये है, तब बना था। सो वह भी काशी या मथुरा मे नही बना बल्कि द्रविड देश मे।'

'और उसी द्रविड़ देश ने हम सब को भगवान शङ्कराचार्य और भगवान रामनुजाचार्य इत्यादि महात्मा दिये। तभी तो कहता हूं तुम इतने पढ़े-लिखे होकर भी कभी-कभी विवेक शून्य हो जाते हो !'

बोधन क्षोभ के मारे कांपने लगा। चुप खड़ा रहा।

'क्या कहते हो ?' मानसिह ने ठण्डक के साथ पूछा।

कम्पित स्वर मे बोधन ने उत्तर दिया, 'महाराज ने वर्ण—व्यवस्था ने विरुद्ध ठान ली है इसलिये मैं अब ग्वालियर मे नही ठहरूँगा। अधर्म के समय अब और इस स्थान मे नही रहूँगा।'

क्रुद्ध स्वर मे मानसिंस के मुह मे निकला, 'तुम निरे मूर्ख हो।'

क्या महाराजा का यही निर्णय और न्याय है ?'

'बिलकुल।'

बोधन वहा से चला गया। अवकी बार जाते समय उसने आशीर्वाद का हाथ नही उठाया।

ग्वालियर को त्याग कर तीर्थ यात्रा को चल दिया।

मानसिह ने लाखी और अटल का पणिग्रहण संस्कार विजयजङ्गम से करवाया। अनेक ब्राह्मणो ने उत्सव मे भाग लिया। कुछ ऐसे भी थे जो बीमारी—या बीमारी के बहाने—के कारण उत्सव मे सम्मिलित नही हुये।

मृगनयनी सुखी थी। बोधन के चले जाने का मानसिह को परिताप नही हुआ। विपत्ति के आने पर किसी दिन ग्वालियर आवेगा, मानसिह को विश्वास था।

(५४)

लाखी और अटल के पाणिग्रहण संस्कार के उपरान्त उत्सवो की धूम मच गई। मानसिह ने जान बूझकर उत्सव मनाये—जिससे जनता जान जाय कि मै जात-पॉत के उतने सिकुडे-जकडे बन्धनो को नही मानता दूसरे मृगनयनी आनन्दमग्न बनी रहे।

सामन्तो और सम्पत्ति वालो ने उन दोनो का निमन्त्रण किया और भेट दी। मृगनयनी और मानसिह ने भी निमन्त्रण दिया। बडी रानी ने हठ किया कि पहले मै निमन्त्रण दूंगी। मृगनयनी को मानना पडा।

अभी तक लाखी के हाथ का बनाया या परोसा हुआ भोजन उन आठ रानियो मे से किसी ने नही खाया था यद्यपि उसको ग्वालियर के किले मे आये बहुत काफी समय हो चुका था। अवसर ही ऐसा कोई नही आता था क्योकि सबके अटाले अलग-अलग थे।

ऊँची जाति का हिन्दू वही जिसके हाथ का छुआ दूसरी ऊँची जाति वाले खाले। मृगनयनी ने अपने कक्ष मे भोज का आयोजन

इसीलिये किया था कि लाखी उनको अपने हाथ से परोसेगी, फिर कोई इसके ब्याह प्रसङ्ग पर उगली न उठा सकेगा।

परन्तु बड़ी रानी ने पहले ही निमन्त्रण दे दिया।

खैर, इसके उपरान्त सही। मृगनयनी ने सोचा।

पुरुषो को अलग भोज कराया गया और परिपाटी के अनुसार स्त्रियों के भोज का प्रबन्ध अलग। रानियो के लिये थाल लगकर आ गये। मृगनयनी के सामने भी थाल आ गया। लाखी इसी के पास बैठी थी। बड़ी रानी कुछ दूर। उसकी आँखो मे एक सतर्क उत्तेजना थी।

जब परोस हो चुकी, बड़ी रानी ने आरम्भ करने का अनुरोध किया।

मृगनयनी ने मुस्कान के साथ मीठे स्वर में कहा, 'महारानी जी, अपने यहाँ रीति नई दुलहिन के हाथ से परोस कराने की है। लाखा-रानी थोडा-थोड़ा सबको परोस दे न?'

बडी रानी हँसती हुई बोली, 'यह रीति रनवासों की नही है।' अर्थात गावडो की है।

'जब आपने लाखारानी को रनवास का सम्मान दिया है तब थोड़ी सी गाँव की रीति को भी बर्त जाने दीजिये। हम सब को विश्वास हो जायगा कि वह आपकी हो गई।'

'आपकी है तो हमारी पहले हैं।'

'तो थोड़ा सा मुझको परोस देगी और थोड़ा सा आपको। और चाहे किसी को न परोसे।'

'आप इतना हठ क्यो कर रही है?'

'आपको प्रसन्न करने के लिये।'

'मुझको तो इससे कोई प्रसन्नता नही मिलेगी।'

'तो आप सब भोजन करें, मै बैठी रहूगी।'

'ऐसी अवस्था मे हम मे से कोई भी भोजन नही करेंगी।'

'अच्छा मै लाखी के छुये भोजन को परोस देतो हूँ। इसमे तो आपको कोई आक्षेप नही होगा ?'

'हमको तो किसी मे भी कोई आक्षेप नही करना है, क्योकि काटों मे से जीवन को गुजारना है न।'

मृगनयनी के आग सी लग गई। लाखी वस्त्रालङ्कारो से लदी हुई नीचा सिर किये बैठी थी

मृगनयनी ने कहा, 'मै नही जानती थी कि निमन्त्रण के वहाने अपमान किया जावेगा।'

बडी रानी की उत्तेजित आँखो मे चञ्चलता आ गई। बोली, 'आपका हठ हमारा अपमान कर रहा है।'

मृगनयनी उठ खड़ी हुई। लाखी से कहा,'चलो भाभी।'

लाखी नही उठी। उसने हाथ जोड़कर सकेत में प्रार्थना की, 'बैठ जाओ, जाने भी दो।'

मृगनयनी ने दृढ़ता के साथ कहा, 'नही यहाँ से चलो। यह अपने को वहुत ऊँचा समझती है।'

सुमनमोहिनी कुछ कहना चाहती थी, परन्तु उसके होठ ऐसे चिपक गये थे कि मुँह से एक शब्द भी नही निकला।

वे दोनो वहाँ से अपने कक्ष मे चली गईं।

सुमनमोहिनी ने दासी को आज्ञा दी, 'इन दोनो थालो का भोजन बाहर फेक दो।'

दासी ने मृगनयनी और लाली के थाल उठा लिये और बाहर जाने को हुई।

सुमन ने दूसरी आज्ञा दी, 'ये भोजन मेहतर को भी मत देना कही दूर फेक आना।'

दासी चली गई। उसने मेहतर को भोजन नही दिया। दूर ले जाकर कुत्तो को डाल दिया और चली आई।

जिन कुत्तो ने खाया वे दो दिन के भीतर मर गये। कुत्तो की मौत का ठीक-ठीक कारण किसी को मालूम नही होने पाया। जिन के कुत्ते थे उनको अवश्य विष का सन्देह हुआ। कानाफूसी हुई। चर्चा हुई। फैली और बढी, परन्तु साधारण जनता के वृत्त के आगे बहुत कम फूटी।

मृगनयनी और लाखी को इतना अविलम्ब ज्ञात हो गया कि बडी रानी ने उन दो थालो का भोजन फिकवा दिया। मृगनयनी को उस रात बड़ा मानसिक क्लेश रहा परन्तु वह यह नही जानती थी कि उस भोजन के खाने वाले उन कुत्तो की कैसी कुगति हुई।

(५५)

दूसरे दिन मानसिह को भी मालूम हो गया। सुमनमोहनी के साथ उसने वाद-विवाद करना व्यर्थ समझा। डरता- डरता सा मृगनयनी के कक्ष मे गया। सोचता था होम करते हाथ जला।'

मृगनयनी ने अपनी मानसिक पीडा पर अधिकार कर लिया था। मानसिह को डरता सकुचता सा आता देखकर मृगनयनी विनोद मग्न हो गई।

बोली, 'महाराज तो कुछ ऐसे दिखलाई पड़ रहे है, जैसे सिह की शिकार चुकाकर आ रहे हो।'

मानसिह आश्वस्त हुआ। उसने मृगनयनी को अङ्क मे भर लिया। कुछ क्षण चुप रहकर कहा, 'समझ मे नही आता तुमको कैसे सान्त्वना दूं।'

'काहे की सान्त्वना? जो हो गया सो हो गया। मैंने निश्चय कर लिया हैं कि ऐसी बातो पर आगे कभी ध्यान नही दूंगी।'

इस प्रकार के निश्चय को मानसिह पहले भी सुन चुका था परन्तु वह जानता था कि अनवरत प्रयत्न का ही नाम जीवन है।

'तुम बडी हो, सचमुच बहुत बडी हो। आई हुई कठिनाइयो को परास्त करके आगे आने वाली कठिनाइयो से लड़ जाने के लिये तैयार रहने मे मन को आनन्द मिलता है—

मानसिह को प्रवचन करने की वृति में देखकर मृगनयनी ने उसकी ओर आँखे ऊँची की होठो, पर मुस्कान खिल गई और चेहरे पर बिखर गई।

टोककर बोली, 'मन को आनन्द जो मिलता है वह किस आनन्द के समान होता है ?'

'इन मुस्कानो को देखकर जो आनन्द मिलता है उसके समान।'

'इतने निकट से !'

'बडी कठिनाइयाँ भी तो निकट ही आती है जिनका सामना निकट से करना पड़ता है। दूर की कठिनाइयाँ तो थोडा–सा डर छोड़कर चली जाती है।'

'छोड़ दीजिये नही तो होठो को समेट कर मुँह लटका लूँगी।'

'तो मै हँस पडूँगा।' 'फिर ?'

'आप बहुत बुरे है !'

'और तुम बहुत अच्छी हो। बुरे भले की जोडी का नियम ही है।'

'नही, आप बहुत अच्छे है। बडे भले। अब दूर बैठकर बात करिये।'

'बात तो यों ही चल रही है।'

'अच्छा मै एक बात पूछती हूँ।'

'एक नही, दो पूछो जल्दी जल्दी पूछो, मै धीरे-धीरे उत्तर दूँगा।'

'मै पूछती हूं जब मेरी अवस्था उतर जायगी और मै क्षीण हो जाऊँगी, तब भी क्या आप इतना ही प्यार करेंगे ?'

यह क्या कह रही हो ?'

'आपने दो बातें पूछने के लिये कहा था, दूसरी यह कि प्रेम को स्थाई कैसे बनाया जा सकता है ?'

मानसिंह की बाहे ढीली पड गईं। आकृति गम्भीर हो गई। मृगनयनी उससे अलग होकर जरा दूर बैठ गई।

मानसिंह भी बैठ गया। मृगनयनी मुस्कराने लगी।

मानसिंह की गम्भीरता चली गई।

मानसिंह बोला, 'तुम सचमुच बड़ी हो। मुझसे बड़ी और बहुत अच्छी।'

'वाह ! वाह !!'

'ठीक कहता हूँ।'

'कैसे ?'

मानसिंह उसके निकट आने को हुआ। मृगनयनी और अधिक मुस्कराई।

'और निकट आये तो मैं बहुत छोटी रह जाऊँगी।'

मानसिंह स्थिर हो गया।

'तुम संयम से प्रेम को अचल बनाती हो और मै अपने विकार से उसको चंचल कर देता हू। संयम के आधार वाला प्रेम ही आगे भी टिके रहने की समर्थता रखता है।'

मृगनयनी ने गर्दन टेढी की, उङ्गली ठोड़ी पर फेरी और मुस्कान को बिखेरा।

'मन मे उपदेश देना ज्यादा भरा दिखता है आज !'

'अजी उपदेश देना पडितो और आचार्यो का काम है।'

उसी क्षण बोधन का चित्र उसकी आखो के सामने घूमने लगा। औंधी खोपडी का था वह मानसिह ने सोचा। मुस्कराया।

बोला, 'तुम्हारी प्रत्येक मुस्कान, भिन्न-भिन्न समय पर तरह-तरह का दिखलाई पडने वाला सलोनापन, तुम्हारी छवि का हर एक अश ऐसा मूर्त कर देना चाहता हूं, इतना साकार कि जीवन के अन्त तक अपने प्रेम का अचल प्रतिबिम्ब बना रह कर दिखलाई पड़ता रहे।

अभी-अभी मेरी समझ मे आ गया कि यह कैसे सम्भव होगा। जिस भवन को बनवा रहा हूं उसका नाम मृगेन्द्र मन्दिर रहे ?'

मृगनयनी ने हँसकर टोका,—'आरम्भ के कौर मे ही मक्खी गिर पडी। मेरी बड़ी का नाम रखिये—'सुमन मन्दिर।'

'नही, यह नाम नही रक्खा जायगा। तुम मेरे मन की रानी हो, हम दोनो इस भवन के एक खण्ड मे पालनकर्ता विष्णु—भगवान का पूजन-ध्यान करेगे, इसलिये यह भवन मन्दिर कहलावेगा, तुम मेरी मानिनी हो, मै तुम्हारा मान, इसलिये इसका नाम होगा मान-मन्दिर तुमको मालूम है तुम्हारी कौन सी छवि मुझको बार-बार उमगाती है ?'

'मै क्या जानूं! आप न जाने क्या-क्या कहते रहते है।'

'जिस समय भांवर पड़ने की घड़ी मुकुट बाँधे, हरे-हरे पत्तों के लता-वितान वाले मण्डप के नीचे तुम उस आगन मे आई-वह छवि। मान—मन्दिर का द्वार उस घड़ी की छवि को मूर्त करेगा।'

मानसिंह एक क्षण चुप रहा। मृगनयनी ने गर्दन की एक हल्की सी मुरकी ली और एक आँख की चितवन को जरा-सा ऊँचा किया मुस्कराती हुई बोली, 'और क्या ?'

वह कहता गया, 'ऐसे बडे और छोटे द्वार बनाऊँगा जिनमे होकर आने वाला प्रकाश तुम्हारी हँसी और मुस्कानो को व्यक्त करे। तुम्हारी केश—कुन्तल,कपोलों की दोनो ओर छूट—छूट जाने वाली लटें उन द्वारो की वन्दनवारी सजावटो मे उतर आयेगी। तुम्हारी मुस्कानों के पीछे जो मोती से दमक जाते है वे बेलबूटे झिझरियो की आभा द्वारा व्यक्त हो जायेगे। ऊपर के खण्ड के आगन मे निकाली हुई गोखे, बारजे और उनकी पतली सुहावनी वडेरियाँ चितवन और भौहो को प्रकट करती रहेगी। उन सब के ऊपर के कगूरे और कलसे तुम्हारे—

मृगनयी ने हँसते हुये टोका, 'और आगे नही सुनना चाहती।'

'अच्छा, अच्छा,' सुनो, मानसिंह ने कहा, 'वाहर की विशालता और भीतर का सौन्दर्य हमारी तुम्हारी उपासना और विष्णु की आराधना को मूर्त करेगी।'

'हाँ, यह कही ठिकाने की वात।'

'तुमको उद्यान का कौन सा वृक्ष सवसे अधिक मोहक लगता है ?'

'केला। उसके हरे भरे डोलते हुये वडे-वडे पत्ते हाथियो के कान से भी वडे, वहुत अच्छे लगते है।'

'ये पत्ते, अपने स्वाभाविक रङ्ग मे, मान-मन्दिर के ऊपरी खण्ड के वाहरी भाग पर वरावर टाक दिये जायेंगे। जान पड़े कि किसी उद्यान के भीतर मन्दिर है। और पत्थर की जालियों मे अपने जङ्गलो के हाथी, सिंह, नाहर अन्य पशु और तालाब के वगुले, हँस, सारस इत्यादि पक्षियों को वनवा दूँगा। विष्णु की सृष्टि है न वे ? कैसा रहेगा ?'

'वहुत अच्छा। सुना है किसी कलाकार ने चन्देरी के निकटवर्ती देवगड़ मे विष्णु की प्रतिमा को ऐसी मुस्कान दी है कि देखने वालो के विकारो को शाँत करके शक्ति के साथ ध्यान को एकाग्र कर देती है। क्या कभी उस मूर्ति के दर्शन कर सकूँगी ?'

मानसिंह ने झटका सा खाया। आधे क्षण के लिये भौंह सिकुड गई। आह लेकर बोला, 'वहुत दिन हुये तुर्कों ने उस मूर्ति को खडित कर दिया, पर मूर्ति की अनंत आशीर्वादमयी मुस्कान को कभी कोई नही मिटा पाया। देवगढ मालवा के सुल्तान के अधीन है। यदि पुरखो की वाणी को निभाने मे कभी समर्थ हुआ और कभी देवगढ को ग्वालियर के भीतर कर लिया तो दर्शन कर लेना।'

'अपने यहा के कलावन्त कारीगर नही ला सकते उस मुस्कान को वहां से अपने हृदय की गाठो मे वाँधकर ?'

'कदाचित ला सके। कलाकार के भीतर पूरी उपासना, आस्था, श्रद्धा और भक्ति, योग के द्वारा जाग पडे, तभी वह उस वरद मुस्कान को टाकी हथोडे के द्वारा पत्थर मे उकसा कर पिरो सकता है। प्रयत्न

करूँगा। मान-मन्दिर के भीतर ही विष्णु की मूर्ति को पधरवाऊँगा जिसके दर्शनो ने हमारे विवेक की मुस्कानें प्रबलता के साथ उतनी बनी रहे कि हम उसको अपने आस पास भी बाँट सकें।

'कविता कर उठे न आप अब!'

'कई बार कह चुका हूं कि साकार कविता तो तुम हो जो उस प्रकार के भाव को मेरे भीतर सदा जगाती रहती हो।'

'साकार कवि तो नायक बैजू है।'

'अब लोग उनको बैजू बावरा भी कहने लगे है। कविता बावली ही होती है, जैसी तुम।'

मृगनयनी हँस पडी।

बोली, 'मै बावली हूँ! और यह जो तानो, मुस्कानो, फूल-पेड़-पत्तो हाथियो-नाहरो, सूरज की किरणो और चन्द्रमा की चाँदनी को पत्थरो मे उमगा देना चाहते है, वह कौन है?'

मानसिह भी खिलखिला कर हंस पडा।

कुछ क्षण उपरान्त उसने कहा, 'नायक बैजू आजकल बडी साधना कर रहे है। परोसा हुआ भोजन एक ओर रक्खा रहता है पानी तक पीना भूल जाते है। किसी राग के बनाने या किसी परिपाटा या नई तानो के सृजन मे दिन-रात एक कर डाल रहे है। कोई रोकटोक करता है तो वीणा लेकर उसको पीट डालने को झपट पड़ते है, चिन्ता नही चाहे फिर उनकी उस प्यारी वीणा का तुम्बा ही क्यो न फूट जाय! वह अपने अलापो और तानों से मुस्कराते हुये विष्णु का आशीर्वाद सबको बाटेंगे।'

'जब इसी तरह की साधना शिल्पी कलावन्त करे—तब विष्णु की मूर्ति मे उस प्रकार की मुस्कान टाकी—हथोड़े के द्वारा उतार पायेगे ठीक है न?'

'बिलकुल, बिलकुल ही ठीक है।' मानसिह ने उठकर मृगनयनी को अङ्क मे फिर भर लिया।

'यह नही होना चाहिये । कैसी अच्छी बाते करते-करते आप क्या कर उठे !' मृगनयनी ने हँसते हुये कहा ।

मानसिह फिर अलग जा बैठा ।

बोला, 'विष्णु के इस सुन्दर मान-मन्दिर मे हम दोनो पुजारी बन कर रहेगे । हम ही दोनो ।'

'और सुमनमोहनी और वे सातो कहां रहेगी ? मृगनयनी के अन्तर्मन के नीचे से सहसा किसी ने पूछा । वही किसी ने उत्तर दे लिया, बनी रहे, बनी रहे । सब सह लूंगी, सब सहती रहूँगी । सुख-दुख की सङ्गिनी लाखी भी तो साथ रहेगी । लाखी को बड़ी रानी अछूत समझती हैं ! और मुझको भी !! मेरे और लाखी के थाल का भोजन मिहतर तक को नही दिया गया !!! इतनी गई-बीती समझी गईं हम दोनो !!!! कितना अपमान !!!!! परन्तु मैंने और लाखी ने उस अपमान को पी जाने का निश्चय कर लिया है । महाराज कितना प्यार करते है । वह अपमान इस प्यार के सामने बिलकुल तुच्छ है । परन्तु यदि नित्य-नित्य होता रहा तो इसी के दमन-शमन मे उलझा रहना पड़ेगा और मैं कलाओ मे कोरी रह जाऊँगी । मृगनयनी सोच रही थी ।

मानसिह ने हंसकर कहा, 'क्या सोच रही है महारानी जी ? राई के जङ्गल, पहाड, आँगन के लतावितान वाले मण्डप के नीचे आने वाली दुलहिन की छवि को या बैजू की किसी तान को ?'

'नही तो,'—धीरे से मृगनयनी बोली,—'अपनी नदी, अपने गाव की नदी के शुद्ध जल की याद करने लगी थी ।'

'थोड़ी सी बावली हो न । कहा था न कि नहर के ग्वालियर आने मे थोडा-सा समय और लगेगा ।'

'यहाँ किले के ऊपर, आपके मन्दिर तक कैसे चढ़ेगी वह नहर ?'

'हा ऊपर तक तो नही आ सकती है । परन्तु उत्तर-पूर्व के कोने वाली टेक तक तो आ ही सकती है ।'

'वहाँ तक ले आइये और एक भवन वहाँ भी बन जाय। बन सकता है न ?'

जिस समस्या को निबटाने के लिये मानसिंह मृगनयनी के पास आया था, मानो, उसका हल मृगनयनी के ही मुह से मिल गया।

उत्साह के साथ बोला, 'बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा ! ! मैं सोचता था, मान—मन्दिर के निर्माण के बाद क्या करूँगा सो तुमने खूब बतलाया !!! यहाँ मन्दिर बनकर खड़ा हुआ जाता है, वहां बनेगा महल। उसका नाम होगा गूजरी रानी का महल।'

'उस पर भी अपने नाम की छाप दीजिये।'

'एक हठ तुम्हारा मान लिया। एक मेरा भी मानो। उसका नाम गूजरी रानी का महल ही होगा '

'उसमें भी ये ही बाते उतारी जायेगी क्या ?'

'नही भिन्नता रहेगी; जैसी तुम्हारी छवि की समय—समय पर भिन्नता दिखलाई पडती है। तुम्हारे आभूषणो जैसी।'

'मैं कितना आभूषण, अपनी देह पर लादती हूं ?'

'नही, सिधाई पर आभूषण और आभूषणो के भीतर सिधाई। कल्पना के पीछे जो विचार है उसको लगन के साथ मूर्त करने का प्रयत्न करूँगा। जितना भी सफल हो जाय अपने को कृत-कृत्य समझूँगा।'

'देवगढ के विष्णु—मन्दिर को फिर अपने-हाथ में लाना चाहिये और उसको फिर से ज्यो का त्यो बनवा देना चाहिये। इस काम को आप कब करेंगे ?'

इस कर्तव्य की सुधि ने मानसिंह की कला-कल्पना और ओज की ललित-मधुरता को धक्का दिया, जैसे किसी ने मान मन्दिर और गूजरी महल के निर्माण को यकायक रोक दिया हो, जैसे बैजू बावरे ने किसी मीठी तान को लेते-लेते यकायक वीणा को पटक कर फोड़ डाला हो। बोला, 'समय आने पर उसको भी करूँगा।'

मृगनयनी ने कहा, 'कला और कर्त्तव्यपालन के बीच मे तौल का बनाये रखना तो आप जानते ही है, मै क्या कहूँ। कला से कभी-कभी मन उचट जाता है तो चाहती हूँ नाहर या अरने पर बाण का सन्धान करूँ। देखना चाहती हूँ, भूल तो नही गई।'

मानसिंह का उत्साह पर्याप्त मात्रा मे नही जागा,-'किसी दिन इसकी भी योजना कर दूँगा। राई ने जङ्गल पास ही तो है।'

'अबकी बार नरवर के जंगलो मे चलिये। वहाँ हाथियो के झुण्ड दिखलाई पडेंगे। उनके साथ गणेश जी जैसे कूदते–फुदकते बच्चे। वही से चन्देरी और देवगढ़ को अधीन करने की योजना बनाइये।'

नरवर, कला, और राजसिंह, मानसिंह की कल्पना मे झूल गये। राजसिह नरवर को अपनी बपौती समझता है! चन्देरी और देवगढ सहज ही हाथ नही लगने के। फिर भवन–निर्माण और कला सृजन के कार्य को अधूरा छोडकर कैसे उतने बडे काम को यकायक आरम्भ किया जा सकता है? पहले अपने निकटवर्ती मोर्चो को भली भाति संगठित कर लूँ। निहालसिंह का अन्त कैसे बुरे समय पर हुआ! कितना अच्छा दल नायक था वह!! ओफ!!!

मानसिह ने अपने भाव को छिपाकर कहा, 'बहुत शीघ्र प्रबन्ध करूगा। गूजरी-महल के काम को आरम्भ कर दू और मान-मंदिर के निर्माण की गति को बढा दूँ, फिर शीघ्र उस कामको भी हाथ मे ले लूंगा। तब तक शिकार के लिये राई का और अपने यही आसपास का जंगल उपयुक्त होगा।'

(५६)

कला चन्देरी पहुँच गई। उसने अपनी विफलता का कारण बैजू को बतलाया। बैजू पर का रोष राजसिंह के भीतर कला के प्रति असन्तोष मे पलटने को हुआ। क्षुब्ध हो गया।

'बोला, में नही जानता था कि बैजू इतना बडा गधा है। वह आवरा–बाबरा यहां कुछ भी नही था। ग्वालियर के पानी ने उसको निकम्मा कर दिया।'

'होरी-ध्रुवपद की परिपाटी को मांजने मे लगे हैं वह आजकल और प्रकार-प्रकार की टोडी बनाने की धुन मे। गूजरी टोडी, मगल- गूजरी इत्यादि। उनको और कुछ भी नही सूझ रहा है।'

'भाड़ मे गई टोडी। वह ग्वालियर मे रह गया सो अच्छा ही हुआ किसी काम का नही निकला। खेद है कि तुम भी कुछ न कर सकीं।'

कलो ने जो कुछ प्रयत्न किया था बतलाया।

फिर बोली, 'आपने यह कहा था कि जब ग्वालियर घिर जाने को हो तब तुरन्त समाचार देना, सो ग्वालियर घिरते-घिरते रह गया परन्तु फिर घिरेगा, तब आप नरवर पर चढाई कर देना।'

'मैंने क्या केवल यहीं कहा था? इतनी बात तो औरो के ही सामने कही होगी, अकेले मे भी तो कुछ कहा था।'

'ठीक ठीक याद नही। परन्तु मैंने नई रानी और पुरानी रानियों मे काफी फूट डलवा दी: और अधिक कुछ नहीं हो सका। किले के चित्र बनाये थे पर वे हाथ से निकल गये। बतलाया है आपको।'

'तुमने नाचने गाने मे ज्यादा ध्यान लगाया, इसलिये तुम्हारा निश्चय विथुन्न गया। पर खैर, कोई बात नही। दिल्ली का बादशाह एक न एक दिन ग्वालियर पर चढाई करेगा और मानसिंह को मारेगा। तुमने नही मार पाया तो वैसे मरेगा। इधर हमारा यह सुल्तान इतना निकम्मा है, इतना निकम्मा कि कुछ करता–धरता ही नही। नही तो मन चाहता है कि नरवर के फाटको पर फिर अपने हाथियो को जा ठेलूं पर यह सुल्तान! बहुत ही गन्दा है। ग्यारह हजार सुन्दरियो को तो अपने हरम में दाखिल कर चुका है!'

'क्या! ग्यारह हजार!!'

'हा । और उसका प्रण है कि पन्द्रह हजार से महलो को भर के ही दम लूंगा !'

'पुरुषो का कुछ ठीक नही। एक पर से उसका मन उचटकर कितनी जल्दी अनेक पर फिसल जाता है।'

'नही कला; सब पुरुषो के लिये यह बात लागू नही है। मेरे साथ अन्याय मत करो।'

'आपने मेरे साथ कौन सा बडा न्याय किया !'

'मैं असल मे बैजू पर खीज गया था। कुछ बाते यों ही मुह से निकल गई। आगे तुमको इधर उधर नही जाने दूंगा। सुल्तान से बहुत डर लगता है।'

'क्यो ?'

'तुमको मालूम नही सुल्तान ने सुन्दरियो की ढूंढ-खोज के लिये एक मुहकमा खोला है। मालवे भर मे उसके आदमी नये-नये रूपो की पकड़ धकड के लिये घूमते रहते हैं। यहाँ भी आये थे और कुछ को ले गये।'

'राजपूत कहां जा सोये है ?'

'जहाँ राजपूत बहुत है वहाँ इस मुहकमे वाले नही जाते। जहाँ थोडे हैं वहीं उपद्रव करते हैं।'

'राजपूत इकट्ठे क्यो नही हो जाते ?'

'नही हो पाते। तुरन्त राजसिंह के सामने मानसिंह का चित्र घूम गया। ग्वालियर, तोमरों की सेना, उनका विक्रम। उसी समय नरवर की बापौती आँखो के सामने आ खडी हुई और पुरखों का वदला। तोमर और हम एक ही जगह खान-पान, सम्मान और रहन सहन कर सकते हैं ?'

कला आंखो के सामने खड़ी थी।

बोला, 'तुम्हारे नाम की भी खोज यहाँ हुई थी।'

कला सकपका गई। 'ऐ !' उसके मुह से निकला।

पूछा, 'अब क्या करु ? कहां जाऊँ ! मेरा तो और कोई कही नही है।'

राजपूत की बाह फडक गई।

उसने कहा, 'मै तो हूँ। तुम्हारे ऊपर आँच आने के पहले, मेरे तन के टुकडे टुकडे हो जायेगे।'

'आप अकेले क्या कर लेगे !'

'बहुत कुछ ! हम थोडो ने ही नरवर के किले को कंपा दिया था सुल्तान ढीला पड गया नही तो नरवर की ईंट से ईट बजा देता।'

'पर आप सदा तो घर पर रहते नही।'

'मै तुमको किसी छिपाव के स्थान पर रख दूँगा। इसके सिवाय अपना सूबेदार शेरखॉ मेरा मित्र है। वह कपटी नही है। मेरे साथ छल नही करेगा। फिर काम पड जाने पर अनी के ऊपर अड जाने के लिये मेरी देह तो है ही।'

कला ने सोचा मानसिह कितना बडा है !

[५७]

जाड़े निकल गये बसन्त आ गई और छा गई। नसीरुद्दीन ने माँडू में बारह हजार स्त्रियाँ इकट्ठी करली, परन्तु अभी उसके प्रण के पूरे होने मे तीन हजार की कसर थी। मटरू के ऊपर उसने गियासुद्दीन से भी बढकर कृपा बरसाई। खजाने मे कोई कमी न थी, क्योकि मालवे का किसान समय पर अपना लगान चुकाता रहता था। इमारतें खडी करने का विचार उसने त्याग दिया था। जिन पर खर्च होता। मेवाड़ दिल्ली के बादशाह से लड़ता रहता था। गुजरात का महमूद बधर्रा कभी खानदेश कभी अहमद नगर, कभी सौराष्ट्र के राजपूतो की लडाइयो मे कई बरस से बीधा हुआ था। यद्यपि उसने माडू के सुल्तान को कम मे कम एक बार धूल चटाने की सौगन्ध खा रखी थी परन्तु वह अवकाश नही पा रहा था।

नसीरुद्दीन जानता था, लेकिन उसको विश्वास था कि वला अभी बहुत दूर है। इसलिये वाप को मार कर अव माँडू मे उस बड़े भारी परिस्तान को स्थापित करने की धुन मे लगा हुआ था—जहां उसने किसी सुन्दर युवती की खवर पाई कि दूत दौड़ाये। अनेक लोगो का यही पेशा हो गया था। मालवा के राजपूत अपने होठ काट-काट डाले जा रहे थे, किन्तु एक नहीं हो पा रहे थे। मेदिनीराय का जन्म हो चुका था, परन्तु उसने मालवा के राजपूतो को अभी अपनी गाँठ मे नही वाँध पाया था। इस आधी के उठने की वात नसीर को मालूम भी होती तो वह पूरी उपेक्षा करता। और इस प्रकार की आधी जव उस काल के जर्जर भारत मे उठती थी, तव वह भी किसी की अपेक्षा नही करती थी। साँगा के साँचे मे मेवाड ढल ही रहा था। रामानुजाचार्य चैतन्य महाप्रभु कवीर इत्यादि ने भक्तिमार्ग की अदमनीय शक्ति को उत्पन्न कर ही दिया था।

नसीरुद्दीन अपनी इन्द्रपुरी के निर्माण मे सिर के बल लगा हुआ था।

'एक दिन उसने माँडू की वड़ी झील कालियादह मे अपनी अप्सराओ को उतार कर जल-विहार करने की ठानी।'

मटरू ने भी कहा, वाह क्या कहना है 'जहाँपनाह, दुनियाँ के किसी भी पर्दे पर ऐसा कभी नही हुआ होगा।'

जल-विहार के विस्तृत क्षेत्र मे कनातो की आडे लगा दी गई। एक ओर लहराने वाली झील की नाली जलराशि, दूसरी ओर कनातो के भीतर रङ्ग विरगे वारीक वस्त्रो और झिलमिलाते अलङ्कारो से सजी हुई अप्सराये। टिड्डी दल की तरह उमड रही थी, अन्तर उनमे और टिड्डियो मे इतना ही कि टिड्डिया एक ही रङ्ग की होती है। वरसात की तितलियां जैसी परन्तु वरसात में एक ही स्थान पर इतनी तितलिया इकट्ठी नही दिखलाई पडती। सव हँसती—मुस्कराती वाते कर रही थी। सव अपने वस्त्रो को लहरा—फहरा रही थी, सव अपने यौवन का प्रदर्शन कर रहीं थी। परिणाम—स्वरूप इतना शोरगुल वढ़ा कि नसीरुद्दीन को

उसके ठण्डे करने का एक ही उपाय सूझा। उसने सोचा इस शोरगुल को वैसे तो इन्द्र भी बन्द नही कर सकता।

इसलिये उसने गायन और नृत्य आरम्भ कराया। उस सङ्गीत के रसास्वादन के लिये बगल मे सब प्रसाधन थे ही—सुराही, प्याले मटरू इत्यादि इत्यादि !

अप्सराओ का कराल विनोद थोड़ी देर के लिये धीमा पड़ गया। नसीर को सन्तोष नही हुआ। सङ्गीत को बन्द करके बोला, 'पानी मे कूद पडो और आपस मे छुवा—छुअव्वल खेलो। मै भी पानी मे उतरूँगा पर खेल को देखने के बाद।'

आदेश-वाहिकाओ ने फरमान को अविलम्ब जारी कर दिया। जो युवतियां तैरना जानती थी, वे कपड़ो को उतार सम्हालकर पानी मे कूद पडी। जो तैरना नही जानती थी वे घाट पर बैठे—बैठे पानी मे पैरो से कलोल करती हुई तमाशा देखने लगी। नसीरुद्दीन कभी इस समूह और कभी उस समूह को बढावा देने लगा।

कुछ स्त्रियाँ तैरती खेलती हुई झील मे थोड़ी दूर निकल गई। थक गई, डूबने को हुई और सहायता के लिये चिल्लाने लगी। पास के समूह की कुछ उनको बचाने के लिये सरपटी। थकी हुई स्त्रियाँ उनसे उलझ कर अपने और उनके भी प्राणो को सकट मे डालने की परिस्थिति मे आ गई।

नसीरुद्दीन चिल्लाया,—'इनको बचाओ ! इनको बचाओ !!'

अनेक कण्ठो से ये ही शब्द निकले।

नसीर हाथ-पैर नचाने लगा, उछला-कूदा लेकिन पानी मे नही उतरा। मटरू ने उससे भी अधिक उछल-कूद की परन्तु और कुछ नही।

कनात के पीछे सुल्तान के बहुत से नौकर खड़े थे, उनमे से कई जो तैराक थे कनात को चीर कर दौड़ पड़े पानी में कूदे और डूबते हुओ को बचाकर किनारे ले आये। वे स्त्रियाँ अचेत हो गई थीं किन्तु

मरणासन्न नही थी। उनका उपचार होने लगा। जिन पुरुषों ने रक्षा की थी वे निगाहें नीची किये हुये थे, चाहते थे कि सुल्तान की दृष्टि उन पर पड़े और पुरस्कार प्राप्त करें।

सुल्तान की दृष्टि उन पर ही पडी। उसने तुरन्त उन लोगो को अपने निकट बुलाया। नीची आँखे किये वे उसके पास आ गये।

'तुम्हारा नाम?'

'उन लोगो ने अपने नाम बतलाये?'

'तुम कनात के भीतर कैसे घुस आये?'

उन लोगो की घिग्घी बँध गई।

'किसने बुलाया था? किसके हुक्म से आये? बोलो! बतलाओ।'

उन्होने मानव की पुकार सुनी थी। पुरुष का शरीर पाया था इसलिये घुस आये थे।

परन्तु उनमे से एक ही बोल पाया, जहाँपनाह ने हुक्म दिया था कि इनको बचाओ।

'कम्बख्तो! तुमको हुक्म दिया था!!' वह कड़का।

फिर कोई और क्यो नही कूद पडा? उनके मन मे उठा, आतङ्क और भय के मारे कुछ न कह सके। थरथराने लगे।

नसीर ने आज्ञा दी, 'इनका वह सिर धढ़ से जुदा करदो जिसकी आँखो से यह सब देखा और हाथ भी काट दो।'

खवासिनो ने उन लोगो को कैद कर लिया। कनात के बाहर ले जाकर उनको मार दिया गया। सुल्तान की आज्ञा का अक्षरशः पालन हो गया।

फटे गले से नसीर बोला, 'ख्वाजा मटरू, सब मजा किरकिरा हो गया। कोई अक्ल सोची।'

ख्वाजा मटरू के होश कूच कर चुके थे।

नसीरुद्दीन ने कई खेल-खिलवाड सोचे और छांटे। स्त्रियाँ सहम गई थी परन्तु उन्हे सुल्तान को प्रसन्न करना था। कई खेल हुये। नीली झील ने वह सब देखा और अपनी अनवरत लहरो के भीतर रख लिया।

[५८]

सिकन्दर लोदी को ग्वालियर काटे की तरह खटकता था। उसने अनेक बार आक्रमण किये परन्तु वह कभी सफल नही हुआ। सिकन्दर के भाई जलाल ने जौनपुर–बङ्गाल की ओर बगावत का झण्डा ऊँचा किया–अर्थात् अपनी अलग सल्तनत कायम करने का प्रयास किया। सिकन्दर उधर गया, तो वह अन्तर्वेद की ओर खिसक आया। सिकन्दर जौनपुर को नष्ट कर चुका था। जौनपुर का सुल्तान हुसेनशाह, जिसके नाम पर सङ्गीत का हुसेनी कान्हडा चला और विख्यात हुआ और जिसने जौनपुर सुन्दर इमारतो से सजाया, बङ्गाल की ओर भटक रहा था। सिकन्दर अन्तर्वेद मे आने के लिये लखनऊ मे ठहर गया। लखनऊ छोटा सा ही नगर था, परन्तु उसका क्षेत्र बड़ा और बहुत उपजाऊ था। दिल्ली की आधीनता मे जौनपुर के साथ लखनऊ का क्षेत्र भी आ गया।

लखनऊ मे ठहरने के समय सिकन्दर के पास बहुत से मुल्ले-मौलवी जमा हुये। सिकन्दर इतना कट्टर पक्ष पाती था। उसके राजनीतिक महत्व को जानता था।

इन मुल्लो ने अपने बड़प्पन को प्रकट करने के लिये ऐलान करवाया 'यदि किसी हिन्दू मे हिम्मत हो तो आकर धर्म के मामलों पर हमारे साथ बहस करे।'

और तो किसी ने इस चुनौती को स्वीकार करने मे उपयोगिता नही देखी, बोधन ने स्वीकार कर लिया। वह लगभग तीन वर्ष तीर्थ यात्रा करने के बाद अयोध्या से मथुरा वृन्दावन की ओर आ रहा था। शाही लश्कर का तमाशा देखने की कांक्षा के साथ बहस की कामना उमड़

पड़ी। शास्त्रार्थ करने के लिये तो यह उधार ही खाये बैठा रहता था।
मौलवियो की मजलिस मे जा पहुँचा।

मोटी धोती, तनीदार मोटी अंगरखी, घुटे सिर लम्बी चोटी पर मोटे कपड़े की छोटी सी पगडी। सब झक सफेद। नंगे पैर। छुरा-छुरी डण्डा हाथ मे कुछ नही। सिपाही उसको देखकर हँसे। मुल्लो ने भोहें तानी और मुट्ठियां कसी।

थोड़ी देर मे सभा भर गई। सिकन्दर आकर ऊँचे तख्त पर बैठ गया। बहस शुरू हो गई।

'खुदा एक है या कई है?'

'एक। केवल एक। वही सब मे रम रहा है।'

'हमारे यहाँ के सूफी भी यही कहते है, पर वे गलती पर है। हम कहते हैं कि खुदा सबसे अलग है। तुम इसका उल्टा साबित करो।'

'परमात्मा सब मे है और सबसे अलग भी। हमारे शास्त्र और ऋपि कहते है। यहा तक कि कवि भी कहते है। सब सीधा है और सब उल्टा।'

'कुछ तो माना तुमने। खुदा के पास पहुँचने का एक ही रास्ता है, सिर्फ एक? या कई?'

'जितने मनुष्य है उतने ही है। पर पहुँचते हैं सब एक ही ठौर पर।'

'यानी पेड़ो, पत्थरो और जानवरो की भी पूजा करके।'

'इनको या इनमे से किसी को भी अपने भीतर की पूरी श्रद्धा और भक्ति के फन्दो मे बाधकर चले तो जरूर उस तक पहुँचने का सुभीता मिल जायगा।'

'यानी मूर्ति की पूजा करके भी?'

'हा।'

'पत्थर के टुकडे की?'

'वे पत्थर के टुकड़े नही हैं। मनुष्य की मानता के चिन्ह है।'

'तुम्हारे योगी, खुदा को निराकार ब्रह्म कहते है फिर उस यकीन और इस पत्थर पूजा मे कोई फर्क है या नही ?'

'है और नही भी। मानने और जानने वाले की जानकारी और भक्ती के दर्जे पर निर्भर है।'

'बेवकूफी और अकल के बीच मे कोई फर्क है या नही ?'

'बहुत। बेवकूफी अकल का एक दर्जा है और अकल बेवकूफी का दूसरा दर्जा।'

'क्या बकता है ?' सिकन्दर चिल्लाया।

बोधन ने उत्तर दिया, 'मैने ठीक ही तो कहा जहाँपनाह।'

बहस करने आया है या अलिमों की बेइज्जती करने ? सिकन्दर चिडचिडाया।

ब्राह्मण निर्भय रहा। निष्कम्प स्वर मे बोला, 'बहस करने आया हूँ, सत्य की खोज करके और सच्ची बात बतलाने के लिये। मेरी बात अच्छी न लगी हो तो कहिये यहाँ से चला जाऊँ ?'

परन्तु न तो उसके मन मे वहाँ से भाग जाने की इच्छा थी, और न मौलवी चाहते थे कि वह मूछे तान के, सिर उठाकर चला जावे। सत्य की खोज किसी का उद्देश्य न था। दोनो एक दूसरे को आतङ्कित करने की प्रेरणा से दीप्त हो रहे थे। बोधन के भीतर निर्भयता थी, मुल्लो की पीठ पर बल।

इधर-उधर खड़े हुये मुसलमान सिपाही उस अकेले ब्राह्मण को पहले तो पागल समझे; फिर उसकी हिम्मत को देखकर उनके मानव-हृदय ने उनसे कहा बहादुर है, सिपाही है कही विचारा पीटा-पाटा न जाय।

एक मौलवी बोला, 'चले कैसे जाओगे बिरहमन ? हार मान जाओ और इसलाम को कबूल करो, तब यहाँ से जा सकोगे।'

'मेरा धर्म किस धर्म से कम है जो मै अपने को छोड़कर दूसरे का पल्ला पकडं ?' बोधन ने निर्भयता के साथ कहा।

'यह कुफ्र है ! यह कुफ्र है !!' मौलवी चीख पड़े ।

'कहां के रहने वाले हो ? सिकन्दर ने प्रश्न किया ।

'उसने उत्तर दिया,—'ग्वालियर का'

'ग्वालियर का ! यानि मानसिह का जासूस !!'

'मानसिह का जासूस नही हू । मानसिह से तो लडकर निकला हू, कई वरस हो गये ।'

'गलत ! झूठ !!'

वहस वन्द हो गई । सवाल था बोधन का अब क्या किया जाय ।

सुल्तान ने मौलवियों को आदेश दिया, 'इसकी तकदीर का फैसला आप लोगो के सिपुर्द किया जाता है । तै करिये ।'

बोधन की समझ मे अब आया कि क्या होने वाला है । उसको अपने भीतर एक जगमगाहट दिखलाई दी, जैसी उसने अपने जीवन मे पहले कभी अवगत नही की थी ।

मौलवियो को फैसला देने मे देर नही लगी । थोडी देर वे परस्पर वात करते रहे, जिसको बोधन नही समझा ।

मौलवियो ने फैसला दिया, 'इस्लाम कबूल करो वरना सिर काट के फेक दिया जायगा ।'

स्पष्ट, निष्कम्प स्वर मै बोधन ने निर्णय के सामने सिर झुकाया—

'अपना धर्म नही छोडूंगा । सिर काट कर फेक दो, क्योकि वह मेरा नही । मैं यह सिर हू ही नही ।

'अब भी सूफियो की सी झक !' सिकन्दर के मुह से निकला । वोधन सङ्गमरमर की मूर्ति की तरह अचल खडा रहा उसने छाती पर हाथ कस लिये थे ।

मुसलमान सिपाहियो के मन मे उमड़ा या अल्लाह यह क्या हो रहा है ! इस गरीव को क्यो मारा जा रहा है ?

परन्तु सिकन्दर और मुल्लो के राज्य मे सिपाही वेवस थे और वे अपनी वेवसी जानते थे ।

बोधन जल्लादो को सौप दिया गया।

मरने के समय वह स्थिर था, शान्त था अडिग और निर्भय। वह सब में रम रहा है, मेरे और जल्लाद के भीतर वही है, जल्लाद की तलवार और मेरे सिर मे भी वही है। सब मे वही है। सब बराबर है। लाखी और अटल मे वही है! दोनो मे वही है? फिर मैने उन दोनो के बीच मे भेद क्यों किया? पर वह तो वर्णाश्रम की बात थी। जो कुछ भी हो, अब किसी के लिये मन मे कोई बुराई नही। सिकन्दर के लिये नही मौलवियो के लिये नही। किसी के लिये नही।

जल्लाद उसकी शात-गम्भीर मुद्रा को देखकर एक क्षण के लिये विचलित हुआ। बोधन ने कहा, 'क्यो विलम्ब कर रहे हो? चलाओ।'

जल्लाद का हाथ निर्बल पड़ा और एक क्षण के लिये तलवार काप गई।

बोधन को अपने भीतर कुछ जगमगाहट दिखलाई पडी।

'चलाओ' 'बोधन ने कर्कशता के साथ जल्लाद को दृढता दी।

तलवार उसकी गर्दन पर चली और वह अपने वांच्छित लोक मे पहुँच गया।

सिकन्दर और मौलवियो को बोधन के प्राणात की सूचना दे दी गई।

मुसलमान सैनिको को उस निरीह ब्राह्मण का कतल नही सुहाया। कुछ मरमराहट हुई। सिकन्दर और मौलवियो मे परामर्श हुआ।

फिर उसने जो कुछ किया उससे इतिहास के पन्ने सदा के लिये कलुषित हो गये।

लूटमार के अश को सिपाहियो मे बाटा और उनकी मरमराहट को कुठित कर दिया।

परन्तु मूर्तियो और मन्दिरो के तोड़ने फोडने ने जो आग उत्तर भारत मे नही फूंक पाई थी वह एक बोधन के वधने फूंक दी। अंतर्वेद

और अन्तर्वेद की दोनो दिशाओ के क्षेत्रो की छातियाँ मानो फौलाद की वन गई।

सिकन्दर और सिकन्दर के मुल्लो, सरदारों ने सोचा अब हुआ दिल्ली की सल्तनत का पाया मजबूत। उन्होने नही देख पाया कि पाये काँप गये। दिल्ली की सल्तनत को अखण्ड बनाने मे दो बडी बडी बाधाये और भी थी-एक ग्वालियर दूसरा मेवाड। मेवाड़ कुछ दूर पडता था परन्तु ग्वालियर तो छाती का काँटा था। दिल्ली से ग्वालियर आक्रमण करने के लिये आना वहुत समय ले जाता था इसलिये आगरे को बसाने बनाने और उसको एक बडी छावनी का रूप देने का सिकन्दर ने संकल्प किया वह आगरे को दूसरी राजधानी का रूप देने पर झुक पड़ा। वहा से ग्वालियर को सहज ही नष्ट कर लिया जायेगा और मेवाड़ का दमन भी कर दिया जायगा, सिकन्दर ने सोचा।

[५९]

ग्वालियर किले की पहाड़ी का उत्तर-पूर्व वाला छोर नीचे की ओर कुछ ठहर गया है। चार वर्ष मे उसके ऊपर मृगनयनी का गूजरी महल वन गया। ऊपर के कोट से इसके कोट का भी सम्बन्धजोड दिया गया। नीचे वाले कोट के नीचे से राई गाव वाली साँक नदी की कटी हुई नहर गूजरी महल के नीचे वाले खण्ड मे आ गई और उसके पानी के निकास का भी प्रबन्ध हो गया। गूजरी महल लगभग डेढ़ सौ हाथ लम्वा और सवा सौ हाथ चौडा। दो खण्ड ऊपर, दो खण्ड नीचे। नीचे के खण्ड के वीचो वीच साँक नदी की नहर के जल के लिये हौज और चारो ओर दो खण्डी दालाने। ऊपर के खण्डो के वीच मे विस्तृत आँगन चारो ओर सुरम्य अटारियाँ और छते। बाहर और भीतर से मृगनयनी के रूप-सरूप का प्रतिबन्ध- प्रबल, सीधाः सलौना और छवीला। कक्षो के द्वार, विवाह-मण्डप के लता-वितान और वन्दनबारो के द्योतक। पूरे भवन मे वैसी गोखे, मड़िया और साज जैसे थोडे और सुन्दर आभूपण

वह पहनती थी। पूरा भवन थोडे अलंकारो मे सजोया हुआ थोडे से अलकारो से पूरा भवन सजाया हुआ।

मृगनयनी दो पुत्रो की माता हो गई थी। एक का नाम राजसिह दूसरे का नाम बालसिह-लाखी उनको खेल मे राजे और बाले कहती थी। गूजरी महल ऐसा लगता था मानो कोई सशक्त सुन्दर माता अपनी गोदी मे दो होनहार सिह सपूतो को लिये शांति के साथ बैठी हो। गूजरी महल के ऊपर किले की पहाडी की ऊँची खडी दीवार और उसके दक्षिणी कोने पर मानमन्दिर। अब यह पूरा बनकर तैयार होने वाला ही था। लगता था जैसे वह दीवार मानसिंह का लम्बा खांडा हो, जैसे मानमन्दिर का मानसिह वज्र-मुष्टि मे उस खांडे को लिये हुये अपनी प्रजा की रक्षा के लिये खडा हो।

वैसे मान-मन्दिर भी तैयार हो गया था केवल ऊपर के खण्डो के बाहरी पक्षो के कुछ भागो मे केले के पत्तो के उभार नही बिठलाये जा सके थे। एक दिन आया जब वह काम भी पूरा हो गया।

गृह-प्रवेश के लिये होली के उपरान्त की रङ्ग-पचमी का मुहूर्त रक्खा गया। होली के उत्सव मै जनता वैसे ही मस्त थी, रङ्ग-पंचमी के दिन तो मस्ती में डूबने-उतराने ही लगी। मान-मन्दिर और गूजरी महल के साथ जनता के मन का अपनापन स्थापित था।

गृह प्रवेश का मुहूर्त आने को हुआ।

सैनिकों ने केसरिया साफे बाधे, जो मानसिह के सूर्यध्वजी ऊँचे केसरिया झण्डे से होड-सी लगा रहे थे, नगर की स्त्रियाँ रग-बिरगेपन मे फूट पडी। नायक बैजू ने नये कपडे पहिनते-बदलते पुराने पहिन लिये, पगडी जरूर नई जरजराती हुई। वीणा को पोछा माजा, फूलों से सजाया और सरस्वती का पूजन किया। मानसिह मृगनयनी को गूजरी महल से मानमन्दिर मे ले आया। नीचे से मन्दिर ऐसा लगता था जैसे गगनवर्ती कदली-कुज मे विष्णु ने मुस्कान के साथ बरदहस्त पसार दिया हो। केले के पत्तो के यथावत रङ्ग और चित्रण ने, पत्थर

की जालियों में हाथी, नाहर और अन्य पशुओं के बेखटके बिहार ने मृगनयनी को यही कल्पना दी। भीतर पहुँचकर ऊपर के खण्ड के पहले आँगन मे पश्चिम की ओर विष्णु का मन्दिर, उसके चारो ओर पत्थर मे सूक्ष्म अनुपात की विविध प्रकार की जालियाँ। आँगन की दूसरी ओर विशाल पुस्तकालय और तीसरी ओर सभा–भवन, जिसमे गायन-वादन इत्यादि होना था। विष्णु मन्दिर के सामने दूसरा कक्ष था, जिसकी बनावट साज-सिङ्गार पहले से कुछ भिन्न थी परन्तु उतनी ही सुन्दरता मे गुथा हुआ।

मृगनयनी ने कहा, 'बहुत ललित और सुन्दर है। आपकी कल्पना मे जो कविता रही है वह मान मन्दिर मे अपने पूरे वैभव और श्रृंगार के साथ आ बैठी।'

'मेरी कविता नही, तुम्हारी कविता। और कारीगरो के ध्यान की कविता। मेरे शब्द कारीगरो को जो सूक्ष नही दे सके तुम्हारे दिये हुये मेरे भाव ने उसको दिया। करीगरो ने योग साधा, उनके ध्यान मे वह भाव मूर्त हुआ और टाकी हथौड़े ने तुम्हारी कविता और मेरे भाव को पत्थरो मे उतार कर बसा दिया।'

मृगनयनी को अपनी उस कल्पना की याद आ गई। रात का समय मचान पर खेत की रखवाली के लिये बैठी हुई, चाँदनी मे निकट बहने वाली नदी की लहरों की चमक और अनाज की बालों की ऊँघती झूम, पीछे ऊँचे पहाड, हरे भरे विशाल वृक्षो के पुन्ज और जङ्गल मे घूमने वाले पशु। उसने सोचा, यह सब साकार हो गया और ऊपर के कलश ऐसे लगते है जैसे पहाड के लम्बे समतल पट पर गुम्मट बांधे हुये अचार और खिरनी के पेड हो। मृगनयनी आनन्दमग्न हो गई। मानसिंह ने देखा, उसके चेहरे पर यौवन का लावण्य और माता का सौन्दर्य एक दूसरे से होड सी लगा-लगाकर परस्पर घुल रहे है।

'आज तुमको नायक बैजू की परिपाटी का वहुत अच्छा गायन वादन सुनने को मिलेगा।' मानसिंह ने कहा।

वह उत्साह के साथ बोली, 'और इसके उपरान्त मै भी, अपने यहाँ आपको कुछ सुनाऊँगी और ताँडव नृत्य-दिखाऊंगी। मैंने तैयार कर लिया है।'

'अवश्य अवश्य, तुम जो कुछ भी न कर डालो वह थोड़ा है।'

'अच्छा! अब आप लगे बनाने!'

'तो तुम मान कर जाओ, मै मनाने लगूँगा।'

'यहाँ चलिये मेरे यहाँ, फिर देखूँगी आपको, कितना मानते हैं। आज रङ्गपञ्चमी है, संभलकर आना।'

'अच्छा तो रही, कौन किसको छकाता है।'

'आपको हरा दूंगी।'

'उस हार मे भी मेरी ही जीत रहेगी।'

'वाह! वाह!! चित्त भी मेरा पट्ट भी मेरा!!!'

वे दोनो हँस पड़े। मान-मन्दिर का ऊपरी खण्ड, जहाँ वे दोनों खड़े थे, मानो उस हँसी मे अपनी हँसी मिला रहा था।

नीचे के खण्ड मे चहल—पहल होने लगी।

'मुहूर्त आ गया, अब चलो,' मानसिंह ने कहा।

वे दोनो अपने—अपने स्थान पर जा पहुँचे। विष्णु मन्दिर में पूजन हुआ उसके बाद गायन-बादन।

सभा—भवन के ऊपरी खण्ड मे स्त्रियो के बैठने के लिये जालीदार स्थान था। वहां आठो रानियाँ, मृगनयनी, लाखी और नगर के कुछ लोगो की स्त्रियाँ बैठ गई। लाखी मृगनयनी के निकट बैठी थी। वहीं नगर—वासियों की कुछ स्त्रियाँ।

नायक बैजू ने होरी गाई।

लाड़ली, मान न करिये होरी के दिनन मै।

कौन तिहारी बान—

बरस दिना को खेल छांड़िके बैठी हो भौहै तान।

लाड़ली, मान न करिये।

नायक वैजू ने अपने गाने मे मधुरता और कारीगरी के मेल की पराकाष्ठा कर दी। विजयजङ्गम थोडी ही देर उसका साथ कर पाया 'गले का साथ बाजा नही कर सकता' कहकर उसने हर्ष के साथ अपनी हार को स्वीकार किया और वैजू का साथ देने के लिये तम्बूरे को छेड़ता रहा।

दिन होने के कारण ऊपर के खण्ड मे कोई रानी नही ऊँघी या सोई परन्तु रसास्वादन के साथ-साथ, बीच-बीच मे उनकी बातचीत का क्रम नही टूटा। जब सभा भवन मे गायन चल रहा था, बडी रानी ने एक दासी के द्वारा सोने के थाल मे दो बडे-बडे पान भेजे, एक मृगनयनी के लिये दूसरा लाखी के लिए।

थाल के सामने पहुचते ही एक पुरवासिनी ने दूसरी से आँखे मिलाई, नीचे की ओर फिर मृगनयनी की तरफ की। उनमे अनायास ही वर्जन प्रकट हो गया। मृगनयनी ने देख लिया। थाल मे से पान को उठाया, मस्तक से छुलाया और गाँठ मे बाध लिया। लाखी ने गायन की ओर से ध्यान को बटाकर पान को उठाया मस्तक झुका कर प्रणाम किया और मुँह मे डालने को हुई कि मृगनयनी ने उसका हाथ दबा दिया। बोली, 'आदर के साथ गाठ मे बाध लो।'

आख के संकेत से लाखी ने पूछा। आँख के संकेत की भाषा मे मृगनयनी ने समझा दिया कि, उसमे कुछ है खाओ मत।

बोली, 'सम्मान का पान है, बड़े भागों मिला है गाठ मे बाँध लो।' लाखी ने बाँध लिया। दासी सिर नबाये चली गई।

लाखी और मृगनयनी का ध्यान सङ्गीत पर से उचट गया लाखी जानने के लिये आतुर हो उठी। मृगनयनी की उत्सुकता शान्ति के आवरे मे ढकी थी। वह उन पुरवासिनियो से कुछ पूछने के अवसर की खोज मे लग गई। लाखी को उसने धैर्य धरे रहने का सकेन किया। जब बैजू का गायन 'वाह-वाहो के बीच मे आया, मृगनयनी ने आँख चुराकर सुमनमोहिनी की ओर देखा। वह खिन्न, उदास और चंचल सी थी।

उपयुक्त अवसर पाकर मृगनयनी ने पुरवासिन से धीरे से पूछा; 'क्या बात थी ? पान खाने से क्यो रोक दिया गया था ?'

'कहाँ रोका था ? रोका तो नही था, महारानी जी ।' पुरवासिन ने कहा परन्तु उसकी आँखे कुछ कहने के लिये उतावली सी हो रही थी ।

'आँखो से वर्जा था । बतलाओ न । मै तुम्हारे ऊपर किसी प्रकार की भी आँच नही आने दूँगी वचन देती हूँ ।'

'बड़े लोगो की बातो की कौन कहे महारानी जी ।'

'बे खटके कहो । मै विनती करती हूँ । कोई नही जान पावेगा ।'

'उन पानो मे बिष का सन्देह है ।'

'क्यो ? कैसे ?'

'बड़ी महारानी जी का आप पर कोप है ।'

'सो तो है, पर आपको सन्देह क्यो हुआ ?'

'आप उनके महल मे नही आती-जाती वह आपके मे नही आती-जाती, बस्ती भर जानती है ।'

'इतना ही, या और कुछ ?'

'आपको नही मालूम ? बस्ती भर जानती है ।'

'क्या ?'

'यह कि उन्होने एक बार विष दिया था । परन्तु आपने भोजन नही किया । कुत्तो ने खाया सो वे तडप-तडप कर मर गये !'

'कब की बात है । 'बहुत दिन हो गये । याद नही पडती ।'

'जब लाखारानी का ब्याह हुआ और उन्होने भोज दिया ।'

'अच्छा । ठीक है !!'

'मै हाथ जोडती हूं महारानी जी, किसी को मालूम न होने पावे । नही तो हमारा घर भर आफत मे पड जावेगा ।'

'विश्वास रक्खो । आपको यह बात कब मालूम हुई ?'

'कई बरस हो गये, तभी मालूम हो गई थी । बस्ती भर मे फैल गई थी आपसे किसी ने नही कहा ।'

लाखी ने भी इन बातों का अधिकाश सुन लिया।

गायन की समाप्ति पर सभा भवन मे एक विवाद उठ खडा हुआ।

विजय ने अनुरोध किया था कि तराना गाया जाय।

बैजू बोला, 'तराने मे गले को नचाने के सिवाय और है ही क्या ?'

विजय ने बतलाया, 'जैसा आपकी नई परिपाटी मे बहुत कुछ है वैसा ही उसमे भी बहुत कुछ है। गोपाल नायक और अमीर खुसरो ने मिलकर उस परिपाटी को चलाया था।'

गोपाल नायक के सिवाय बैजू और किसी को मान्यता नही देता था गोपाल को दो सौ वर्ष हो चुके थे इसलिये उसके नाम पर पुरातनता की छाप थी गुनगुनाने लगा।

थोडी देर बाद बैजू ने कहा, 'मैंने तराना भी सीखा था, परन्तु गाता नही हूं।'

विजय ने हठ किया। मानसिंह ने सकेतो मे समर्थन।

'अभी तो नही गाऊँगा चाहे कोई नौ मूढ का क्यो न हो जाय,' बैजू बोला और उठ खडा हुआ।

मानसिंह हँस पडा। मनाते हुये से कहा, 'बैठिये, बैठिये। नौ सिर वाला नही, रावण दस सिर वाला था।'

बैजू बैठ गया। गम्भीरता के साथ बोला, 'रावण का जन्म नहीं हो सकता। रामचन्द्र ने अपने निज बाण से मारकर उसको तार दिया था।'

सभा को विसर्जित करते हुये मानसिंह ने कहा—'आपको और आचार्य विजयजङ्गम को गूजरी महल मे चलना है।'

सभा विसर्जित हो गई। ऊपर के खण्ड से स्त्रियाँ भी चलने लगी।

मृगनयनी ने बड़ी रानी के सामने जाकर कहा, 'आप मेरे घर पधारेंगी !'

'मेरा सिर दुख रहा है। नही आ सकूंगी। जब से यहा पान खाये तब से दुखने लगा है।'

'इसी डर से मैने नही खाया। आप उस घर मे पधारे तो पान नही खिलाऊँगी, उसको भी नही जिसको मैने गाठ मे बाध लिया है।'

सुमनमोहिनी की दृष्टि एक क्षण के लिये करारी पड़ कर नीची हो गई।

'मै अब जाऊँगी' कहकर वह चली गई।

नगर की वे स्त्रियाँ कनखियो देखती हुई जा रही थी। बात कही उधर तो नही गई उनको शका थी, उपेक्षा की दृष्टि के साथ मृगनयनी ने आश्वासन दिया। गूजरी महल जाकर उसने पानों को खोला। उसमें कुछ था। परन्तु वह घटना को दबाना चाहती थी, इसलिये पान फेक दिये। राजा से नही कहूँगी उसने निश्चय किया।

[६०]

गूजरी महल के उत्तरीय भाग के पश्चिमी कक्ष मे एक खासा बडा सभा भवन बनाया गया था। उसके सिरे पर एक छोटा-सा मञ्च रक्खा हुआ था। मञ्च पर नटराज की सोने की मूर्ति इसको विजयजङ्गम की देख-रेख में बनाया गया था।

नटराज की मूर्ति एक विकसित कमल पर खडी थी। गोलाकार कमल की पंखुरियो से झरता हुई आभा का एक मण्डल बनाया गया था। इस मण्डल से मूर्ति की दोनो ओर लौ निकलती हुई रची गई थी। मूर्ति चतुरभुजी थी एक दाये हाथ मे डमरू, दूसरा वाया हाथ वरदमुद्रा मे। डमरू वाले हाथ को उस ओर वाली आभा की लौ छू रही थी। एक बाये हाथ मे अग्नि, दूसरा कमल के पार्श्व में पडे एक बौने की ओर संकेत करने वाला। आग वाले हाथ को दूसरे पार्श्व की लौ छू रही थी। कमर मे मणियो की करधौनी। कन्धे पर जनेऊ। एक कान मे पुरुषो का जैसा कुण्डल, दूसरे मे स्त्रियो की जैसी बाली। केशजूट मे मुक्तामा, एक लट अलग झूलती हुई। एक जटा मे साढ़े चार

कुंडलियाँ मारे हुये नाग, छोटा-सा मुड और गङ्गा का प्रतिबिम्ब और ऊपर चौथ का चन्द्रमा। शरीर के आधे भाग पर व्याघ्रचर्म।

मानसिंह, विजय और बैजू ने मूर्ति को प्रणाम किया। मानसिंह बगल वाले कक्ष मे गया। सभा-भवन और उस कक्ष के बीच पत्थर की जाली ही थी।

मृगनयनी नटराज शिव के वेश मे थी और लाखी वीणा लिये हुये सरस्वती के वेश मे। मृगनयनी शिव वेश में होते हुये भी अपने सब अङ्गों को भली-भाँति ढके हुये थी।

'मानसिंह ने कहा 'सभा भवन मे चलो। पहले ताडव—नृत्य होगा फिर उनका गायन-वादन।'

'उनके सामने नहीं होगा तांडव नृत्य।'

'वे तुम्हारे गुरु जन है। एक से गायन वादन सीखा, दूसरे से शास्त्र।'

'सिवाय आपके और किसी पुरुष के सामने न मै नृत्य करूँगी और न लाखी।'

'तुम पर्दा नही करती, फिर यह क्या ?'

'पर्दा न करने का यह प्रयोजन थोडे ही है जो आप कह रहे है।'

'अच्छा तो उनका गायन सुनने के लिये तो वहाँ चलो।'

'गायन भी हम दोनों यही से सुनेगी।'

मानसिंह चला गया। मृगनयनी के उस आचरण से वे दोनो संतुष्ट हुये बैजू विशेपकर।

गायन-वादन के उपरान्त वे दोनो चले गये तब मृगनयनी और लाखी सभा भवन मे आई।

मृगनयनी ने शिव तांडव स्तोत्र को गाया और लाखी ने वीणा पर बजाया। फिर मृगनयनी ने ताडव नृत्य किया।

जैसे सूखे काठ मे अग्नि विद्यमान है, उसी प्रकार शिवशक्ति जड और चेतन मे निहित है। शिव अपने ताण्डव नृत्य से शशि को जड और चेतन मे स्पन्दित और स्फुरित करते है। जीवन और आकार

प्रकार मे शिव की नृत्य लीला प्रकट होती है। विश्व की समूची क्रिया को अनादि शिव का ताण्डव व्यक्त करता है। चार हाथ चारो दिशाओ मे अखिल व्यापकता, डमरू नाद और शब्द जिससे विश्व का विकास बना बरदहस्त रक्षा, अग्नि विश्व व्याप्त शक्ति, चौथा हाथ नृत्य के लिये उठे हुये चरण के प्रति उठे हुये हाथ के शरण-दान को प्रकट करने वाले। अर्धचन्द जागते हुये ध्यान केन्द्र को और नाग धारण की स्थिति को, बतलाने वाले। सत् के साथ सम्बन्ध इसी साधन द्वारा सम्भव। शिव के हिमालय से आने वाली गङ्गा भारत को समृद्ध और श्रद्धा देने वाली। एक कान का कुण्डल और दूसरे कान की बालो, पुरुष और शक्ति की, द्योतक। कमर की मणि मेखला, जागी हुई शक्तियो को कमर के नीचे न जाने देने और ऊपर की ही ओर प्रवाहित कर देने के लिये-ऊर्ध्वरेखा बनाने के लिये-कटिबद्ध। कमल विश्व का साँचा, शिव की अनन्त पावनता का प्रतीक, कमल के चारों ओर का प्रभा-मण्डल शिव के विश्व व्यापत ओज का प्रतिबिम्ब। मुण्ड अहङ्कार के दमन का द्योतक।

मृगनयनी के ताण्डव की इस सात्विकता को अपने नृत्य द्वारा श्रद्धा के साथ मूर्त किया। नृत्य के अन्तिम भाग की अवस्था मे जब मृगनयनी स्थिर हो गई तब मानसिंह के मन मे हिलोडें आ गईं। अत्यन्त मनोहर मन को बहुत ऊँचे स्तर पर ले जाने वाला; बहुत ही मोहक-हृदय मे गाढी श्रद्धा उत्पन्न करने वाला; विलक्षण सुन्दर। वासना को न उकसा कर दृढता को देने वाला। मानसिंह को मृगनयनी के सौन्दर्य मे इतना वैभव प्रतीत हुआ जितना उसको प्रथम मिलन की घड़ी मे अनुभव नही हुआ था।

मानसिह को लगा स्त्री का सौन्दर्य-महत्व स्थिरता मे है जैसे उस नदी का जो बरसात के मटमैले, तेज प्रवाह के बाद शरद मे नीले जल वाली मन्थरगति गामिनी हो जाती है—दूर से बिलकुल स्थिर और शान्त बहुत निकट से प्रगति वाली।

मानसिंह ने आल्हाद के साथ कहा, 'बड़ी रानी यदि आज यहाँ आती तो गाँठ मे बाधकर यहा से कुछ ले जाती।'

'मन्दिर से मै भी गाँठ मे कुछ बाँधकर लाई थी। मृगनयनी के मुह मे निकल गया। उसने तुरन्त अपना दमन किया।

'क्या ?' मानसिंह ने पूछा। लाखी मृगनयनी का मुह ताकने लगी।

मृगनयनी के होठो पर मुस्कान आ गई—जैसे शिव ताण्डव के समय मुस्करा गये हो।

बोली, 'विष्णु की मुस्कान, प्रसाद, सङ्गीत के मिठास का आनन्द।'

मानसिह को सन्देह हुआ। उसने प्रश्न किया 'बड़ी रानी क्यो नही आईं ?'

मृगनयनी ने उत्तर दिया, 'अपना-अपना मन। आप अन्त.पुर की सब चिन्ताओ को छोडकर अब बाहर की बातो पर ध्यान दीजिये।'

आह भरकर मानसिंह ने कहा; केवल एक मन्दिर राई में और बनवाना है। बोधन को वचन दिया था। बोधन की प्रेतात्मा को शाति मिलेगी।'

वे दोनो जरा चौकी।

उनके प्रश्न करने के पहले ही मानसिंह ने बतलाया, 'बोधन को सिकन्दर लोदी ने लखनऊ मे मरवा डाला।'

मानसिंह ने बोधन के बध की जितनी और जैसी कथा सुनी थी सुना दी।

'समाचार कब आया ?' मृगनयनी ने उदासी के साथ पूछा।

लाखी दूसरी ओर देखने लगी।

'अभी-अभी मानसिंह ने उत्तर दिया।

'दुष्ट बादशाह को क्या मिल गया होगा उस दीन ब्राह्मण के मार डालने से ?' मृगनयनी धीरे से बोली।

खुसफुसाते स्वर मे लाखी ने कहा, 'दीन तो नही था वह बड़ा बातूनी और बहुत हठी।'

मृगनयनी की शॉत-दृष्टि मे भर्त्सना कोंध गई, लाखी ने नही देखा।

मानसिह बोला, 'निहालसिह मर गया, बोधन को मार डाला। अंतर्वेद के मंदिरो और मूर्तियो को ध्वस्त किया सिकन्दर ने। देखूंगा।' मानसिह ने सिकन्दर के अन्य अत्याचार नही सुनाये।

फाटक बाहर, 'कुछ दूरी पर हल्ला सुनाई पडा। मानसिह सुनने लगा।'

'रङ्गपञ्चमी का हुल्लड़ जान पडता है।' उसने कहा।

'इतना !' मृगनयनी ने आश्चर्य प्रकट किया।

मानसिह ने द्वारपाल को दौडाया। उसने लौटकर बताया, 'सैनिको ने भाग पीकर स्वाग बनाया है, उसी का हुल्लड है।'

वे तीनो ऊपर के खण्ड के झरोखे मे गये। वहा से उस हुल्लड को देखने लगे। भिन्न-भिन्न प्रकार के वीभत्स रूपो मे सैनिक वौखला रहे थे। कुछ गधो पर सवार थे। एक सवार हाथ में फूटे तूम्बे पर फटे बास की डण्डी को खोसे हुये विजय की वीणा का स्वॉग कर रहा था। दूसरा बैजू के गायन का। कुछ मुछाडिये सैनिक स्त्रियो के विकृत वेश मे थे।

मृगनयनी यह कह कर लाखी के साथ हट आई, 'कितने भद्दे है ये लोग !'

मानसिह कुछ क्षण देखता रहा। हुल्लड वाले सङ्गीत की बहस का व्यङ्ग करते हुये। एक दूसरे के ऊपर फूटी वीणा और टूटे तम्बूरे की मार बरसाने लगे। पहले केवल खेल-खिलावा रहा, फिर असली मारपीट हो पडी। स्त्री वेशधारी पुरुषो ने भी मारपीट मे भाग लिया। कुछ और दौड़ पडे। दो दल बनने मे देर नही लगी और सच्ची गुत्थमगुत्था हो पडी। सैनिक अपने-अपने हथियारो के लिये चिल्लाने और चुनौती देने लगे।

मानसिंह वहां से उतर कर फाटक पर आया। द्वार रक्षक परेशानी मे थे किंकर्तव्यमूढ़।

मानसिंह हुल्लड़ के पास पहुँचा। उसने चिल्लाकर निवारण किया। सैनिक भग पिये थे परन्तु राजा के आतंक ने उनको थरथरा दिया और वे वहाँ से अपने ठौर ठियों पर चले गये। मानसिंह प्रबन्ध करके लौट आया। गूजरी महल के पहले फाटक के बाईं ओर निकटवर्ती हिंडोला फाटक पर कुछ सैनिको मे ताव था। उनको शान्त करके वह मृगनयनी के पास आ गया।

बोला, 'तुम्हारे ताण्डव नृत्य ने बोधन के बध की खिन्नता को दबाया और ललित भाव सजग किये, अब इस हुल्लड ने मन को ग्लानि से भर दिया।'

'होली के ये चार पॉच दिन लोगो को मतवाला कर देते है।' मृगनयनी ने कहा।

'इतना मतवाला! मान मन्दिर की विशालता और सुन्दरता का इनके मन पर कुछ भी प्रभाव नही पड़ा!! नायक बैंजू और आचार्य विजय की नकल उतारी इन अभागो ने!!! वह भी किले के भीतर और तुम्हारे महल के निकट!!!! मानसिह ने अपनी खीझ प्रकट की। मृगनयनी कुछ क्षण सोचती रही।

बोली, 'ऐसे लोगो के मन पर कला का आदर धीरे-धीरे ही बैठता है।'

'नगर मे जगह-जगह लोग नायक बैजू की परिपाटी सीखने लगे है। उसमे कला कीं समझ आने लगी है, कला का आदर करते है। पर ये मेरे इतने निकट रहते हुये उजड्ड और भद्दे बने रहे।'

'ये लोग सीखे भी तो कुछ नही है।'

'मेरा विचार है यहा सङ्गीत का विद्या पीठ स्थापित करूँ। नायक बैजू की परम्परा को देश भर के लिये चला दूँ। ये लोग भी सीखेगे और सुधरेंगे।'

'बड़ा अच्छा विचार है। सङ्गीत विद्यापीठ को स्थापित करिये।'

'तुमने वरद मुस्कान वाले विष्णु भगवान की जिस प्रकार की मूर्ति का सुझाव दिया, वह मान मन्दिर मे प्रतिष्ठत हो गई है। उसी प्रकार एक मूर्ति और छोटे से सुन्दर मन्दिर का निर्माण राई के लिये कराऊँगा। मैंने बोधन को वचन दिया था'

'यह भी बहुत अच्छा विचार है। इसे भी पूरा करिये। और भी कही मन्दिर बनवाइयेगा? सङ्गीत के विद्यापीठ?'

मानसिह को मृगनयनी के स्वर मे व्यङ्ग की झलक सी मालूम पड़ी। उसने भोलेपन के साथ टकटकी लगाई; मृगनयनी मुस्कराई। आंखो मे धीरता और स्थिरता थी, मुस्कान मे वैभव की परछाही।

आपकी ललित कलाये ग्वालियर के नाम को अमर कर देगी। इसीलिये पूछा।'

'तुम्हारे मन मे जो कुछ हो कहो तुमको मेरी सौगन्ध है।'

अपनी सौगन्ध कभी मत खाया करिये। मै तो आपकी दासी हू क्या कहूं।'

'दासी नही हो देवी हो मेरे हृदय की अधीश्वरी। बतलाओ, मै कुछ भ्रम मे पड गया हूं।'

'मैंने ताण्डव नृत्य की योजना जान बूझकर की थी। कुछ प्रयोजन था।'

'क्या? मै जानना चाहता हूँ। तुमको जैसा आज पाया वैसा कभी नही देखा था।'

'आप पाण्डव वश के है—अर्जुन की सन्तान। क्या मुझको स्मरण दिलाने की आवश्यकता है?'

'इसको कोई भी तोमर नही भूल सकता है और न इस बात को कि मेरी मृगनयनी कृष्ण के वशजो से सम्बन्ध रखती है।'

'मै कुछ भी हूं आपकी हू। आप जो अर्जुन और भीष्म के वंश के है आर्यावर्त्त की रक्षा के लिये अब क्या करना चाहते है? क्या इस तरह के

भंगेड़ी सैनिको के हाथो इसकी रक्षा होगी जिसके विनोद का रूप वह है जिसको अभी अभी देख आई हूँ ?'

मृगनयनी की आँखो मे तेज था परन्तु भर्त्सना नही थी ।

,मै इन सैनिको को कडा दण्ड दूँगा,'—मानसिंह ने आवेश के साथ कहा,—'इस महल के फाटक पर ! और ऐसे समय !!'

मृगनयनी को अपने गाँव के किसानो की होली की याद आ गई ।

'दण्ड देने से कुछ नही होगा महाराज । उनको सदा चौकस बनाये रखने का प्रयत्न किया जाना चाहिये । इधर कलाओं की वृद्धि हुई है, उधर वाण विद्या और युद्ध विद्या का अभ्यास कम हो गया । अपने सैनिक किसान-घरो से आये है । हमारी कला उनके विवेक मे नही बैठी इसलिये अपनी जानी पहचानी को ले उठे और हमारी कला की दिल्लगी उड़ाने लगे । हम कलाओ को अधिक समय देंगे तो वे अवसर पाते ही अपनी वासनाओ पर उतर आयेंगे ।'

इस व्याख्या से मानसिंह का अन्तर्मन सहमत नही हुआ । वह सोचने लगा ।

मृगनयनी ने कहा, 'मैने महाभारत मे पढा है कि देश रक्षा शास्त्र द्वारा हो जाने पर ही शास्त्र का चिन्तन हो सकता है । मेरा यही प्रयोजन है और कुछ नही ।'

'बिलकुल ठीक कह रही हो, मैं मानता हूँ और यही करूँगा । इसी ओर ध्यान दूँगा । केवल राई मे एक मन्दिर बनवाने की साध है सो यह भी होता रहेगा और वह भी और केवल एक सङ्गीत-विद्यापीठ की स्थापना ग्वालियर में । इसका मुहूर्त हो गया है : मैं घोषणा करके यहाँ आया हूँ ।'

'अच्छा है । परन्तु महाराज, कला कर्तव्य को सजग किये रहे, भावना विवेक को सम्बल दिये रहे, मनोबल और धारणा एक दूसरे का हाथ पकड़े रहे मुझको और कुछ नही कहना है ।'

'यही करूँगा। मै प्रण करता हू। सुना है कि सिकन्दर आगरे में अपनी छावनी डालकर ग्वालियर पर प्रचण्डता के साथ आक्रमण करने की बात तै कर चुका है। मैं सेना को ठीक करने का अब लगातार प्रयत्न करूँगा।

'मैंने कुछ अनुचित कहा हो तो क्षमा चाहती हूं।'

'कुछ भी अनुचित नही कहा। कभी भी मुझमे कोई त्रुटि देखो तो बिना संकोच के कह डाला करो।'

मृगनयनी खिलकर मुस्कराई।

बोली, 'नृत्य आपको कैसा लगा ?'

मार्नासह प्रफुल्लित हो गया।

'कुछ कहते नही बनता। आचार्य विजयजङ्गम ने जितना सिखलाया होगा। उससे कही अधिक करके दिखला दिया। कितना सजीव और सुन्दर था वह। फिर भी कभी देखूंगा-परन्तु बतलाये हुये कर्तव्य का कुछ पालन करके। यह परिपाटी दक्षिण की है। उत्तर मे भी कभी होगी या वहा से आई होगी जैसे तैल मन्दिर के शिखर की कला यहाँ दक्षिण से आई, परन्तु अब तो कदाचित ही कोई यहाँ उसको जानता हो जो कुछ है वह भी गिराव की ओर जा रहा है!! मै उसको ऊपर उठाना चाहता हूँ।'

मानसिह के भीतर ललित कलाओ का अनुष्ठान फिर जाग पडा।

बोला, 'तुमने चित्रकारी मे भी बहुत कुशलता पा ली है थोडे से बरसो मे ही इतना सब सीख लिया। विलक्षण हो।। सिखाने वालो के भी आगे निकल गईं !!!'

मार्नासह की कल्पना मे कला का चित्र आया और तिरोहित हो गया।

मृगनयनी लज्जा के साथ मुस्कराई।

मानसिह को गये, पुराने दिनो की स्मृति आ गई। उसको लगा मृगनयनी का शारीरिक सौन्दर्य भीतर के सौन्दर्य के साथ साथ बढता ही गया है।

मृगनयनी ने कहा, 'चलिये अपनी चित्रशाला मे ले चलूँ। वहीं आपके ऊपर रङ्ग के कुछ छीटे भी डाल दूँगी।'

'मै चाहता भी यही हू। मै तुमको क्या कोरा छोड दूँगा ?' मानसिह बोला और हँसता हुआ उसके साथ हो लिया।

मृगनयनी की चित्रशाला को वह अनेक बार देख चुका था। अवतारो के देवताओ के चित्रो के साथ मानसिह के विविध स्थितियो के चित्र थे। कौमुदी महोत्सव और वसन्तोत्सव के भी। एक ओर राग रागनियो के भी चित्र थे। एक चित्र अधूरा था। उसका प्रारम्भ उसी दिन किया गया था। रेखाये तैयार थी, रग नही भरे गये थे मानसिह ने बारीकी के साथ देखा। चित्र दो भागो मे विभक्त था। एक भाग मे वस्त्राभूषणों मे सजी हुई एक सुन्दरी मच पर बैठी है, एक पखावज लिये है। दूसरी स्वर-मण्डल का वाद्य, तीसरी बीणा पर उङ्गलिया फेर रही है। चौथी नाच रही है, पाँचवी गा रहा है। एक स्त्री रग राग और सुगन्धित द्रव्य लिये मच पर बैठी हुई सुन्दरी के पास सेवा के लिये खडी है। सारा दृश्य जैसे किसी रानी का दरबार हो। चित्र के दूसरे भाग मे थोड़ी दूर, पृष्ठ भूमि मे, जगल और पहाड है। उनमे कुछ सशस्त्र शत्रु छिपे लुके से जान पडते है। रानी के दरबार के द्वार के बाहर एक योद्धा अनिश्चय की वृत्ति मे खडा हुआ है—उसका एक पैर रानी के दरबार मे जाने के लिये उठ चुका है, मुह जगल मे छिपे शत्रुओ की दिशा मे है और आँखे उस दरबार की ओर फिरी हुई है। उसके तरकस मे तीर नही है, कमर मे बंधी तलवार म्यान से आधी बाहर है।

मानसिह ने सोचा, 'क्या इस योधा की आकृति मेरी जैसी बनाई गई है ? और क्या मच पर वैठी हुई सुन्दरी की छवि मृगनयनी से

मिलती है। कुछ क्षण की, बारीक निरख के बाद उसको विश्वास हो गया कि कोई भी आकृति पहचाने हुये व्यक्तियो से नही मिलती। फिर भी चित्र का प्रयोजन स्पष्ट था।'

'पूछा, रंग कब भरे जायेंगे इस चित्र मे ? बहुत सुन्दर बन पडा है।'

'किस दिशा से चित्र मे रंगो का भरना आरम्भ करू ? पहले इस जङ्गल की ओर से या नृत्यशाला की ओर से ?' मृगनयनी ने कटाक्ष के साथ मुस्कराते हुये प्रश्न किया।

मानसिह हँस पडा।

बोला, 'दोनो मे एक साथ रग भरो।'

'एक साथ !' मृगनयनी ने हँसकर कहा।

'तो जैसा जी चाहे। तुम अपने इस चित्र की बात को मेरे मन मे पहले ही बिठला चुकी हो,'—हँसते हुये बोला,—'चित्र तुमने विलक्षण बनाया है, चित्र के किस अग को पहले रग की कूची दोगी, इसको तुम्हे ही तै करना पडेगा। अभी तो रगपञ्चमी का अपना रंग बरस जाय।'

मृगनयनी ने मुस्कान के साथ बड़ी-बडी आखो के पलक उठाये और गिराये। मानसिह के ऊपर उसने रग डाला और मानसिह ने उस पर।

उसको अङ्क मे भरकर मानसिह ने कहा, 'तुन सचमुच मेरी देवी हो।'

थोडी देर बाद मानसिह मानमन्दिर को लौट आया।

अभी सूर्यास्त नही हुआ था। मानमन्दिर के पत्थरो का रग सध्या कालीन प्रकाश से होड सी लगा रहा था। कदली पल्लवो का आकार-प्रकार और सही रग मोहक था। जैसे-जैसे निकट पहुचता गया उसके चमत्कारपूर्ण विपुल वैभव और सौष्ठव के रस मे मस्त होता गया। द्वार पर पहुचकर अपनी कल्पना और शिल्पी के कौशल पर उसको अभिमान हुआ उसी समय मृगनयना की चित्रशाला के उस अधूरे चित्र की बात याद आई। कला का अनुशीलन और कर्त्तव्य का पालन साथ-साथ चल सकते है। मै सेना को भी

सजाऊँगा और ललित कलाओ की भी उन्नति करता रहूँगा। नायक बैजू ने आज होरी को कितने मिठास के साथ गाया था! कितना महान कलाकार है वह!! मृगनयनी का ताण्डव नृत्य भी कितना सुन्दर, कैसा सलौना था!!! मृगनयनी के अधूरे चित्र की दोनो दिशाओं मे एक साथ ही रङ्ग भरे जा सकते है, उसने सोचा।

[६१]

ग्वालियर के किले मे सास—बहू के मन्दिर के पास पूर्व की ओर किले की दीवार के एक कोने पर एक छोटा—सा दो मञ्जिला पक्का मकान था।

बैजू इसी मे अकेला रहता था। रसोइया राज्य की ओर से खाना पकाने के लिये नियुक्त था। इसलिये वेफिक्री के साथ वह सङ्गीत के अभ्यास मे चिपटा रहता था।

वसन्त ऋतु जाने को थी परन्तु प्रात.कालीन समीर की सुगन्धि और ठण्डक को उसने अभी नही बटोरा था।

नायक बैजू मानसिंह और मृगनयनी के सुझाये हुये, टोडी राग के एक भेद को गले के स्वर और वीणा के तारो पर साज, और माज रहा था। निकटवर्ती मन्दिर मे वीणा के ऊपर कोई उँगलियो के झटके दे रहा था। यह अटल था। ग्वालियर नगर मे अनेक गृहस्थ गाने और वीणा वजाने के शौकीन हो गये थे। जिसको वीणा का वाद्य दुरूह जान पड़ा उन्होने सितार को पकड़ लिया। अमीर खुसरू ने दो सौ वर्ष पहले वीणा को सितार का रूप दे दिया था। ग्वालियर मे सितार का चलन उसकी सुगमता के कारण हो गया था।

परन्तु अटल ने सितार को ग्रहण न करके वीणा पर ही हाथ फेरने का निश्चय किया। वीणा उसकी साधारण और छोटी-सी थी। गुरु से नाम मात्र को शिक्षा पाकर उसने इधर-उधर सुने हुये और अपने गीतो को वीणा पर निकालने के अभ्यास मे दिन-रात एक कर दिये।

उसको लगा मुझको बहुत आ गया। वह बैजू को अपने हाथ की कारीगरी से परिचित कराना चाहता था। बैजू को अपने घर बुलाना दुष्कर था। उसके घर पर वीणा ले जाकर दाल भात मे मूसलचन्द बनना उसको अच्छा नही लगा। सास बहू के मन्दिर निकट ही थे। वहू वाला छोटा मन्दिर विशेपकर निकट-इसलिये इसी मन्दिर के वाहरी भाग मे बाजे को लेकर जा बैठा। कोई विलक्षण बात न थी। घरो मे, चबूतरों और चौराहो पर, मन्दिरों मे और पेडो के नीचे, यही हो उठा था। यहा तक कि प्रात· कालीन स्नान-प्रक्षालन के लिये जो नगर वाहर कुआ, बावडी या तालाब पर जाते थे वे भी अपनी वीणा या सितार को कन्धे पर बांध ले जाते थे। और अवसर मिलते ही 'नोमतनोम' मे लग जाते थे।

अटल बडे चाव के साथ वीणा के ऊपर एक तराने को निकाल रहा था। उसको आशा थी कि जैसे ही बैजू का ध्यान, इस ओर वटा कि उसने भीतर बुलाया और खूब घुटेगी, दो कलाकारो के बीच—एक गुरु और दूसरा मान्य शिष्य होने लायक तो जरूर ही है।

बैजू मकान के ऊपरी खण्ड की खिडकी के पास अपने काम में गहरे डूबा हुआ था। यह तान, वह तान, यह गमक, वह गमक। यकायक वैजू के गले से ऐसी ताने बनकर निकली कि वह हर्ष की कलोलों मे थिरक गया। फिर उसने वीणा के ऊपर उन्ही तानो के उतारने का प्रयास किया। कई बार असफल हुआ। वीणा को एक तरफ रखकर झरोखे से मान-मन्दिर की एक कोर को देखने लगा। कंगूरो के नीचे पत्थरो मे बनी हुई बन्दनवारो की उमेठी और मुरकी हुई बेलो के बीच मे चौकोर झिझरिया और सूंड उठाये हुये हाथी पर रिपटी हुई रवि-रश्मियो पर आँख जम गई। एकाध क्षण पीछे पत्थरो की जालियो मे बने पुष्पो और हसो पर जा अटकी।

'अरे! यह मन्दिर भी टोड़ी की इसी तान को ले रहा है! वीणा पर तान और गमक अब यो निकल आवेगी।' वह उल्लास के साथ वोला।

झपटकर उसने वीणा को उठाया, गले से लगाया और उसके कई चूमे लिये। इस आलिंगन, चुम्बन मे वीणा की एक खूँटी ढीली पड़ गई और तार का तनाव कम हो गया। बैजू को नही मालूम पड़ा। जैसे ही बजाने के लिये तार पर उङ्गली, चलाई वीणा बेसुरी बोली।

बैजू ने खिसियाकर कहा, 'क्या करती है?' तुरन्त समझ मे आ गया कि खूँटी का अपराध है हँस पडा।

'ओ हो! मान मन्दिर की तुमने भी झांकी ली और ढीली पड गई। ठीक करे देता हूँ।'

अटल के कान मे भी आवाज पड़ी। उसने अपने बाजे को और भी ऊँचे स्वरों में बजाया।

बैजू जब खूँटी को उमेठ कर तारो को मिला रहा था, तब अटल के बाजे की झकार उसके कान मे पडी। अपनी वीणा को गोद मे रखकर बैजू ध्यान के साथ उस मन्दिर से आने वाली ध्वनि को सुनने लगा। कुछ क्षण सुनने पर एक हाथ मे वीणा को लिये हुये खिडकी पर आया। वहाँ से अटल दिखाई पडता था।

बैजू का चेहरा विकृत होगया।

डपटकर चिल्लाया, 'अबे ओ! अरे ओ बेसुरे बेताले!! बन्द कर इस कनफोडे को!!!'

अटल ने खडे होकर उसको प्रणाम किया। बैजू ने जैसे देखा ही न हो।

बोला, 'क्यों पीछे पडा है राग-रागनियो की हत्या के! बन्द कर इस पाप को नही तो रौरव नरक मे जायगा!!'

'आपसे सङ्गीत के विषय मे कुछ बात करना चाहता हू सीखना चाहता हू। तराने बजा रहा था।' अटल ने कहा।

बैजू बरस पड़ा, 'अबे तराने के बच्चे, जाता है यहां से या फेकूं ढेले तेरे ऊपर फोड़ूं तेरा सिर!'

'मै कुंवर अटलसिंह हूं। आपने पहिचाना नही।' अटल ने वतलाया बैजू चीखा, 'भाग! भाग!! भाग!!! वड़ा आया कही का सिंह—विंह'!!!!

अटल क्षुब्ध होकर मन्दिर के पीछे चला गया। वैजू अपनी अटारी मे।

अटल ने चाहा वीणा को बहू या सास किसी के भी मन्दिर के पत्थरो से दे मारूं और टुकड़े—टुकडे करके चल दूं। वह वीणा को बगल मे दबाकर वहाँ से चल दिया।

[६२]

मानसिंह के साथ मृगनयनी कई बार राई के जङ्गलों मे शिकार के लिये हो आई थी, पर अबकी बार मन में विशेष उल्लास प्रतीत हुआ।

लाखी के साथ वह उस स्थान पर बड़े चाव के साथ गई जहां कई बरस पहले उसने और लाखी ने दो सवारो को मार गिराया था और दो को भगा दिया था। उस झाड़ी का कही पता न लगा जिसमें वह घटना घटी थी परन्तु पहाडी की मोड़ वही थी जिसके पीछे से चार सवार आये थे, खड्ड भी वही था।

मृगनयनी ने सोचा यदि फिर वैसा ही अवसर आ जावे तो सामना कर लूंगी? तब छोटी-सी थी, अब वडी हो गई हूं। हाथ पैर में बल भी पहले से अधिक ही है, पर क्या साहस भी उतना ही स्फुरणमय है? क्या उतनी ही मन वाली हूं? इसमे कुछ कसर मालूम हुई। क्या कलाओ के अनुशीलन ने सन्तुलन कुछ अधिक दे दिया है? अब क्या मैं किन्तु परन्तु कर उठूंगी? क्या उतनी भागदौड कर सकूंगी? क्या मरे हुये सुअर को कन्धो पर लाद कर ले जा सकूंगी? इसको शायद न कर सकूं।

लाखी ने अपने भीतर कोई कसर नही पायी। परन्तु ऐसा अवसर कभी आने ही क्यो चला, उसने सोचा।

फिर वे दोनो उस स्थान पर भी गई जहाँ मानसिंह से प्रथम मिलन हुआ था। मैंने कितनी बेधडक बात की थी! क्या वे सब बाते मैने ही कही थी? किसान की लडकी ने! किसान की लड़की राजा से क्या उस तरह बोल सकती है? पर मैं उस समय जानती भी तो नही थी कि राजा कितना बडा होता है। और यदि मैं यह जानती कि राजा की आठ रानियाँ पहले से हैं तो क्या मैं प्रेम की बात को मान लेती? और यह मालूम होता कि सुमनमोहनी कौन और कैसी है तो निश्चय ही नाही कर देती पर अब क्या? सुमनमोहनी और उन सात के होते हुये भी राजा का मैंने पूरा प्रेम पाया और पाये रहूगी।

शिकार खेलने के उपरान्त राजा उन सबके साथबोधन पुजारीके स्थान पर आ गया। बरगद के पेड़ के नीचे डेरा था। फूटे हुये मन्दिर की जगह एक नया सुन्दर मन्दिर बन गया। परन्तु गाँव मे भक्तो की संख्या अधिक नही बडी थी। नया पुजारी गांव के किसानो की उपज मे से देवता के लिये बीसवे और अपने लिये तीसवे भाग से अधिक लेता था। गाँव वालो को अखरता था परन्तु वे धर्म भीरुता के कारण कुछ नहीं कह सकते थे।

मृगनयनी ने सोचा, इस नये सुन्दर मन्दिर को भी यदि कभी किसी ने आकर फोड़ दिया तो क्या फिर एक नया मन्दिर बनाया जावेगा? कब तक यह क्रम जारी रहेगा। इसके भक्तो की बाहो मे जब तक बल नही आया, तब तक यही क्रम रहेगा। किसान कैसे प्रबल बने कलाओं की शिक्षा से? उँह! उससे इनकी बाहो को कितना बल मिलेगा? पेट भर खाने को मिले दूध, मट्ठा, घी कपडो और कुछ इनके पास बचता भी रहे। तब कलाये इनके बाहुबल को स्थिरता दे सकेगी? यह सब कैसे हो? राजा सेना को पुष्ट करले तो इस काम के करने के लिये कहूँगी।

मृगनयनी ने गाव मे जाने की इच्छा प्रकट की खास तौर से उस स्थान को देखने की जहाँ उसने मानसिंह को गाँव मे आते हुये पहले-पहले देखा था और जहाँ उसने मानसिंह की आरती उतारी थी।

वे दोनो सवारी मे उस स्थान पर गये। अटल घोड़े पर था।

उस स्थान को देखकर मृगनयनी के मन मे मथानी सी फिर गई। वहाँ बहुत से नरनारी उसी प्रकार खड़े हुये थे। उसी तरह की आरती। थालियो मे फूल नही थे। पुजारी ने फूल के पेड नही लगा पाये थे। मृगनयनी उस दिन ऐसी ही पाँत मे खडी हुई थी।

मानसिंह उसके पास आया।

बोला, 'यही है वह स्थान जहा तुमको और लाखारानी को पहले पहल देखा था।'

लाखी उन नारियो के चेहरे पहिचानने मे लगी हुई थी। कुछ पहिचान मे आ गये, कुछ नये थे इन्ही के हठाग्रह और षडयन्त्र का मै शिकार होकर यहां से गई थी कितने सीधे और विनीत विनम्र दिख रहे है इस घडी! मेरे और अटल के साथ कितनी दुष्टता की थी इन्होने!!

मृगनयनी ने मानसिंह से कहा, 'मैने अपने देवता पर यही फूल चढ़ाया था।'

वह बोला, 'और देवता ने उस फूल को अपनी पगड़ी मे खोस लिया था।'

'पर क्या किया उस फूल का?'

'सामने जो है।'

'बड़े वैसे हो आप।'

'नही पगडी मे ही खोसा हुआ है, परन्तु उसको कोई देख नही सकता।'

न जाने क्या कह उठते है अब नही बोलूंगी।

थोड़ी दूर मृगनयनी का घर था। वह गिर-गिरा गया था। अटल उसको देखकर लौटा।

राजा को प्रसन्न पाकर बोला, 'घर तो गिर ही गया है। था भी उसमें क्या। परन्तु जन्मभूमि है।'

लाखी ने धीरे से मृगनयनी से कहा, 'क्या कहना इनकी जन्मभूमि का।'

मानसिंह ने अटल से कहा, 'उसमे जो कुछ था अब गढ़ी के रूप में खड़ा कर दो कुवर जी।'

अटल को अचरज हुआ, 'गढी! कहाँ बनेगी गढ़ी यहा पर महाराज।'

मानसिंह ने उत्साहित किया,—'देखो तो पहले। क्या यहा कोई भी स्थान नही जहा गढी बन सके?'

अटल ने नदी के दोनो किनारो की तरफ आँख दौडाई और पीछे ऊँचे पहाड़ पर जा ठहराई।

'है तो महाराज, यह पहाड की चोटी है परन्तु ऊँची बहुत है। फिर वहा पानी की कमी कितनी बनी रहेगी?' अटल बोला।

मानसिंह ने कहा-'पहले यहाँ गढी थी। तालाब था। गढी खडहल हो गई और तालाब पुर गया। तालाब को उघरवाये देता हूँ। और गढ़ी को बनवाये देता हूँ। ग्वालियर की रक्षा के लिये इस पहाड़ी की चोटी पर एक अच्छी गढी का बनवाना बहुत आवश्यक है। अचम्भे की बात है कि आज तक मेरे ध्यान मे यह सूझ क्यो नही आई यद्यपि जानता इस स्थान को बहुत पहले से हूँ।'

मृगनयनी की कल्पना मे उसको चित्रशाला का अधूरा चित्र घूम गया। रेखा चित्र के जङ्गल वाले भाग मे रङ्ग का भरना शुरु हो गया है। उसने प्रसन्नता के साथ सोचा।

राजा ने गाँव भर के सामने अटल से कहा, 'मैं तुमको यह गाव और नागदा की भूमि जागीर मे सुत-सन्तान के लिये लगाता हूँ। गढी

शीघ्र बनेगी। राज्य की रक्षा और प्रजा का पालन चित्त देकर करना।'

आनन्द के मारे अटल फूल गया। अब बैगू या कोई जू मेरा तिरस्कार नही कर सकेगा, उसके अन्तर्मन मे उठा और हर्ष मे विलीन हो गया।

मृगनयनी ने सोचा क्या गॉव के किसान इनके जागीरदान बन जाने से सुखी हो जायेगे। हमारे उन खेतो को कौन जोतेगा जिनकी मै रखवाली किया करती थी? आजकल कौन जोतता होगा? पूछूं? व्यर्थ है। फिर भी पूछूं। फिर लाभ क्या? छोटे-छोटे से थोड़े से खेत थे। पूछने का अर्थ कही यह न हो जाय कि जिनके पास अभी है उनसे छीन ली जावे। जाने भी दूं।

लाखी से बोली, 'अब तो तुम अपनी गढी मे जाकर रहोगी राव-रानी जी।'

उसने चिहुँक कर उत्तर दिया, 'मै तो अपने गूजरी महल मे रहूँगी महारानी जी।'

मृगनयनी हँस पडी।

'मौजी, तुमको यहाँ एक दिन आकर रहना ही पड़ेगा।'

'ननद जी, मैं तुम्हारी इस वात को नही मानूंगी!'

मृगनयनी के स्वर की नकल करते हुये लाखी ने व्यङ्ग किया। वह प्रसन्न थी।

[६३]

ग्वालियर पर आक्रमण करने और अबकी बार उसको धूल में मिला देने के इरादे से सुल्तान सिकन्दर ने आगरे मे बडी भारी सेना तैयार की। लगभग एक लाख सवार दो लाख पैदल सिपाही दो लाख गुलाम और एक हजार हाथी। अरबी और फारसी की शिक्षा के लिये उसने एक वहुत वड़ा मदरसा स्थापित किया था। दरबारी मुल्लो के साथ

इस मदरसे के मौलवियो को भी लेने का संकल्प किया। कूच करने मे अभी विलम्ब था। उसके जासूसो ने समाचार दिया कि गुजरात का महमूद बघर्रा मालवा की ओर आ रहा है। गुजरात और मालवा के सुल्तानों केयुद्ध का परिणाम देखकर ही वह ग्वालियर पर आक्रमण करना चाहताथा। मौलवी और लडाकू सरदार उसको शीघ्र हमला करने के लिये उकसा रहे थे। कूच के मुहूर्त का निश्चय करने के लिए एक पहर रात गये आगरे मे दरबार हो रहा था। ऋतु सुहावनी थी। लड़ाई के लिये चल पडने की धुन का मन मे ज्वार उठ रहा था। सिकन्दर का जासूसी विभाग बहुत सुसंगठित था। उसने समाचार दिया था कि राजा मानसिंह तोमर ने सङ्गीत-विद्यापीठ को स्थापित करके नायक बैजू के हाथ मे, जो पागल है, दे दिया है और अब इमारतो के काम को थोड़ा सा ही चलाता हुआ बड़े पैमाने पर सेना को तैयार करने मे जुट पड़ा है।

'जहापनाह चढ बैठने का यही मौका है। बरसात के लिये तीन चार महीने है। कूच करने मे देर नही लगनी चाहिये।' एक सरदार ने अनुरोध किया।

प्रधान मुल्ला ने कहा, 'मान-मन्दिर को साफ कर देने की घड़ी आ गई।'

सिकन्दर बोला, 'महमूद बघर्रा माडू को खतम करके चन्देरी नरवर होता हुआ ग्वालियर आ सकता है मै चाहता हूं ग्वालियर को खतम करके नरवर चन्देरी होता हुआ माडू को। फिर दिल्ली की बादशाहत में मिलाऊँ और फिर गुजरात को। बघर्रा और नसीरुद्दीन की फौजे आपस मे उलझ चुके उस वक्त कूच करना मुनासिब होगा।'

एक सरदार ने समर्थन किया,—'मुनासिब है बघर्रा मालवा मे आते-आते राजपूताने की तरफ रुख फेर दे और नसीरुद्दीन से लड़ाई न हो, इसलिये देख लेना अच्छा होगा। इन्तजार की सलाह ठीक है।'

सेनानायकों और मुल्लाओं का बहुमत तुरन्त चढ़ाई कर देने के पक्ष में था। आगरा में इतनी बड़ी सेना का पड़े-पड़े खिलाते-खिलाते खजाना भी कम होता जा रहा था।

सिकन्दर ने मान लिया। उसी समय बड़ी जोर की गड़गड़ाहट शब्द हुआ दीवान आम की छत दीवारें, खम्भे, फर्श, तख्त मसनद तकिये काँपने लगे। लगता था जैसे प्रलय की घड़ी आ गई हो मुल्लों से मुल्लों के सरदारों से सरदारों के सिर टकरा गये। तख्त के ऊपर बादशाह औंधे मुँह गिर पड़ा और पंखा झलने वाला गुलाम उसके ऊपर। मौलवियों और सिकन्दर की आँखों के सामने बोधन के मारे जाने का चित्र फिर गया।

'या अल्लाह ! रहम !! रहम !!!' उन लोगों के मुंह से चीख निकली। शमादान लौट गये। अन्धेरा छा गया। मानो परमात्मा ने उनकी पुकार सुनने से इनकार कर दिया हो। लोग इधर-उधर दूटने लगे।

बड़ा प्रचण्ड भूकम्प आया था।

× × ×

करवट आँख खुली,हाथ बढाया और ढाई सेर चावल साफ। तीन चार घण्टे बाद दूसरे करवट आख खुली, हाथ बढाया और दूसरा ढाई सेर गायब। सवेरे सेर भर घी, सेर भर शहद और डेढ़ सौ केलो का कलेवा क्षुधा शांति के लिये मौजूद उसमे कोई मीन मेख ही नही।

पहले पहर की गहरी नीद सोया ही था कि पलङ्ग हिल गया जैसे आतो मे ववण्डर आ गया हो। बघर्रा चित सो रहा था। पलङ्ग की प्रचण्ड हिलडुल ने करवट दे दी। आंख खुल पडी। बघर्रा ने पास रक्खे हुये पीढे वाले थाल के चावलो पर हाथ बढाया। पीढा खिसका। बघर्रा ने और हाथ बढ़ाया। वह और भी खिसका। बघर्रा ने कुडकुडा कर एक हाथ को वहुत लम्वा किया और दूसरे से आंखे मीडी। परन्तु चावल हाथ न लगा। धम्म से थाल नीचे जा गिरा। भस्स मे उसके ऊपर पीढा। उस वगल भी यही हुआ। अन्तर इतना रहा कि उस ओर का थाल और पीढा नीचे न गिरकर धच्च से उसकी चौड़ी पीठ पर आ पडा। बघर्रा धडाम से नीचे। पलङ्ग उसके ऊपर। नीचे गिरे हुए चावलो का तकिया वना, कुछ चावलो ने लम्बी मूछो पर सफेद खिजाब का काम किया। पलङ्ग के ऊपर गिरे हुए चावलो मे से कुछ ने मुह पर और कुछ ने छाती पर सवारी जमाई।

बघर्रा चिल्लाया—'ओफ ! जिन्नो ने मार डाला !! कमबख्तो ने सब लौट-पोट दिया !!! बचाओ, बचाओ !!!!'

सारी छावनी मे वही लौट-पोट मची हुई थी। हाथी थानों पर से साँकचे तोड़कर चिंघाड रहे थे, घोडे बिलबिला रहे थे और आदमी लुढ़क-पुढक कर हाय-तोबा मचा रहे थे।

पहाड़ो से पत्थर टूट-टूट कर ढहढहाते हुये लुढ़क रहे थे। पेड़ जड़ों से उखड़-उखड कर चरर्राटे के साथ गिर रहे थे। नदियाँ और सरोवरो के पानी मे खलबली मच गई।

भूकम्प अपने प्रचण्ड वेग पर था।

\+ + +

उसी रात माडू का सुल्तान नसीरुद्दीन अपनी बेगमो की मर्दुम-शुमारी की ठान चुका था। अभी पूरे पन्द्रह हजार की गिनती मे लगभग डेढ हजार की कसर थी। वही खाता रोज खुलता था, लेखा जोखा किया जाता था, इसलिये सही संख्या ज्ञात थी। सख्या के सम्बन्ध में उसको कोई खटका नही था, परन्तु उसको समाचार मिला था, कि हरम मे बहुत से लौडे भी स्त्रियो के वेश मे दाखिल हो गये हैं। उसको सन्देह था कि ये युवक कुछ बेगमो की कामवासना को तृप्त करने के लिए आ घुसे है। सन्देह निवारण और दण्ड विधान के लिये मर्दुम-शुमारी की जरूरत पड गई।

कई अङ्ग रक्षिकाये अपने अपने जिम्मे का बही खाता खोले सुल्तान के साथ चल रही थी। मर्दुमशुमारी मे सहायता करने वाली अनेक स्त्रियाँ अनगिनत मशालो को फहराती हुई सुल्तान के साथ थी। मर्दुमशुमारी का काम थोड़ा और असाधारण नही था। स्त्री वेशधारी युवक सहज ही हाथ लगने वाले नही थे। जैसे जैसे बही खाता का पढना अनुसन्धान और समीक्षण चलता वे इधर उधर खिसकते जाते। अन्त मे उनका पकडा जाना निश्चित था, क्योकि महल के चारो ओर सेना का कडा पहरा था नसीर थोडी देर बाद थककर ठहर गया। पैरो के थकने का सवाल ही नही था, दासियाँ कन्धो पर उसके तख्त को लादे चल रही थी। तख्त नीचे रख दिया नसीर मसनद तकियों मे समा गया।

गड गड़ गड़ गड़ ऊम धूम का गर्जन-तर्जन हुआ तुरन्त माडू का किला जो एक ऊँचे दीर्घ पर्वत पर है थर थर काप उठा। नसीर के मसनद तकिये लौटे, तख्त पलटा और वह मुह के बल नीचे जा रहा।

वह चिल्लाया-'बचाओ! मुझको बचाओ!! अब किसी को नही सताऊँगा!!! जिन्न पकड़े लिये जा रहे है, कोई बचाओ!!!'

मशालें हाथो से छूट गई और लुढक-पुढककर जुगनुओं की तरह चमकने बुझने लगी। बही खाते नीचे गिर गये। उनके पन्ने खुलते बन्द होते फड़-फड़ाने लगे। कुछ के ऊपर मशालें गिरी और उनकी होली सी जल उठी। दासियां बेगमो पर और बेगमें दासियो पर लडखडा-लड़खडा कर गिरने लगी। निकटवर्ती महल डिगमिगाने लगे मानो कह रहे हो अब चले और तव चले और बेगमो के रंगीन कीमती कपडे विदा लेने को हुये और उनमे से अनेक सिर के बल गिरी। सेना के सिपाही कयामत का आना समझ सिर पर पैर रखकर इधर-उधर भागे। स्त्री वेगधारी युवको के प्रतीति हुई कि हम चले तो हमारे साथ हमारी प्रेयसियाँ भी चली और अत्याचारी नसीर भी गया! भागते गिरते-पडते उनको बाहर निकल जाने का मार्ग थोडा बहुत सूझा—मानो उन्ही के भाग्य से वह भूकम्प हुआ हो।

× × ×

मानसिह मान मन्दिर से गूजरी महल को आ रहा था। चन्द्रमा के धुँधले प्रकाश मे मान मन्दिर ऐसा प्रतीत हुआ जैसे ध्यान मग्न हो। थोडी देर खडा खडा देखता रहा, फिर चल दिया मृगनयनी के पास पहुँचकर उसने कहा, 'मान मन्दिर मुझको अभी ऐसे लगा जैसे ध्यान मग्न हो।'

मृगनयनी बोली, 'कभी वह हंसता हुआ जान पडता है। कभी गाता हुआ और कभी ध्यान मग्न। किसी दिन उसको रणभेरी का भी काम करते हुए देखेगे आप।'—

उसी समय गरगराहट सुनाई पडी। दोनो सुनने लगे। गूजरी महल काँपने लगा। वन्दवार वाले द्वार झूमने लगे। ऊपर की सीधी खडी पहाड़ी के ऊपर सीधी दीवारे झूला सी झूलने लगी। वे दोनो एक दूसरे के अङ्क मे पड़ गये, लिपट गये और झंझोड़े खाने लगे।

'प्रलय आ रही है!' मानसिंह के मुह से निकला—'इसके पहले यदि कुछ और कर लिया होता।'

वे दोनो एक दूसरे से उलझे हुए गिर पड़े। मानसिंह की आँखें मिच गईं। मृगनयनी की खुली थी। दृष्टि स्थिर। होठ सटे हुये। मुट्ठियाँ कसी हुई।

'कोई बात नही। भगवान की मुस्कान का ध्यान करिये। शिव के ताण्डव का। धैर्य और शांति के साथ, मेरे प्राणनाथ, अन्त के अनन्त के सामने डट जाइये।'

विजयजङ्गम ने दिन मे सात घण्टे काम किया था, जैसा कि उसका नियम था। अब अपने लम्वे केशो मे तेल डालकर चाँदी के जनेऊ मे बंधे शिवलिग को हाथ मे लेकर प्रार्थना कर रहा था– सूत का जनेऊ उसके सम्प्रदाय मे निषिद्ध था। उसी समय गर्जन-तर्जन हुआ। उसने आँखे खोल दी। घर की दीवारे काप उठी। वह अपने आसन पर हिलते डुलते-लुढक गया।

बोला, 'शिव का डमरू वजा है। ताण्डव का आरम्भ है। कलियुग का दुराचार अत्याचार तुमको असहय हो उठा है भगवन्। शरण मे लो। तुम्हारे लोक मे अभी पहुँचता हू।'

जीवन भर उसने कायक-काम, पेट भरने के लिए परिश्रम किया था। उसका विश्वास था मुझ सरीखे काम करने वाले सब शैव–वीर शैव–कैलाश पर्वत पर अनायास पहुँच जायेगे।

× × ×

नायक बैजू ने झटपट थोडा सा खा-पीकर तम्बूरे को हाथ मे लिया और एक नये राग को ध्रुवपद मे बिठलाने का प्रयत्न करने लगा तानों के वीच मे गर्जन की हुंकार उसको एमी लगी जैसे किसी ने पखावज पर जोर की थापे दी हो, परन्तु उस गर्जन-तर्जन का मेल बैजू के गायन की ताल मे न बैठा।

चिल्ला पड़ा–'क्या करता है वे ?'

आखे खोली तो वहाँ कोई नही। दीवार की खूटी से टगी वीणा काँप कर लड़खड़ा उठी।

बोला, 'सरस्वती माता, कही बेसुरा हो गया होऊँ तो क्षमा करना।' वीणा खडखडाकर झन्नाटे के साथ नीचे गिर पडी और वह स्वय तम्बूरा सहित एक ओर लटक गया।

'कौन है रे, तम्बूरा मत फोड डाल मेरा!'

+ + +

सेठ साहूकारो और सम्पत्ति वालो ने अपनी धन-सम्पदा के लिये हाय-हाय मचाई, किसान-मजदूर अपने बच्चो को गिरते-पड़ते अपने तन से ढकने लगे। बहुतेरो की कच्ची मडैया ऊपर से टूटकर आ पडी। रोने किलबिलाने लगे।

वह विकट भूकम्प असाधारण प्रभाव छोड गया—रहा थोडी देर ही, परन्तु धरा को उखाड—पछाड गया। भूकम्प के शान्त होने पर लोगों को विदित हुआ कि भूचाल आया था।

सिकन्दर लोदी के दीवान आम मे लोग पछाडे खा-खाकर उठ बैठे। शमादान रोशन किये गये और तै हुआ कि ग्वालियर पर कुछ दिनो आक्रमण नही किया जायगा।

माडू मे नसीरुद्दीन ने वेहोशी से होश मे आकर बकवास की, उसकी गिरी पडी परियो ने माथे टटोले और कपड़े सम्भाले जब तक सिपाही इकट्ठे हो, तब तक स्त्री वेषधारी छोकरे मार्ग को स्वच्छ पाकर नौ दो ग्यारह हो गये। परियो की शुमार का काम कुछ दिनो के लिये स्थगित हो गया।

गुजरात का सुल्तान महमूद बघर्रा मुश्किल से चावलो, पीढे और पलङ्ग से पीछा छुटा सका जब झाड पोछकर-उठा तो,लम्बीदाडी और मूछों को वेहाल पाया। कमबख्त जलजले ने खाना खराव किया सो किया दाढी मूँछ पर भी कहर वरसा दिया। सबेरे के कलेवे की प्रतीक्षा में और छावनी को यथाविधि स्थिर करने मे उसने अपलक रात विताई। आगे बढना मनहूस समझ कर गुजरात को लौट गया।

मानसिंह ने देखा सब ज्यो का त्यो है। जब आखे खुली तो मृग-नयनी को स्थिर बैठा पाया।

'यह सब क्या था?' मानसिंह ने पूछा।

मृगनयनी ने उत्तर दिया, 'भूकम्प। हम सबको कर्त्तव्य का स्मरण दिलाने आया था।'

विजयजङ्गम ने देखा कैलाश पर्वत पर नही पहुँच पाये। कायक-श्रम- को और भी लगन के साथ अपने जीवन की घडिया दूँगा, अन्त मे कैलाश की प्राप्ति अपरिहार्य है। उसने निश्चय किया।

बैजू ने कहा, 'माता सरस्वती तुमने अपराध क्षमा कर दिया है। कर दिया न? कभी भूल से बेसुरा या बेताल हो गया हूँगा, आगे कभी ऐसा न होगा, कान पकडता हूँ' ग्वालियर मे इतने बेसुरे और बेताले बढ गये है कि ठिकाना नही। हो न हो यह उन्ही के पापो का फल था।'

कुछ पक्के मकान टूट गये थे, कुछ दरारे खा गये थे। उनकी थोडे ही समय मे मरम्मत हो गई। गिरे हुये कच्चे मकानों की मरम्मत मे ज्यादा दिन लग गये। दरिद्र किसान मजदूरो की झोपडियाँ ऐसी गिरगई थी कि उनकी मरम्मत हो ही नही सकती थी। मजदूरी से जब-जब उनको अवकाश मिला, तब-तब उन्होने थोडा-थोडा करके मसाला इकट्ठा किया और काफी समय मे रहने-लायक झोपडिया बना पाई।

मानसिंह ने राई की पहाडी पर गढी का बनवाना आरम्भ कर दिया, परन्तु वह काम उतनी शीघ्रता के साथ नही हो रहा था, जितनी तत्परता के साथ उसकी कला-सेवा चल रही थी। मृगनयनी की चित्र-शाला का वह चित्र अभी अधूरा था।

(६४)

ग्वालियर भर मे समाचार फैल गया कि एक महात्मा रामेश्वर से पैदल चलकर ग्वालियर आये है, केवल लँगोटी लगाते है, नीम के

पत्तो पर गुजर करते हैं और ध्यान मे मग्न रहते है, ग्वालियर से दो तीन कोस उत्तर की ओर मोती झील पर ठहरे है। लँगोटी और नगे पांव ! फिर रामेश्वर से ग्वालियर !! उस पर ध्यान !!! जनता पर आतङ्क छा गया और वह आत्म समर्पण तथा वर-प्राप्ति के लिये उमड पड़ी।

मोती झील को मानसिंह ने तैयार करवाया था। काम पूरा हो चुका था। उससे नहर निकलवा कर वह आसपास की भूमि की सिंचाई का आयोजन कर रहा था। भूकम्प के कारण झील कई जगह नष्ट हो गई थी मानसिंह ने मरम्मत ही नही करवाई वल्कि कुछ महीनो के भीतर झील के वाधो को और ऊँचा और चौड़ा करा दिया। महात्मा इस झील के किनारे आकर ठहरे थे। राजा से मिलना चाहते थे—या जैसा कि मानसिंह के दूत ने कहा, महात्मा दर्शन देना चाहते है। परन्तु दर्शन लेने के लिये राजा को मोती-झील पर स्वयं जाना चाहिये। विजयजङ्गम को भी मालूम हो गया।

राजा महात्मा के पास जाना चाहता था। छै सौ सात सौ कोस की दूरी से महात्मा दर्शन देने के निमित्त पधारे है, हम क्या दो तीन कोस भी चलकर न जाय उनके दर्शन करने ?

विजय ने निवारण किया 'योगी और महात्मा इस तरह मारे-मारे नही फिरते। जिनको आतंक कमाने की पड़ती है वे ही करते है ऐसा।'

'तपस्वी है, मिल लेने मे क्या वुराई है ?'

'इस प्रकार की तपस्या करने वाले लोगो का केवल एक उद्देश्य होता है। परलोक की प्राप्ति चाहे हो या न हो, वे लोग इस लोक को अपनी इस तपस्या के आतंक से मुट्ठी मे दवा लेना चाहते हैं। आपने कई वर्ष हुये मेरे और एक वैष्णव के विवाद पर कुछ इसी तरह की बात कही था। स्मरण है आपको ?'

'हा कुछ धु धला-सा स्मरण है। वोधन पुजारी ने उस दिन सवसे पहले गूजरी रानी की वाण-विद्या का राई से आकर समाचार दिया था।

पुराणो मे अनेक स्थलो पर पढ़ा है कि योगी राजाओ के पास उपदेश देने के लिये गये और राजाओ ने उनका आदर सत्कार किया ।'

'उस युग की बात जाने दीजिये । इस युग की सोचिये । अपनी जनता पर इसका क्या प्रभाव पडेगा ? मेले और हाटें लग उठेगी । तुर्कों से युद्ध होने वाला है, जनता और सैनिकों का ध्यान अपने कार्य को छोड़ कर उसके ढोग की तरफ चल देगा ।'

'ढोग हो और न भी हो, अभी नही जाता हूं । सोचूंगा ।'

मानसिंह दो दिन तक नही गया । उसको समाचार मिला कि योगी ने अनशन कर दिया है—'जब तक राजा आकर मुझसे नही मिलेगा, तब तक नीम की पत्तिया भी नही खाऊंगा ।'

मानसिंह अस्थिर हो गया ।

विजय ने कहा, 'महाराज वह मर जायगा तो एक मूर्ख पागल कम हो जायगा ।'

'बैजू को भी लोग पागल कहते है, पर क्या कोई चाहता होगा कि बैजू मर जावे ?'

'बैजू विद्या का पागल है, यह योगी कहलाने वाला मूर्ख अहंकार का पागल है ।'

'मैं उसको अनशन करके नही मरने दूंगा । उसके इस प्रकार देह का अन्त करने से जतना के ऊपर बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा ।'

मानसिंह नही माना । योगी से मिलने गया ।

योगी दुबले छरेरे शरीर का था । लम्बी कसीली बाहें । देह से जवान और वालो से सौ बरस का । आंखे जलती हुई । मानसिंह ने सोचा योगाभ्यास के कारण सोने जैसा तप गया है ।

मानसिंह ने प्रणाम किया । उसने वरदहस्त उठाया । योगी ने कहा, 'इतना घमण्ड है तुझको !'

मानसिंह का स्वाभिमानी क्षत्रियत्व जाग परन्तु कलाओं की विनय ने उसको नियन्त्रित कर दिया। बोला, 'घमण्ड के कारण नही, युद्ध की तैयारी मे फँसा रहने के कारण नही आ पाया।'

'उसी के सम्बन्ध मे कुछ बतलाना चाहता हूँ।'

आज्ञा हो पालन करने की सोचूँगा।'

'कितने सैनिक तैयार हो गये हैं ?'

'पचास सहस्त्र यहाँ, पच्चीस सहस्त्र नरवर मे। चम्बल नदी की चौकियो पर एक-एक दो-दो सहस्त्र तैयार है।'

'चौकियों की बात जाने दे। और बढा सकेगा ?

'कठिनाइयो के साथ, परन्तु प्रयत्न करूँगा।'

'ग्वालियर के किले को ठीक अवस्था मे कर लिया है ?'

'ठीक अवस्था मे है।'

'सुरङ्गो को ठीक रखना, कदाचित आवश्यकता पड जावे।'

'साफ सुथरी हैं।'

'कितनी है ?

'एक।'

'कहाँ को गई है ?'

'जंगल पहाड को परन्तु महाराज, पुरखो की आन है कि सुरंग का हाल सिवाय अपने पुत्रो और सेनापति के किसी को भी न बतालाया जाय इसलिये और आगे कुछ नही कह सकता।'

'कोई बात नही, कोई बात नही। युद्ध की तैयारी की अपेक्षा भजन और पूजा मे अधिक लगा रह और अपने सैनिको को भी लगा। इसी से कल्याण होगा। जा, अब मुझको मत घेर। ध्यान लगाऊँगा।'

मानसिंह चला आया। वह योगी की कसीली देह और सतेज नेत्रो से प्रभावित हुआ था। विजय जानने को उत्सुक हुआ। दूसरे दिन बातचीत हो सकी।

मानसिंह ने उसको सब बात बतलाई। उसने कहा, 'कोई विशेष महत्व की बात नही हुई। मुझको उसकी जगमगाती हुई देह, और दमकती हुई आँख बहुत अच्छी लगी।'

'कोई महत्व की बात नही हुई ! आप कहते क्या है !! सेना और किले का सारा भेद ले लिया उसने !!!

'सब किसी पर शंका उठाने का तुम्हारा स्वभाव ही है।'

'अब भी आपको उस तपस्वी के ढोंग पर विश्वास है ! युद्ध के काल मे आपको और सैनिको को जो भजन-पूजन मे ही डूब जाने का उपदेश दे वह कैसा भी कोई, हो, मुझको तो नही जंचता। एक बार दिखवा-इये तो उसको, है भी मोती झील पर या नही।'

राजा ने खोज करवाई। योगी का पिछली सध्या से ही कोई पता न था।

'महाराज !'—जरा तीखे स्वर मे विजय ने मानसिंह से कहा, 'मुझको तो वह शत्रु का जासूस मालूम पड़ता है। सेना और सुरङ्ग का भेद ले गया। सेना की गिनती जान लेने का उतना भेद नही है परन्तु सुरङ्ग का भेद हाथ से निकल गया यह बहुत बुरा हुआ। अब किले को अन्न से भर लीजिये। सुरङ्ग अरक्षित हो गई है। अटक भीर पर न तो सुरङ्ग से अन्न इत्यादि प्राप्त हो सकेगा और न कोई सहायता। उल्टे वहाँ होकर शत्रु के किले मे घुस पडने की सम्भावना हो गई।'

मानसिंह को बहुत परिताप हुआ। मृगनयनी के उद्बोधन का स्मरण हुआ-क्या कलाओ के परिशीलन ने मेरे मन की चौकसी को ढीला कर दिया है ! कलाओ का इसमे क्या दोष ! बहुत करके वह कोई योगी ही था। उसका एक स्थान छोडकर दूसरे पर चल देना शका का कारण नही होना चाहिये। भजन पूजन मे लगे रहने का उसका उपदेश स्वाभाविक ही था। योगी और किस बात का उपदेश करता ? विजय का सदेह भ्रम पर आधारित है। परन्तु यह ठीक है कि मुझको सेना का सङ्गठन तत्परता के साथ करना चाहिये, और उस

सुरङ्ग को बन्द कर देना चाहिये। फिर गाढ़े समय पर का रक्षा साधन ? रक्षा का साधन भगवान का भरोसा और भुजाओ का बल है। सुरङ्ग को बन्द कर दूंगा।

मानसिह ने अविलम्ब सुरङ्ग को बन्द कर दिया। तत्परता के साथ युद्ध की तैयारी पर पिल पडा। राई की गढी तैयार हो गई। अन्य गढी और गढियों की भी उसने मरम्मत करा ली।

बरसात भोर, एक दिन उसको समाचार मिला कि सिकन्दर लोदी ने विशाल सेना के साथ चम्वल को पार कर लिया।

(६५)

सिकन्दर ने अपनी सेना के तीन खण्ड किये। एक नरवर की दिशा मे भेजा और दो खण्डो को भिन्न-भिन्न दिशाओ से ग्वालियर पर। राई के पास से आने वाले खण्ड के साथ वह स्वय था। नरवर की ओर जाने वाली सेना का पता मानसिह को नही लगा। उसने समझा ग्वालियर पर ही तीन तरफ से चढाई हो रही है।

मुकाविला करने की योजना शीघ्र बन गई। उत्तरी सिरे को मानसिंह खदेड़ता हुआ बीच वाले खण्ड को जा दबोचेगा, दक्षिण सिरे को मानसिह का एक नायक इसी तरह दबावेगा और बीच वाले को अटल रोककर पीछे हटावेगा। बीच वाली तोमर सेना के सहारे के लिये राई की गढी अटल के अधिकार मे। तैयार होते ही वह उसको मिल गई थी।

राई की गढी मे अटल के साथ लाखी को जाना था। लाखी मृगनयनी से विदा लेने आई। वह गढी मे एक बार रह आई थी।

'चाहती थी यही बनी रहूँ।' लाखी ने कहा। उसके गले मे कुछ अटका।

मृगनयनी बोली, 'मै भी यह चाहती हूँ। भैया से कह देती हूँ। राई की गढ़ी कुछ बडी नही है। हम दोनो यहा किले की रक्षा के लिये एक साथ रहेगी।'

'वह कहते थे कि उन्हे बाहर–बाहर लड़ना पड़ेगा, मैं गढी की देख-भाल और सहायता के लिये भीतर रहूँ।'

'अकेली वहां क्या करोगी ?'

'अकेली तो नही रहूगी। कुछ और सरदारो की भी स्त्रियां होगी। पहली लड़ाई के समय गांव के नर-नारी जङ्गलों मे भाग कर बहुत कष्ट झेलते रहे—मैने तुमने ही क्या-क्या नही भुगता था—अबकी बार वे सब गढी मे आ जावेगे।'

'और तो कोई बात नही, कही घिर न जाओ गढी मे।'

'घिर तो कही भी सकते है।'

'यहाँ सम्भावना कम है। पर असल मे मोह साथ रहने का है। सोचती हूँ भैया के पास तुम्हारा रहना उस छोटी-सी गढी मे अधिक उपयोगी होगा।'

'मै भी सोचती हू, पर न जाने मन क्यो वैसा हो रहा है। अच्छा, अब तुम अपनी उसी मुस्कान के साथ विदा दो जिसके साथ पहले राई गढी को भेजा था।'

मृगनयनी के होठो पर मुस्कान आ गई और आंखो मे जल। लाखी की आँखो से तो बडे–बडे आँसू टपक पड़े। दोनो एक दूसरे मे लिपट गई।

मृगनयनी अपने को सयत करके बोली, 'कोई सङ्कट आता दिख–लाई पडे तो तुरन्त समाचार भेजना, मै यहा से सहायता भेजूंगी।

'यदि समाचार भेजने का सुभीता न हुआ तो ?' लाखी ने पूछा।'

'तो कोई ऐसा सकेत करना जो यहाँ दिख जाय।' मृगनयनी ने उत्तर दिया।

लाखी ने ऐसे संकेत को सोचा। उसको नरवर का स्मरण हो आया। नटो ने उस रात एक बडी होली जलाई थी। लाखी ने नरवर से आकर बतलाया था, फिर सुनाया।

मृगनयनी ने कहा, 'मुझको आशा है शत्रु को अबकी बार भी उसी प्रकार पीछे हटा दिया जायगा जैसे पहले कई बार हटा चुके है।'

लाखी चली गई। चलते समय उसने मुड़कर एक आँसू और ढलकाया था।

योजना के अनुसार मानसिंह भी किले से बाहर लडने के लिये चला गया।

मृगनयनी ने दूसरे दिन अपनी चित्रशाला के उस अधूरे चित्र के कर्तव्य–दिशा वाले अङ्ग मे कुछ और रङ्ग भरे। परन्तु चित्र अब भी अधूरा था।

(६६)

मुरैना के निकट आलमपुर के ऊँचे नीचे मैदानों मे पहली टक्कर सिकन्दर के उत्तरी खण्ड से मानसिंह के दल की पहले हुई। मानसिंह का हाथी दल सिकन्दर की सेना के हाथी–दल के सामने नही था परन्तु लडते–लडते इन दोनो दलो की मुठभेड़ हो गई। मानसिंह घोडे पर था। इसको हाथी की अपेक्षा अपने घोडे पर अधिक विश्वास था।

दोनो पक्षो के हाथी–समूह बिखर कर लड़ने लगे। परन्तु हाथी से हाथी टकराते कम थे, चीखते–चिंघाडते अधिक थे। हाथियो के हौदों पर से दोनो दल तीरो की वर्षा कर रहे थे। योद्धा भारी कवच, झिलम टोप और तवे चढ़ाये हुये थे, इसलिये एक दूसरे को बहुत कम हानि पहुँचा सके। करारी लड़ाई पैदलो और सवारो की हुई।

मानसिंह ने देखा दिल्ली की सेना के एक अंग मे विचित्र आकार प्रकार के सिपाही बेतरह लड़ रहे है। रङ्ग तामियां, माथे सकरे, आखें छोटी, नाक चिपटी–चिपटापन मानो कान तक जा रहा हो-मुंह चौडा जैसे बिना हँसी के हँस रहे हो। गाल चमडे की सुराहियो जैसे फूले हुये और गाल की हड्डी उठी हुई, सिर कन्धो पर सटा हुआ मानो गर्दन हो ही नही, ठोडी के ऊपर बाल बहुत थोडे। उसने इनका वर्णन कही पढा था-हूण है, आजकल के मुगल, यशोवर्मन ने कभी पहले इनके पुरखो को ठोका था, आज मै देखता हूं। मानसिंह ने तुरन्त तोमरो के घुड़सवार दल को इन पर टूट पडने की आज्ञा दी।

तोमर टूट पड़े। मुगल पैदलो को सहायता के लिये तुर्क-सवार आये परन्तु तोमरो का वज्र प्रहार पहले ही पड़ चुका था। मुगल सैनिक जान पर खेलकर लड़ने लगे पर तोमर सवार आधी की तरह टूटे थे। तुर्क सवार उन पैदलो की रक्षा करने नही आ पाये थे कि तोमर सवारो ने उनको लगभग बिछा डाला। तुर्क सवारो से मानसिह का दल 'हर, हर महादेव !' की पुकार लगाता हुआ जा भिडा। तुर्क सवारो ने मुकाबिला किया। तोमर सवार जिन्होने मुगल पैदलो की पाँतो को तोडा था, दूसरी ओर से उन पर झपट पड़े। थोड़ी ही देर मे तुर्क सवारो को पीछे हटना पडा। उनके साथ ही दिल्ली की सेना के अन्य पैदल सिपाही पीछे हटे। फिर दिल्ली की सेना लड़ते-लड़ते पीछे हटती ही गई। दिल्ली के हाथी समूह ने जब अपनी सेना के एक बडे अंश को पीछे हटते देखा तो वह भी लौट पडा। सन्ध्या तक यही होता रहा—दिल्ली की सेना का यह बाजू टूटता हुआ बीच वाले खण्ड से जा मिला और डट गया।

मानसिह ने अपनी सेना को बटोरा और एक सुरक्षित स्थान पर रात के लिये पडाव डाल लिया।

प्रात काल फिर युद्ध आरम्भ हुआ। अब दिल्ली की सेना बहुत सावधानी के साथ लड रही थी, क्योकि पहले दिन उसकी काफी हानि हो चुकी थी। सेना का संचालन सिकन्दर लोदी कर रहा था।

मानसिह के खण्ड का सम्पर्क बीच वाली टुकडी से हो गया जिसका नायक अटल था। पीछे पठार और जङ्गल रक्षा के लिये थे और उनके पीछे राई की गढी। बाये हाथ की तरफ तोमरो का एक दल नरवर की ओर भेजी गई दिल्ली की सेना से टक्कर लेने की फिकर मे था। परन्तु यह टक्कर नही हुई। सिकन्दर ने रात मे ही उस टुकड़ी के पास आदेश भेज दिया था कि वह लौटकर मानसिह की पूरी सेना पर पीछे से छापा मारे।

दोपहर तक लड़ाई साधारण गति के साथ चलती रही। तीसरे पहर उसमे अचानक तेजी आ गई। मानसिह के बाये बाजू से कतरा कर

नरवर जाने वाली टुकडी ने पीछे से धावा किया। वह पठारों और जङ्गलो में होकर आ गई थी।

मानसिह ने अटल और अन्य सरदारो से कहा, 'तुम लोग केन्द्र को सभाले रहना। केन्द्र को फोडकर तुर्क आगे न बढने पाये, मै निबटता हू इन लोगो से।'

अटल और दूसरे सामन्त उत्साह के साथ केन्द्र को थामकर लडने लगे। मानसिह पैदल और घुड़सवारो को लेकर पीछे से आने वालो पर झपट पड़ा। हाथियो के दल को उसने इनके पीछे भेजने की आज्ञा दी।

मानसिह के लिये जङ्गल की लड़ाई कठिन पड रही थी, तो दिल्ली की सेना के लिये और भी अधिक कठोर। दिल्ली की सेना को धीरे-धीरे पीछे हटना पडा। सन्ध्या तक मानसिह ने उस सेना को बिलकुल हटा दिया, परन्तु यह हटकर फिर सिकन्दर के खण्ड के सम्पर्क मे आ गई। मानसिह का हाथी दल इसका पीछा न कर सका।

इस खण्ड को एक नये कोण से आता हुआ देखकर अटल का केन्द्रीय दल हिल गया। सिकन्दर ने जोर का आक्रमण किया। नये कोण से आने वाले दल ने भी धक्का पहुँचाया। मानसिह के केन्द्र को उत्तर की ओर हटना पड़ा। सिकन्दर सावधानी के साथ कुछ और बढकर रुक गया। रात मे मानसिह अटल वाले दल के साथ सम्पर्क स्थापित न कर पाया। सवेरा होते ही लड़ाई फिर शुरू हो गई। अटल के दल को थोड़ा और हटना पड़ा। अब उस को सिवाव ग्वालियर या राई जाने के और कुछ नही सूझ रहा था। राई की गढ़ी निकट थी। वहा से मानसिह का सम्पर्क हाथ लग सकता था इसलिये रात होते ही वह अपने दल के साथ राई की गढी मे आ गया और वहा से लडने की योजना बना ली।

दिन मे मानसिह को दक्षिण की दिशा से सिकन्दर की एक बड़ी टुकड़ी से सामना करना पडा। यह टुकडी अर्द्ध गोलाकार-सा बनाकर लड़ रही थी। एक सिरे पर लम्बी होकर अटल के दल से और दूसरे सिरे पर मानसिह के दल से भिड रही थी। मानसिह का केन्द्र पीछे जा चुका था।

इसलिये सिकन्दर ने अपने अर्द्ध गोलाकार मे से एक टुकडी का लम्बा तीर-सा बनाया। मानसिंह ने सिकन्दर की यह चाल परख ली और उसने दो बाजुओ मे अपनी सेना को बांटकर दोनो पक्षो को पीछे हटाने का प्रयास किया। परन्तु सिकन्दर का वह तीर राई की दिशा मे जङ्गल की तरफ काफी धसकर फैल चुका था। रात हो जाने के कारण मानसिह इसको पीछे न हटा सका।

तीन दिन के युद्ध मे सिकन्दर की बहुत हानि हुई, परन्तु चौथे दिन उत्तर की दिशा मे उसको गुन्जाइश दिखलाई पड गई और उसने एक दल चक्कर काटकर ग्वालियर के निकटवर्ती क्षेत्र को अधिकार मे करने के लिए भेजा। मानसिंह को मालूम हो गया। उसको ग्वालियर के दक्षिण पश्चिम, पनियार गाँव की ओर से सिकन्दर के उस उत्तरी बाजू और ग्वालियर के बीच मे आना पड़ा। उसे जान पड़ा कही ऐसा न हो कि ग्वालियर घिर जाय और उसको बाहर से लडना पड़े। मानसिह के उस तरफ मुड़ते ही सिकन्दर ने अटल की टुकड़ी को राई गढी मे घेर लिया। गढी ऊँची पहाड़ी की चोटी पर थी। उसके दोनो ओर गहरी खोहे थी। पूर्व की ओर, गाँव और साँक नदी की तरफ खडी ऊँचाई थी। दक्षिण, उत्तर और पूर्व इस प्रकार सुरक्षित थे परन्तु पश्चिम की दिशा मे गढो के नीचे भूमि बहुत ऊँची न थी। उसने यही दृढता के साथ सामना करने का निश्चय किया।

मानसिंह को अटल का समाचार नही मिला। उसको विश्वास था कि पूरी टुकडी राई-गढ़ी मे होगी, परन्तु ग्वालियर की पूरी रक्षा का ऊपाय किये बिना वह राईगढी की ओर नही जा सकता था, तो भी उसने सिकन्दर की उत्तर वाली टुकड़ी पर प्रचण्ड वेग के साथ छापा मारा। सिकन्दर की उस टुकडी को हानि के साथ पीछे हटना पडा। सिकन्दर राई गढी के घेरे के लिए अपने एक दल को छोडकर आगे बढा। मानसिह ने उसकी उत्तर वाली टुकड़ी को पीछे हटाया ही था कि सिकन्दर का प्रधान दल दक्षिण की दिशा से उसकी टक्कर मे आ गया।

मानसिंह ने वेग के साथ सामना किया। सिकन्दर का आक्रमण भी विकट तेजी के साथ हुआ था। सिकन्दर ने ग्वालियर के किले और ग्वालियर के निकटवर्ती पर्वतो को घेरने का बहुत प्रयत्न किया पर बार बार विफल हुआ। समुद्र की वडी और भारी लहरो की तरह उसके सवार तोमरो पर टूटते और जैसे समुद्र की लहरे पहाड से टकरा-टकरा कर पीछे लौट-लौट जाती है ऐसे ही उनको हट हट जाना पड़ा।

रात होने पर मानसिंह ने देखा कि ग्वालियर के किले में पहुँच कर वहाँ से युद्ध का संचालन करना ज्यादा अच्छा होगा, इसलिये वह किले मे ससैन्य चला गया। सिकन्दर ने ग्वालियर और मानसिंह की बिखरी हुई फौज को सवेरे तक घेर लेने की योजना बनाई थी परन्तु भोर होते ही उसने देखा कि सेना और पूरे सामान के साथ, मानसिंह किले के भीतर चला गया है। उसको अपने कई पुराने अनुभवों का स्मरण था। इसी प्रकार मानसिह को सिकन्दर के पिता बहलोल ने उन्नीस-बीस वर्ष पहले घेरकर हराने का प्रयास किया था, और इसी तरह कई बार उसने स्वय प्रयत्न किया था परन्तु प्रत्येक प्रयत्न पराजय मे परिणित हुआ। वह उन अनुभवो को दुहराना नहीं चाहता था।

किले मे घुसने के लिये या किले पर चढ जाने के लिये कोई भी साधन असम्भव था। पिछले बीस वर्षों मे जो-जो कोशिशें की गई थीं वे सब असफल हुई थी। ढाई सौ हाथ की खड़ी ढाल के किले ने आक्रमणकारियो के हजारो सिपाहियो के प्राण, उन प्रयत्नो मे ले लिये थे।

उसने अपने प्रधान जासूस को बुलाया।

'कहा है वह सुरङ्ग ?' सिकन्दर ने पूछा,

दुबले छरेरे से जासूस ने—उसके चेहरे या सिर पर सफेद वाल नही

थे,—कहा, 'जहाँपनाह पास के इन्ही पहाड़ो मे कही है। मानसिंह ने सिर्फ इतना ही निकाल पाया था। कल दिन मे तमाम [illegible] जावेगी।'

दिन निकलने पर मानसिंह और सिकन्दर की सेनाओं की [illegible] मुठभेड नही हुई। सिकन्दर ने चारो तरफ से ग्वालियर को घेर लिया परन्तु दोनो पक्षो के सैनिक थकावट के मारे चूर हो रहे थे, इसलिये विश्राम करते रहे। जासूसो ने सुरङ्ग का पता लगा लिया और सिकन्दर को जगह दिखला दी। परन्तु वह बन्द थी।

'इसको खोला जा सकता है,'–सिकन्दर ने कहा,–'फिर दिन और रात मे ग्वालियर पर हमला ऊपर नीचे, दोनो तरफ से किया जाय।

सुरग को खोलने का प्रयत्न किया गया कुछ दूर तक ढीले पत्थर मिले उनको निकाल लिया गया, परन्तु उसके बाद ठोस चुनाई मिली जो सहज नही हिलाई जा सकती थी। सिकन्दर को निराश होकर लौटना पडा। रात मे दिल्ली का शिविर सतर्कता के साथ विश्राम मग्न हो गया। सवेरे कोई तरकीब निकालूंगा सिकन्दर सोच रहा था। आधी रात को शिविर की सर्तकता कुछ शिथिल पड गई। जोर का हल्ला हुआ। विश्राम-मग्न सैनिक जाग पडे। फडफडाकर उठ बैठे, और हथियार पकड़ कर इधर-उधर फैल गये। धुंधले प्रकाश मे तीर आ आकर छेदे डाल रहे थे। बहुत से सिपाहियो के मारे जाने के बाद सिकन्दर की सेना ग्वालियर की सेना के निकट आ पाई। तलवार का युद्ध होते होते फिर कई ओर से सिकन्दर की सेना पर तीरो की बौछारे आने लगी। सेना को कुछ पीछे हटना पडा। जब तक तितर-बितर सैनिको को इकट्ठा करके व्यवस्था स्थापित की जावे, तब तक लडाई के लिए वहाँ कोई रहा ही नही। रात के तीसरे पहर सिकन्दर ने देखा मानसिंह का कोई दस्ता किसी सुरङ्ग मे होकर आया और नुकसान पहुँचा कर लौट गया, जरुर कही कुछ सुरगे और है जिनका पता जासूसो को नही लगा था। पता दिन मे लगाया जावेगा, उसने संकल्प किया।

[६७]

दिन भर छानवीन होती रही; परन्तु सुरङ्ग का पता नही चला। सिकन्दर ने सोचा राई गढी को समाप्त कर दे तो सन्तोष मिल जायगा।

ग्वालियर के घेरे को थोडा सा और आगे वढाकर उसने राई गढी पर ध्यान को केन्द्रित किया। अगर कोई सुरङ्ग है तो घेरे के वाहर होगी, इसलिये अब रात मे छापे का डर नही रहेगा, उसने कल्पना की।

राई गढी पर हमले पर हमले किये गये, परन्तु सफल नही हुये। गढी की बुर्जो पर वडे-वड़े पत्थरो के ढेर थे जो ऊपर से लुढकाये जाकर आक्रमणकारियो को अपने साथ समेट ले जाते थे। तीरो की वौछार अलग हो रही थी।

उस रात सिकन्दर की सेना पर कोई छापा नही पड़ा। दूसरे दिन फिर सुरङ्ग की खोज की गई; कोई पता नही लगा। राई गढी पर फिर आक्रमण किये गये परन्तु सन्ध्या होने पर फिर वही विफलता हाथ लगी।

आधी रात के उपरान्त उसकी छावनी पर छापा पडा। अवकी वार का वहुत तीक्ष्ण था परन्तु सिकन्दर भी उसका धक्का ओढने के लिये ज्यादा तैयार था। छापामार प्रचण्डता के साथ लडते-लड़ते पीछे हट रहे थे। सिकन्दर भोर तक छापामारो को किसी तरह भी अटकाये रखना चाहता था। उसके वहुत सिपाही हताहत हुये। भोर होते-होते छापामार एक छोटा सा दल छोडकर कही गायव हो गये। इस छोटे दस्ते का वे किसी भाँति भी उद्धार नही कर सके और उनको विलीन हो जाना पड़ा। प्रकाश होते-होते उस छोटे से दल मे केवल एक वचा। वाकी सव लड़ते-लड़ते मारे गये। जो वचा था वह भी बुरी तरह घायल था। सिकन्दर ने उसकी मरहमपट्टी करवाई परन्तु वह मरणासन्न हो चुका था।

सिकन्दर ने उसको पुचकारा। पूछा 'तुम लोग किधर से आये थे ?' घायल ने किले की ओर संकेत किया।

सिकन्दर को प्रोत्साहन मिला। दूसरा प्रश्न किया. 'किसी सुरङ्ग मे होकर आये थे ?'

आहत ने हामी भरी।

सिकन्दर को और प्रोत्साहन मिला। पुचकार और गहरी की।

'कहाँ खुली है वह सुरङ्ग मेरे जवान ?'

आहत ने टूटे स्वरो मे बतलाया, 'बाये हाथ पर जो बावडी है उसमे होकर।'

सिकन्दर सन्न हो गया। तुरन्त कुछ सिपाहियो को खोज करने के लिये भेजा। सिपाही लौटकर नही आ पाये थे कि घायल का प्राणान्त हो गया।

सिपाहियो ने लौटकर बतलाया कि बाये या दाये हाथ की किसी भी बावड़ी मे सुरङ्ग का कोई चिन्ह चाक नही है।

सिकन्दर ने मृत योद्धा की तरफ आँख फेरी। उसके चेहरे पर फीकी मुस्कान थी। मर चुका था इसलिये उससे अब और कुछ पाने की आशा न थी। सिकन्दर स्वय बावडी मे सुरङ्ग के सन्देह की जाच के लिये गया। वास्तव मे वहाँ कही भी सुरङ्ग का निशान नही था। लौट आया।

सहसा मृत सिपाही के चेहरे पर निगाह गई। उसकी मुस्कान मानो चिढा रही हो।

सिकन्दर बोला, 'इसने धोखा दिया। कमबख्त मरते–मरते तक झूठ बोलते है !'

ग्वालियर के घेरे के पहरे–चौकियो का चौकस प्रबन्ध करके उसने राई गढ़ी पर भयङ्कर हल्ला बुलवाया।

हमला करते–करते रात होने को आई, पर अन्त मे वही ढाक के तीन पात। कुछ रात बीते राई गढी के आस–पास शाति हो गई।

लाखी ने लकडियो का एक बडा ढेर लगवा कर आग लगवा दी। दो घड़ी मे ज्वाला गगन से बाते करने लगी। हू हू करके लौ ऊँचे, और ज्यादा ऊँचे जाने लगी।

ग्वालियर मे इसका प्रकाश दिखलाई पडा। मानसिह ने उसको देखा, मृगनयनी ने भी। दोनो उसके अर्थ को जानते थे। दो घडी पीछे वह प्रकाश कम हो गया। इसी समय मानसिह की भेट मृगनयनी से हुई।

'महाराज, राई गढी, अटलसिह और लाखी सँकट मे है।'

मृगनयनी ने कहा।

मानसिह दृढ़ था।

'इतना तो मालूम पड गया कि दोनो राई गढी मे है। उनके संकट का निवारण कल करूँगा। रात के चौथे पहर ऐसा प्रचण्ड आक्रमण करूँगा तुर्कों पर कि बच गये तो कभी नही भूलेगे।'

'परन्तु आप अपने को सकट में न डालना।'

'ह! ह! ह!! संकट मे घुसने के समय उसके छोटे और बड़े रूप का ध्यान रखना पडता है क्या?' 'अब चित्रशाला के उस अधूरे चित्र मे अधिक रङ्ग भरने का समय आ गया है।'

'मुझको एक क्षण के लिये मोह हो गया था, आगे नही होगा नाथ। मै बाहर साथ मे न रह सकूँगी इसी का पछतावा है।'

'सिकन्दर किले के बहुत निकट घेरे को समेटता जा रहा है, यदि कल व्यूह को छेदकर उसकी सेना को नष्ट कर सका तब तो ठीक ही है यदि ऐसा न हुआ तो घेरा अवश्य सिमट आवेगा फिर करना तुम मन चाहा लक्ष्य वेध।'

राई गढी से दिखलाई पडने वाला प्रकाश बिलकुल मन्द पड़ गया। आभा का एक बिखरा हुआ सा छपका मात्र क्षितिज पर रह गया था। मानसिंह अपनी योजना के संगठन मे लगा।

राई गढ़ी के आस-पास घेरा डाले हुये सैनिको को वह ऊँचा तीखा प्रकाश देखकर कुछ घबराहट हुई, जान पडता है राजपूतनियो ने जौहर किया है और राजपूत हम लोगो पर अब टूटने वाले ही है। लौ के शान्त हो जाने पर जब कही से कोई धावा नही हुआ और कान लगाने पर भी गढी मे कोई चहल-पहल सुनाई नही पड़ी तब जी मे जी आया फिर इतनी आग जलाने का मतलब ? ठण्ड इतनी है नही कि तापने के लिये आग का इतना बड़ा झण्डा फहराया गया हो ! कुछ बात जरूर है। सरदारो ने सलाह की।

कुछ मनचले रात मे गढी पर चढ जाने और भीतर जाकर गढी का फाटक खोलकर, बाहर वालो को भीतर करके गढी के घेरे को अविलम्ब समाप्त करने पर तुल गये। उन्होंने रस्सियो और नसेनियो का प्रबन्ध किया और गढी पर चढ़ जाने की योजना मे लग गये। भीतर-भीतर आग के शान्त हो जाने पर लाखी ने अटल को बुलाकर कहा, 'ग्वालियर मे विदित हो गया होगा कि हम लोग सङ्कट मे है।'

'वहा भी घेरा पड़ा होगा। देखे कल क्या होता है। महाराज शायद कल कुछ कर सके।'

'आज रात मे ही कुछ होगा।'

'दोनों पक्ष लडते-लडते थक गए है, रात मे कुछ नही हो सकता।'

'आज की रात जागने की है।'

'मेरी आँखे तो टूटी पड रही है।'

'तुम सो जाओ मै जागूँगी।

गाव के कुछ किसान जो शरण लिये गढी मे आ गये थे, अटल के पास आये। उन्होने प्रणाम नही किया-नियम हो गया था कि जितनी बार जागीरदार या गढपति के सामने कोई जाय, चाहे वह सैनिक हो या न हो, प्रणाम करे।

भाईचारे के अपनेपन मे एक किसान बोला, 'हम लोग कई रातो के जागे है, आज किसी और से चौकी का काम ले लो भैया, हम लोग सोयेंगे ।'

भैया राव साहब भी नही कहा !!

अटल कभी नही भूला कि इन्ही लोगो की क्रूरता के कारण उसको उतने दिनो उन नटो के साथ भटकते फिरना पड़ा था !

चटक कर बोला, 'इस तरह हमारे पास आया जाता है ! बोलने तक का सऊर नही !!'

किसान नही समझे । सकपका गये ।

उनका मुखिया बोला, 'तो जैसी कहो, करेगे । बहुत थक गये है ।'

अटल ने डपट दी—'जाओ काम पर । तुम्ही सबके लिये तो हम अपना प्राण ओट रहे है ।'

किसानो का विश्वास था कि जागीर की रक्षा के लिये लड रहा है । वहा से चुपचाप चले गये । लाखी को मालूम हुआ था कि ऐसे ठिये पर उनकी चौकी है जहा से शत्रु के ऊपर चढ आने की सम्भावना कम है ।

उनके चले जाने पर लाखी ने अटल से कहा, 'तुम सो जाओ, मैं देख-भाल के लिये जागती रहूँगी ।'

वह बोला, 'हॉ थोडा-सा सो लूँ, फिर तुम मुझे जगा देना और सो जाना ।'

अटल जा लेटा और तुरन्त सो गया । लाखी ने तीरो का तरकस उठाया, कमर में तलवार बाँधी, और छाती पर तबे लगाये और चल दी ।

सभी ठियो पर उसने कुछ न कुछ आलस्य पाया । सबको चेताकर वह उस स्थान पर पहुंची जहाँ उन किसानो की चौकी थी । किसान ऊँघ रहे थे, कुछ सो गये थे ।

उसने उनसे धीरे से कहा, 'तुम लोग घर जाकर सो जाओ। मैं थोडी देर यहाँ ठहरकर पहरे को बदल दूँगी।'

किसान चौक पड़े। पहरा देने का झूठा हट करने लगे।

लाखी दृढ थी। उसने दुलार के साथ उनको विदा कर दिया।

किसान कहते गये, 'दोनों ही अपने गाँव के है, पर कहाँ लाखी और कहां वह।'

गढी मे इस ठिये के नीचे एक बडा पेड था जिसकी गुम्मट और शाखे ऊपर तक आई थी। उसी छाया मे वे किसान पहरा देते सो उठे थे। लाखी उत्सुकता के साथ बैठ गई उसकी आंखों मे नीद या ऊँघ लेश-मात्र भी न था।

थोडी देर ही बैठी रहकर वह खडी हो गई। कँगूरो के झरोखो में हो कर नीचे की ओर देखा। अतुल अन्धकार। निविड वन का कोई भी अश नही दिखलाई पड रहा था। ऊपर तारे छिटके हुये थे। दूर की पहाड़ियां लम्बी ताने सोती-सी जान पड़ती थी। टेड़ी तिरछी बहती हुई सांक नदी की पतली रेखा जरूर झाँई-सी मार रही थी। दूरी पर घेरा डालने वालो के डेरे की आग सुलग-सुलग कर राई गढी के सङ्कट को जगा जगा दे रही थी। वैसे राई की डॉग मे नाहर इत्यादि जङ्गली जानवर रात मे प्राय बोला करते थे, परन्तु आक्रमणकारियो की रोदा रोंदी के मारे वे वहुत दूर खिसक गये थे। सिवाय झीगरो की ची ची के और कुछ नही सुनाई पडता था। सुनसान को छेदती हुई कभी—कभी गढ़ी के भीतर 'जागते रहो! जागते रहो!!' की पुकारे भर सुनाई पड़ जाती थी।

लाखी को उन शून्य—वेधी पुकारो के ऊपर कगूरों के नाचे सघन अन्धकार के पेट मे कुछ खर खराहट सुनाई पडी। दिखलाई तो कुछ पड़ नही रहा था, कान लगाकर सुनने लगी। थोड़ी क्षण निस्तब्धता रही। लाखी ने अनुमान लगाया जङ्गल का कोई पशु होगा। दीवार से टिक कर बैठ गई। नरवर की वह रात उसको याद आई। ऐसी ही रात थी।

इससे भी अधिक ऊँची दीवार। नटों की चक्की के पाटों के बीच मे हम दोनो। थोड़ी सी भी चूकनी कि सब समाप्त हो जाता। अब तो सुरक्षित हूं।

नीचे फिर खरखराहट हुई। लाखी खडी हो गई। ध्यान लगाकर सुना। कुछ नही सुनाई पडा। लाखी को विश्वास हो गया जङ्गल का कोई जानवर छिपते–लुकते पानी पीने के लिये नदी की ओर जा रहा है। खरखराहट बढी। लाखी का विश्वास और भी पुष्ट हुआ। फिर देर देर तक खरखराहट नही सुनाई पड़ी।

लाखी ने कल्पना की ग्वालियर मे क्या हो रहा होगा। उजेले को देख लिया होगा उन सबो ने। कल राजा सहायता के लिये आयेंगे, राई गढी का उद्धार होगा और फिर मै अपनी निन्नी से जा मिलूंगी। लाखी कई रात की जागी थी। नीद आ गई। दीवार के सहारे सिर लटक गया, उसके केश कलाप का तकिया सा बन गया। स्वप्न हुआ जैसे अरने भैसो का झुन्ड पहाडी की झाडी के पीछे से खडखडाता-भडभडाता हुआ भागा चला जा रहा हो और वह एक हाथ मे कमान और दूसरे मे तीर लिये हुये निशाना बाँधने की धुन मे हो, डोरी पर तीर चढाया और डोरी खिचती न हो। घबराकर उसने आंख खोली और मोडी। कमान पर हाथ डाला और तरकस को टटोला, सब जहां के तहा थे। अरने तो वहाँ नही थे परन्तु बगल मे थोडी दूर धम्म का शब्द सुनाई पड़ा। गर्दन मोड़ी तो कुछ लोग कंगूरो पर से प्राचीर पर उतरते दिखाई पडे। ये कौन हैं? उसके मन मे प्रश्न उठा। क्या ये अपने हैं? इतने में कंगूरो पर एक सिर और दिखलाई पडा। वह आकाश की ओर ऊँचा हुआ। किसी ने दीवार के कक्ष पर पैर रक्खा और धम्म से नीचे उतर आया। फिर वह कगूरो के झरोखे मैं से बाहर की तरफ झाँका और धीरे से किसी ऐसी भाषा मे बोला जिसको वह नही समझ सकी। ये अपने नही है, तुर्क है, उसको कोई सन्देह नही रहा। दूर की बुर्ज से सुनाई पड़ा, 'जागते रहो!'

लाखी ने आँख को गडाकर आक्रमणकारियो की गिनती करनी चाही। वह पेड की छाया के अन्धेरे मे गठरी सी बनी बैठी थी और वे थोडी ही दूर झरमुट सी बावे जल्दी कुछ खुस-फुस कर रहे थे। उसमे से एक दीवार से टिका बाहर से भीतर आने वालो को भीतर उतारने मे सहायता कर रहा था।

लाखी ने अपना कर्तव्य एक क्षण भर के भीतर निश्चित कर लिया।

बहुत हौले से कमान और तरकस को कन्धे पर से उतारा। धीरे से मुडी। एक बाण प्रत्यंचा पर चढाया और प्राचीर पर एक नये निकले हुये सिर का निशाना बाँधकर छोड दिया। इधर तीर छूटा, उधर चीख निकली और नवागन्तुक भरभराकर पीछे के पीछे ही धम्म शब्द के साथ कुछ और चढने वालो को अपने साथ लेता हुआ गहरे अन्धेरे में नीची खडी हुई भीड़ को कुचलता हुआ समाप्त हो गया। वहा हल्ला गुल्ला हुआ और यहाँ खड़ी हुई झुरमुट मे चहल-पहल मच गई। फिर लाखी की कमान से और तीर सनसना कर छूटे और इस झुरमुट पर टूटे। कुछ लगे, जिन्होने आहे-कराहे पैदा की, कुछ छाती के तवो से टकराकर टन्ना गये। उस झुरमुट ने भी समझ लिया कि तीर कहा से आ रहे हैं। वहा से भी लाखी पर तीरो की बौछार हुई। कुछ भन्नाते हुये निकल गये कुछ तवों से टकरा कर झनझना गये। एक उसके कन्धे के नीचे से पसलियो के जोड के भीतर जा धँसा। परन्तु लाखी ने तीर कमान को नही छोडा।

वह झूरमुट बिखर गई थी। लाखी को दो एक खडे मालूम पडे, कुछ ढेर हुये से। जो खड़े थे उन पर लाखी ने अन्तिम तीर छोडे। उन्होने दीवार के कगूरे पर चढने की कोशिश की परन्तु रस्सी या नसैनी का पता न लगने के कारण फिर नीचे आ गये।

लाखी खड़ी हो गई। उसने तलवार निकाली। खाँसी आ गई और खासी के साथ मुंह से रक्त की फुहार छूट पडी।

इनको मार कर मरूँगी, उसने निश्चय किया। फिर खाँसी, फिर वही फुहार। मुट्ठी मे तलवार ढीली पड गई। लाखी ने सोचा हल्ला कर देना चाहिये। चिल्लाई। मुँह से और खून निकला। फिर चिल्लाई और दीवार से सट कर खड़ी हो गई। जागते रहो की पुकार लगाने वालो ने उसकी पुकार को सुन लिया। मशाले लेकर दौड पड़े।

आक्रमणकारियो मे से एक तलवार लेकर लाखी की ओर झपटा। ऊपर आती हुई विपत्ति की उत्तेजना ने उसको बल दिया। तलवार वाली मुट्ठी कस गई। आक्रमणकारी ने जैसे ही उस पर वार किया वह धम्म से बैठ गई। सिर पर आई हुई तलवार की खडी नोक आक्रमणकारी के पेट के निचले हिस्से मे बैठकर, कलेजे तक पहुँच गई। वह चीख कर करवट के बल जा गिरा। मशाल वाले आ गये।

उन्होने देखा लाखी बहुत घायल है। आक्रांता मरने के पल गिन रहा है और कुछ दूरी पर कइयो का ढेर सा लग रहा है। कुछ मरे हुये कुछ अधमरे। मशाल की रोशनी मे उन्होने कंगूरो से बँधे हुए कुछ रस्सो को देखा। पहले उन रस्सो को तुरत काट दिया, फिर लाखी के पास आये।

लाखी के मुह से कराह के साथ निकला, 'मेरे स्वामी को, स्वामी को बुला दो।'

'वहा लिए चलते है।' एक ने तुरन्त कहा।

वह बोली, 'नही यही बुला लाओ। मुझको मत छुओ।'

उनमे से कुछ दौड़कर अटल को लिवा लाये और एक पानी ले आया।

अटलने देखा लाखी के मुह से खून वह रहा है और—आखे फट रही हैं। वह उससे लिपटने को हुआ। लाखी ने उठी हुई गदेली को हिलाकर वर्जित किया मानो रक्षा करने वाले नाग ने फन हिलाया हो।

'यह क्या हो गया।' फफकते हुये गले से अटल ने कहा।

'कुछ नही। एक भीख माँगती हूँ। दे दो।' लाखी के टूटते स्वरो में निकला।

अटल ने हाथ जोडे।

'छिः ! यह क्या !!' लाखी के रक्त-रंजित होठो मे से एक पतली सी मुस्कान फूटकर वही विलीन हो गई।

अटल ने हाथ नीचे कर लिये।

और भी टूटे स्वर मे वह बोली, 'ब्याह कर लेना अपनी जात पात मे।'

फिर लाखी कुछ नही कह सकी। होठ बिर-बिराये, एक झटका खाया और वह सती लोक मे जा मिली।

अटल ने मोटी उङ्गलियो से जोर के साथ अपने आँसू पोछ डाले।

भर्राये हुये स्वर मे बोला, 'चिता बनाओ। तैयारी करो। यही चिता बनाओ। सबको जगाकर गढी का कोना–कोना छान डालो, कही दूसरे कोने से बैरी न घुसा आ रहा हो।'

उसी स्थान पर कुछ लोगो ने चिता चुन दी। बाकी ने गढ़ी भर को जगाकर सन्नद्ध कर दिया। जिन किसानो को लाखी ने विश्राम करने के लिये उस स्थान से हटा दिया था वे भी डरते काँपते आ गये। कराल दृष्टि से अटल ने उन लोगो को देखा। पर उनसे कहा कुछ नही।

अटल ने लाखी के शरीर पर से गहने उतार कर एक ओर रख दिये। अब चाटे इनको जात–पाँत। उसके मन मे आया।

लाखी को चिता पर रख दिया गया और प्रज्वलित कर दी गई।

उसने चिता को हाथ जोड़े और मन मे कहा, देवी मै ब्याह अवश्य करूँगा बहुत जल्दी करूँगा।

अटल अपने डेरे पर चला आया। वहा से चिता का प्रकाश दिखलाई पडता था। क्या इस प्रकाश को निन्नी ने भी देखा होगा ? उसके मन मे प्रश्न उठा। गले मे कुछ अटकने को हुआ। उसने तुरन्त दबोच दिया। प्रकाश की ओर से मुह को फेरकर उसने अपने दलपतियो को

आज्ञा दी, 'एक पहर रात रहे फाटक खोलकर तुर्कों पर टूट पड़ना है। जिनको अपने प्राण प्यारे हो वे जा सोवे, जिनको तोमर, भदौरिया और गूजर नाम प्यारा हो केशरिया बाने पहिन ले। यदि शत्रु की आँतों को चीर–फाड़कर निकल गये तो कल ग्वालियर मे।

[६८]

रात के सन्नाटे को केवल पहरे वालो की बोलियाँ हिलोड रही थी। ग्वालियर किले के पश्चिमीवर्ती गरगज नामक फाटक की टेढी-मेढी छिपी राह से मानसिंह के पैदल सैनिक उतरे और गूजरी महल के पास वाले पूर्वी फाटक से सवार और हाथी। दो दिशाओ से सिकन्दर की फैली हुई फौज पर प्रचण्ड आक्रमण हुआ।

सिकन्दर इस तरह के आक्रमण के लिये तैयार न था। उसका ख्याल था किसी अज्ञात सुरङ्ग मे से कुछ छापामार ही उपद्रव करते रहेगे। जो युद्ध हुआ उसकी सिकन्दर को आशंका नही थी।

एक ओर से मानसिंह के हाथियो ने रोदना शुरू कर दिया। दूसरी ओर से सवारो ने तलवार बरसाई, तीसरी ओर से पैदलो ने तीरो का प्रलय रोप दिया।

सिकन्दर की पूरी सेना काँप गई, हिल गई और हटती हुई लड़ने लगी। वह बार-बार जमकर युद्ध करने पर तुलती और बार-बार उसको पीछे हटना पडता। मैंदान मे युद्ध हुआ, घाटियो-पहाड़ो पर हुआ, परन्तु सिकन्दर की सेना के पैर न रुक सके। सिकन्दर की कुछ सेना ग्वालियर के दक्षिण की ओर हटी, कुछ राई की दिशा मे और उसका एक अंश हाथियो से घिर गया जो लड़ते-लडते सवेरे के पहले ही नष्ट हो गया। मानसिंह ठण्डक के साथ युद्ध का संचालन कर रहा था। इधर से उधर आदेश ले जाने वाले और समाचार लाने वाले दूत साव-धानी और तत्परता के साथ काम कर रहे थे। प्रात काल के लिये अभी कुछ देर थी।

सिकन्दर के पास राई की ओर से कुछ घुड़सवार दौड़े आये। उन्होने बतलाया कि राई का घेरा डालने वाली फौज पर कोई नया दुश्मन चढ आया है और बेतरह लड रहा है। सिकन्दर को वास्तविक स्थिति का पता नही लगा।

राई का फाटक रात के तीसरे पहर के लगभग खुल गया था। केसरिया बाना पहने राजपूत तोमर, भदौरिया गूजर सब-सिकन्दर की सेना पर सघन पातों में टूट पड़े। घेरा छिन्न-भिन्न हो गया। परन्तु घेरे वालो का एक अङ्ग उस समय सचेत था जब लाखी ने सीढी और रस्सी के चढ़ने वालो का मुकाबला किया। इस अङ्ग ने अटल के दल का लोहा लिया। घमासान युद्ध होने लगा। सिकन्दर को समाचार देने के लिये कुछ सवार दौड़े गये। इनमे से किसी को ज्ञात नहीं था कि अटल का दल कहाँ से आ टूटा।

अटल उस दल से बेतहाशा लड़ रहा था। घिर जाने के कारण तीर नही चला सकता था, दाँय और बाय तलवार बिजली की तरह कोधा रहा था। जहां पिलता वही स्थान खाली हो जाता था। उसके साथी भी कम हठधर्मी के साथ नही लड़ रहे थे। वे सब लड़ते-लड़ते अपने घेरने वालो को पीछे ठेलते जा रहे थे। राई के इन लड़ने वालो को मृत्यु दुर्लभ ही नही अप्राप्य भी लग रही थी।

प्रातःकाल की पौ फटी। उसकी रेखाये सांक नदी की लहरों पर मचली और एक तीर अटल की आँख से घुसकर अटक गया। अटल गिर पड़ा। थक तो गया ही था इसलिये घाव ने बहुत कम क्लेश पहुँचा पाया। एक कल्पना झिलमिला गई—मैं ब्याह करूँगा, उसी के साथ, वही जहाँ वह गई है और मैं जा रहा हूँ।'

अटल समाप्त हो गया परन्तु उसके साथी अभी बाकी थे। वे लगन के साथ मौत को ढूँढ रहे थे। अटल का मरण देखकर तो और भी ताव खा गये। लड़ाई होती रही।

सूर्योदय होते ही सिकन्दर के हरकारों ने खबर दी कि नरवर की दिशा से मानसिंह की घुडसवार सेना आ रही है। नरवर मे सिकन्दर के आक्रमण की सूचना पहुँच गई थी, इसलिये दस हजार सवारो का एक दस्ता ग्वालियर की सहायता के लिये आ रहा था।

चक्की के पाटों के बीच मे पिसना सिकन्दर ने पसन्द नही किया। शान्ति के साथ विचार करके उसने राई के जंगलो-पहाडी मे चले जाने का निश्चिय किया।

जब राई पर पहुँचा, उसने देखा कि लड़ाई समाप्त हो गई है, उसके बहुत से सैनिक और अनेक राजपूत हताहत पडे है—मानो सारी दुश्मनी को भूलकर सोये हों।

हताहतो का प्रबन्ध करके सिकन्दर राई की डॉग और पठार के पीछे जा ठहरा। ग्वालियर और राई दोनो बच गये। सिकन्दर ने निश्चय किया, अन्तर्वेद से और अधिक सेना बुलाकर उसके दो भाग करूँगा, एक ग्वालियर को घेरे रहे और दूसरा नरवर पर हमला करे जिसमें एक दूसरे की मदद कर सके।

मानसिंह ने सूर्योदय के उपरान्त ग्वालियर के घेरे को समाप्त कर पाया। उसको राई की चिन्ता थी। ग्वालियर का प्रबन्ध करके राई गया। तब तक सिकन्दर ससैन्य हटकर बहुत दूर निकल चुका था।

अटल और उसके साथियो को केशरिया बानों मे लिपटा हुआ रण-क्षेत्र में पडा पाया। उसका माथा ठनका। इन्होने ऐसा क्यो किया ? जौहर की आवश्यकता क्यो पडी ? मै आ तो रहा था, सङ्कट के संकेत को देख लिया था। ये एक दिन और ठहरे रहते, क्यो इतने उतावले हो गये ? गढी सूनी जान पड रही है, शत्रु इसमे नही दिखलाई पडता। देखूं क्या वात है।

मानसिंह ने गढी का पता लगा लिया, फाटक खुले थे। उसमे थोडे से किसान जन थे। भीतर गया। लाखी के कार्य और मरण का समाचार मिला। उस स्थान पर जहाँ चिता अब भी गरम थी, गया। चिता

के समीप ही लाखी के गहने ज्यो के त्यो रखे हुये थे। उनमे मोतियो की वह माला भी थी जिसको शिकार मे उसने गले मे पहनाया था। मानसिंह ने आह के साथ उन गहनो को बधवा कर एक अङ्गरक्षक के सुपुर्द किया। राई गढी की रक्षा का प्रवन्ध करके ग्वालियर लौट आया।

मृगनयनी ने लाखी के कार्य और मरण का वृतान्त और अपने भाई के शौर्य का संक्षिप्त वर्णन जब सुना, तब उसने छाती को वज्र की तरह कडा किया। हिलकियाँ गले से भीतर लहरो की थपेडो की तरह आई परन्तु आगे न बढ सकी।

मानसिंह ने लाखी के गहने सामने रख दिये।

बोला, 'इनमे मोतियो की वह माला भी है जिसे उस दिन शिकार मे पहनाया था।'

अब मृगनयनी रो पडी। चुपचाप रोती रही। देर मे अपने को संयत कर पाया।

कहा, 'मोतियो की माला को उस चित्र के ऊपर टागूँगी।'

मानसिह उसको सान्तवना देकर व्यवस्था करने के लिये चला गया। नरवर की सेना को लौटा दिया गया। वह सिकन्दर का सामना करने के प्रयत्नो मे और भी अधिक तत्पर हो गया। दूतो ने उसको समाचार दिया कि सिकन्दर बराबर आगरा की ओर लौटता चला जा रहा है। अपनी व्यवस्था को दृढ करने के उद्देश्य से उसने सिकन्दर का पीछा करना उचित नही समझा।

(६९)

सिकन्दर की सहायक सेना इटावे मे थी। शीघ्र चम्बल पार करके उससे चम्बल की घाटियो पर आ मिली। सिकन्दर ने तुरन्त कूच किया। विशाल सेना के दो बडे-बडे भाग किये। एक नरवर की ओर गया, वह स्वयं उसका नायक था। दूसरा ग्वालियर पर आया। मानसिंह परिमित साधनो के कारण किले के बाहर बहुत दिनो युद्ध नही कर सकता था।

इसलिये उसने छापामारो के कई दल दिल्ली की सेना को निरन्तर सताने के लिये छोड़ दिये और वह किले से युद्ध जारी रखने की योजना में लग गया।

सिकन्दर ने नरवर को घेरा। नरवर वाले अपने किले को अजेय समझते थे। था भी। मांडू का कोई डर सिकन्दर को नही था। चन्देरी को जब चाहे तब दबा सकता था। उसको मालूम हो गया था कि माँडू के सुल्तान का शासन निर्बल पड़ गया है और राजपूतों के समूहो तथा तुर्क-पठानों के समूहो मे द्वन्द चलता रहता है। नरवर को जीत लिया तो चन्देरी सहज हो जायगी, मालवा पैरो तले आ जावेगा और ग्वा-लियर का भी दमन कर लूंगा, उसकी धारणा थी।

सिकन्दर की सहायता के लिये राजसिंह भी आ गया। उसको संसार मे नरवर की बपौती के सामने और कुछ नही दिखता था। उत्तेजना देने के लिये उसका भाट निरन्तर साथ रहता था। उस समय तुर्क-पठानो की राजनीति को प्रेरणा मुल्लो-मौलवियो से मिलती थी और अधिकाँश राजपूतों को भाटो से।

राजपूत इस उक्ति के सारे कायल थे—

गाज ते बचोगे, बचोगे काल जमराज हूतै
नाहिन बचोगे कन्त कवि की आवाज तें।

सिकन्दर और राजसिंह ने नरवर पर हमले किये, परन्तु नरवर के फाटक टस से मस न हुये। नरवर वाले आशा करते थे कि पहले की भाँति ग्वालियर से सहायता एक न एक दिन आ आयेगी परन्तु उनको क्या मालूम था कि ग्वालियर के चारो ओर घेरा पडा हुआ है।

नरवर के घेरे को बारहवाँ महीना लग गया। सिकन्दर दात किच-किचाकर नरवर के विनाश पर डटा हुआ था। उसको विश्वास था कि हथियारों से नरवर को न मिटा सका तो भूखो मारकर तो मिटा ही लूंगा।

और ऐसा ही हुआ।

नरवर के भीतर अन्न सामग्री बिलकुल चुक गई। कुछ दिन पेडो की छाल और पत्तो से काम चलाया। फिर असह्य हो गया।

लडने वाले मकरध्वज ताल पर एकत्र हुये। पानी पिया। गये जमाने के मकरध्वज का स्मरण किया और नित्य उदय और अस्त होने वाले सूर्य को नमस्कार किया। अपने मन्दिरो की ओर आँख फेरी और भौहे तानी।

फिर ऐसी परिस्थिति मे जो कुछ होता आया था, हुआ—चिताये चुनी गईं, स्त्रियों ने आत्माहुति की। लडने वाले किले का फाटक खोल कर तलवारे लिये हुये शत्रुओ की तलवारो पर टूट पडे। सिकन्दर को विजय मिल गई। परन्तु उसके तारीख नवीस को भी उस दिन लिखना पड़ा कि नरवर ने आत्म-समर्पण भूखो मरके ही किया।

सिकन्दर को विजय तो मिल गई परन्तु क्रोध बढ गया। राजसिंह से कहा, 'मै नरवर का नक्शा जब बिलकुल बदल दूँगा तब आपको जागीर मे लगा दूँगा। चलना हो तो मेरे साथ भीतर चलो और हथौड़ो का काम देखो, वरना जब बुलाऊ तब आना।'

राजसिंह उसके साथ किले मे नही गया। वह समझ गया और भाट भी समझ गया, इसलिये उत्तेजित नही कर सका।

सिकन्दर किले के भीतर गया। किले के चारो खण्डो का चक्कर काटकर निरीक्षण किया। थोड़े से शैव और वैष्णव मन्दिर थे, प्रचुर संख्या मे जैन मन्दिर। जैन मूर्तियाँ शात रस की अवतार, शाति को प्रदान करने वाली। परन्तु विष्णु की मुस्कान, शिव की तेजस्विता और जैन तीर्थङ्करो की शाति-वरदता से उसको वास्ता ही क्या था?

सिकन्दर ने नरवर मे छै महीने रहकर मन्दिरो और मूर्तियों का ऐसा चकनाचूर किया कि कोई कह नही सकता था नरवर मे कभी कोई मन्दिर या मूर्ति थी। सौन्दर्य और शाँति के प्रतीको का यह सारा विध्वस उसने अपनी निगरानी मे कराया था। मानसिंह और

ग्वालियर को न मिटा पाया तो उनके प्रिय प्रतीको को तो चूर कर दिया ! उसने अपनी क्रोधाग्नि को इस तरह बुझाने के प्रयत्न किये।

परन्तु उसने व्योपार करने वाले सेठ साहूकारो को नही सताया उनके व्योपार की उसको जरूरत थी और सेठ साहूकारो को उसके टंको की। किसानो को लगान किसी को भी देना था। उनकी गॉव पचायते थी ही। अपने मे सम्पूर्ण परन्तु एक दूसरे से अलग।

छः महीने के बाद उसने राजसिंह को बुलाया और किला तथा नरवर की जागीर उसे देकर ग्वालियर की ओर चल दिया। परन्तु दिल्ली से निकले उसको डेढ साल से ऊपर हो गया था। क्रोध को नरवर मे ठण्डा कर ही आया था, ग्वालियर को जीत लेने की आशा थी नही, इसलिये ग्वालियर से अपनी सेना को समेटकर दिल्ली चला गया।

राजसिंह ने नरवर को प्राप्त करने के बाद कला को भी बुला लिया। किले के एक भाग मे उसके पुराने और नये सैनिक आ बसे थे, बाकी उजाड़ पड़ा था। ढाई कोस के घेरे वाला इतना बडा किला ! कितनी ऊँचाई पर !! कितनी शताब्दियो बाद आज फिर से अपने घर आया !!! राजसिंह ने अपनी इस बड़ी सम्पदा को घुमा-घुमाकर दिखलाया।

उत्तरवर्ती पहला खण्ड ढोलाबाडा नाम से प्रख्यात था। राजसिंह ने बतलाया, 'ढोला हमारे पुरखे थे, इस फाटक से कूदकर उनको भागना पडा था। वह दूल्हा भी कहलाते थे। आज उनकी जगह मै दूल्हा बनकर तुम्हारे साथ हूँ।'

फिर कुछ रुककर बोला, 'देखो इस फाटक के पास कँगूरे नीचे झुके हुये है। जब राजा नल ने इस स्थान को छोड़ा तब शोक के मारे ये कँगूरे झुक गये थे। और देखो यह राजा नल का मञ्च है और यह उनके बैठने की चटाई। राजा नल हमारे पुराने पुरखा होते है।'

क्या राजा नल इतने दरिद्र थे कि मोटे-झोटे तख्त और इस सड़ियल चटाई पर बैठा करते थे? कला ने सोचा। जब वे दोनों किले के उस खण्ड में पहुँचे जिसमे दूर तक मूर्तियों के टुकड़े और चूरे पड़े थे, तब कला चौंकी।

उसने पूछा, 'यह क्या?'

राजसिंह ने सिकन्दर के विनाश-कार्य का संक्षेप में वर्णन किया।

उसको लगा जैसे खण्डित मूर्तियाँ चुपचाप कोस-कोसकर कह रही हों, तुमने हमको क्यो नही बचाया? कला की आँखो में आंसू आ गये। गद्गद् स्वर मे बोली, 'यह सब आपने क्यों होने दिया? कैसे होने दिया?'

राजसिंह सकपका गया। एक क्षण मे सम्भलकर उसने कहा, 'मैं नही था, यहां उन दिनो, इसमें मेरा हाथ नही रहा।'

'तो आपने रोका क्यो नही?'

'मै अकेला कर ही क्या सकता था? तुमको सम्भालता या इसे देखता। अब जो हुआ सो हो गया। मै यहाँ बहुत से मन्दिर, महल बनवा दूँगा।'

'मै यहाँ कभी नही आऊँगी। मै नही जानती थी, कभी नहीं सोचा था।' नष्ट हो जाने पर भी उन मूर्ति खण्डो मे शान्ति थी—बिखरी हुई शान्ति। कला भ्रष्ट भी हो जाय, योगी पतित भी हो जाय, तो भी उसमे बड़प्पन का कुछ अश तो रहता ही है। कला सोचती हुई उसके साथ चली गई।

[७०]

मृगनयनी की अवस्था ढल रही थी, परन्तु सौन्दर्य बढ रहा था। ऊपर का लावण्य स्थिर हो गया और भीतर का बढता हुआ सौन्दर्य आँखो मे छा गया।

ललित कलाओ पर उसको अधिकार प्राप्त हो गया था, फिर भी उसने अभ्यास निरन्तर रक्खा। बैजू ने ध्रुवपद की एक नई परिपाटी

तैयार करके मॉंज ली थी। इसके मांजने मे उसको मानसिह से सहायता मिली, परन्तु मृगनयनी से उसकी भी अपेक्षा अधिक। ध्रुवपद इसके पहले भी कई नामों से गाया जाता था, परन्तु उसके चार अङ्ग स्थायी, अन्तरा, सञ्चारी और आभोग-इन तीनो के सहयोग से ही बने और निखरे। कई राग मृगनयनी के सुझाव,प्रेरणा और सहकारिता से बैजू ने बनाये, जैसे गूजरी, मालगूजरी, बाहुलगूजरी, और मङ्गलगूजरी।

विजय कहा करता था,—काम ही सब कुछ है। काम करना ही मानव का धर्म है। काम करते-करते ही मनुष्य स्वर्ग लोक की भी प्राप्ति कर सकता है।

मानसिह बतलाया करता था,—'मनुष्य अकेले-अकेले काम करके सन्तोष और हर्ष को तो प्राप्त कर सकता है, परन्तु काम से आनन्द तभी हाथ लग सकता है, जब दूसरो के सहयोग से किया जाय।'

सिकन्दर या किसी भी आक्रान्ता की बला टल गई थी, परन्तु वह जानता था कि यह बला फिर कभी सिर पर आ सकती है, इसलिये वह सेना के सम्भालने मे बहुत व्यस्त रहने लगा। कुछ समय निकालकर वह गूजरी महल मे भी आया करता था।

वैसाख—जेठ की ऋतु थी। वे दोनो गूजरीमहल की छत पर थे। धुन्ध मे लिपटी हुई सी चांदनी छिटकी हुई थी। मानसिह ने आग्रह किया, 'कुछ गाओ।' तम्बूरा पास रक्खा हुआ था।

'क्या गाऊँ? मृगनयनी ने शान्त स्वर में पूछा।

'अपना कोई ध्रुवपद। मुझको बहुत अच्छा लगता है। नायक बैजू की गायकी मे भी उतना मिठास नही मिलता जितना तुम्हारे गले मे।'

'नायक नायक ही हैं। मै तो उनकी शिष्या भर हूँ।'

'शिष्य तो उनके बहुत से हो गये है जो इस नई परिपाटी को देश भर मे फैलायेगे। परन्तु तुम तुम्ही हो।'

'मै ध्रुवपद नही सुनाना चाहती, कुछ और गाऊँगी।'

'जो मन को भावे गाओ, मे तो सुनना चाहता हू।'

मृगनयनी तम्बूरा उठाकर गाने लगी—

मोरी तोहि लाज मुकुट बारे, मोरी तोहि;
चन्दा सूरज तोरी सेवा करत है।
विनति करत नौ लख तारे। मोरी तोहि—

मृगनयनी ने दुहरा-दुहराकर इसी पद को बडे रस के साथ गाया-गायन की समाप्ति पर दोनो आकाश की ओर देखने लगे। चन्द्रमा और तारे आँखो मे कापते से जान पडे।

एक सेविका ने सूचना दी, 'नायक बैजू आये है।'

'बैजू को बिठलवा लिया गया। वे दोनो आगन मे जाकर उससे मिले।'

बैजू की शिकायत थी,-'अब आप गायन की ओर कम ध्यान देने लगी है। अधिक दीजिये।'

मृगनयनी बोली, 'मैं तो देती हू। इनको सेना राजनीति इत्यादि के संभालने मे लगा रहने दीजिये। आपके सङ्गीत विद्यापीठ को पूरी सहायता मिल रही है। और कोई अवाश्यकता है?'

बैजू ने आवश्यकता बतलाई—'राजा को सङ्गीत का गहरा ज्ञान हैं। जब सामने होते है, तब अनेक नई सूझे निकालती है। इनको सामने रहना चाहिये।'

'दुश्मन फिर सिर पर आ सकता है इसलिये उनका सामना करने की तैयारी मे सदा लगे रहना अधिक आवश्यक है। मानसिह ने कहा।

बैजू चिल्ला पडा, 'आप कहते क्या है! सब दुश्मन मर गये। सरस्वती की कृपा से अब कोई नया उत्पन्न नही होगा। आवेगा भी तो फिर वैसे भागकर लौट जावेगा।'

'हठ मत करिये, नायक जी,' मृगनयनी विनय के स्वर मे बोली।

'तो मेरा मन नही लगेगा।' बैजू ने कहा।

एक क्षण बाद मृगनयनी ने प्रश्न किया, 'आचार्य विजयजङ्गम कहते है कि आपने जो नये राग बना लिये सो बना लिये अब नही बना सकते, क्या यह बात ठीक है?'

'विजयजङ्गम क्या जाने। वह तो ऐसा कहते ही रहते है।'

'और किसी-किसी की कल्पना है कि गूजरी-टोढी राग जो अन-जाने बनाया है उसकी कुछ रूप-रेखा गुजरात मे पहले से है।'

'कौन मूर्ख कहता है? आपने एक दिन टोडी-राग गाते हुये अनजाने एक तान लगाई। मैंने उसको मन मे रख लिया और उसका विस्तार करके गूजरी टोड़ी बनाकर खड़ी कर दी। मूर्ख लोग क्या जानें।'

'तो अब नये राग कैसे बनेंगे? आपका मन कुछ हार खा गया है न?'

'नही तो। जब अकेले में सरस्वतीजी की आराधना करता हूँ, तब नई-नई बातें झूमती-सी उमगती चली आती हैं। मन कभी नही हारेगा।'

मृगनयनी ने मानसिंह की ओर सूक्ष्म दृष्टि फेरी। बैजू ने लक्ष्य नही किया। वह कुछ गुनगुना उठा था।

मानसिंह ने मुस्कराकर कहा, 'तो जब तक मै तलवार द्वारा दुर्गा की आराधना करता हूं, आप नये-नये रागो के सृजन द्वारा सरस्वती की आराधना करिये।'

बैजू हँस पडा। बोला, 'हा, ठीक है। ऐसा ही होगा।'

[७१]

नरवर के विनाश को हुए कई बरस हो गये थे, चन्देरी भी मालवा से कटकर नरवर के अधीन आ गई थी परन्तु नसीरुद्दीन को लगता था जैसे कुछ दिन ही हुये हों और कही कुछ हुआ न हो।

क्योंकि, उसका प्रण पूरा हो चुका था। परियो के बहीखाते मे पूरे पन्द्रह हजार की गिनती दर्ज हो चुकी थी।

उतरते बैशाख के महीने मे उसको फिर जलविहार की सूझी। सन्ध्या के पहिले कालिया दह झील पर कनातो से घिरे रङ्ग-विरङ्ग वितानो के नीचे फिर परिस्तान का जमघट जुडा। अवकी वार हमेशा से बढकर रङ्ग–बिरङ्ग वस्त्र आभूषण, नई-नई भिन्नतायें, नये खेल कूदो का आयोजन। मदमस्ती फूट-फूट कर वितानो के नीचे बहने लगी। रङ्गीन गुडियों की चटक-मटक हिलोडे खाने लगी।

ख्वाजा मटरू पास था। नसीर ने आदेश दिया, 'पानी मे छुआ–छुअब्बल का खेल हो। उसके बाद नाच-गाना।'

'जो हुकुम।'

'अच्छा जरा ठहरो। पहले थोड़ा नाच हो जाय, फिर छुवा–छुअब्बल।'

'जो हुकुम, जहांपनाह।'

'मै भी छुआ–छुअब्बल के खेल मे शरीक होऊँगा।' उसकी जलती हुई कामुकता ने प्रेरणा दी।

'जो हुकुम,' ख्वाजा मटरू के मुह से फिर निकला।

बडे नखरों के साथ नाच–गान हुआ। ऐसा कि अश्लीलता भी शर्मा गई होगी। नाच–गान की समाप्ति होते–होते नसीर तकिये के सहारे पकडकर सो गया। अश्लीलता के इतने आकार-प्रकार उसके अनुभव मे आ चुके थे कि अब कोई अश्लीलता उसको देर तक आकर्षण नही दे सकती थी।

परिस्तान जलविहार के लिये उत्कन्ठित था। परन्तु सुल्तान को जगावे कौन? किसमे इतनी हिम्मत? मटरू से आग्रह किया। उसको भी साहस नही हुआ।

मटरू ने एक मनचली के कान मे कुछ कहा। वह कुछ दूर जाकर चिल्लाई—'सॉप! सॉप!! सॉप!!!'

कई कण्ठो से यह ध्वनि बेभाव निकली।

नसीर भी जागकर चिल्ला पडा,—'सॉप! साप!! साप!!! कहाँ है? कहाँ है?'

मटरू ने दौडकर अर्ज की, 'जहाँपनाह, मारा गया।'

नसीर ने आदेश दिया, 'दूर फेक दो उसको ! मगर झील मे मत फेकना। कनात के बाहर फेक दो। पहरे वाले उसको कही गाड देगे।'

'फेक दिया, जहापनाह।' मटरू ने सात्वना दी।

नसीर ने चैन की साँस लेकर कहा, 'कल से जहाँ जहा साप मिले सबको मारना शुरू कर दो। अच्छा अब वह खेल हो।'

परिया पानी मे कूद पडी। नसीर भी उतर गया। खेल होने लगा। होते-होते तैरने वाली दूर जाने लगी। परन्तु बहुत दूर नही। नसीर कुछ दूर निकल गया।

थोडी ही देर खेलने के बाद नसीर थक गया। दम फूल गई। हाथ पैर फेकने लगा। मटरू ने किनारे पर से देखा। सोचा सुल्तान खिलवाड कर रहा है।

सुल्तान के हाथ पैर ढीले पड़ गये। चिल्लाया, 'बचाओ !' कनात के बाहर सिपाहियो ने सुन लिया, परन्तु उनकी हिम्मत नही पडी। कौन अपना सिर और हाथ कटवाये, उन्होने सोचा।

सुल्तान फिर चिल्लाया, 'बचाओ !!'

परियो को भी पुराना अनुभव याद आ गया। इनको बचाने मे कही हम ही न डूब जाये। कोई भी उसकी तरफ़ नही बढ़ी। सब सोचती थी कोई आकर बचा लेगा।'

मटरू इधर उधर दौड धूप कर रहा था और चिल्ला रहा था। 'कम्बख्तो ! बचाओ !!' उसका सारा प्रयास प्रदर्शन मात्र था। वह चाहता था सुल्तान देख ले ख़्वाजा कितना तत्पर है !

बचाने कोई नही पहुँचा, सुल्तान डुब्ब से पानी के नीचे चला गया।

अब हायतोबा और चिल्ला पुकार मची। परियाँ पानी मे से निकल निकलकर कपड़े पहनने संभालने मे लग गई। बाहर दौरा बढ गया।

उस सारे रौरे के ऊपर दो शब्द गूंज रहे थे,—'सुल्तान डूब गये ! सुल्तान डूब गये !!'

पहरे वालो का धीरज और डर समाप्त हो गया। कनात को काट कर भीतर धँस पड़े। स्त्रियाँ इधर-उधर चिल्लाती भागती फिर रही थी, एक दूसरे से टकरा-टकरा जा रही थी। सिपाहियो ने मटरू को पकड लिया।

नसीर के लडके के पास समाचार पहुँचा। वह तुरन्त आया पहला काम जो उसने किया वह था मटरू का वध। फिर उसने व्यवस्था की।

दूसरा काम जो उसने किया वह था परिस्तान का तितर बितर करना।

तीसरा काम जो उसने किया वह था मेदनीराय को बुलाकर राजपूतो द्वारा सरकश सरदारो का दमन और मालवा का शासन। मुल्ले-मौलवियो को बुरा लगा, परन्तु उसने परवाह नही की। नसीर का का लड़का महमूद खिलजी द्वितीय के नाम से प्रख्यात हुआ।

(७२)

मेवाड़ के सिंहासन को राणासाँगा ने पाया। महमूद बघर्रा उसके दो वर्ष पीछे, भोजन, ब्यालू और रक्तपात को करते करते मर गया दक्षिण मे कृष्णदेवराय ने विजयनगर को समृद्ध किया सिकन्दर लोदी को उसके भाई जलाल ने परेशान किया। लड़ाई स्वाभाविक ही थी। लडाई हुई। जलाल हारा और भागकर सिकन्दर के चिर शत्रु मानसिंह के पास सहायता के लिये ग्वालियर आया। मानसिंह अपने सैनिको का इस तरह लड़ाई में व्यर्थ व्यय नही करना चाहता था, इसलिये जलाल अपने अनेक साथियो को ग्वालियर मे ही छोड़कर गोडवाने की तरफ भाग गया, वहाँ पकडा गया और आगरा भेज दिया गया। सिकन्दर ने वही किया जो ऐसी परिस्थिति मे वहा होता आया था-अर्थात् सिकन्दर ने उसको प्राणवध का दण्ड दिया।

जलाल अपने जिन अनेक साथियो को ग्वालियर मे छोड गया था, वे अपने को अनाथ पा रहे थे। दिल्ली जा नही सकते थे क्योंकि सिकन्दर उनका कतल करवाये बिना न मानता, कहीं अन्यत्र उनके लिये ठिकाना न था।

मानसिह ने उनको शरण प्रदान की। आश्वासन दिया, 'मेरा झगड़ा मुल्तान और मुल्तानी शासन से है न कि मुसलमानों से। काम करो राजभक्त रहो और हिन्दुओ के समान ही वर्ताव पाते हुये इज्जत के साथ जीवन विताओ।'

सिकन्दर को ग्वालियर की हार कभी न भूली। उसने अवकी बार वहुत वडी तैयारी की। निश्चय किया ग्वालियर की वही दुर्गति करूँगा जो नरवर की थी। इस तैयारी की फिकर मे वह मर भी गया।

मानसिंह ललित कला के विकास और सैन्य सङ्गठन के समन्वय मे लगा हुआ था। उसको केवल एक चिन्ता थी—वड़ी रानी से पुत्र विक्रमादित्य था। मृगनयनी से दो पुत्र राजसिह और बालसिंह-राजे और वाले राज्य कौन करेगा एक या तीनो ? अथवा राज्य के तीन या दो वरावर-वरावर भाग कर दिये जाये ? तीन या दो भाग कर देने से फिर ग्वालियर कितने समय तक आगरा दिल्ली के सामने टिक सकेगा ? यह समस्या उसको चिंतित किये रहती थी। इस चिन्ता मे कडवापन उस समय और आ जुडता था जव सुमनमोहिनी इस समस्या के सुलझाने का हठ करने लगती थी। वह सोचता था वडी रानी को भय है कि मैं कही यकायक मर न जाऊँ तो गूजरी रानी उपद्रव करवा उठेगी, क्योंकि उसको राज्य का अधिकाश, मान्यता और अपनी श्रद्धा दिये हुये था। मेरे मरने की सोचती है यह ! मेरे मरने की यह कडवापन उसको वहुत अखर—अखर जाता था।

एक दिन सुमनमोहनी ने इस प्रसङ्ग को अनिश्चय के कुहासे मे से निकालकर निस्संशयता के स्पष्ट प्रकाश मे ले आने का दृढ संकल्प किया।

अवसर पाते ही उसने मानसिंह से कहा 'दिल्ली का सुल्तान फिर चढ आने की तैयारी कर रहा है।'

'समाचार आ गया है। वह मर गया।'

'वह मर गया तो दूसरा आवेगा।'

'सामना करेगे। जीवन है ही इसके लिये।'

'आपकी सारी उमर परिश्रम करते-करते ही बीती है। अब तो कुछ विश्राम मिलना चाहिये। भजन पूजन को भी कुछ अधिक समय।'

'काम करने वाला मरने से कुछ घन्टे पहले ही बुड्ढा होता है। मैं तो किसी बात मे भी शिथिल नही हू और भजन पूजन भी करता रहता हूँ ?'

'इन कुमारो से भी कुछ काम लीजिये नही तो यह निकम्मे पड जावेगे।'

'सिखला रहा हू।'

'यदि नरवर का किला किसी कुमार के हाथ मे होता तो यो ही न निकल जाता। क्या फिर हाथ आ सकेगा ?'

'प्रयत्न कर रहा हूँ।'

'यदि हाथ आ गया तो किसी कुमार को सौप देगे ?'

'वे दोनो तो छोटे छोटे ही है। बडे कुमार विक्रमादित्य को भेज दूंगा, यदि हाथ लग गया तो।'

'छोटो को क्यो नही ? क्या वे दोनो इतने प्यारे है कि ग्वालियर मे रहे और विक्रम नरवर मे रहे ?'

'इसको कहते है—सूत न कपास, कोरी लट्ठामलट्ठा !'

'गूजरी महल मे सूत और कपास सभी कुछ है ! साफ क्यो नही कह देते कि राजसिंह या बालसिंह मे से किसी को ग्वालियर का राज्य

दिया, जायगा। और विक्रम को नरवर या ऐसे ही कही के जङ्गल और पहाड़ की जागीर।'

'अभी तो मैं हूं और वहुत दिन जिऊँगा।'

'भगवान करे आप सहस्त्र वर्ष जिये और राज्य करें, मैं कल ही मर जाउं आपके दस हजार व्याह और हो।

वडी रानी के गले मे हिलकी आ गई और मानसिंह के होठो पर हँसी। वडी रानी की हिलकी वन्द हो गई, आँसुओं मे चिनगारिया फूट पड़ीं।

वोली, 'आपको स्पष्ट कर देना चाहिये। जिसको राज्य देना हो अभी से कह दीजिये।'

'जो योग्य होगा वही राज्य करेगा। अभी से विष को बोने की अटक ही क्या है ? विक्रम मुझको कितना प्यारा है, उसको वह जानता है आप नही जानती।'

'परन्तु आपको जितना मैं जानती हूं उतना विक्रम नही जानता।

'और आप यह भी नही जानती कि उन तीनो मे परस्पर कितना स्नेह है !'

'हा आ ! इन सव वातों को गूजरी रानी अधिक अच्छा जानती हैं। क्या ग्वालियर के तीन टुकड़े किये जायेगे ?'

मानसिंह ने शांत मुस्कान के साथ उत्तर दिया, 'आज तो टुकड़े हो नही रहे हैं।'

उस शांत मुस्कान के नीचे मानसिंह के हृदय मे वहुत कुढन थी।

[७३]

कुछ दिन पीछे मृगनयनी ने मानसिंह से कहा,'चलिये चित्रशाला के उस चित्र को दिखलाऊं।'

उत्कन्ठा के साथ मानसिंह ने पूछा, 'हो गया पूरा ?'

उसने उत्तर दिया, 'पूरा तो नही हुआ थोड़ी सी कसर है पर कुछ आगे वढ़ गया है।'

मानसिंह उसके साथ चित्रशाला मे गया। उस चित्र के नृत्य वाले अङ्ग मे कुछ रंग और भर दिये गये थे। दूसरा अग काफी भर दिया गया था परन्तु उसमे थोडी सी कसर और थी।

कला वाले अंग के ऊपर लिखा था, 'कला' और दूसरे अंग के ऊपर लिखा था 'कर्त्तव्य'। उसको मानसिंह ने पहले लिखा नहीं देखा था। 'कर्त्तव्य' वाले अग के ऊपर एक खूंटी से लाम्बी वाली मोतियो की माला टंगी हुई थी। झिझरियो के प्रकाश मे झिलमिला रही थी।

मृगनयनी ने मानसिंह के हाथ मे एक पत्र दिया। मानसिंह ने पढा इसमे लिखा था—राजसिंह और बालसिंह गद्दी या जागीर के अधिकारी नही होगे। वे अपने भाई की आज्ञा का पालन करते हुये केवल अपना कर्त्तव्य का निर्वाह करेगे। इस लेख की एक प्रतिलिपि महारानी-सुमन-मोहिनी के पास आज ही भेज दी गई है।

पत्र को पढ़कर राजा ने आश्चर्य के साथ मृगनयनी की ओर देखा।

उसके चेहरे पर मुस्कान थी।

मृगनयनी के केश-कलाप मे कुछ रजत रेखाओ की लहरे प्रकट हो चुकी थी, लगता था जैसे बेला चमेली की रेखाये स्वास्थ्य के स्मितो मे जगमगा रही हो।

शरीर का सौन्दर्य आत्मा के सलोनेपन को और भी अधिक पा चुका था।

उसको स्मरण हो आया—स्त्री का गौरव, सौदर्य, महत्व, स्थिरता मे है, जैसे उस नदी का जो बरसात के मटमेले, तेज प्रवाह के बाद शरद मे नीले जल वाली, मन्थर गति-गामिनी हो जाती है-दूर से बिलकुल स्थिर, बहुत पास मे प्रगतिशालिनी।

मानसिंह की आँखें सजल हो गईं।

'यह तुमने क्या किया?' मानसिह के कांपते हुये होठों से धीरे से निकला।

चित्र के 'कर्त्तव्य' वाले अङ्ग की ओर उङ्गली उठाती हुई वह बोली, 'यह ।'

मृगनयनी की मुस्कान और खिली । मानसिंह की आंखें और सजल हुईं ।

मानसिंह के मुंह से और भी धीरे से एक वाक्य निकला, 'अब तो चित्र का यह अङ्ग पूरा हो जाना चाहिये । उसको अधूरा क्यो छोडा जा रहा है ?'

मृगनयनी ने कहा, 'संकल्प और भावना जीवन-तखड़ी के दो पलडे है । जिनको अधिक भार मे लाद दीजिये, वही नीचे चला जायगा । संकल्प कर्तव्य है और भावना कला दोनो के समान समन्वय की आवश्य-कता है न तो कला का अंग पूरा हुआ है और न कर्तव्य का । तखड़ी के दोनो पलडे तुले हुये हैं इस चित्र मे ?'

मृगनयनी की दृष्टि लाखी के मुक्ता-हार पर, गई । आँखे थोड़ी सी झलझला आईं ।

मानसिंह ने भी देखा ।

और भी दबे स्वर मे बोला, 'कर्तव्य वाले अङ्ग मे अब कौन सी कसर रह गई है, देवी ?'

मोतियो की माला और सम्पूर्ण चित्र पर दृष्टि घुमाती हुई मृगनयनी ने कर्तव्य वाले अंग पर उँगली रखकर कहा, 'प्रजा के सुख की, देश की स्वाधीनता की ।'

मानसिंह ने मृगनयनी को छाती से लगा लिया । मृगनयनी ने उस के कन्धे पर अपना सिर टिका दिया । उजली, बड़ी, आँखे मानसिंह की झुकी हुई बरौनियो से उलझ गई और दोनो के अश्रु बिन्दु एक दूसरे से जा मिले ।

मानसिंह के कांपते हुये होठो से धीमे धीमे शब्द निकले—

'कला और कर्तव्य का समन्वय इस कसर को किसी दिन अवश्य पूरा करेगा ।'

फिर उन दोनों की दृष्टि मोती-माला की ओर गई ।

वह दमक रही थी ।

परिशिष्ट

आदरणीय विद्ववर श्री अयोध्यानाथ जी शर्मा ने हमे कृपा पूर्वक सुझाव दिया कि वर्मा जी के उपन्यासो मे जो जनपदीय [बुन्देलखण्डी] शब्द प्रयुक्त होते है उपन्यास के अन्त मे पाठकों की सुविधा के लिये उनका संक्षिप्त विवरण दे दिया जाया करे। प्रख्यात पुरातत्ववेत्ता आदरणीय श्री डाक्टर वासुदेव शरण जी अग्रवाल ने इतना अनुग्रह किया कि मृगनयनी के जनपदीय शब्द बीन कर हमे लिख भेजे, जो यहा दिये जा रहे है। श्री अग्रवाल जी के प्रति हम अत्यधिक आभारी है ही, श्री शर्मा जी के आदेश पालन मे इस बार हम बिना सप्रयास सफल हुये है, अन्य उपन्यासो मे सयास और साकार उसका पालन करेगे।

प्रबन्धक—

एरच—एक पुरवा जिसे हिरण्यकश्यप की राजधानी कहा जाता है पुरवे के आस-प्रास दूर-दूर तक खण्डहर है; जहा से पुरजन ईटे पकाने की आवश्यकता नही पडती।

गुदनोटा—अतिथियो का सत्कार न करने के लिये, परम्परा मे बुन्देलखण्ड का बदनाम गाव (भूमिका पृष्ठ ५)

छबा—छपका पड़ गया था बिखर कर चिपट गया था (पृष्ठ ८)

हुमकना—हूँकार भरने मे जितने बल का प्रयोग करना पडता है उतने बल और उत्साह के साथ करना। (पृष्ठ १०)

ऑसे—यौवन की प्रारम्भिक अवस्था मे होठो पर उगने वाले बाल। (पृष्ठ १३)

आवरा—सस्कृत आवरण का अपभ्रन्श ढभ्रकने वाली चादर। (पृष्ठ १५)

चिलचिलाना—चमकना (पृष्ठ १५)

झकूटा—छोटी झाड़ी (पृष्ठ १४)

झूम-हिलन डुलन (पृष्ठ १५)

पतोखी-रात में बोलने वाली एक चिड़िया (पृष्ठ १६)

झीम—उन्निद्र व्यक्ति का निद्रा नियन्त्रण के प्रयत्न मे झूम जाना (पृष्ठ १८)

चड़ाका-किसी चीज के चटक कर टूटने का शब्द (पृष्ठ १८)

टुङ्ग-संस्कृत तुङ्ग का अपभ्रन्श। पहाड़ की गोलचोटी (पृष्ठ २१)

वीधना—उलझ जाना (पृष्ठ २२)

पङ्गत—पंक्ति का अपभ्रन्श दावत (पृष्ठ २२)

मदूने—ढेर (पृष्ठ २२)

रायसा-वीरों या सतियो का यश गीत (पृष्ठ २६)

वक नही फटता-बोल नही निकलता (पृष्ठ २७)

मठा मूसल की धमकना-मठा किसानो का विशेप पेय है और मूसल मे धान आदि कूटी जाती है। दोनो का कोई मेल नही खाता, अतः वेमेल वाते करना। (पृष्ठ ३३)

ततूरी—धूप के कारण भूमि के गरम हो आने पर पैर के तलुवों को जो ताप लगता है वह ततूरी। (पृष्ठ ३५,५०)

टौरिया—छोटी पहाडी (पृष्ठ ३७)

विलाव-विल्ली का पुलिग। (पृष्ठ ३७)

निखरना, सखरना—साफ होना। (पृष्ठ ३७)

लोरना-पानी मे मौज के साथ लोटना-पोटना, तैरना (पृष्ठ ४७)

मकुरना—क्षुब्ध होकर मुह डाल देना (पृष्ठ ४८)

अचार—वृक्षविशेप

करधई—बुन्देलखण्ड के पहाडो पर सघनसा के साथ जमने वाला मजबूत और कटीला पेड

खाँदी—दो पहाड़ो के बीच की गहराई (पृ० ६०)

कोलना-छेद करना (पृष्ठ ५४)

अथाई—उगाहने का समानर्थवाची (पृष्ठ ५६)

खाँद–पशु-पद चिन्ह (तृष्ठ ५७)

ठठना-घुसकर थम जाना (पृष्ठ ५८)

वेडिया–नटवर्ग की एक उपजाति (पृष्ठ ६६)

असबल–अहमदाबाद जिस स्थान पर बना है उसका पुराना नाम (पृष्ठ ७५)

दुन्द-संस्कृत द्वन्द्व का अपभ्रन्श, झगडा (पृष्ठ ७५)

बन्धिया–बन्धी, खेत की ऊँची मेड (पृष्ठ ८१)

निखरना-दृष्टि केन्द्र मे साफ साफ आ जाना (पृष्ठ ८४)

डिडकार–डकारना, बडे पशु के गले की ऊँची पैनी आवाज " "

आँसना–गडना (पृष्ट ८६)

ढी-ऊँचा किनारा (पृष्ठ ६१)

थूमी-संस्कृत के स्तम्भ का अपभ्रन्श, थूमा, थूमी, स्त्रीलिङ्ग (पृष्ठ ६१)

शहना-लगान-वसूली करने वाला सरकारी नौकर (पृष्ठ १११)

उसार–घर, का काम (पृष्ठ १२१) ढोरो की उसार, पशुशाला का नाम (पृष्ठ १२१)

रानना–स्वीकार करना, इकबाल करना]पृष्ठ १३१)

छेवला-पलाश वृक्ष (पृष्ठ १४२)

कोचना–कुदेरना, चुमन (पृष्ठ १४२)

कुटवार-गाँव की पञ्चायत के आदेशो का पालन कराने वाला गांव मे रहने वाला पदाधिकारी (पृष्ठ १५०)

वक-वाक्य का बच् का अपभ्रन्श (पृष्ठ १५४)

भ्यात-भाई वन्द, भ्यात भाईयो का सामूहिक रूप (पृष्ठ १६३)

सकेलना-इकट्ठा करना }
वगोड़ना–क्रम के साथ फैलना } कृषि कार्य के किसानी शब्द (पृष्ठ १७४)

हरकनी-वेश्या (पृष्ठ १७६)

कानी के टेंट पर सिन्दूर की बिन्दी-कानी स्त्री जिसकी एक आंख बाहर निकली हुई सी फूली हो कुरूप समझी जाती है। अपने को रूपवती बनाने के लिये यदि ऐसी स्त्री माथे पर सिन्दूर की बिन्दी लगा ले तो वह और भी कुरूप दीखने लगेगी। (पृष्ठ १८१)

खिसारा–खीसो वाला (जङ्गली सुअर के लिये व्यवहृत होता है) (पृष्ठ १८४)

लगान-हाँके के शिकार मे हँकाई के पहिले ही हथियार बन्द शिकारी नियुक्त स्थानो पर जा बैठते है। इस कार्यक्रम का नाम 'लगान' है—जङ्गली पशुओं की शिकार के लिये किसी पूर्व निश्चित स्थान पर शिकारी का जा बैठना। (पृष्ठ १८८)

आड़े-ओटे-छिपाव-स्थान (पृष्ठ १८६)

रमतूला–रणतूर्य या रम्मट से मिलता जुलता बाजा (पृष्ठ १६०)

ठठकर रह जाना–तीर या भाले की नोक का घुस कर थम जाना (पृष्ठ १६२)

जड्डु–टक्कर (पृष्ठ १६३)

रिल गया–भरभरा कर एक ओर गिर गया (पृष्ठ १६४)

बँध–विवाह मण्डप के निकास-द्वार की दिशा में आम के पत्तो का एक बन्दनवार बांधा जाता है। जब विवाह के उपरान्त सुसराल के लिये लडकी विदा होती है तब दूल्हा उस बन्दनवार के पत्तो की गांठ को खोलता है। इमे बँध छुटाई का नेग कहते है। पत्तों मे गाठे तिनकों के छेदने से बनती है। तिनको को निकाल देने के बाद पत्ते की गाँठ खुल जाती है।

दची–चोट लगने के कारण धातु के किसी वर्तन मे जो चपटापन आ जाता है उसे दौची कहते है। (पृष्ठ २१४)

विलमना–ठहरना (पृष्ट २३५)

रम्मट–युद्ध का एक वाद्य (पृष्ठ २६८)

डूंड पर डले-निस्सन्देह अनिवार्य, कोई रोक ही नही सकता।

(पृष्ठ २६६)

तिगलिया—वह स्थान जहा तीन रास्ते या तीन गैले मिली हो।

(पृष्ठ २७२)

मुरकी-छोटी हलकी मोड़ (पृष्ठ २८३)

सरकफूंद-रस्सी के सिरे का एक प्रकार का फन्दा जो किसी चीज पर डालकर खीचने से कड़ी गांठ के रूप मे परिवर्तित हो जाता है।

(पृष्ठ २८६)

बिरबिराना—भरभराहट का शब्द

खंगोरिया-दरिद्र ग्रामीण स्त्रियो के गले का विशेष आभूषण।

(पृष्ठ ३१६)

तपाक-तेजी (पृष्ठ ३१६)

मावना—विलोना (पृष्ठ ३१६)

बरकाना-बचाना (पृष्ठ ३२५)

हुस्काना—भडकाना

समोना—समन्वय का बुन्देलखण्डी अपभ्रन्श, समन्वय करना।

(पृष्ठ ३३३)

बारजा-छज्जे का आकार प्रकार (पृष्ठ ३८८)

उमझना—अन्तर्मन मे सूझना (पृष्ठ ४०४)

पटपरा—पहाड का समस्थल (पृष्ठ ४०६)

आवरा—आवरण, पर्दा (पृष्ठ ४०१

मुछाडिये—बड़ी मूछो वाले (पृष्ठ ४१६)

झिझरियो—झिझरी, जालीदार वातायन (पृष्ठ ४२७)

छपका—बडा छिटका, धब्बा (पृष्ठ ४५६)

ओटना—पेलना, जैसे आये थे हरिनाम को ओटन लगे कपास'